अकादेमी के अन्य हिन्दी प्रकाशन

(मूल भाषाओं के नाम कोष्ठक में अंकित हैं)

१ भारतीय कविता १९५३	(भारत की चौदह भाषाओं की कविताओं का लिप्यन्तर और अनुवाद)
२ केरल सिंह (मलयालम)	के० म० पणिक्कर
३ भगवान् बुद्ध (मराठी)	धर्मानन्द कोसम्बी
४ मिट्टी का पुतला (उड़िया)	कालिन्दीचरण पाणिग्राही
५ कांदीद (फ्रेंच)	वाल्तेयर
६ दो सेर धान (मलयालम)	तकषी शिवशंकर पिल्लै
७ गेंजी की कहानी (जापानी)	मुरासाकी शिकिबू
८ आरण्यक (बंगला)	विभूतिभूषण बन्द्योपाध्याय
९ आरोग्य निकेतन (बंगला)	ताराशंकर बंद्योपाध्याय
१० अमृत सन्तान (उड़िया)	गोपीनाथ महान्ती
११ आदमखोर (पंजाबी)	नानक सिंह
१२ वैदिक संस्कृति का विकास (मराठी)	लक्ष्मण शास्त्री जोशी
१३ क्या यही सभ्यता है (बंगला)	माइकेल मधुसूदन दत्त
१४ जीवी (गुजराती)	पन्नालाल पटेल
— का भारतीय साहित्य	(भारत की सोलह भाषाओं के साहित्य का परिचय)

नारायण राव

(तेलुगु भाषा का श्रेष्ठ उपन्यास)

मूल लेखक

स्व० अडिवि बापिराजु

अनुवादक

ए० रमेश चौधरी



साहित्य अकादेमी की ओर

भारती साहित्य मन्दिर,

साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली
की ओर से
भारती साहित्य मन्दिर, दिल्ली द्वारा प्रकाशित

प्रथम हिन्दी संस्करण
१९५८
मूल्य छः रुपये

[illegible] रोड, दिल्ली में मुद्रित

चतुर्थ भाग

प्रथम भाग

१ : क्या तुम्हारा विवाह हो गया है ?

"यह ममार यो कहाँ भागा-भागा जा रहा है ? अविराम। इतना तेज। आँखें मूंद लें तो लगता है कि यह पीछे की ओर जा रहा है। क्या यह सचमुच आगे बढ रहा है ? जब यह रेलगाडी इतनी जोर से आगे जा रही है तो वह पेडो का झुड क्यो पीछे हट रहा है ? तारो और बादलों के बावजूद यह आकाश क्यो निश्चल है ? इसको भ्रम समझकर हम हँसे या सत्य समझकर आश्चर्य करे ?

"करोडो मील दूर, दीवाली के दियो की तरह टिमटिमाने हुए वे तारे, नक्षत्र इस भूमि पर रहने वाले कृमि-कीटो-जैसे मनुष्यो को क्या मशाल दिखा रहे है ? सूर्य से कई गुने प्रकाशमान ये नक्षत्र और उनकी परिक्रमा करने वाले ये ग्रह किसकी खोज में यो निकले है ? वेदो के सृष्टा महर्षियो ने इस परम सत्य को कैसे सुन्दर-सुन्दर गीतों मे व्यक्त किया है।

"कहते है ये तारे भी गाते है। न जाने वे किन भावों को गा रहे है ? बिथोवन, त्यागराय आदि भी उन महान् भावो को अपने सगीत में प्रतिध्वनित कर रहे है ?"

इस तरह के व्यक्त-अव्यक्त विचारों से मुक्त होकर नारायणराव ने खिडकी से सिर हटाकर डयोढे के डब्बे में आराम से सोते हुए अपने मित्रो को देखा।

मेल कृष्णा नदी का पुल पार कर चुकी थी और विजयवाडा के स्टेशन के पास पहुँच रही थी।

"अरे कुम्भकर्णो, उठो, विजयवाडा पास आ गया है। अभी और क्या सोओगे ? उठो !" नारायणराव ने अपने सोने हुए दोस्तों को जगाया। आँखें मलता और मुस्कराता हुआ परमेश्वर मूर्ति उठा। इधर-

उधर देखते हुए, अँगड़ाई लेते हुए उसने कहा—"डाक्टर साहब, उठिये ! नींद के इलाज के लिए काफी का कशाय और इडली की गोलियों का सेवन कीजिये ।"

राजा राव ने उठकर क्रोध का अभिनय करते हुए कहा—"अरे, तू है ! दुबला कहीं का ।" कन्धे पकड़कर उसने उसको फिर बिस्तर पर बिठा दिया ।

"अरे, यह भी खूब है, दुबलों पर ही अपना बल दिखाते हो ?" कहता हुआ राजेश्वर बगल की सीट से उठा और राजाराव को जल्दी-जल्दी डब्बे के दरवाजे की ओर धकेलकर ले गया ।

"अरे, नारायण, जंजीर खींचो, कत्ल हो गया, कत्ल, पुलिस, पुलिस !" चिल्लाता हुआ लक्ष्मीपति यों ही जंजीर खींचने का उपक्रम करने लगा ।

"तुम सब द्वन्द्व-युद्ध से निबट लो, और मैं इस बीच प्रातःकालीन नित्य-कर्म से निबट लेता हूँ ।" नारायणराव ने हँसकर कहा । बगल में रस्सी की गाँठ की तरह लेटा हुआ एक और मित्र नाक बजा रहा था ।

"मोहम्मद इब्न आलम अब्दुल रज़ाक बादशाह साहब, उठिये, आपको उठाने के लिए यहाँ कोई भाट नहीं है, सल्तनत सब खाक हो रही है ।" नारायणराव ने उसे भी उठाया ।

उठते हुए आलम ने कहा—"अरे क्या जल्दी है ?" वह भी हाथ-मुँह धोने के लिए तैयार हो गया ।

नौजवानों की टोली अपने-अपने बिस्तर लपेटकर सामान ठीक करके बैठ गई । इतने में नारायणराव ने आकर कहा—"इडली, उपमा, काफी, पूरी, आलू का शाक सब आपके सामने प्रत्यक्ष होने जा रहे हैं, भोग के लिए क्या सब भक्त तैयार हैं ?" और वह उन चीजों को एक-एक करके सीट पर रखने लगा ।

लक्ष्मी०—"अरे मेरे लिए चा—चाय लाये हो ?"

राजा०—"नहीं ही लाया है ।"

आलम—"अरे मैं मुसलमान हूँ, मुझे ही चाय नहीं चाहिए, इसे भला क्यों चाहिए ? क्या तुम चीन के हो ?"

पास के डब्बे वालों को यह कहता सुनकर कि गवर्नर साहब की स्पेशल

गाडी मद्रास जा रही है, उन लोगों ने सोचा कि तब तक तो यहाँ 'बीज उग-कर पेड भी हो जायगा' वे खा-पीकर, 'थ्री केसल' के डिब्बे में से सिगरेट निकालकर धूम्र-पान करने लगे।

"मैं दो-चार किताबें ही खरीद लाऊँ।" कहता हुआ नारायणराव हिंगिन बाथम्स के बुक-स्टाल की ओर चला। वह प्लेटफार्म के दूसरी तरफ था। गवर्नर साहब की गाडी आ रही थी इसलिए सब जगह हथियारबन्द पुलिस तैनात थी, उपाहारशाला के पास उनकी गाडी खडी होनी थी, वहाँ पुलिस किसी को जाने नहीं दे रही थी। गवर्नर साहब का स्वागत करने, कृष्णा जिले के कलेक्टर, मान्य प्रमुख, ऊँचे कर्मचारी आदि, पुष्पमालाओं और सम्मान-पत्रों को लेकर उपस्थित थे।

नारायणराव यह दृश्य देखता-देखता और कुछ सोचता-सोचता बुक-स्टाल के पास खडा रहा।

नारायणराव हट्टा-कट्टा, भद्दावर जवान था। पाँच फीट, ग्यारह इंच लम्बा। सीधी लम्बी नाक। धनुष-से ओठ। उसका मुँह पद्मना ललनी के मुँह को भी मात करता था,। शायद आदमी के लिए यह एक कमी थी, इस कमी को उसका चिबुक पूरा करता था। वह उसकी दृढता को स्पष्ट सूचित करता था।

बाएँ हाथ की दूसरी अँगुली ने निचले ओठ को दबाकर और भौंहें सिकोड़कर विशाल मस्तक को तरंगित दुग्ध सागर-सा करके, वह अन्यमनस्क-सा खडा था।

उसे ऐसा लगा कि जैसे कोई उसकी ओर लगातार देख रहा हो। हठात् उसने अपने सामने एक सज्जन को पाया। नारायणराव को मन-ही-मन हँसी आई। वह पास वाले बुक-स्टाल के पास जा ही रहा था कि उस व्यक्ति ने हाथ उठाकर कहा—"ठहरो!" और सोने से जड़ी हुई छड़ी घुमाता हुआ वह व्यक्ति नारायणराव के पास आया।

"आपका नाम क्या है?"

"नारायणराव!"

"आपके वंश का नाम?"

"तटवर्ती!"

अजीब आखिरी प्रश्न याद आ रहे थे। उनको भी अपनी शान है भौंरे की तरह स्वार्थी हास्यास्पद जीवन में विनायक ने कभी-कभी स्वराज्य-प्राप्ति के यज्ञ में भी समिधाएँ डालते रहते हैं।

'अरे, नारायण? वह तो यहाँ बैठा है।' कहते हुए उनके मित्र जल्दी-जल्दी डब्बे में चढ़ गए।

२ रेल ने भी तथास्तु कहा

"अरे नारायण? तुम यहाँ थे? हम सब तो गवर्नर साहब को मान-पत्र भेंट करके भेज आए हैं। तू तो राष्ट्रवादी है न? गवर्नर को तो तुम दर्शन न दोगे? यह हम भूल ही गये थे—" कहते-कहते राजेश्वर-राव ने नारायण के हाथ में किताब छीन ली और उसका नाम पढ़ते हुए पूछा—"हाँ तो हमारे जमींदार साहब ने गवर्नर साहब से यहाँ मुलाकात की है। सुना है तुम उन्हें मिले थे?"

इतने में परमेश्वर ने पूछा—"हाँ-हाँ, तेरे बारे में वे इतनी पूछ-ताछ क्यों कर रहे हैं?"

नारायणराव ने मुस्कराते हुए जवाब दिया—"मुझे क्या तुमने मामूली आदमी समझ रखा है? हाँ, मैंने भी उन्हें इण्टरव्यू दी थी।"

राजा०—"तू भला क्यों मामूली आदमी होगा?"

राजे०—"वे तेरा गोत्र भी पूछ रहे थे, क्यों?"

नारा०—"शायद सोचा होगा कि बड़े लोगों का गोत्र ही न होता होगा।"

राजे०—"लक्ष्मीपति ने बता दिया है कि तेरा कौण्डिन्यस गोत्र है।"

आलम—"नहीं भाई, यह तेरा निकाह करेगा।"

नारा०—"तेरा सिर, वे मुसलमान नहीं हैं कि निकाह करें।"

राजे०—"हाँ-हाँ, उनके एक लड़की है, उसकी अभी तक शादी नहीं हुई है।"

पर०—"फिर क्या है, तब तो नारायण की पाँचों अँगुलियाँ घी में हैं।"

राजा०—"सिर्फ नारायण की ही नहीं, मेरी भी, मैं भी हिज हाइनेस विशाल पुर के जमींदार साहब का स्टेट-डॉक्टर होऊँगा।"

राजे०—"अरे नारायण, जरा हमें भी याद रखना, ससुर साहब से सिफारिश करके हमें भी वहीं इंजीनियर लगवा देना।"

नारा०—"अरे, जाओ भी, पागल हो रहे हो? अभी तो तुममें से कोई परीक्षा में भी नहीं बैठा है कि नबको नौकरी की लगी है। ससुरजी की जमींदारी में तुम्हें पैर भी न रखने दूँगा। केवल परमेश्वर को राज-कवि बनाऊँगा।"

राजे०—"अरे देखता क्या है परमेश्वर, राजा के दामाद के बारे में सुना एक कविता!"

परमेश्वर गला ठीक करके, आशीर्वाद देने की मुद्रा में खड़ा ही हुआ था कि राजेश्वरराव ने कहा—"अरे, ठहरो, परमेश, हाँ भूल गया, वधू सोने की मूरत है, कपूर की पिटारी-सी। उसको छोड़कर इस गँवार नारायण-राव के बारे में कविता नहीं करने दी जायगी। पहले वधू की प्रशंसा करो।"

"अच्छा, जैसी आपकी आज्ञा।" परमेश्वर गाने लगा—

"एन्की जैसी लड़की नहीं है, नहीं है
एन्की नहीं आयेगी, मेरी तरफ नहीं आयेगी?"[1]

उसका गाना शुरू होते ही राजा राव ने कहा—"अरे, बस भी करो, क्या अशुभ गीत गा रहे हो?"

परमेश्वर चौंका, और इशारा समझकर गाने लगा—'

"तेरे साथ ही रहूँगी, नायडु बावा,
तेरी बात ही सुनूँगी नायडु बावा!"[2]

"वाह-वाह, 'सुखान्ते काव्य' कहा गया है, अरे, कहो न सब मिलकर 'तथास्तु'!"

१. आन्ध्र के प्रसिद्ध 'एन्की पाटल' का एक चरण।

२. एक और प्रचलित गीत।

ऐसा लगता था जैसे रेल भी सीटी देकर उनके साथ 'तथास्तु' कह रही हो। गार्ड ने भी सीटी बजाकर, झंडा उठाकर कहा—'तथास्तु'। ठीक वक्त पर जमींदार भी भागे-भागे आये, और डब्बे में चढ़े।

हो-हल्ला करते हुए हमारे मित्र हड़बड़ाकर उनकी तरफ देखने लगे। राजेश्वर राव ने खड़े होकर कहा—"आइये, तशरीफ रखिये!" उसने उनको जगह दी। जमींदार ने बैठते हुए कहा—"अगर हम आप-जैसे नौजवानों से न मिलें-जुलें तो हम-जैसे बूढ़ों को दीमक खा जाय। आप सबको देखकर मुझे फिर अपनी जवानी याती लगती है, आप एक साथ निकले हैं। शायद एक ही कालेज में पढ़ रहे हैं? राजेश्वर राव तो हमारे गाँव का ही है, बाकी आप सब भी क्या राजमहेन्द्रवर जा रहे हैं? या उससे भी आगे?"

राजे०—"जी नहीं, हम सब अलग-अलग जगहों को जा रहे हैं। अलग-अलग कालेजों में पढ़ते हैं। यह नारायण है, इसने एफ० ए० की परीक्षा दी है, आलम साहब ने भी वही परीक्षा दी है। वह राजा राव है, वेमूरी घराने का। वह काकिनाडा का है, वह एम० बी० बी० एस० में पढ़ रहा है। चौथे साल में है। वह परमेश्वर मूर्ति है। वान्डेय वालों का छोटा लड़का। वह ग्रेजुएट है, कवि, चित्रकार, और गायक भी है। जो आपको अभी दिखाई दिया था वह लक्ष्मीपति है, वह निडमूरु का रहने वाला है। उसके परिवार का नाम भी 'निडमर्ति' है। वह हमारे नारायण का फुफेरा भाई है। प्राइवेट तौर पर एफ० ए० में बैठा है। सिवाय लक्ष्मीपति के हम सब राजमहेन्द्रवर में एक साथ इण्टर में पढ़े थे।"

लक्ष्मी०—"राजेश्वर राव नायडु तो आपकी जान-पहचान के हैं ही। बी० ई० की परीक्षा दी है। धनी घराने के हैं। रसिक हैं।"

जमीं०—"ठीक है, मैं तो उसे उसके बचपन से जानता हूँ। लगता है कालेज बन्द हुए बहुत दिन हो गए हैं और इतने दिनों बाद घरों के लिए निकले हैं आप?"

आलम—"राजा राव की परीक्षा कल-परसों ही खत्म हुई थी, इसलिए हम पाँच-दस दिन और ठहर गए। सिनेमा वगैरह देख-दाखकर अब निकले हैं।"

जमीं०—"औरों की परीक्षा चाहे कुछ भी हो, लॉ कालेज वालों का

हाथ ही सबसे ऊपर लगता है।"

राजे०—"नारायणराव का कहना है कि 'कानून' आत्म-विकास का परम शत्रु है।'

जमी०—"तो नारायणराव जी, क्या आप गांधीवादी हैं?"

नारायणराव यद्यपि सभाषण-प्रेमी था तो भी वह मितभाषी था। जब उसके मन में सुस्थिर बात आ जाती तो युक्तियों से, गम्भीर विचार, कविता की तरह, गीत की तरह, वह बखान सकता था। वह प्रतिवादी को हरा सकता था, तब उसका जन्म-जात विनय भी कभी-कभी काफूर हो जाता था। उसकी जबान कोड़े की तरह चल सकती थी—परिहास करती-सी। वह सब विषयों पर सब उदाहरणों के अच्छी भाषा में बात कर सकता था—दूसरों को समझा सकता था, पर वह अपने बड़े बुजुर्गों के साथ कभी बहस नहीं करता था।

लक्ष्मी०—"मेरे भाई की तरफ से जरा मुझे कुछ कहने दीजिये, उसके खयालात यों हैं। उसका कहना है कि आजकल जो कानून देश में चल रहा है वह धर्म से दूर है, सत्य से दूर है। बिना झूठ की मिलावट के, कहता है, सच भी नहीं टिक सकता। साधारणतः सच चलता ही नहीं है। कहता है कि वर्तमान गवाही के कानून, या कान्ट्रैक्ट के कानून में बहुत गलतियाँ हैं, और वे गलतियाँ कानून के आधार में ही हैं। जब तक यह रहेगा कानून और सत्य, न्याय का फासला हजारों मीलों का होगा।"

जमींदार ने भी यह जानकर कि नारायणराव शरमा रहा था उससे बात न करके दूसरों से अनेक विषयों पर बातें कीं।

मेल हवा से बातें करती हुई एलोर पहुँची। जमींदार साहब ने उतरते हुए कहा कि वे उनसे मिलने का मौका देकर उन्हें अवसर अनुगृहीत करेंगे—"मैं आप लोगों से प्रार्थना करना चाहता हूँ कि आप हमारे गाँव में उतर-कर हमारा आतिथ्य स्वीकार कीजिये!"

परम—"हम तो खुशी-खुशी आते, मैं एलूर का ही रहने वाला हूँ। मुझे लिवा लेने के लिए वे मेरे भाई-बहन आ रहे हैं, माँ इन्तजार कर रही होगी, मुझे माफ कीजिये!"

जमी०—"मैं आपको जबरदस्ती नहीं ले जाना चाहता। अगर आपमें

से कोई भी आ सकें तो मुझे खुशी होगी। जो कुछ भी काम आपस में तय करें, मेहरबानी करके मुझे बीदासरी स्टेशन पर बता दीजिये।"

जमींदार जाने के लिए खड़े हुए, उनके नमस्कारों का नमस्कार से जवाब देते हुए उन्होंने लक्ष्मीपति से कहा—"क्या आप मेरे साथ थोड़ी देर के लिए आ सकेंगे? थोड़ा काम है।"

लक्ष्मीपति "जी हुजूर!" कहकर उनके साथ हो लिया। रास्ते में गार्ड को देखकर उन्होंने कहा—"गार्ड, ये मेरे साथ पहले दर्जे में बैठेंगे। ट्रैवलिंग टिकट-चेकर से कहकर इनके टिकट के बारे में बंदोबस्त करवाइये। अच्छा, नमस्ते।" वे लक्ष्मीपति का हाथ पकड़कर अपने डब्बे में ले गए।

३ : जमींदार

विशाल पुरं लक्ष्मीप्रसाद [illegible] घराना—वासिरेड्डि नियोगी, प्रसिद्ध था। हैदराबाद नवाब के परिपालन के अन्तर्गत राजमहेन्द्रवरं सरकार की तरफ प्रथम नवाब नाजिम के पोते ने सोने की मूंठ की छड़ी, २५ गाँव और कई बहुमूल्य चीजें भेंट दी थीं। उनको 'मिरजा, बहादुर मिहरबान, राजा विद्वज्जन प्रमुख मरियाद' की उपाधि भी मिली हुई थी। २५ गाँव की जमींदारी धीरे-धीरे बढ़ती गई।

ये नवाब को नियमित रूप से कर दिया करते थे। उनके राजकार्य-निपुणता, जमींदारी के कुशल परिपालन, व वैभव ऐश्वर्य से प्रसन्न होकर नवाब ने हीरे और मणियों से जड़ी हुई म्यान, तेज तलवार, श्वेत छत्र, घोड़े की पालकी, रिसाला वगैरह [illegible] थे। और उनको तो घुड़सवारों का सरदार भी बना दिया था।

जब विशाल पुरं की जमींदारी वासिरेड्डि वालों के नीचे आई तो उनके वंशज, राजा प्रसाद गणपति राव ने पश्चिम पुरं वालों के वंशजों

के रूप में राज्य का खूब विस्तार किया। वर्तिदिन्ड के महाप्रभु ने जग-पतिराज के स्वामी-कार्य-निर्वहण से सन्तुष्ट होकर 'महामन्त्री राजवर्गोद्योतक' की उपाधि दी और उनको दो गाँव भी दिये।

इस तरह के उत्तम वंश में श्री राजा लक्ष्मी सुन्दरप्रसाद राव का जन्म हुआ था। सदाचार व नूतन विज्ञान के प्रकाश से उनका हृदय आलोकित था। पाश्चात्य विद्याओं में भी वे पारंगत थे। उन्होंने संस्कृत में बी० ए० पास किया था। प्रसिद्ध पंडितों से उन्होंने संस्कृत सीखी थी। उनकी जमींदारी में किसानों को कोई कष्ट न था। यह सोचकर कि बिना उनके कल्याण के भावी भारत का भाग्योदय नहीं हो सकता, वे पुरानी शासन-सभा और नई विधान-सभा के चुनाव में लड़े थे और बहुमत से सदस्य चुने गए थे। वे जनता के प्रतिनिधि थे। वे सरकार की बगल में छुरी की तरह थे।

राजनीति में वे न्यायपति सुब्बाराव पन्तुलु के प्रिय शिष्य थे। मोक्षर्ष रामचन्द्र राव के प्रिय मित्र थे। उनका यह भी विश्वास न था कि गान्धी के असहयोग आन्दोलन से देश में अराजकता फैल जायगी। इसलिए शासन-सभाओं में देश द्रोहियों को स्थान न देने में ही वे एक ऐसी देश-सेवा समझते थे जो वे स्वयं कर सकते थे।

गंजाम के जिले के नारिकेलवलस के जमींदार कोक्किडि वीरवसव-राज वरदेश्वर लिंग ने अपनी प्रथम पुत्री वरदकामेश्वरी के साथ उनका विवाह किया। उनके दो लड़कियाँ और एक लड़का था। उनकी पहली लड़की शकुन्तला देवी का विवाह, नेल्लूर जिले के एक छोटे-से जमींदार भावनारायण के लड़के विश्वेश्वर राव से हुआ।

कुँअर विश्वेश्वर राव बहुत घमंडी थे। इंगलैंड जाकर आक्सफोर्ड में एम० ए० तक पढ़कर जब वे हिन्दुस्तान वापिस आए तब उन्होंने पहले-पहल डिप्टी तहसीलदार की नौकरी की थी। फिर धीरे-धीरे सिफारिश वगैरह करवाकर वे डिप्टी कलक्टर बन गए। वे यह भूल गए कि वे जमींदार थे और अपने से बड़े हाकिमों की खुशामद करने लगे। उनका यह विश्वास था कि अगर अंग्रेज हिन्दुस्तान छोड़कर चले गए तो यहाँ एक कीड़ा भी जिन्दा न रह सकेगा, सुजला सुफला शस्य श्यामल सुन्दर भारत हिमालय से कन्याकुमारी तक 'सहारा' का रेगिस्तान हो जायगा।

विश्वेश्वर राव अपने ससुर साहब से कहा करते थे कि भारत देश में सभ्यता ही न थी। विदेशियों के आने से पहले भारत में भी लोग अफ्रीका के नीग्रोओं की तरह एक-दूसरे को खाकर जिन्दगी बसर किया करते थे।

कोर्ट में भी वे अग्नि बरसाते। वकीलों और मुवक्किलों को रूई की तरह धुनते। निपुण वकीलों की दलील उन्हें समझ में न आती। फैसला देते समय उनकी परवाह न करते। गलत-गलत फैसले देते। इसलिए उनको बड़े अधिकारियों की हल्की-हल्की डाँट-डपट भी सुननी पड़ती। उनके नौकर-चाकर हमेशा हथेली पर जान रखकर काम करते।

घर में पति-पत्नी की भी नहीं पटती थी। छोटी-छोटी बात पर बक-झक हो जाती। यहाँ तक कि दोनों आपस में बोलना बन्द कर देते। यह घमंड कि वे जमींदारों की सन्तान हैं, उनके मन में हमेशा लट्टू बनकर चलता रहता।

उनके बाल-बच्चे भी उन्हीं के साँचे में ढले थे। वे हमेशा माँ-बाप, और नौकर-चाकरों से नोंक-झोंक करते रहते।

उनका घर कलह का निवास-स्थान था। अपधृति और अनेक ताने दिन-रात उनके घर में ताण्डव किया करते।

यह जानकर कि उनका दामाद एक कड़वे फल की तरह था, लक्ष्मी-सुन्दर प्रसाद राव सदा खिन्न रहते थे।

शकुंतला देवी को संगीत तथा साहित्य की शिक्षा दी गई थी। राज-महेन्द्रवर के एक अमेरिकन मिशनरी की पत्नी ने उसको अंग्रेजी पढ़ाई थी। इसलिए उसमें कुछ घमंड भी आ गया था। उसके पति को कलाओं में कोई रुचि न थी। वे उसको जिला जज और कलेक्टर की पत्नियों के सामने गाने के लिए प्रोत्साहित किया करते थे।

बचपन से ही दूसरी लड़की शारदा शान्त प्रकृति की थी। वह मौन-सी रहती। बड़ी-बड़ी आँखों से हर चीज को परखती। वह जो-कुछ सुनती कभी न भूलती। उसकी शहद-सी मीठी बातों में गम्भीर बुद्धि तरंगों की भाँति प्रवाहित होती। वीणा की झंकार, कोयल की कूकू, झरनों की कल-कल ध्वनि, वृक्षों की मरमर, सुन्दर गायन के रूप में उसके कंठ से शब्द निकलते। गायन-मूर्ति श्री रामय्या के चरणकमलों में उसने संगीत

सीखा था।

श्री रामय्या गायन व वाइलिन के लिए सम्पूर्ण दक्षिण में प्रसिद्ध थे। यन्त्र-वाद्यों में उनसे बढ़कर कोई न था। उन्होंने अपना सारा हुनर शारदा को दिया था। श्री त्यागराज स्वामी ने आँखें मींचकर, सीताराम का साक्षात्कार करके जो कीर्तन लिखे थे, परम्परागत रूप से उन्होंने शारदा को सिखाये। शारदा भी शारदा न एक विशेषज्ञ से सीखी थी।

शारदा अपने पिता को बहुत चाहती थी। माई उसको छोड़कर एक क्षण भी न रह पाता था। शारदा की नयन-मूरत, हू-ब-हू माँ के समान थी। जमींदार भी उस पर जान देते थे। उनको शारदा पर गर्व था। जब वह ग्यारह वर्ष की थी उन्होंने अपने मित्रों के सामने उसका संगीत-सम्मेलन करवाया। वृद्ध, शान्त, तेजस्वी, भास्कर मूर्ति वी० ए० एल० टी० ने उसको चार भाषाएँ और अन्य विद्याएँ सिखाई थीं।

आज शारदा करीब चौदह वर्ष की है। बहुत सुन्दर है। सुगुण निधि-सी है। उसके तप के फल के अनुरूप पति रूपी वृक्ष कल्प को ढूँढकर लाना है।

यद्यपि जमींदार समाज में सुधार करना चाहते थे और शारदा को उच्च शिक्षा दिलवाना चाहते थे तो भी वे परम्परा के राज पथ से विचलित न हो सके। युक्त आयु में ही शारदा के लिए वर खोजना था। पहले जमींदारी घराने में विवाह करवाने का शौक था पर वह शौक पूरा हो चुका था और उन्होंने मुँह की खाई थी। उन्होंने शपथ कर ली थी कि चाहे कुछ भी हो वे अपनी लड़की का किसी जमींदार के साथ विवाह न करेंगे।

पत्नी वरदकामेश्वरी देवी यह हठ कर रही थी कि उसका विवाह उनके भाई के लड़के कोत्तपि वलय राजेश्वर जगमोहन राव के साथ हो। उनके भाई व विश्वेश्वर आनन्द सुवर्णेश्वर लिंग, विजयनगर की वेश्याओं के चक्कर में पड़कर बहुत धन खोकर, कर्ज में फँस-फँसाकर गुजर गए थे। उनकी जमींदारी कोर्ट स ऑफ वार्ड्स ने सँभाल ली थी। उनका कर्ज चुकाकर दो लाख रुपये जमा करके जमींदारी उनके २२ वर्ष के लड़के जगमोहन राव को सौंप दी गई थी।

उस छोटी-सी जमींदारी के विषय में जाने कितनी ही अफवाहें देश-

भर में फैल रही थी।

जब कभी उनकी पत्नी इस सम्बन्ध के बारे में कहती तो शास्त्री सुन्दर प्रसाद राव जी उत्तर देते, "बेटी को अनन्त नरक भेजने की अनुमति नहीं है। अगर उसे शादी में लड़की देनी है तो मुझे अपना दिल पत्थर का कर लेना होगा।' वे कहा करते।

शीघ्र उसका विवाह करने के लिए वे आस-पास में जाल फेंकने लगे। वे चाहते थे कि उनका दामाद खाते-पीते परिवार का हो, अक्लमन्द हो, सुन्दर हो, गुणवान हो। पढ़ा-लिखा हो। जितने भी प्रसिद्ध नियोगी[1] परिवार थे, उन सबकी छान-बीन की। उन्होंने उन सब परिवारों की फ़ेह-रिस्त भी बनवा ली थी।

कई लड़के ऐसे होते, पर उनके पास पैसा न होता। पैसा होता तो काले अक्षर भैंस बराबर होते। अगर दोनों होते तो शक्ल-सूरत ठीक न होती। और जिनमें ये तीनों गुण होते वे जहर के घड़े-से लगते। जमींदार ढूँढ़ते-ढूँढ़ते थक गए थे। वे यह सोचकर निराश भी होने लगते थे कि कहीं उन्हें उपयुक्त वर ही न मिले। पर उन्हें यह मंजूर न था कि किसी ऐसे लड़के को अपनी लाड़ली लड़की को दे दें जो उनकी पसन्द के मुताबिक सर्व-गुण-सम्पन्न न हो।

४ : नारायण

जब विजयवाडा के प्लेटफार्म पर उन्होंने नारायणराव को देखा तो जाने क्यों उनका दिल पसीज उठा। उनके हृदय में कोई अस्पष्ट ध्वनि निरन्तर गीत की तरह प्रतिध्वनित होती रहती-सी लगती—'शायद यह शारदा के लिए उत्तम वर है।' जमींदार आज तक यह नहीं सोच पाये

१- ब्राह्मणों में एक श्रेणी।

है कि उनको यकायक कैसे सूझा था कि नारायणराव का विवाह नहीं हुआ था।

वह व्यक्ति जो सिवाय काम के वगैर बात न करता था, समवयस्कों से ही बातचीत किया करता था, नारायणराव को देखकर सहसा पूछ बैठा, "आपका विवाह हो गया है ?"

फिर परिचित राजेश्वरराव से नारायणराव के बारे में काफी जानकारी भी हासिल कर ली।

जब वह पुस्तकों की दुकान पर खड़ा पुस्तकें खरीद रहा था तो उनको लगा कि मानों उसका आजानुबाहु शरीर, पुरुषत्व का मूर्त रूप हो।

उसके अंग-अंग से, आंखों से, उपरले-होंठ की चमक से, सुन्दर कानों से, समान नाक से, स्त्री-सुलभ सौन्दर्य चांदनी की तरह निकल रहा था। वे हाथ, जो मुट्ठी से खम्भा छोड़ सकते थे बड़ी अंगुलियों से सुशोभित थे। हथेली मुलायम थी। विशाल भाल। काले बाल, चाँदनी को घेरे-से लगते थे।

नारायणराव के यौवन, सुदृढ़ देह-कान्ति के प्रवाह में जमींदार ने अपने हृदय की चिर पिपासा बुझाई। वे यह जानकर फूले न समाये कि उनके गाँव के पास ही इस पुरुष-रत्न को भाग्य ने उनको साक्षात्कार कराया था।

लक्ष्मीपति नारायणराव की तीसरी बहन का पति था। और उसकी बुआ का लड़का था। वह अपने माँ-बाप का इकलौता था, भाई-बहनों के प्रेम से वह परिचित न था, इसलिए उसका दिल हमेशा ससुराल पर ही लगा रहता। वह नारायणराव को अपने भाई की तरह चाहता था।

मुंह में स्पेन्सर का 'चुरुट' रख, धूम्रपान करते हुए, फर्स्टक्लास के मुलायम गद्दों पर मजे से बैठकर, लक्ष्मी पति द्वारा किये गए नारायणराव के गुण गणों का वर्णन जमींदार बड़े ध्यान से एलोर[1], से ताडेपल्लि गूडिम[2] तक सुनते रहे।

"नारायणराव बहुत ही नरम दिल का है। किसी का कष्ट वह देख तक नहीं पाता। जब वह छोटा था किसी को अगर रोता देखता तो

१. २. दक्षिणी पूर्वी रेलवे के स्टेशन।

उसकी आँखों से गया वह उठती । अपनी चीजें देकर उसको मनाने की कोशिश करता । अनेक नौकर-चाकरों के बावजूद, भाई-बहनों के लड़के-लड़कियों को खुद उठाता, खिलाता, पिलाता । और वे बच्चे भी उस पर जान देते थे । अपने माँ-बाप से भी अधिक उसे चाहते थे । दुधमुँहे बच्चे भी माँ के पास सिर्फ दूध पीने जाते, पर सोते उसके बिस्तर पर ही । उसकी आवाज में मधु का माधुर्य है, और बिजली का गाम्भीर्य । जब वह गाता तो मेरी आँखें छलछला जातीं । हम जब उसे संगीत सिखाने के लिए कहते तो वह कहता कि मैं संगीत के लायक पवित्र नहीं हूँ ।"

"पढ़ते वक्त भी उसे यह गवारा न था कि किसी को किसी प्रकार की तकलीफ हो । वह हमेशा पुस्तकें, खाने-पीने की चीजें, तस्वीरें, अपने सहपाठियों में बाँटा करता ।" ताडे पल्लि[1] से निडदवोल' तक लक्ष्मी-पति नारायणराव की पढ़ाई के बारे में कहता रहा ।

"कभी किसी परीक्षा में वह अनुत्तीर्ण नहीं हुआ । हर श्रेणी में वह प्रथम रहा । इंटर में तीन विषयों में वह अव्वल था । उसे सोने का पदक दिया गया था । इस बीच में महात्मा गाँधी जी का आन्दोलन शुरू हुआ राजमहेन्द्रवर कालेज छोड़कर वह देश के काम में लग गया । जेल भी गया । वहाँ छः महीने बिताये । जेल से वापिस आया । स्वराज्य पार्टी उसे नहीं भाती । बी० एस-सी०—आनर्स पास की । उसका नम्बर दूसरा था । लॉ प्रीवियस में भी वह जरूर पहला रहेगा ।

निडदवोल के बाद, लक्ष्मी पति नारायणराव की जमीन-जायदाद के बारे में कहने लगा—

"दो भाई हैं । ३२० एकड़ की खेती होती है । और बाग-बगीचे ३० एकड़ से अधिक हैं । लेन-देन के व्यापार में एक लाख साठ हजार रुपया लगा हुआ है । कम-से-कम हर साल २० हजार रुपये आमदनी हो ही जाती है । मेरे ससुर सुब्बाराय जी भी अच्छे भले आदमी हैं । मेरी सास जानकम्मा जी पार्वती की तरह हैं । चार लड़कियाँ हैं, और चारों की शादी हो गई है । अच्छे घरों में ही वे ब्याही गई हैं ।

जमी०—"तुम्हारा साला तो सर्व-गुण-सम्पन्न नजर आता है ।

१. दक्षिणी पूर्वी रेलवे का एक स्टेशन ।

अगर भाग्य ने मेरा साथ दिया तो मैं और मेरी बेटी दोनों धन्य होंगे।

लक्ष्मी०—'इसमें क्या है, आप बड़े आदमी हैं, अगर आप चाहें तो जमींदारी घराने में ही विवाह करवा सकते हैं।"

जमी०—'जमींदारों की बात हटाइये। अपने नियोगियों में एक ठीक सम्बन्ध बताइये। आप छोटे हैं, पढ़ रहे हैं, कोई चुनकर अच्छा सम्बन्ध बताइये।"

लक्ष्मीपति ने मुस्कराते हुए कहा—"भला मैं क्या जानता हूँ?"

जमी०—"मैं यह जानता ही न था कि हमारे इतने नज़दीक महाराजाओं के लायक सम्बन्ध है। ख़ैर, भगवान् की दया से कम-से-कम अब तो देख पाया हूँ। नहीं तो मैं ज़िन्दगी-भर पछताता रहता।"

लक्ष्मी०—"जब मन चाहता है तो सब अच्छा ही लगता है। मुझे बड़ा सन्तोष होगा अगर वह आपका दामाद बन सका। हम गाँव वाले हैं।"

जमींदार कुछ सोचने-सोचते आँखें मींचे बैठे थे।

नारायणराव की शक्ल-सूरत वाली कोई सुन्दरी, एक बच्चे की माँ उसकी प्रतीक्षा कर रही होगी, यह सोचकर वह चमचमाते गोदावरी के पानी को देखने लगा। वह प्रेम की मूर्ति-सी थी। वह पति को हजार आँखों से देखती, उसकी हजार हाथों से सेवा करती। इस गोदावरी के जल में और उसके मन में न मालूम क्या सम्बन्ध है। वे हिन्दू स्त्रियाँ, जो पतियों के लिए सर्वस्व अर्पित करती हैं, निःसन्देह पूज्य हैं। लक्ष्मीपति को इस गम्भीर गोदावरी के पानी में अपने लाडले लड़के का मुँह दिखाई दिया। उसके मुँह पर सन्ध्या की लालिमा की तरह मुस्कराहट आ गई।

गोदावरी पार करके गाड़ी स्टेशन पर रुकी। जमींदार और लक्ष्मीपति गाड़ी से उतरे। "अच्छा तो मुझे आज्ञा दीजिये। नमस्ते!" कहकर लक्ष्मीपति अपने मित्रों के पास गया। आलम एलोर में ही उतर गया था। कुलियों ने दो-चार मिनटों में सामान ठीक कर दिया। राजेश्वरराव, नारायणराव और लक्ष्मीपति ने परमेश्वर मूर्ति और राजाराव के कन्धे थपथपाए। सस्नेह उनसे हाथ मिलाकर टिकिट लेकर दरवाज़े के पास गये। इतने में जमींदार एक और आदमी के साथ वहाँ आये। उनके साथ चार-पाँच चपरासी और तीन-एक नौकर भी थे।

जमीं०—"ये मेरे छुटपन के दोस्त हैं। इनका नाम वेंकट श्रीनिवासराव है। इस शहर के बड़े वकील हैं।"

श्री०—"आप-जैसे नौजवानों से मिलकर मुझे बड़ी खुशी हो रही है। इन दो-चार मिनटों में जमींदार साहब ने यह भी बता दिया है कि आप भावी आन्ध्र के होनहार युवक हैं।"

जमीं०—"ये लक्ष्मीपति जी हैं और ये हैं उनके साले नारायणराव जी।"

जमींदार को नाम याद करने का प्रयत्न करते हुए देखकर लक्ष्मी बोला—"और ये हैं राजेश्वर राव नायडु।"

श्री०—"बहुत खुशी हुई आपसे मिलकर! आज आप सबको हमारे घर आतिथ्य स्वीकार करना होगा। लक्ष्मीपति जी, अगर आपने मेरी बात न मानी तो मैं दावा कर दूंगा कि इन्होंने मेरे मन को कष्ट दिया है!"

लक्ष्मी ने सोचकर उत्तर दिया—"राजेश्वर राव के बारे में मैं कुछ नहीं कह सकता। पर हम दोनों जरूर आयेंगे।"

राजे०—"मैं घर जाकर फिर आऊंगा।"

श्री०—"घर जाकर भोजन के लिए जरूर आना, नहीं तो दावा करना होगा।"

राजे०—"आपको तीन पैसे की डिग्री दे दूंगा, चाहें तो अभी देता जाऊं!"

श्री०—"राजेश्वर राव जी आपके पिता मेरे पुराने परिचित हैं। कुछ मेरी भी तो सुनिये!"

राजे०—"अच्छा तो दस बजे मिलेंगे।"

सब स्टेशन के बाहर आये। सामान जमींदार की बग्घी में रखवा दिया गया। श्रीनिवास राव अपनी मोटर में दोनों अतिथियों को अपने घर ले गए। जमींदार निजी मोटर में अपने घर गये।

५ : शारदा

शीतसौरभ-जल-चुम्बित प्रात कालीन समीर उस उद्यान में आँखमिचौनी खेल रहा था। वसन्तकालीन सुगन्धि सर्वत्र व्याप्त थी। रजनी, गुलाब, चम्पा, चमेली आदि रंग-रंग के फूलों से भरे जमींदार के उद्यान में शारदा मुग्ध वनलक्ष्मी की तरह फूल तोड रही थी। शारदा फूलों को बहुत प्यार करती थी—कौन लडकी नहीं करती? वह फूलों का इतिहास जानती थी। फूलों का नाम और उनकी भाषा वह पहचानती थी।

शारदा प्राय. उल्लसित होकर बताया करती कि किस ऋतु में, किस प्रदेश में कौन-सा फूल विकसित होता है।

शारदाकुमारी सौन्दर्य की मूर्ति-सी थी। उसकी आँखें कभी खिलती, कभी आधी मिचती। कभी सम्भी होती—जीवन के विचित्र नाटक को देखकर अपना आश्चर्य प्रकट करती। उसकी काली-काली पुतलियाँ रात्रि के गम्भीर नीलाकाश की तरह लगती। उसके शरीर का रंग ऐसा था मानो शुद्ध सोने में कमल का रंग मिला दिया गया हो। नवयौवन की प्रथम कान्ति उसके मस्तक, नाक, कपोल, ओष्ठ, चिबुक, कानों पर नाचती थी। उसकी भौंहें चन्द्रमा की तरह मुडकर कनपटी में विलीन हो गई थी। नाक सोने की कनेर के समान थी। चिबुक अनार-सी लगती थी। उसने नदी की तरंगों की भाँति चम-चम करने वाला चन्दन वर्ण का रेशमी लहगा पहन रखा था। गुलाबी रंग का जाकेट था, जिसमें से नव-यौवन झाँकता-सा लगता था।

एक तरफ माँग निकाली हुई थी। लम्बे, गुच्छेदार बाल नितम्बों तक लटके हुए थे। पैरों में लुधियाना की मखमल की मुलायम चप्पल थी। कानों में बालियाँ। नाक में नथ। गले में हीरे-मोतियों से जडा हार। धीरे-धीरे वह मटकती-मटकती फल तोड रही थी। किसी ने

आकर कहा—"पिताजी आये हैं।"

शारदा देवी यह कभी न भूलती थी कि वह एक जमींदार की लड़की है। वह शारदाम्बा जमींदारनी की पोती थी, जिनके उदारता आदि सुगुण कदापारा से लेकर पेन्ना तक सम्पूर्ण आन्ध्र में प्रसिद्ध थे। शारदा को उनके वे गुण विरासत में मिले थे।

'माँ, शारदाम्बा, यह दोष आपका ही भुलवाया हुआ है, ये बच्चे भी आपके हैं, इस वंश का आपने ही उद्धार किया है।' कहकर आज भी जमींदार की माता को अनेक लोग अनेक प्रकार से याद किया करते हैं। जमींदार के पिता के जमाने में, जमींदार के बड़े होने के बाद, जमींदारी सँभालने पर भी शारदाम्बा आजीवन, अहोरात्र सभी जाति वालों को अन्न-दान करती रहीं। हरिजनों को भी खाना बनवाकर दिलवाती। कितनों का ही विवाह करवाया था। मर्यादित, साहित्यिक, धर्मात्मा, कितनों ही को वार्षिक दान देती थीं। वे गंगराजु भुवनरंजन राव की इकलौती लड़की थीं। उन्होंने हैदराबाद रियासत में व्यापार करके बहुत रुपया कमाया था। सुगुण-सम्पदा और धन-सम्पदा उनमें गंगा-यमुना की तरह सम्मिलित थी।

यह जानते ही कि पिताजी आये हैं, शारदा का मुँह प्रसन्नता से खिल उठा। छोटी टोकरी में फूल डालकर वह जल्दी-जल्दी घर में चली गई। दुमंजिले में उसका कमरा था। कमरे में आइने के सामने खड़े हो, बालों में फूल गूँथकर और वेन्कायम्मा से यह मालूम करके कि पिताजी कहाँ हैं, वह उनके पास गई।

जमींदार अपने अध्ययन-कक्ष में एक मोढ़े पर बैठे थे। शारदा की माँ, वरद कामेश्वरी देवी, एक गद्देदार कुर्सी पर बैठी पति से बातचीत कर रही थी। जमींदार की बड़ी बहन सुन्दर वर्धनम्मा भी वहाँ खड़ी थी। उन्होंने पूछा—"क्यों भाई, क्यों बुलाया है?"

सुन्दर वर्धनम्मा विधवा थीं। उनके पति, विश्वनाथ जी हाईकोर्ट में जज थे। उन्होंने लाखों रुपया कमाया था। वेदान्त का ज्ञान पाने के लिए वे बड़ी आसक्त और उत्सुक थीं। वे हमेशा रेशमी वस्त्र धारण करतीं। उनका लड़का पिता की तरह मद्रास में ही वकालत में काफी कमा रहा था।

मजे में अपना समय गुजार रहा था। बहुत-कुछ जमा भी कर लिया था। पुत्र के घर में उनके आचार-व्यवहार, पूजा-पाठ, व्रत-उपवास न चल सके, इसलिए वे अपने भाई के घर में रह रही थी। घर में रसोइया बोल-वाला था।

जमी०—'आज छोटी लड़की के लिए वर आ रहा है।"

वर्धनम्मा और वरदकामेश्वरी दोनों—"कहाँ से? कौन?"

जमी०—"नया सम्बन्ध है।"

वर्धनम्मा—"हमारे प्रान्त का ही है न? हमने सारा प्रान्त पहले ही टटोल लिया था। सभी वे ही तो सम्बन्ध हैं जिनको हमने पहले इन्कार कर दिया था?"

वरद०—"जमीदार घराने का है न?"

जमीदार ने हँसकर उत्तर दिया—"मुझे कहने तो दो! हमारे प्रांत का ही है। जमीदार घराना तो नहीं है, पर शुद्ध नियोगी है। काफी धन-दौलत भी है।"—पत्नी की ओर देखकर—"उनमें जमींदारों को भी कर्ज देने की शक्ति है।"

वर्धनम्मा—"गाँव में हमारी जाति के कई ऐसे भी परिवार हैं, जो मिर्चें भूनकर खाते हैं, बनियों की तरह पैसे जमा करते हैं। कहीं इस तरह के घराने का तो नहीं है!"

वरद०—"खूब कहा आपने?"

जमी०—"हम लोगों से वे कहीं अच्छे हैं। उनकी हैसियत इतनी बड़ी है कि मान-मर्यादा में वे हमें ही सबक सिखा सकते हैं।"

वर्धनम्मा—"वर की शक्ल-सूरत कैसी है?"

जमी०—"आ ही रहा है, देख लेना, गाँव के सांड को मात करता है?"

वर्धनम्मा—"हाँ, भूल गई, कहाँ तक पढ़ा-लिखा है?"

जमी०—"वर की शक्ल-सूरत मन्मथ की-सी है। वह उन निकम्मे पीले, पिलपिले जमीदारों से लाख गुना अच्छा है, जो चार कदम भी नहीं चल सकते। सौन्दर्य में वह अर्जुन के समान है, बल में भीम की बराबरी करता है। अगर यह सम्बन्ध तय हो गया तो हमारी शारदा सचमुच किस्मत वाली होगी।"

वरद०—"मतलब यह कि आपको हमारा लड़का पसन्द नहीं है। उसमें क्या कमी है ? वह क्यों नहीं आया। मुझसे कहा क्यों नहीं ? थोड़ा ज्यादा खर्च करता है तो आप उनको फिजूल-खर्च कहते हैं, जो जो-कुछ कहता है उन सबको कान देते हो। ये नहीं सोचते कि वे ईर्ष्या के कारण कह रहे हैं। शारदा बड़ी हो रही है। उससे भी पूछकर देखिए कि वह क्या चाहती है। आप तो सुधारक है, वीरेश लिंग पन्तुलु[1] के साथ मैत्री भी की है। लड़की को जो सम्बन्ध भाये उसीको तय करना अच्छा है न ?"

वर्धनम्मा—"तो आप चाहती हैं कि स्वयंवर हो, शारदा को बुलवाओ।"

इस बीच में विद्युल्लता की तरह शारदा वहाँ आ पहुँची। पिता के हाथ बढ़ाते ही वह फूलों की गेंद की तरह उनकी गोद में चली गई। पिता ने सिर सहलाकर पास के सोफे पर उसे बिठाया और पूछा—"बेटी शारदा, कहाँ गई थी तुम !"

शारदा—"मैं फूल तोड़ने बाग में गई थी। यह भी देखना चाहती थी कि पेड़-पौधों को पानी दिया गया है कि नहीं। बाबूजी, आपने जिस पुस्तक के लिए मद्रास लिखा था, वह आ गई है। हमारी अंग्रेज अध्यापिका ने कल शेक्सपियर शुरू किया था—'मर्चेण्ट आफ वेनिस'; जो किताब हमने मँगाई है उसमें सभी नाटक है। चित्र भी अच्छे है, पर 'वेरिटो एडिशन' चाहिए, क्या उसे मँगाकर नहीं देंगे ?"

जमी०—"तेरी उम्र में हमने शेक्सपियर का नाम भी नहीं सुना था। तुझे अच्छी अध्यापिका मिली है। मेरे पास 'आर्डेन एडिशन' है, वह वेरिटो एडिशन से काफी अच्छा है।"

पिता-पुत्री की बातचीत अंग्रेजी में ही हुई। पिता ने पुत्री की ओर मुस्कराते हुए अंग्रेजी में यों कहा—"शारदा, तुझे जगन्मोहन राव के बारे में पहले ही बता चुका हूँ। आज मैंने एक ऐसे वर को घर बुलाया है, जो तेरे लिए सब प्रकार से योग्य है। विद्या में वह अग्रगण्यों में अग्रगण्य है। खूबसूरत ही नहीं, वह ताकतवर भी है। उसके पास माल-मिल्कियत में

१. आन्ध्र के प्रसिद्ध समाज-सुधारक व साहित्यिक।

जितना हमारे पास है, उसका ठीक आधा है। लॉ प्रीवियस की परीक्षा दी है। उसका पहला नम्बर आयगा। परीक्षाओं में और खेल में उसने इतने कप तथा मेडल्स जीते है कि एक खासी बडी दुकान खोली जा सकती है।"

शारदा शरमा गई। मुस्कराते हुए उसने सिर हिला दिया।

वर्धनम्मा ने अपने भाई से कहा—"शायद तुमसे कहते हुए शरमा रही है।"

"वे सब शाम को लडकी देखने आयेंगे।" कहकर जमीदार स्नान करने के लिए चले गए।

६. कोतपेट

सुब्बाराय जी रसिक प्रवृत्ति के थे। बातें करने मे भी कुशल थे। एक तो उनका बातें करने का तरीका मीठा था। फिर किसी भी विषय पर वे अच्छी जानकारी के साथ बोल सकते थे। बडे-बडे वकील भी उनकी सुनते थे। महाजनो के लेन-देन के व्यापार के सिवाय वे सभी विषयो में दिलचस्पी लेते थे, उन पर कानूनी ढग से विचार करते थे, भले ही उनका उनसे कोई सम्बन्ध हो या न हो। अगर वे भी पढे होते तो एक बडे वकील हो गए होते। उन्होंने हिन्दू-न्याय-शास्त्र में स्वय काफी खोज की थी, और उस खोज के आधार पर उन्होंने एक गोद लेने का—एडोप्शन का, मुकदमा भी जीता था। और बाद में उस मुकदमे के फैसले के कारण कानून भी बदल दिया गया था। यह उनके बारे में कहा जाता था।

गोरा रग, कद्दावर, हट्टे-कट्टे, सिर के सफेद बाल, दाढी और मूंछ उनकी खूबसूरती को बढाते थे। उनका विशाल वक्ष-स्थल, कसरती हाथ, बडी-बडी काली-काली आँखें, चौडा माथा, सफेद यज्ञोपवीत, आचार्य द्रोण की याद दिलाते थे।

वे अनगिनत कहानियाँ जानते थे। बड़े-बड़े बुज़ुर्ग भी उनकी कहानियाँ दत्तचित्त होकर सुना करते। लगभग सभी भाषाओं के ग्रन्थों का उन्होंने अध्ययन किया था। आवश्यकतानुसार वे कहानियाँ गढ़ भी लेते थे। एक बार गढ़ी हुई कहानी को वे फिर कभी नहीं सुनाते थे।

उस दिन शाम को वे 'काशी मजली' की अदृष्ट दीप की कहानी सुना रहे थे और उनकी लड़की हाँ-हाँ करती सुन रही थी। बड़ा लड़का, और उसके दो लड़के, लड़की, उनकी पत्नी, जानकम्मा, वृद्ध किसान, आस-पास के ब्राह्मण, बन्नू, पैर दबाता हुआ नाई, पंखा झलता हुआ धोबी भी कहानी सुनने में मस्त थे। इतने में एक गाड़ी उनके घर के सामने रुकी।

नारायणराव अन्दर आया। 'भाई आये हैं, अम्मा छोटे भाई', कहती-कहती सूर्यकान्त उठी, और भागी-भागी भाई के पास गई। नारायण ने उसे गोदी में उठाया, गले लगाया, चूमकर नीचे उतार दिया। 'ताता-ताता' कहते हुए नारायणराव के भाई के दो लड़के और लड़कियाँ चाचा की ओर भागे। तीनों को उसने एक साथ उठा लिया। एक को कन्धे पर, एक को गोदी में, और तीसरे को हाथ से पकड़कर वह सेहन में गया। गाड़ी वाले, नाई और धोबी ने सारा सामान लाकर अन्दर रख दिया। नारायणराव ने उसमें से एक बड़ा सन्दूक सेहन में रखवाया। उसका ताला खोलकर खिलौने, तरह-तरह की जापानी खेलने की चीज़ें, ताँबे, चाँदी, हाथी-दाँत, चन्दन की वस्तुएँ, रेशमी खद्दर की साड़ियाँ, कमीज़, लहँगे, उत्तरीय, और जाने क्या-क्या निकालकर उसने चारों ओर इकट्ठे हुए-हुए अपनी माँ, भाभी, बच्चों और भाई वगैरा को दिखाये।

"मेरी, घोड़ा-गाड़ी अच्छी चलती है," भाई के छोटे लड़के ने कहा।

"ताता, मेरी मोटर भाई की गाड़ी से अच्छी नहीं है क्या ?" बड़े लड़के ने कहा।

"मेरे चाँदी के खिलौने के सामने तुम्हारी चीज़ें कुछ नहीं हैं।" लड़की ने कहा।

सूर्यकान्त रंग-बिरंगे ज़रीदार उत्तरीय, चन्दन की चीज़ें आदि देखकर फूली न समाती थी।

"नारायण ने इनके लिए कम-से-कम सौ रुपये खर्च होंगे, पैसा हो तो

पानी की तरह बहा देता है।" भाई श्री राममूर्ति ने कहा।

श्री राममूर्ति भाई को कितना चाहते थे, यह सिवाय नारायणराव के शायद और कोई नहीं जानता था। माँ-बाप, और श्रीराममूर्ति की पत्नी, वरलक्ष्मम्मा, ही मना है कि थोड़ा-बहुत जानते हों। श्री राममूर्ति सुब्बाराय और जानकम्मा जी का बड़ा लड़का था। तीस वर्ष की उम्र थी। बी० ए० के बाद वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण करके वे अमलापुर में प्रैक्टिस कर रहे थे। काफी पैसा कमाया था, शोहरत भी थी। समझदार और चतुर समझे जाते थे। कोर्ट, घर, पत्नी, बाल-बच्चे, माँ-बाप, भाई-बहन, पत्नी की तरफ के रिश्तेदार और सम्बन्धी—उनकी दुनिया बस, इन्हीं तक सीमित थी। सामाजिक व राजनैतिक बातों से उनका कोई वास्ता न था। मामी की तरह वे कुछ मोटे और साँवले भी थे। यद्यपि वे पाँच फीट सात इन्च के थे, तो भी वे भाई और पिता से काफी छोटे थे।

"भैया, मैं तुम्हारे लिए यह चन्दन की पेटी लाया हूँ, इसमें कागजात वगैरा रखे जा सकते हैं। अच्छी है न? देखो इसकी नक्काशी। ढक्कन पर गोवर्धन-धारण का दृश्य है, और अन्दर रावण का कैलाश पर्वत उठाना दिखाया गया है, नीचे राम हरिण के पीछे भाग रहा है, बगल में एक तरफ सीता अशोक-वन में बैठी है और दूसरी तरफ वृंदावन में कृष्ण और गोपियाँ हैं। इसकी कीमत पिचत्तर रुपये है।"

"अरे, इतनी छोटी चीज के लिए इतनी बड़ी कीमत!"

"हाँ इस पर कारीगरी भी तो की गई है!"

"भाभी, यह रही तुम्हारे लिए पोन्दूर की साड़ी!"

"अरे, पोन्दूर की साड़ी क्यों लाये? सात-आठ रुपये में महीन खद्दर की साड़ी जो आ जाती है?" भाई ने कहा।

"नहीं भैया, भाभी मोटी-मोटी साड़ी पहनती हैं, वो तो पहले से ही थोड़ी मोटी हैं और खद्दर की साड़ी पहनकर तो दुगनी हो जाती हैं। इसलिए तीन सूती, और एक रेशमी साड़ी खरीद लाया हूँ। माँ के लिए भी चार लाया हूँ। तेरे लिए दो जरीदार उत्तरीय–एक पोन्दूर की और दूसरी सेलम की। पिताजी के लिए चार बन्दर[1] की धोतियाँ तथा और भी बहुत-

१. आन्ध्र का एक नगर।

कुछ लाया हूँ। बहन के लिए, बच्चों के लिए, तेरे लिए, सबके लिए! और बजरंगलिन कहाँ है?"

"मामा के घर गई हुई है" श्री रामकृष्ण ने कहा। उनके मुँह पर चाँदनी-सी खिल रही थी। वे भाई की प्रशंसा दूसरों के सामने कम-से-कम दिन में दो-तीन बार किया करते थे।

"है न हमारा भाई, उसका शरीर एकदम पत्थर है, और मन मलाई नरम! मगर पिताजी की भाग्यमन्दी दशमी के चन्द्रमा की तरह है तो उसकी पूर्णिमा की तरह। अगर कभी हमें स्वराज्य मिला तो उसे जरूर मुख्य मन्त्री बनना चाहिए, उसका दिमाग भी मोरारजी, दास, नेहरू, राधाकृष्णन्, गुहाभि और ग्लैडस्टन-जैसा है," वे कहा करते।

यद्यपि वे स्वयं लोभी और कंजूस थे पर उनको भाई की फिजूलखर्ची भी प्यारी थी। उनके हृदय में कहीं दबे हुए गुण उनके भाई नारायणराव में पूर्णतः मूर्त रूप धारण कर गए थे।

यह नारायणराव भी भली भाँति जानता था।

'भाई तो इतना लालची है, कंजूस और पत्थर दिल सा है, पर यह नारायणराव जाने क्यों उसका इतना आदर करता है?' उनके साथी कई बार इस विषय पर कानाफूसी किया करते।

"क्यों बेटा, पिताजी ने जो पाँच सौ रुपये भेजे थे, सब खर्च दिये हैं?" माता ने पूछा।

"हाँ माँ, और अभी बैंक की रुपये का सामान वी० पी० से आ रहा है।"

"लड़के को देखकर ही रीझती रहोगी, या हमें भी कुछ खिलाओगी," गुप्पाराव ने मुस्कराते हुए पूछा। वे अभी-अभी लक्ष्मीपति के साथ घर में घुस रहे थे।

हँसी-मजाक में गुप्पाराव अद्वितीय थे, और हमेशा हँसी-मजाक की बातें करकर पत्नी को खुश किया करते थे।

"बहन रसोई तैयार करके बैठी है, आठ बज जाते हैं, तब भी नहीं उठते, और नौ बजे से पहले खाने का नाम नहीं लेते, खाना खुशामद करवाते हैं, और आज शहर से लड़के को आया देख इतनी जल्दी पेट में चूहे कूदने

लगे हैं।"

किवाड के पास खडी जानकम्मा जी की बहन लक्ष्मी नरसम्मा नारायणराव की लाई हुई चीजें गौर से देख रही थी। उन्होंने कहा—"क्या बहनोई के लिए यह सब नया है ? मन में कुछ है और कहते कुछ और हैं।"

"बहन-बहन आपस में निपट रही हैं, अगर औरतें चाहें तो मर्दों को कहीं कोने में जाकर सिर छिपाना पड जाय।" सुब्बाराय ने मुस्कराते हुए कहा।

७ : परमेश्वर मूर्त्ति

परमेश्वर मूर्त्ति राजाराव को सामर्लकोट में काकिनाडा की गाडी में बिठाकर, स्वयं फिर मेल में आकर बैठ गया। परमेश्वर मूर्त्ति इकहरे बदन का था। सुन्दर आँखें, रंग कुछ साँवला, ऐसा जो गोरा होने की कोशिश कर रहा हो। समान माथा, पतले होठ। मूंछें भी इतनी कि गिनी जा सकती थीं। छोटे कान। लम्बी गर्दन, ऊँचे कन्धे, गोल-गोल, पतले-पतले हाथ—उसके अंग-अंग से स्त्रीत्व का आभास होता था। अगर वह तैरने में प्रथम पुरस्कार न पाता तो कहा जा सकता था कि उसके स्त्रीत्व में कोई कमी न थी।

उसका गला मधुर था। अच्छा गाता था। नित बदलती प्रकृति उसकी ध्यान-मुद्राओं में प्रतिबिम्बित-सी होती।

प्रकृति उसकी विचार-शक्ति को उत्तेजित करने वाली माता-सी थी। जब कभी वह प्रकृति में कुछ देखता तो उसका हृदय प्रभावित होता। सृष्टि की हर वस्तु उसको मेरु पर्वत की भाँति दीख पडती।

परमेश्वर मूर्त्ति दुनियादारी से अपरिचित था। उसका सहज पाण्डित्य ही जब उसको परीक्षा में सफलता प्रदान करता, तो वह स्वयं

प्रबन्ध करना।

प्रत्येक दिन नारायण बाबू की तरह परमेश्वर बाबू की सौन्दर्य-साधना था। [illegible] उनके सजे हुए कमरे का [illegible] सफ़ेद दीवारों पर कलकत्ते के अच्छे-अच्छे चित्रकारों के सुन्दर चित्र लगे हुए थे। दरवाज़ा और खिड़कियों पर मखमल के पर्दे लगे हुए थे। उन पर सुन्दर कढ़ाई का काम किया गया था। परन्तु इन सुन्दरताओं से [illegible] यह [illegible] का [illegible] — जैसे किसी ने [illegible] में [illegible] का [illegible] हो या दोनों के बीच [illegible] रख दिए हों।

परमेश्वर बाबू का विवाह कुछ दिन में हो गया था। वह [illegible] शरीर का था, पर उसकी पत्नी उससे सुन्दर थी। [illegible] किस चिड़िया का नाम है, वह न जानती थी। [illegible] के बारे में वह कुछ भी नहीं जानती थी। वह केवल गृहिणी थी। घर के काम वही करती, [illegible] में [illegible] भर कर [illegible] की तरह [illegible] ही रहती। [illegible] करती [illegible], [illegible] करती, [illegible], [illegible] की तरह [illegible] पानी भी भरती और उनके बच्चों की भी सेवा करती।

देखने में वह कोई खूबसूरत न थी, पर उसके चेहरे पर एक प्रकार की कान्ति-सी थी। उसकी आँखें [illegible] थीं, [illegible], [illegible] हृदय दोनों में [illegible] था।

वह कभी इधर-उधर की बातों में, [illegible] में, [illegible] में [illegible] की [illegible] करने की कोशिश नहीं करती। परमेश्वर बाबू [illegible] था कि वह [illegible] तरह और दिखाई, [illegible] [illegible] [illegible] बनाई। [illegible] पर पाउडर लगाने के लिए कहता। सफ़ेद साड़ी पहनने के लिए कहता। वह पत्नी को समझाता कि सफ़ेद साड़ी पहनने से रंग में शरीर का सौन्दर्य निखर आता है।

ये बातें सुनकर [illegible] केवल मुस्करा देती। बस। उसका [illegible] था कि गृहिणी के लिए ये सब [illegible] बातें आवश्यक नहीं।

परमेश्वर बाबू [illegible] स्टेशन पर उतरकर जब घर पहुँचा तो

रुक्मिणी का हृदय प्रफुल्लित हो उठा। उसकी आँखों में दिव्य कान्ति चमचमाने लगी।

कमरे में जाकर परमेश्वर मूर्त्ति ने पत्नी का आलिंगन किया, चुम्बन लिया। यद्यपि वहाँ कोई नहीं था तो भी रुक्मिणी शरमा गई—"आप हमेशा यही करते रहते हैं।"

"मैं अपना प्रेम काबू में न रख सका, इसलिए ऐसा कर बैठा, मैं आठ पत्र लिखूँ, और तुम सिर्फ दो का ही जवाब भेजती हो? तेरा दिल बहुत सख्त है रुक्मिणी, तीन महीने मैंने कराहते-कराहते काटे। मैं क्या तेरी फोटो देखकर ही पड़ा रहूँ? सालों से तुझे सिखाता आ रहा हूँ, पर तू वही दकियानूस पुरानी औरत ही बनी रहती है।"

"तो मैं क्या करूँ? मुझे डर है कि कहीं सास जी को न मालूम हो जाय। वे दो पत्र भी नौकरानी से लुका-छिपाकर मँगवाकर भेजे थे।"

"और वह लिखावट क्या है? मालूम नहीं किसको लिखे गए थे? दो-चार पंक्ति घसीट देने से कहीं चिट्ठी लिखी जाती है?"

वह अपना-सा मुँह लेकर पति की ओर देखने लगी।

"अच्छा, जाने दो! कमरे की यह क्या हालत है? मैंने नहीं बताया था कि कमरे को सजाना जिन्दगी को सजाने के बराबर है? और यह सामान क्या पड़ा है?"

"आप जब घर न हो तो कमरे को सजाने से क्या फायदा? कमरे को ठीक-ठाक करके कैसे बैठूँ?"

"खैर जाने दो!" परमेश्वर मूर्त्ति ने पत्नी का आलिंगन करके कहा, "मुझे एक चुम्बन दो!"

उसने लज्जा के कारण इधर-उधर देखा, फिर स्वामी के ओठों से ओठ मिलाये। "जाती हूँ," कहकर वह घर में कहीं गायब हो गई।

परमेश्वर मूर्त्ति 'श्रुति' और 'अपश्रुति' को धूप-छाँह की तरह जानता था। जैसे-जैसे वह 'श्रुति' के पीछे जाता 'अपश्रुति' उसके पीछे आती जाती। सुन्दर स्त्री को देखकर अगर कोई सन्तोष करना चाहता है या तो वह प्रेम किये बग़ैर चली जाती है, नहीं तो अपना दिल कड़ा कर लेती है। आखिर इस संसार में पूर्णता है ही कहाँ?

माँ-बाप से थोड़ी देर बातचीत की। फिर घर आई हुई बहन से कुछ कहा। उसके बच्चों को दुलारा-पुचकारा। मद्रास से लाए हुए उपहार सबको देकर, खाना खाकर, सोकर वह अपने कमरे को सजाने लगा।

दूसरे दिन उसको नारायणराव के पास से एक चिट्ठी मिली।

"परम, मेरे हृदय के समाराध्य कविराज, सुन, उस बालिका का सौन्दर्य सरस्वती में भी नहीं है। मुझे, मेरे हृदय को, मेरी आत्मा को उसने निगल-सा लिया है। अपने में समा लिया है। तेरे चितेरे दोस्तों में कोई भी उसकी तस्वीर खींचने के लिए कूँची भी नहीं उठा सकता। उसका शरीर, चमेली की कली-सा है। उनकी आँखों में क्याएँ नाचती हैं। जमींदार के साथ जो आये थे—श्रीनिवास राव उस शहर के बड़े वकील हैं। उनके घर में हम जमींदार साहब के घर गये, उन्होंने पूछा, 'लड़की पसन्द है न?'" परम, क्या मैं यह कहने लायक हूँ कि मुझे पसन्द है? उस सोने की सुन्दर मूर्त्ति के लिए, मैं गँवार क्या सचमुच योग्य हूँ? तू तो गाड़ी में जमींदार का मतलब ताड़ गया था, और सब भी जान गए थे। मैंने भी एक मिनट में पता कर लिया था। तब से मेरी शरम की कोई हद नहीं है। क्या उन्होंने अपनी लड़की को इतने दिन इसीलिए क्वाँरी रखा था कि मुझ-जैसे कठोर पुरुष को उसे बलि दे दे?

"जरूर सम्बन्ध निश्चित हो जायगा, तू अवश्य अपनी पत्नी को लेकर विवाह में आना! अगर तू पिताजी, माता जी, भाई-बहन को ला सका तो क्या, मैं तुझे क्या दे सकता हूँ,—दरवाजे के पास खड़े होकर तुझे गाने दूँगा।

"हमेशा मेरी नजरों के सामने वही लड़की है। मुझे एक विचित्र आनन्द का अनुभव हो रहा है।

"पर, हाँ, मुझे एक डर लग रहा है। सब ठीक है। कहा जा सकता है कि हमारा भी अच्छा खाता-पीता परिवार है, फिर भी लड़की जमींदार घराने की है, सुख-सम्पन्नता के वातावरण में पली है। जमींदारी शान-शौकत उसके पग-पग में रखी जा सकती है। सम्भव है कि उसका जीवन हमारे जीवन से मेल न खा सके, और सारी कहानी विषादान्त हो जाय।

"यानी—इस विवाह के कारण अगर मुझे अपने कुटुम्ब से अलग होना पड़ा तो मुझे आजीवन दुखी रहना होगा। मान लिया कि मैं भी भाई की तरह पेशे और नौकरी के कारण दूर रहने लगता हूँ—पर यह मानने में मुझे बड़ा दुःख हो रहा है—और मान लो कि उसने जमींदारी चोंचलों में पड़कर मुझसे प्रेम न किया तो मेरी क्या गति होगी ? परम, यह सब मैं सोच नहीं पाता हूँ।

"यह ऊटपटाँग पत्र देखकर भले ही तू मुझे पागल समझ ले, पर इस समय तुझे अपने पास न पाकर मुझे ऐसा लग रहा है कि जैसे मेरी चेतना ही गायब हो गई हो। तू अभी-अभी पल्लो के पास गया है। मैं भी कैसे कहूँ कि वानप्रस्थ स्वीकार करके मेरे पास चला आ! सोच-समझकर जवाब देना! काकिनाडा, डाक को भी लिखा है, तुम्हीं दोनों तो मेरे दाएँ और बाएँ हाथ हो।

"हम पहले ही जानते हैं कि प्रेम सच है, वह किताबों में रहने वाला कोई कीड़ा नहीं है। जो उसे कीड़ा मानते हैं वे निरे-बे-तजुर्बेकार हैं,—उस प्रेम ने अब मुझे जकड़ लिया है, उस लड़की ने मेरे हृदय को इस प्रकार खींचा है, जैसे चित्र में सत्यवान से जीवन को खींचा जा रहा था,—हाँ हो सकता है कि वह सच्चा प्रेम हो, और शायद इन्द्रिय-लोभ ही हो, पर जिस दिन मैं उस लड़की को न पा सकूँगा तो यह सारा जीवन सहारा का रेगिस्तान-सा हो जायगा। उससे मिलने से पहले मेरा ख्याल था कि वह दुबली-पतली, पीली, निष्प्राण-सी होगी। जोर-जबरदस्ती से थोड़ा-बहुत संगीत सीख लिया होगा, कुछ-कुछ अंग्रेजी में भी पिच-पिच करती होगी, थोड़ी तेलुगु और उससे थोड़ी संस्कृत घोट रखी होगी। चेहरा, गूँधे हुए आटे की गेंद की तरह होगा, न ठीक आँख, न नाक, न चिबुक ही होगा। पर वह मनुष्य की सन्तान नहीं है, मन्मथ की सृष्टि है। सरस्वती है।

"क्या संगीत, क्या सिठास, यकीन करो कि वह स्वयं मूर्तिमूत कला है, हम वहाँ पिघल-से गए, उसके वाइलिन बजाने से ही लगता था कि वह श्री रामय्या की शिष्या है।

"मेरे बहनोई ने उसकी भाषा और पाण्डित्य को कसौटी पर रखकर परखा।

उसको देखकर मैं तन्मय हो गया ; दीवाना-सा हो गया । मैंने उसका थाईलिन लिया और उसमें वैंकट स्वामी, नायडू, चोडय्या, गोविन्दस्वामी पिल्ले का चमत्कार, माधुर्य भर दिया । मैंने उस दिन बहुत बढ़िया पोशाक भी पहनी थी । बता, मैंने कैसे वस्त्र पहने थे ? अनुमान कर !

"उस लड़की ने मुझे अचम्भे से देखा, यह मेरा खयाल है । मेरे जीजा था भी ; जवाब की प्रतीक्षा में—आशा कि तुम पास होगे ।

तुम्हारा—नारायण ।"

८ : 'हाँ' या 'ना'

इतने में लक्ष्मीपति की पत्नी बच्चे को लेकर गाड़ी से उतरी—"भैया आ गए तुम ? कितनी देर हुई तुम्हें आए हुए ? अन्दपल्ली वेंकट राम मामा के घर बातचीत करते-करते काफी देर हो गई—इतने में बाबू रोने लगा । थोड़ा खिला-पिलाकर आई हूँ—मामी ने बड़ी जबरदस्ती की ।"

"यों मामी से कहते डर लगा था कि मैं और बहनोई आए हुए हैं, मेरे लिए बहनोई जाने कब से दरवाजे की ओर देखता बाट जोह रहा है ।"

"नारायणराव जी, अब आपके लिए भी ऐसे देखने के दिन आ गए हैं, अरे पगले, मैं देखा करता था कि नहीं, क्या यह तेरा दिल नहीं जानता ?"

"अरे, बाबी को इधर दो—(बच्चे का प्यार का नाम), मुझे नया समझ रहा है, उसने रोनी-सी शक्ल बनाई, तेरे पिताजी आये हैं, मूर्ति, बाबी के लिए लाए हुए खिलौने तो इधर ले आ ! लो यह—अरे, मुँह देने पर आया है,—जीजा, यह लगता है, ओवरसियर का काम करेगा, बड़ा चलता-पुरजा है,—यह बाँसुरी लो, तुम्हारे पास आयेगा,—ओह, देखा, वह आ गया न, यह जरूर घूसखोर है, बच्चा !"

दादा चिल्लाने लगा। पिता की गोद में उछलने-कूदने लगा। लक्ष्मी-पति ने अपने लड़के को दुलार-पुचकार। फिर उसे सूर्यकान्त को दे दिया।

"फूफा, चाचा को मुझे दो!" श्री राममूर्ति की लड़की जानकी ने उसे उठा लिया।

धोबी और नौकरानी ने नहाने के लिए पानी रखा। सुब्बाराय, लक्ष्मीपति, श्री राममूर्ति और नारायणराव नहाने के लिए गये। सूर्यकान्त ने भाइयों और जीजा को साबुन दिया। नाई ने शरीर मला। रमणम्मा के दिये हुए अँगोछे से शरीर पोंछकर नये कपड़े पहनकर तीनों रसोई में जाकर यथास्थान बैठ गए। सुब्बाराय जी, बहू के दिये हुए अँगोछे से शरीर पोंछकर, नई धोती पहनकर सन्ध्या करने लगे।

थोड़ी देर बाद, सन्ध्या करते-करते उन्होंने इशारा किया कि भोजन परोसा जा सकता है। जानकम्मा की बहन ने भोजन का परोसना जब खत्म किया तब उनकी सन्ध्या भी खत्म हो गई। सबने एक साथ आचमन किया। भोजन करना शुरू करने के बाद सुब्बाराय ने अपने दामाद की ओर मुख करके पूछा—"तुम जरा देरी से आये, क्या रास्ते में बस बिगड़ गई थी?"

लक्ष्मीपति ससुर का बहुत आदर करता था, उनके प्रति भय और भक्ति का बर्ताव करता था। ससुर भी दामाद को बहुत चाहते थे।

"नहीं, तो विस्सानपुर जमींदार, नन्द बगड़ लक्ष्मी प्रसाद राव जी राज महेन्द्रवर में रहते हैं।"

"हाँ हाँ, वे बहुत भले आदमी हैं, शासन-सभा में वे हमेशा किसानों की तरफ से बोला करते थे। गान्धीजी के जमाने में आदरणीय आन्ध्र नेताओं में उनकी गणना भी होती थी। मैं उनको खूब जानता हूँ। नियोगी जमींदारों में वे ही सज्जन के साथ जीवन बिता रहे हैं।"

"उनके यहाँ विवाह के लायक एक लड़की है।"

"ऊँह!"

जानकम्मा बाहर ठण्डी हवा के लिए बैठी थी, यह सुनते ही उन्होंने अन्दर झाँका।

"वे अपनी लड़की की नारायण से शादी करना चाहते हैं। हमारी

सुन्दर है, गोरी है। खूब पढ़ी-लिखी भी है। संगीत में तो बहुत ही प्रवीण है।

जानकम्मा—"सुनते थे कि छोटे बेटे ने भी इन दिनों खूब संगीत सीख लिया है।

लक्ष्मी०—"हाँ उसने भी वाइलिन बजाया।"

लक्ष्मीपति ने माँ की तरफ देखा। अब तक लगता था, नारायणराव माना मन-ही-मन आनन्द का अनुभव कर रहा हो, पर उसने एकाएक जाने क्यों, नाक-भौं सिकोड़ ली।

लक्ष्मी०—"वे सब अच्छा दिन खोजकर आपसे बातचीत करने आ रहे हैं। वे नारायणराव पर लट्टू हुए हैं। जमींदार के घर की स्त्रियों ने परदे की आड़ में से उसे देखा। नारायणराव और लड़की ने अंग्रेजी में बातचीत की। मैंने उसकी और भाषाओं में परीक्षा ली।"

लक्ष्मीपति का कहना सबने बड़े ध्यान से सुना। और सब अपने-अपने ढंग से सोचने लगे।

चौपाल में, सुब्बाराय अपने ज्येष्ठ श्रीराममूर्ति से काफी देर तक सलाह-मशवरा करते रहे। आखिर उन्होंने यह तय किया कि यह सम्बन्ध उनके लिए लाभप्रद न होगा। लक्ष्मीपति कमरे में चला गया। नारायण माँ के पास जाकर जमींदार के बारे में गप्प मारने लगा। फिर बाहर, पिताजी के पलंग के पास वाली चारपाई पर वह सो गया।

चार दिन बाद परमेश्वरमूर्ति का खत, और काकिनाडा से राजाराव का खत आया।

"मैं कविता नहीं करता। पर तुम जानते हो कि कविता मैं बहुत पसन्द करता हूँ। तुम्हारी चिट्ठी पढ़कर मुझे बहुत सन्तोष हुआ। अगर मैं कवि होता तो उस पर सौ चौपाइयाँ लिख देता। गणित का विद्यार्थी हूँ—इसलिए दो शब्दों में अपनी राय लिखे देता हूँ—

"१ जमींदार के घराने में और तुम्हारे में मेल नहीं बैठेगा, यह सन्देह करना ठीक है।

२ जमींदार-घराने में निष्कपट, निश्छल हृदय वाले विरले ही होते हैं।

३ कन्या के लिए भी तुमसे प्रेम करना जरा कठिन है।

४ इतने बड़े परिवार में, जहाँ हर तरह के भोग-विलास हैं, स्वास्थ्य, कम होता है। तुम-जैसे ताकतवर व्यक्ति के लिए कमजोर लड़की के साथ जिन्दगी-भर बीमारियों में श्राहें भरते रहना अच्छा नहीं है।

पर हाँ, इन आपत्तियों का दूसरा पक्ष भी है। वह भी महत्वपूर्ण है—

१ जमींदार तुम्हें बहुत पसन्द करते हैं। दूसरे भले ही कैसे हों, दोनों बुड्ढों को एक साथ रखने के लिए वे अकेले काफी हैं। तुम्हारा घराना तो कभी मात्तो करेगा ही नहीं।

२ तू खूबसूरत है। तेरा व्यक्तित्व प्रभावशाली है। मेरा कहने का मतलब यह है कि तेरे पास वह व्यक्तित्व है कि पढ़ी-लिखी राजकुमारी को भी आकर्षित कर सकता है।

३. तेरी चिट्ठी से मालूम होता है कि लड़की का स्वास्थ्य अच्छा है। *जमींदार साहब की सेहत भी खराब नहीं है।*

इसलिए मुझे इस सम्बन्ध में कोई कमी नहीं दिखाई देती। मैं जरूरी बातों के सिवाय चिट्ठी में कुछ लिख नहीं पाता हूँ। अखबार वगैरा तो मेरी पहुँच के बाहर है। शायद मेरी बातें कुछ कड़वी मालूम हों। मैं दो दिन में वहाँ आ रहा हूँ। इस बीच में जमींदार के घराने के बारे में भी पूछ-ताछ कर लूँगा।

तुम्हारा प्रिय,

राजा राव।"

"मैं यह कहना चाहता हूँ कि भले ही तेरे चरणों पर कोई सर्वस्व त्याग कर दे पर तेरे सामने कोई कन्या नहीं है।

मैं बचपन से ही सपनों में मस्त रहता आया हूँ। मैं सौन्दर्योपासक हूँ। पर मेरा जीवन सौन्दर्य से कहीं दूर है। वह पुंस्त्व, उत्कृष्ट सौन्दर्य, कभी मैंने किसी स्त्री-रत्न को देना चाहा था, पर अब ऐसा मालूम होता है जैसे मैं निर्जल भूमि में कुआ खोद रहा हूँ। सर्व-कला-सम्पन्न मेरा हृदय मसोसकर रह गया।

कभी किसी दिव्य सुन्दरी की कल्पना की थी, पर वह कल्पना कल्पना

ही रह गई। इस हालत में तुम जरा अपने भाग्य पर गौर करो! तू अपनी पसन्द की लड़की की प्रतीक्षा कर सकता है। यदि तेरे में साहस होता तो गान्धीजी के उपदेशों के अनुसार तुझे किसी विधवा से विवाह करना चाहिए था। पढ़ी-लिखी सुन्दर कई विधवा कन्याएँ है, पर तुममें हिम्मत नहीं है। खैर कुछ भी हो तुम वधू के रूप में एक सुन्दर विदुषी कला-कोविद कन्या मिल रही है। सौभाग्यशाली है तू!

बिना बहुत सोचे-विचारे सम्बन्ध को स्वीकार कर ले! अच्छा होता अगर मैं वहाँ होता।

'शैली' जिस इच्छा के लिए वहिष्कृत किया गया था, 'कीट्स' जिस अप्राप्य फल के लिए हाय-हाय करता गुजर गया, 'दांते' ने जिस उत्कृष्ट भाव को लेकर गीत रचे वह महा प्रेम तुम्हें अब बिना माँगे मिल रहा है तब तुम 'हेमलेट' की तरह 'हाँ' या 'ना' के झंझट में न पड़ो!

खैर मैं तो जैसे-तैसे महारानी को साथ लेकर आ ही पहुँचूँगा। छोड़कर रहना मुश्किल है। इसलिए बाबा की अनुमति पर वहाँ आऊँगा और विवाह करवाऊँगा। मूर्ती, राम, शान्ति, बच्चे तुम्हें आया देखकर फूला न समाते होंगे।

मैं, तेरा
परम।"

९ · बातचीत

डिप्टी कलक्टर तहसीलदार राजमहेन्द्रवर के बड़े वकील, मद्रास में जमींदार साहब के भानजे आनन्दराव—और नौकर-चाकर, एक साथ सुब्बाराय के घर आये। सुब्बाराय ने अतिथियों के लिए एक घर अलग बनवा रखा था। उसीमें सब आराम से बैठ गए। कोत्तपेट के

डिप्टी तहसीलदार ने कहना शुरू किया—"सुब्बाराय जी, कलक्टर, तहसीलदार ये सब आपके पास किसी जरूरी काम से आये हैं अगर आप उनकी बात मान जायेंगे तो हम सबको बड़ी खुशी होगी।"

सुब्बाराय—"अच्छा आप कहे और मैं न मानूं, ऐसा कभी हुआ है।"

डिप्टी कलक्टर—"जल्दी में बात न मानिये, एक बार मान गए, तो हम आपको न छोड़ेंगे।"

सुब्बाराय—"जी हुजूर!"

तहसीलदार—"आनन्दराव जी, आप बढ़िये—ये जमींदार साहब के भानजे हैं मद्रास में बड़े वकील हैं।"

सुब्बाराय—"जी हाँ, मैं जानता हूँ।

आनन्द०—"श्री राममूर्ति तो हमारे पुराने दोस्त हैं, हमें हमेशा अपील भेजते ही रहते हैं। मद्रास जाते हैं तो हमें देखे बगैर नहीं जाते।"

श्री० राम०—"आनन्दराव और मैं लॉ-कॉलेज में सहपाठी थे, इतने दिनों के बाद हमें आपका आतिथ्य करने का सौभाग्य मिला।"

डि० त०—"ऐसा न कहिये पहले ही हमारे घर में सब प्रबन्ध हो गया है। श्री राममूर्ति जी के लिए आपके यहाँ ठहरने में बहुत-सी बाधाएँ हैं।"

इतने में गाँव के दो-चार बड़े बुजुर्ग भी आ पहुँचे और यथोचित स्थान पर बैठ गए।

आनन्द०—"हमारे मामा का अपनी द्वितीय पुत्री का आपके द्वितीय पुत्र के साथ विवाह करने का इरादा है और हमें आपसे इस विषय में प्रार्थना करने के लिए भेजा है। हम चाहते हैं कि आप इस शुभ कार्य के लिए अपनी अनुमति दें। यही हमारा निवेदन है।"

सुब्बाराय—"जी, आप भी कितनी बड़ी बात कर रहे हैं? वे जमींदार हैं और हम मामूली गृहस्थी हैं। आप भले ही अपनी लड़की को मेरे लड़के को देने का आग्रह करें पर सब-कुछ जानता-बूझता हुआ मैं उसे स्वीकार कैसे कर सकता हूँ?"

आनन्द०—"आप ऐसा न कहिये! वैभव और ऐश्वर्य की क्या बात है? जो उनके पास है, उनका है, जो आपके पास है आपका है।"

डि० न०— मिजाज की ही तो कमी है, नहीं तो क्या आप उनसे किसी तरह कम हैं? फिर जमींदार के ठाट-बाट आपसे बड़े हैं?"

मुन्ना०— आप ऐसा न कहिये। हम कितने हैं और हमारा ऐश्वर्य कितना है? हाँ हमारा परिवार खाना-पीना जरूर है, पर इससे अधिक कुछ नहीं। और हमारे-जैसों के पास इतनी शक्ति नहीं होती कि जमींदारों की बराबरी में सम्बन्ध करें।

डि० न०— अगर हम कहें कि आप ताज्जुबी आदमी हैं तो हम न ही बेवकूफ बनते हैं। यह आपका विनय आपको जमींदार साहब के समान ही नहीं बनाता बल्कि अधिक भी बनाता है। अगर यह भी कहूँ तो फिर शायद आपको आपत्ति हो। हम तो जो ही कह रहे हैं। हम भला आपके सामने वालों में कैसे टिक सकते हैं? आपको यह बिलकुल नहीं सोचना चाहिए कि वे जमींदार हैं। उनकी योग्यता-प्रजाप्रियता के बारे में आप भी जानते हैं। कुछ भी हो, आप-जैसे घराने से सम्बन्ध बनाने के लिए वे बहुत उत्सुक हैं। और हम सब उनकी इस इच्छा की दाद दे रहे हैं, समर्थन कर रहे हैं। मुझे उम्मीद है कि आप हमारा निवेदन अस्वीकार नहीं करेंगे।"

इस बीच उस गाँव के कर्णम वेंकटराव ने कहा—"मुन्नाराव जी, आप आनाकानी न कीजिये। आप दोनों के लिए यह सम्बन्ध हर तरह से उचित है। बन्धु-बान्धव भी यही चाहते हैं। जमींदार समुद्र की तरह हैं, वह रत्नाकर समुद्र आपको ढूँढता आया है। आपके लिए ज्यादा ना-नुकुर करना अच्छा नहीं। और फिर कलक्टर-तहसीलदार जी भी बार-बार कह रहे हैं, आप पीछे न रहिए।"

मुन्नाराव को यह नहीं सूझा कि उनके अनुरोध का किस प्रकार उत्तर दें, "मैं उनकी बात अस्वीकार नहीं करता। सोच रहा हूँ कि छोटा हूँ।" यह कहते हुए उन्होंने अपने लड़के की ओर देखा।

इतने में तहसीलदार ने फिर कहा—"आप छोटे हैं या बड़े, यह बात तो आप हमारे ऊपर छोड़ दीजिए। विश्वानपुर के जमींदार का नाम ही है, आचार-व्यवहार में वे वस्तुतः जमींदार नहीं हैं। इसलिए आप उनके बराबर हैं कि नहीं, इस बारे में सन्देह ही नहीं करना चाहिए। और फिर आप तो लेने वाले हैं, देने वाले नहीं, तो क्यों इस ऊँच-नीच के झमेले में पड़ते हैं।"

पंडित—"हजूर आपके बिना कहे ही मैंने पहले ही देख लिया है। आगामी ज्येष्ठ मास में ही सबसे उत्कृष्ट मुहूर्त है। सप्तम शुद्धि। गुरु और शुक्र का अच्छा प्रभाव है। कोई किसी प्रकार का विरोध नहीं कर सकता। सब ठीक है। बड़ी धूम-धाम से विवाह होगा। दोनों की जोड़ी भी अच्छी रहेगी।

आनन्द—"आपका बड़े पूर्णय्या का मत है, छोटे पूर्णय्या जी का क्या मत है?"

पंडित—"मैं मालदा ग्राम छोटे पूर्णय्या जी के मत को ही मानता हूँ। क्योंकि सब-कुछ हो और 'दृक्सिद्धि' न हो, तो कुछ फायदा नहीं।"

राजमहेन्द्रवर के वकील मृत्युंजय राव ने कहा—"दृक्सिद्धि का आधार दूरदर्शी यन्त्रों द्वारा मालूम किये गए तथ्यों के पश्चिमी ग्रन्थ ही हैं न? अब 'हैमरियानी', 'प्लेटो' आदि नये-नये ग्रह मालूम किये जा रहे हैं। कई बातों का वैज्ञानिक जवाब नहीं मिलता, ऋषियों द्वारा दिव्य दृष्टि से जाने हुए सिद्धान्तों को अब हमारे लोग बदलना चाहते हैं—प्रत्यक्ष प्रमाण चाहते हैं—जब तक यह सिद्धान्त उड़ नहीं जायगा, तब तक पंडित लोग इसमें चिपटे रहेंगे।"

जमींदार—"यह नहीं, मैं भी आजकल थोड़ा-बहुत ज्योतिष पढ़ने लगा हूँ। हमारे जो प्राचीन तथ्य हैं उनको प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा ठीक करने के लिए कहा जा रहा है। इसका ख्याल नहीं करते, आधार और परम्परा की रट लगाये रहते हैं खेत में जुते बैल की तरह।"

मृत्युंजय—"हाँ, आप ठीक कह रहे हैं, यह ज्योतिष-शास्त्र यह नहीं कहता कि काल के अनुसार, भूमि और आकाश में होने वाले परिवर्तनों का बिना अध्ययन किये कोल्हू के बैल की तरह घूमा जाय। प्रतिदिन पाश्चात्य सिद्धान्त बदलते रहते हैं। क्यों? क्योंकि वे प्रत्यक्ष प्रमाण के दास हैं, इसलिए वे अपने निर्णय घड़ी-घड़ी बदलते हैं, ऐसा कहना गलत है। हमारे ऋषियों ने वास्तविक तथ्यों को दिव्य दृष्टि से जाना है। उन तथ्यों पर कुछ सिद्धान्त बनाये हैं। यह अच्छा नहीं कि हम उनमें से कुछ लें, और कुछ छोड़ दें।"

श्रीनिवास०—"अब सब पंडित हैं। हमें कुछ बातें जाननी हैं।

नतीजा निकला। उसमें उसका नम्बर न था, वह फेल हो गया था, वह पागल-सा हो गया। वह विज्ञान में बहुत अच्छा था, पर अंग्रेजी में उसका जरा दूर का रिश्ता था। भौतिकी, रसायन, वनस्पति-शास्त्र में उसने क्रमशः नब्बे, छियासी और इक्यासी नम्बर पाये थे। अंग्रेजी में सिर्फ ३० ही मिले थे। तेलुगु में वह इससे बेहतर था। ४५ मार्क पाये थे। फल भले ही हो गया हो पर अच्छे मार्क मिले थे। वह इस प्रकार एक ही विषय में पास हो गया।

नारायणराव को जब यह खबर मिली थी तभी उसने लक्ष्मीपति से कह दिया था कि वह विज्ञान में पहला नम्बर पायगा और अंग्रेजी में फेल हो गया होगा, आखिर हुआ भी ऐसा ही।

रामचन्द्र राव पिता के नाम एक चिट्ठी लिख गया था।

"पूज्य पिता जी चरणों में वन्दन! हमारे देश में सच्ची शिक्षा के लिए स्थान नहीं है। हमारी शिक्षा का उद्देश्य गुमाश्तों को तैयार करना ही है। उसी काम के लिए पाठ्य-क्रम तैयार किया गया है। अंग्रेजी में लाजमी तौर पर पास होने का मतलब यही है। अगर मैं अंग्रेजी में पास होने की कोशिश करूँ तो मुझे विज्ञान छोड़ना पड़ेगा। जो ख्याति मुझे पाश्चात्य देश में मिली है आप उसके बारे में जानते ही होंगे। आप मुझे विदेश भेजना नहीं चाहते। इसलिए मैंने आपका सन्दूक खोलकर उसमें से ५०० रुपये ले लिए हैं। मुझे इस चोरी के लिए माफ कीजिये! मैं जैसे-तैसे अमरीका पहुँच जाऊँगा, वहाँ हारवर्ड में पढ़ूँगा। अगर वहाँ आप रुपया भेज सकें तो मैं अपने को सौभाग्यशाली समझूँगा। नहीं तो मैं वहीं काम करके अपनी शिक्षा पूरी करूँगा। मैंने यह सब-कुछ बड़े सोच विचार के बाद किया है। माँ के चरण मैंने कल रात को ही उनके सोते समय छू लिये थे। अगर मुझे आप दोनों का आशीर्वाद मिला तो सारा संसार ही जीता जा सकता है।

नमस्कार।

आपका विनीत,
रामचन्द्र राव।"

यह पत्र पढ़ते समय भीमराजू की आँखें छलछला आईं। रामचन्द्र

की माँ भी इस कौन में पड़ी-पड़ी दयनीय स्थिति में आ रही थीं।

नारायणदास लक्ष्मीपति और भीमराज अन्दर उनको सान्त्वना देने गये।

नारायण०—'आप इस तरह क्यों निराश होती हैं? शहर में रह रही हैं, दुनिया के तौर-तरीके भी जानती हैं। सरोजिनी देवी-जैसी उत्तम स्त्री के व्याख्यान आपने सुने हैं। आन्ध्र-महिला-सभा की आप मानद सदस्या हैं। हमारे देश से आज कितने ही लोग शिक्षा के लिए पाश्चात्य देशों में जा रहे हैं। आपको साथ-साथ कहना चाहिए था, अगर विदेश जाना है तो हो आओ।

लक्ष्मी०—"हमारा भाई वहाँ शौकिया पान के लिए ही गया है।

भीमराज ने पत्नी की ऐसा देख अपने को सँभालकर कहा—'प्यारी! प्यारों से सुनी हुई बातें आपत्ति में ही काम आती हैं। गाहक करके गया है, सफल होकर आयेगा।'

रामचन्द्र राय की माँ दुर्गाम्बा ने उठकर कहा—'बेटा नारायणराव, बाबू, लक्ष्मीपति क्या करूँ? मेरा ही लड़का है। इकलौता है। स्त्रियों को बाप-आप के लिए भी काम की न रहीं। हमारे शक्ति-स्वभाव बस इतने ही हैं। क्या करूँ? मुझे तो महीनों से खल रहा था। मैंने कहा कि क्या शिक्षा के लिए विदेश जाना जरूरी है? क्या गांधीजी ने नहीं कहा है 'पाश्चात्य शिक्षा आत्म-विकास के लिए रुकावट है'। राममोहन राय को यदि पाश्चात्य शिक्षा न मिलती तो वे कई गुना महत्तर ऋषि होते' मैंने कहा। उसने कहा—'जो कुछ तू कह रही है वह ठीक है, परन्तु माँ अगर हमने विज्ञान में कोई तथ्य ढूँढ निकाला, पर जब तक हम अंग्रेजी में डिग्री न पायेंगे तब तक हमें कोई पूछेगा भी नहीं, कोई मानेगा भी नहीं। इसलिए मैं जर्मनी या अमरीका जाऊँगा।'

भीम०—"जिस भाव से सोचे वह कहा, वह कहा, करने में क्या फायदा?"

सब मिलकर कुर्सियों पर हॉल में गये।

काकिनाडा में व्यापार करके जो कुटुम्ब धनी हो गए थे उनमें वृद्ध भीमराजू का कुटुम्ब बड़ा था। व्यापार और दुनिया के काम के

लिए जितना पढ़ना जरूरी था उन्होंने उतना ही पढ़ा था, पर दुकानदारी में उनकी बुद्धिमत्ता तथा कार्य-कुशलता सराहनीय थी। शहर में सब उनको ब्राह्मण श्रेष्ठ कहा करते थे।

उनके एक ही लड़का पैदा हुआ। वह बहुत ही बुद्धिमान् था, व्यापार में उसकी रुचि न थी। फिर भीमराजू को व्यापार में नुकसान हुआ। तीन लाख रुपये स्वाहा हो गए। तब से भीमराजू जी ने आयात-निर्यात के व्यापार को छोड़ दिया और जो-कुछ रुपया बचा था उसे इकट्ठा करके इम्पीरियल बैंक में जमा कर दिया। उसके सूद पर ही आराम से दिन काट रहे थे। उनको भूमि पर भरोसा न था। अपने लिए कम्पनी के अफसरों की 'सप्लाई' के लिए केवल एक आम का बाग उन्होंने पिठापुर के पास खरीदा था।

इन भीमराजू के लड़के का चार हजार रुपये दहेज और दो हजार रुपये के साज-सामान देकर नारायणराव की चौथी बहन के साथ विवाह किया गया। भीमराजू सुब्बाराय का आदर करते थे और सुब्बाराय भीमराजू का।

नारायणराव, लक्ष्मीपति और भीमराजू ने आपस में सोचकर रंगून' में भीमराजू के इस मित्र को तार भेजा।

भीमराजू को इस पर कोई आपत्ति न थी कि उनका लड़का विदेश जाकर यश प्राप्त करे, परन्तु उनके पास बहुत-कुछ था, पद और प्रतिष्ठा से क्या फायदा? एक ही लड़का है, विदेश में है वहाँ कोई देखने-भालने वाला नहीं है, कभी थोड़ी-सी बीमारी होती तो माँ-बाप के होश-हवास उड़ते थे। "क्या विदेश में वह रह सकेगा? क्या पढ़ाई है? जाने उसको क्या-क्या मुसीबतें झेलनी पड़ें। सरदी अधिक है, खाना भी दूसरा है और सबसे अधिक भय वहाँ की स्त्रियों से है। वे तो मुसीबतें ढाती हैं।" भीमराजू गद्गद् स्वर में लक्ष्मीपति और नारायणराव से कह रहे थे।

नारायणराव का कलेजा थम-सा गया। विदेश में जाकर कई व्यक्ति गोरी स्त्रियों के फंदे में फँसे हैं, कई ने पागल होकर उनके चरणों पर अपने हृदयों को अर्पित किया है। उन लोगों को घर की पत्नी राक्षसी की तरह मालूम होती है, कितने ही भारतीय इस पर परवानों की तरह बरबाद हो चुके

हैं। रामचन्द्रराव छोटा है, और पैसे वाला है। उसका विश्वास था कि विदेश में इस तरह के लोगों को फँसाने के लिए हजारों सुन्दर स्त्रियाँ थीं। उनके जाल में कितने ही भारतीय पड़े हुए हैं। 'जान भगवान् ने भाग्य में क्या लिखा है,' नारायणराव ने लक्ष्मीपति के कान में कहा।

उस दिन रात को सोचते-सोचते उन दोनों को नींद न आई।

लक्ष्मी०—"अरे, भाई तुम बहुत डरते हो! क्या तुम सोचते हो कि मनुष्य-स्वभाव हमेशा कुटिल ही होता है।"

नारायण०—"नहीं, पर स्थान के बारे में सोचना बहुत जरूरी है। इसका अपना बल है, अपनी खास समस्याएँ हैं।"

लक्ष्मी०—"अच्छा, मान लो, तू अकेला मद्रास में था। अगर लड़कों को बिगड़ना ही हो तो मद्रास में भी कितने ही रास्ते हैं, तो भी तू क्यों नहीं बिगड़ा?"

नारायण०—"मैं तेरी दलील मान गया! पर सुन, भारत देश में हमारी पुरानी सभ्यता के कारण हर पेशे में, हर व्यापार में, जीवन में मुख्य आदर्श सत्य को आधार माना गया है। वही सभ्यता आज भी किसी-न-किसी रूप में हर जगह प्रचलित है। यह सभ्यता ही हमारी रक्षा करती है।"

लक्ष्मी०—"खैर, मैं इसे मानता हूँ, पर तू विदेश जाने वालों के बारे में भी सोच! वे तीन प्रकार के हैं, पहली श्रेणी के वे हैं जिनके पास रुपया है, वे पाश्चात्य सभ्यता का स्वाद चखने, या पढ़ने नहीं तो सैर सपाटा करने जाते हैं, और वे राजे-महाराजे हैं जो आनन्द के लिए जाते हैं।"

नारायण०—"हाँ तो इन लोगों ने वहाँ जाकर किया क्या? हमारा धन ले जाकर उन देशों में फूँका ही तो? हमारा देश गरीब है, पाश्चात्य देश धनी हैं, और उनमें, इंग्लैंड, फ्रांस, अमरीका तो और भी धनी हैं, भोग-विलास ही उनके जीवन का उद्देश्य है, उनके लिए उन्होंने कितनी ही चीजें बनाई हैं, उन पर कितना ही खर्च करते हैं, पर जब विदेशी हमारे देश में आते हैं तो यहाँ सब सस्ता है।"

लक्ष्मी०—"हाँ, दूसरी श्रेणी उनकी है, जो नौकरी के लिए पढ़ने जाते हैं। इंग्लैंड की सारी शिक्षा इसी प्रकार की है। तीसरी श्रेणी उनकी है, जो ज्ञानोपार्जन के उदात्त उद्देश्य के लिए जाते हैं।"

नारायण०—"तो कहीं वे स्त्रियों के पीछे पड़कर अपना उद्देश्य नहीं भूल बैठते ?"

लक्ष्मी०—"अगर कोई इस तरह बिगड़ गया तो साफ़ मतलब निकलता है कि उसका उद्देश्य ज्ञानोपार्जन नहीं है।"

नारायण०—"यह न समझना कि मैं तेरी बात नहीं समझता। सच है, जो विज्ञान सीखने के उद्देश्य से वहाँ गया है, वह सचमुच उत्कृष्ट व्यक्ति है। हमारा रामचन्द्रराव भी इसी उद्देश्य से गया है। विदेश जाना हो तो छुटपन में जाना अच्छा है, काम-वासनाएँ यौवन में ही मनुष्य के जीवन को झकझोरती हैं। उस उम्र में आसानी से आदमी काम-लोलुप हो जाता है। छुटपन में लड़का अपने काम पर ही लगा रहता है, उसको अपने काम के सिवा और कुछ नहीं सूझता। यह सच है, परन्तु उस अपरिचित हालत में उसको ये आकर्षण बड़ी-बड़ी भयंकर छायाओं की तरह मालूम होते हैं, वह उनका सच्चे हृदय से सामना करता है। इसलिए छुटपन में जाना ही अच्छा है। पर चाहे हम कुछ भी कहें बहन का दिल दहल उठेगा, यह सोचकर मैं काँप जाता हूँ।"

लक्ष्मी०—"अरे पागल, इस तरह के ख़याल तुम-जैसों को शोभा नहीं देते।"

११ : बचपन

उस दिन रात-भर नारायणराव सो न सका। सूर्यराव पेट में, भीमराजू के मकान की छत पर लेटा वह, अश्विनी देवता, अनुराधा, तुला, वृश्चिक आदि तारों को देखता रहा। आकाश में उसको शैशव की मनोकामनाएँ मूर्त रूप में दीख रही थीं। वह देश-विदेश घूमना चाहता था। पाश्चात्य देश उसको वस्तुओं के ग्रामों की तरह लगते। वह कल्पना

किया करता था कि विदेश में भी राजा-रानी होंगे। वहाँ मकान भी सोने के होते होंगे। राजमहेन्द्रवर में पहाड़ों के पीछे विदेश है यह उसका ख्याल था। वहाँ सड़क पर रुपये-पैसे—चवन्नी-दुअन्नी बिखरी हुई होंगी। वह साथ के बच्चों से कहा करता।

बचपन का वह संसार उसकी सुनी-सुनाई कहानियों से पूरी तरह छा गया था। वह सोचा करता था कि वह भी एक दिन पुष्पक विमान में बैठकर जायगा। उन दिनों उसको सपनों में राजकुमार, राक्षस, राजा आदि दिखाई देते। वह भी पंखों वाले घोड़े पर सवार होता—'जय परमेश्वर' कहते ही घोड़ा वह जहाँ जाना चाहता पहुँचा देता। वह साधु की खड़ाऊँ पहनकर उड़ता। पिताजी की कहानियों के राजकुमार की तरह वह भी तलवार लेकर राक्षसों का संहार करता। राजकुमारियों से विवाह करता।

तब वह आठ वर्ष का होगा। पहली बार उसे सपने में 'देश', और 'स्वराज्य' सुनाई दिये। गोरे हमारे देश से धन-धान्य ले जा रहे हैं, ये सपने भी आने लगे। वह बमकर बम तैयार करके भारत देश के सिवाय सभी देशों को भस्म कर देने की सोचता। जोश में आ जाता। एक दिन माथे पर 'वन्देमातरम्' लिखकर और साथ के बच्चों के माथे पर भी लिखवाकर वह पाठशाला गया। उस दिन अध्यापक ने उन सबको बेंच पर खड़े होकर, वह मिटाने के लिए कहा।

नारायणराव ने कहा—"मुझे फाँसी दे दीजिये, पर मैं यह न मिटाऊँगा!" नारायणराव सभी अध्यापकों का स्नेह-पात्र था।

पर उस दिन उसका जवाब सुनकर अध्यापक हक्का-बक्का रह गया—"कर बकवास बन्द, माथे पर लिखा हुआ मिटा दे। नहीं तो तेरी पीठ तोड़ दूँगा।" अध्यापक ने कहा

"आप और अंग्रेज मित्र हैं, हमें स्वराज्य चाहिए, इसलिए मैं नहीं मिटाऊँगा, न ये ही मिटायेंगे", मुँह खोलकर नारायणराव शेर की तरह गरजा।

अध्यापक ने बातें तो सुनी नहीं। बेंत लेकर उसने पीठ पर झट दो जमा दीं। फिर क्षण-भर में नारायणराव बेंच पर से उतरा, अध्यापक के हाथ से बेंत लेकर उसके टुकड़े-टुकड़े करके उसने दूर फेंक दिये। नारायण-राव और लड़कों से जरा कद्दावर था, ताकतवर भी। उसका चमचमाता

चेहरा देखकर अध्यापक सकपका गया चुप रह गया। लड़के भी आश्चर्य से देखने लगे कि अब क्या होगा।

नारायणराव चिल्लाया—'वन्देमातरम्'। वह बाहर निकल गया, उसके साथ और लड़के भी 'वन्देमातरम्' कहते-कहते गली में कवायद करने लगे।

उस दिन रात को मुख्याध्यापक ने लड़कों को बुलाकर सब सुना। उन्होंने उसे डाटा-डपटा। अध्यापक ने नारायणराव के पास आकर कहा, "बेटा, मैं बाल-बच्चों वाला हूँ। मुझे नहीं मालूम, तुम्हें ऐसे काम करने के लिए किसने उकसाया है। मुझे नौकरी से हाथ धोना होगा, भूखे-प्यासे दर-दर भटकना होगा, भीख माँगनी होगी," यह कहते-कहते उसकी आँखें डबडबा आईं। नारायणराव के भी आँसू टपक पड़े। तब से उसने पाठशाला में कोई गड़बड़ी नहीं की।

नारायणराव जब पहला फारम पढ़ रहा था तो महायुद्ध छिड़ा। नारायणराव का नरम हृदय अंग्रेजों पर पिघल गया। 'आज वे बेचारे आफत में हैं, कितने ही बच्चे अनाथ हो जायेंगे, इसलिए हमें उनकी मदद करनी चाहिए।' वह कक्षा सहपाठियों से कहा करता। उसने १५ रुपये चन्दा इकट्ठा किया। माँ से लेकर उसने स्वयं दस रुपये दिये। और जब कलक्टर कॉन्वेंट आया तो निर्भय होकर उससे मिलकर उसने कहा—'युद्ध के लिए हम बच्चों का यह चन्दा है।' अंग्रेज कलक्टर ने उस दिन अपने भाषण में कहा—"भारत की राज-भक्ति असामान्य है, असाधारण है, यह इस बच्चे का दान निरूपित करता है।" कलक्टर ने प्रसन्न होकर उसको अपनी जेब की 'पेंसिल'—लम्ब-लम्बी उपहार में दे दी।

नारायण इस उथल-पुथल में करवटें बदल रहा था। लक्ष्मीपति को आराम से नाक बजाता देखकर उसे आश्चर्य होने लगा कि उसे ऐसी गाढ़ निद्रा कैसे आई, एक का कष्ट दूसरे को किंचित् मात्र भी प्रभावित नहीं करता, एक के लिए, जो सन्तोष का विषय है वह दूसरों के लिए दुःख का कारण भी हो सकता है। प्रायः वह किसी बात पर न घबराता था, पर रामचन्द्र राव के चले जाने पर उसकी घबराहट, दुःख की कोई हद न थी, पर अपनी साली के पति को गया देखकर लक्ष्मीपति आराम से सो रहा था, यह देखकर नारायणराव सोचने लगा कि हरेक का स्वभाव एक-जैसा नहीं होता। उसने

लक्ष्मीरति को उठाना चाहा, पर झट रुक गया। 'रंग-विरंगे अजीब सपनों और गूढ भावों से भरा यह जीवन शायद एक सुन्दर चित्र है,' उसने सोचा।

इसीलिए प्रकृति को आधार मानकर कला की सृष्टि करनी चाहिए। प्रकृति के अनुकरण की परम्परा क्यों बनी, यह वह अनुमान न कर सका। जो हमेशा हमारी आंखों के सामने है उसीको चित्रित करने में हमें आनन्द मिलता है।

बिस्तरा ठंडा पड़ गया, ठण्डी हवा चल रही थी। पर नारायणराव की नींद हरिण हो रही थी। क्या निद्रा में मन की प्रवृत्तियां रुक जाती हैं? उत्कण्ठा के कारण या तीव्र चिन्तन के कारण, बुद्धि के कार्य करने से शायद नींद नहीं आती? हो सकता है कि रामचन्द्र दूर देश जाकर कीर्ति पाये? इसमें अफसोस करने की क्या बात है? सूर्यकान्त को वह बहुत चाहता था, यदि किसी बात से उसको उसके दुखी होने की सम्भावना थी तो वह उसे भी दुखित करती। इसलिए ही शायद वह इतना छटपटा रहा है।

ओहो, इस निर्मल आकाश में कितने ही तारे निश्शब्द गीत गा रहे हैं—यह निश्चलता ध्वनि-पूरित है, तब यह निश्चलता कैसी? इन निश्शब्द रागों की ध्वनि, उच्छ्वास, निश्वास, पिछवाड़े में गौवों का हिलना-डुलना, उल्काओं का गिरना, रास्ते पर जाती गाड़ी की घंटी, उदित होती चन्द्र-किरण, कहीं से आता किसी बालिका का करुण-क्रन्दन, इस राग में सुना जा सकता है।

नारायणराव का हृदय मानो सहसा इस सृष्टि के प्रति प्रेम से भर उठा, छलक पड़ा। नील गगन, और निश्चल तारे, उसमें विलीन-से हो गए। निश्चित जीवन-संगिनी, शारदा के रूप में उसको प्रकृति से आलिंगन करती-सी लगी।

वह मुस्कराता, उस चन्द्र-कान्ति में शारदा, लक्ष्मीपति, सूर्यकान्तं, रामचन्द्र, और माँ सभी को देखने लगा। वे मिलकर गगन-वीथी में चन्द्रमा की तरह कहीं चले जा रहे थे। वह किसी की गोद में सिर रखकर ठण्डे गद्दे पर अपने में खो-सा गया। चन्द्रमा में।

अन्दर घड़ी ने दो बजाये—"टिन्ग, टिन्ग।" नारायण सो रहा था।

१२ : विवाह

राजमहेन्द्रवर में बड़ी धूम-धाम से नारायणराव और शारदा का विवाह हुआ।

उस शहर में जमींदार के सभी मकानों को खूब सजाया गया, सड़कों पर पण्डाल बनाए गए। जमींदार के घर के पास ही दो बड़े मकानों में बरातियों के ठहरने का प्रबन्ध किया गया। पण्डाल को केले, नारियल के पत्तों से सुशोभित किया गया। चमचमाते लट्टू और झण्डे भी लगाये गए।

जमींदार के विशाल घर में, सभा-स्थल, और विवाह-वेदिका तैयार की गई। उस वेदिका को अलंकृत किया गया। सारा मण्डप, बन्धु-बान्धवों, अतिथि-अभ्यागतों से खचाखच भरा था। वकील, जज, कलक्टर, जमींदार, पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट, शहर के मान्य सभी बड़े-बड़े व्यक्ति, उस अवसर पर उपस्थित थे। आन्ध्र देश के सभी प्रसिद्ध पुरुष पधारे थे। सबके बैठने का समुचित प्रबन्ध किया गया था।

पीनुस्वामी-पार्टी ने शहनाई बजाई। सभी मंगल-वाद्यों के सुमंगल घोष के साथ पुरोहितों ने 'अथ सुमुहूर्तस्यमुहूर्तोस्तु' कहते हुए मन्त्र पठन किया।

सभा में हजार चन्दन के पात्र, सोने की गुलाब-जल की बोतलें, हाथी-दाँत की तिपाई पर अगर और धूपबत्तियाँ जल रही थीं। विवाह-मण्डप महक रहा था। पंडित-प्रवर वेद पारायण कर रहे थे। स्त्रियों के लिए विवाह-वेदिका के पास परदों के पीछे, खास जगह निश्चित की गई थी।

सर्वभूषणालङ्कृत, दुग्ध सागर में जन्मी लक्ष्मी के समान, दुलहिन को टोकरे में लाया गया, जब पीत वस्त्र पहनकर, नारायण नान्दी श्राद्ध के लिए अन्दर गया, जमींदार और उनकी पत्नी के कन्या-दान करने पर, नये कपड़े पहनकर वधू-वर के अगल-बगल में बैठने पर, मंगल-वाद्य और भी जोर से बजाये गए। नारायणराव ने जब शारदा के गले में मंगल-सूत्र बाँधा तो जानकम्मा और बन्धु-बान्धव फूले न समाए।

विवाह के शुभवसर पर जमींदार ने कई दान घोषित किये, राजमहेन्द्रवर की विधवा-विवाह मण्डली को १११६ रुपये दान में दिये।

जमींदार, सम्बन्धी, मित्रों ने वधू को कीमती उपहार दिये । कई ने चाँदी के लोटे दिये, कई ने काफी के कप, चाँदी के सागुन-दान, हाथी-दाँत की चीजें दीं ।

वधू के बन्धु सभी शहरी लोग थे । आन्ध्र देश के रईस घरानों के थे । साफ दाढ़ी बनवाये थे । ऐनक लगाते थे । औरतें भी इनका उपयोग करती थीं । ये कभी भी जलूस में न आईं, न सभा-स्थल में ही वे उपस्थित हुईं । उन सबके बहुत सारे नौकर-चाकर भी थे । अपनी सन्तान को दूध देने वाली उनमें न थी, कई लड़कियाँ तो हमेशा मखमली जूते पहने रहती थीं, इसलिए रिवाज के मुताबिक उनके पैरों पर हल्दी भी न लगाई गई थी ।

वधू की तरफ के मर्द भी, सामूहिक भोजन में न आये । संगीत-सभा ने भी उनको आकर्षित नहीं किया । ब्राह्मणों के रास्ता दिखाने पर वे अपनी भोजनशाला में अलग भोजन करने जाते । पत्र-पत्रिकाएँ, उपन्यास आदि पढ़ते । धूम्र-पान करते । यही उनकी दिनचर्या थी ।

बराती गाँव के थे । आचार आदि पर उनकी पूरी श्रद्धा थी । पर जलूस के लिए वे तैयार रहते । कीमती बनारसी साड़ियाँ पहनकर, गहने धरकर, पैरों में हल्दी पोतकर, विवाह-गीत गाती-गाती झुण्डों में बरातियों के तरफ की स्त्रियाँ हर रस्म में हाजिर होतीं । क्योंकि वे किसी भी परम्परागत विधि की अवहेलना नहीं करना चाहती थीं, इसलिए इच्छा के न होते हुए भी वरदलमेश्वरी देवी को उनमें उपस्थित होना पड़ता ।

बरातियों में पुरुष भी हर जगह आते । उन्हें संगीत भी भाता था । उनको हाथ से ताल देता, सिर हिलाता देखकर वधू पक्ष वालों को अचम्भा होता ।

उनकी स्त्रियों को, अलंकारों से आभूषित, हल्दी लगाकर वर पक्ष की स्त्रियाँ तमाशे की मोड़ियों की तरह लगती थीं ।

"क्या हमने सपना देखा था कि ये इतने गँवार होंगे ? कतई भोंदू मालूम होते हैं । यह सम्बन्ध तुम कहाँ से खोजकर लाई हो ?" निकट सम्बन्धी सरोजिनी ने वरदलमेश्वरी देवी से पूछा ।

"अरे, बेचारी शारदा को कहाँ जंगल में डाल दिया है ?" शकुन्तला

देवी ने नाक-भौं चढ़ाते हुए कहा।

"मैंने सोचा था कि तुम हमारे लड़के से बढ़कर सम्बन्ध लाये होगे, देखने के लिए भागी-भागी आई, हमारी तरफ के नौकर-चाकर इसमें अधिक नाज़ुक होते हैं" जगन्मोहन राव की माता, शिवकामसुन्दरी देवी ने कहा।

"हाँ, सुना है, वे अपने कपड़े अपने-आप धोते हैं, उपले बनाते हैं, पानी लाते हैं, खेतों में जाकर घास आदि भी काट लाते हैं," जमींदार की भानजी ललितकुमारी ने कहा।

"अरे, जवर भी क्या है, और वे टीके ? गधे-से हैं, जाने कहाँ से खोज-कर लाये हैं," एक और स्त्री ने नाक पर अँगुली रखकर कहा।

सब हँसे, खूब हँसे, उनकी हँसी उड़ाई। जानकम्मा को भी उन्होंने न छोड़ा।

"वे ही हैं क्या सास ? मैंने सोचा था कि कोई साथ आई हुई सम्बन्धी है।" हाईकोर्ट के वकील आनन्दराव की पत्नी प्रमिला देवी ने कहा।

"खैर हमारी शारदा का भाग्य ही ऐसा है।" वरदकामेश्वरी ने आँसू बहाते हुए कहा।

शारदा पास ही एक मोढ़े पर बैठी थी। उनकी बातें सुनकर उसके दिल में तूफान-सा उठ रहा था।

एक सहेली भी आई हुई थी। उसको नारायणराव जँचा था। उसकी शादी भी पिछले दिनों ही हुई थी। उसका पति धनवान था और विद्वान् भी। परन्तु नारायणराव की शकल-सूरत हाव-भाव से वह सहेली बहुत प्रभावित हुई थी। शारदा के चाचा की वह लड़की थी, नाम निरुपमा देवी था। उसके पति मद्रास में वकील थे। उसने कहा—"शारदा तेरे पति अंग्रेज़ी खूब जानते हैं।"

"तुझे कैसे मालूम ?"

"नई दुनिया में लड़कियों को शर्माना नहीं चाहिए, यह उनका मत है, शर्मीली लड़कियाँ गँवार होती हैं यह वे कहते थे।"

'यह सम्बन्ध पिताजी का खोजा हुआ है। उनके खोजे हुए सम्बन्ध में कोई त्रुटि नहीं होनी चाहिए। बराती सब गाँव के हैं, अगर गाँव वाला होना ही एक कमी हो तो पिताजी को यह सम्बन्ध क्यों जँचा ? पिताजी को

मुझ पर प्रेम है, वे ऐसा सम्बन्ध क्यों लाये ?' अन्दर-ही-अन्दर शर्माती हुई शारदा सहमा मुस्कराने लगी।

"क्यों शारदा क्यों मुस्करा रही हो ?" निरुपमा देवी ने पूछा।

"कुछ नहीं—"

"क्या यों ही मुस्कराया करते हैं ?"

"यों ही एक खयाल आ गया था।"

"क्या खयाल था, तू अपने पति के बारे में ही सोच रही थी न ?"

"तू मेरी मजाक क्यों उडा रही है ? तुझे रिश्ते आदि का भी कुछ मालूम है ?"

"तुमसे भले ही रिश्ता न हो, जीजा से तो है।"

'निरुपमा के जीजा ? निरुपमा मुझसे बडी है न ?' उसको यह सोचता देख निरुपमा ने पूछा—"सोच रही हो कि मैंने उन्हें जीजा क्यों कहा ? हम दोनों की करीब-करीब एक ही उम्र है। इसलिए उन्हें जीजा कहने में कोई गलती नहीं है।"

निरुपमा नारायणराव की हमेशा प्रशंसा करती रहती। वह लड़कियों की पाठशाला में पाँचवीं कक्षा तक पढ़ी थी। वह उसमें अंग्रेजी में ही हर विषय पर बातें करती रही।

शारदा यह सब देखकर अचरज में थी। निरुपमा ने शारदा से कहा–"तेरे पति बड़े बुद्धिमान हैं, चाहे कुछ भी पूछो, बडे विस्तार से बताते हैं। अच्छी-अच्छी कहानियाँ सुनाते है, कितनी ही बातें कितनी अच्छी तरह जानते है; जब हमारे मास्टर किताब लेकर पढ़ाना शुरू करते तो हमें नींद आ जाती। पर मैं मास्टर के पढाने पर भी कुछ समझ में न आता, परन्तु तेरे पति बडी अच्छी तरह पढ़ा सकते हैं, अगर उनसे सारे पाठ पढ लूँ तो अच्छा होगा।"

"मद्रास में ही तो रहती हो, वहीं सब सीख लेना !"

"अरी अभी से शरमाने लगी। वहाँ मौका मिलेगा ? मैं अपने पिताजी से कहूँगी। तेरे पति संगीत भी जानते हैं, जब तुम्हें देखने आये थे, तो सुना है वाइलिन पर गाते हुए उन्होंने खूब गाया भी था। चोर, बताया भी नहीं। पता लगा है कि चित्र भी खूब बना लेते हैं।"

"मैं क्या जानूं निरुपमा ? तू वह भी सीख लेना !"

दिन-भर शारदा सुनी-सुनाई बातों पर और निरुपमा की प्रशंसा के बारे में ही सोचती रही। क्या वे असभ्य गँवारों में से एक नहीं हैं ? वह अपने-आपसे पूछने लगी। उनका उत्कृष्ट व्यक्तित्व उसके सामने आ गया। वह इससे अधिक न सोच सकी। सोच भी नहीं सकती थी। निरुपमा शहर की रहने वाली है, वह सब-कुछ जानती-समझती है। उसने सम्बन्धियों ने ऐसा क्यों कहा ? और निरुपमा ने उनसे ठीक उलटा क्यों कहा ? उस दिन उन्होंने कितना बढ़िया वायलिन बजाया था ?

शादी के दूसरे दिन, जगन्मोहन राव जमींदार शारदा के पास आकर सोफे पर बैठ गया। शारदा बहुत सुन्दर थी, सिनेमा-स्टार की तरह। वह उसके आलिंगन में लता की तरह लिपट जाती। जो उसकी पत्नी होनी चाहिए थी, किसी और की हो गई थी। कौन है यह नारायणराव ? यह सम्बन्ध कौन लाया है, सूअर और लक्ष्मी का पाणिग्रहण ?

"शारदा ! क्या घमंड है ? क्यों बोलती नहीं ? सौत की तरह एक पति को ले आई हो, क्या इसीका घमंड है ? कहाँ से लाये हैं तेरे लिए यह पति ? जाकर बाँध दिया उस मेंढ़ से ? मामा को यह सम्बन्ध कैसे जँचा। सुना है कि यह मामी को पसन्द नहीं है। तुझ-जैसी चिड़िया को उस राक्षस से क्यों बाँध दिया है ?"

शारदा चुप रही। उसका कलेजा धक्-धक् करने लगा।

"कहती क्यों नहीं, तुझे इसका मुँह देखकर घृणा हो रही है न ? क्या थोड़ा-बहुत पढ़ने-लिखने से, जमीन-जायदाद होने से कोई अच्छे खानदान का हो जाता है ? नाजुक हो जाता है। क्या तू एक बार उसकी तरफ देख सकेगी ?"

शारदा की आँखों में आँसू छलक आए। वह वहाँ से उठकर जल्दी-जल्दी ऊपर के कमरे में चली गई।

१३ : गप-शप

विवाह खत्म हुआ। विवाह के चारों दिन, मुब्बाराय ने वेंकटस्वामी, नायडू, नारायणर वरदाचारी, चोडय्या, बलरामय्या, हरिनाग भूषण आदि बड़े-बड़े संगीतज्ञों को बुलवाया। वधू-पक्ष वालों ने, मवीव राव, संगमेश्वर शास्त्री से वीणा बजवाई। प्रसिद्ध हरि-कथा-गायक रात में बरातियों का मनोरंजन करते।

आस-पास के कितने ही धर्म-शास्त्र-कोविद तार्किक, महापण्डित, विवाह में पधारे थे। मुब्बाराय ने उनको सावरीन ने लेकर ११ रुपये पुरस्कार में दिये थे। जमींदार ने भी खूब दान-दक्षिणा दी। उस विवाह के बारे में सारे प्रान्त में बातें हुईं।

दो सौ पचास ब्राह्मणों को खाना तैयार करने और परोसने के लिए रखा गया था। प्रसिद्ध सुब्बय्या की देख-रेख में भोजन बनाया गया था।

स्त्री और पुरुषों को भोजन परोसने के लिए अलग व्यक्ति और अलग जगह थी। कुछ कमरों में दही रखी गई। कुछ में शाक-सब्जी। पान बनाने के लिए भी प्रसिद्ध व्यक्ति बुलाये गए थे।

पाँचों दिन, दोनों वक्त, तीन-चार पकवान बनते, कितने ही व्यंजन बनते। बड़े वैभव के साथ विवाह सम्पन्न हुआ।

विवाह के लिए निमन्त्रित, अभ्यागतों, बन्धु-बान्धवों की हर सुविधा का ध्यान जमींदार स्वयं हजार आँखों से कर रहे थे।

चौथे दिन रात को शहर में वर-वधू का बड़ी धूम-धाम से जलूस निकला। जमींदार ने जलूस के हाथी पर सोने की अम्बारी रखवाई, उसमें वर-वधू को बिठाया गया। जलूस में सजे-बजे हाथी, ऊँट, घोड़े, बाजे-गाजे, मोटर-कार, तरह-तरह की गाड़ियाँ, पांच सौ गैस-लैम्प, और जाने क्या-क्या थे। वर-पक्ष के सब व्यक्ति कारों में बैठे थे। वधू पक्ष का कोई भी न आया।

विवाह में नारायणराव के सभी मित्र आए थे। कई का आने-जाने का खर्च नारायणराव ने स्वयं भेजा था। युवक-मण्डलों ने ताश खेलने, सिगरेट पीते, वाद-विवाद करते, नई-नई कविता सुनते पांच-दस दिन मजे

में काट दिए। जमींदार खुद उनकी देख-भाल कर रहे थे। उनकी जरूरतों को पूरा करने के लिए कई नौकर रखे गए थे। नारायणराव ने अपने दोस्त परमेश्वर मूर्ति को दोस्तों पर खर्च करने के लिए सौ रुपये दिये। पर उनका काम ही न पड़ा। परमेश्वर आल. राजा राव, आदि कई मित्र सकुटुम्ब आये थे। दोस्तों की देख-भाल का काम लक्ष्मीपति को सौंपा गया। लक्ष्मीपति ने इस तरह अपनी जिम्मेदारी निभाई कि किसी को शिकायत करने का मौका ही न मिला। नारायणराव और लक्ष्मीपति ने सभी निमन्त्रित व्यक्तियों का खूब स्वागत किया।

एक मित्र—"वधू कन्या-राशि-जैसी है।"

एक और—"सुना है बहुत अक्लमन्द है, अंग्रेजी, संस्कृत, तेलुगु अच्छी तरह जानती है। वाईलिन, वीणा तथा गाने में तो दूसरी सरस्वती ही समझो।"

राजा०—"यानी, नारायणराव को किस्मत वाला कहा जा सकता है।"

परम०—"बड़ा सौभाग्यशाली है, यह मैं इस भरी सभा में कहना चाहता हूँ। अगर आप अनुमोदन करें तो अखबारों में छपने के लिए भी भेज दूँगा।"

लक्ष्मी०—"जमींदार ने अपना काम बड़ी तत्परता से निभाया।"

आल०—"अरे लक्ष्मीपति, जब हमें वे रेल में दिखाई दिये थे इतने अच्छे होंगे, यह हमने नहीं सोचा था।"

राजे०—"अरे, नारायणराव जमींदार तो तुम पर लट्टू हो रहे हैं। उनकी आँखें हमेशा तुम्हें ही ढूँढ़ती नज़र आती हैं।"

एक और मित्र—"कुछ ऐसा लगता है जैसे पहली भेंट में ही प्रेम हो गया हो।"

एक और मित्र—"शासन-सभा में जमींदार साहब हमेशा स्वराज्य-पार्टी की तरफ से ही बोलते हैं। परन्तु वे सत्याग्रह पसन्द नहीं करते।"

लक्ष्मी०—"पसन्द क्यों नहीं करते? जेल जरूर नहीं गये हैं, पर १९२२ में जब दूसरे जेल गये थे, शासन-सभा में वे हमेशा बंदियों के बारे में प्रश्न करते थे, अरे, राजेश्वर तुम्हारी जस्टिस-पार्टी के लिए तो वे

बगल में छुरी की तरह थे। पानगल[1] से लोहा लेते थे।"

नारायण०—""पानगल से टक्कर मिलाने वाला आदमी अभी तक पैदा नहीं हुआ है, और न पैदा होगा। आन्ध्र-विश्वविद्यालय तथा राजधानी के बारे में जितनी लगन उनमें है, और किसी में नहीं है। उनको आन्ध्र पर बड़ा अभिमान है। फिर वे खास पार्टी वाले भी नहीं हैं। बाहर चाहे कुछ भी कहें, मन में वे ब्राह्मण और अब्राह्मण का भेद नहीं करते।"

राजे०—"नारायणराव की जय, अरे तुमने हमारी पार्टी की शान बचा दी।"

नारायण०—"अरे, हाँ, आखिर स्वाराज्य-पार्टी ने किया ही क्या है?

परम०—"मैं यह नहीं मानूँगा, जब देश-भक्त जेल में सड़ रहे थे, तब ये गवर्नमेंट के दत्तक पुत्र, देशद्रोही, नौकरी के लिए दौड़-धूप कर रहे थे। ये वही तो हैं, जिन्होंने कांग्रेस को गालियाँ दी थीं।"

नारायण०—"मैं यह नहीं कहता कि तू सच नहीं कह रहा है, पर इसी प्रकार तुम्हें स्वराज्य पार्टी के बारे में भी सोचना चाहिए। जानते ही हो कि शासन-सभा में जाकर उन्होंने कुछ करा-धरा नहीं है। सिवाय प्रश्नों के पूछने के और कौन-सा बड़ा काम किया है? सब व्यर्थ है। कांग्रेस में रहकर न जेल जा पाते हैं, न मुसीबतें ही झेल पाते हैं। शासन-सभा में बकवास करने के सिवाय और काम ही क्या है? उस महात्मा को, जो कहा करता था ठीक रास्ते पर चलो, इन्होंने एक तरफ धकेल दिया है, उनके रास्ते पर चल नहीं पाते, इसलिए उनकी नुक्ताचीनी करते हैं। शासन-सभा में लड़-झगड़कर वे ही बरबाद हो जायेंगे। खैर, जनता में जाकर ये असन्तोष भी नहीं फैलाते। एक रास्ते पर चलने वाला कई रास्तों पर चलने लगा। सबने अलग-अलग रास्ता खोजा, ये हैं स्वराज्य-पार्टी के कारनामे।"

परम०—"तू तो जिन्नावादी है। यही बता कि तुम-जैसों ने क्या किया है? जेल जाकर फिर किस मुँह से कालेजों में बसते हुए हो?"

नारायण०—"क्या मैं यह कह रहा था कि जो-कुछ मैंने किया है वह ठीक है, मैं अपनी कमजोरी मानता हूँ।"

१. मद्रास के भूतपूर्व मुख्य मन्त्री, वे जस्टिस-पार्टी के नेता थे।

परम०—"चाहे तू कुछ भी कह, स्वराज्य-पार्टी के अच्छे कार्यों को न स्वीकार करना भी तो बुरा है।"

नारायण०—"यह कह कि उन्होंने कुछ नहीं किया है, बारडोली प्रस्ताव गलत है—गान्धी बेवकूफ है—इन्हीं लोगों ने ये अनर्गल बातें कहीं हैं। जो थोड़ा-बहुत काम कांग्रेस ने किया था उसको मिट्टी पलीद कर दी। मैं तो कहूँगा कि इन्होंने देश को जहर दिया है।"

वाद-विवाद को कुछ मित्र सुन रहे थे। कुछ ऊबकर दूर जाकर ताश खेल रहे थे, कुछ उस बहस में हिस्सा लेने लगे।

मित्र पाँच दिन बाद चले गए। परमेश्वर मूर्ति 'गृह-प्रवेश' के लिए कोलपेट आया, बाकी मित्र राजमहेन्द्रवर से ही चले गए।

जानकम्मा फूली न समाती थीं। उनकी बड़ी लड़की को सास ने कहा—"बनो, आराम करने के लिए बड़ी बहू लाये हो? अभी 'रजस्वला' होने वाली है, लगता है।"

"पहली बहू ने आकर क्या आराम दिया जो यह देगी, पति-पत्नी आराम से रहें यह ही काफी है।" जानकम्मा ने कहा।

एक स्त्री—"तुम्हारी बहू जमींदार-घराने की है। काम-धाम तो क्या करेगी? क्या बहुओं को तुम्हारे लिए काम करना होगा?"

एक और स्त्री—"लड़की वाले बड़े नाजुक हैं, कोई आकर यहाँ नहीं बैठती। बात नहीं करती। इतना भी क्या घमंड है? हमें देखकर नाक-भौं सिकोड़ती है।"

जानकम्मा—"इसलिए ही वे यह सम्बन्ध नहीं चाहते थे। जबरदस्ती उनको मनाया गया।"

वेंकायम्मा—(नारायणराव की बड़ी बहन), थो रामभूर्ति की छोटी बहन—"अम्मा, यह क्या कह रही हो? बढ़िया सम्बन्ध है, भाई भी पत्नी को चाहता है, खुद चुनकर उसने शादी की है।"

सत्यवती—(नारायणराव की दूसरी बड़ी बहन)—"पति-पत्नी की जोड़ी ऐसी होनी चाहिए कि दोनों आपस में एक-दूसरे को पसन्द करें, नहीं तो बस, उनकी जिन्दगी नरक है।"

वेंकायम्मा—"तेरा भाग्य तो उस तरह फूटा, नहीं तो क्या सभी

शादियाँ एक-दूसरे को पसन्द करके की जाती हैं ?"

जानकम्मा—"उस स्त्री का जीवन, जिसका पति गौरव न करे, बहुत ही गया-गुजरा है, न पैसा चाहिए, न कुछ और, यह काफी है अगर पति पत्नी को भी एक प्राणी समझे, पशु की तरह उसे न देखे।

सत्यवती का पति बड़ा गुस्सैल था, शक्की भी, अपनी परछाई को ही देखकर शक करता था। यह कहकर कि उसने जेठ की ओर देखा है, या देवर को घूरा है, किसी-किसी बहाने से वह पत्नी को धुन देता। एक रोज उसने अपनी माँ से कहा—"इसे खाना न देना", और उसे कमरे में बन्द करवा दिया। उसके दो लड़कियाँ हैं, और एक लड़का। एक लड़की बचपन में ही मर गई थी। बड़ी लड़की की उम्र दस वर्ष की थी।

सत्यवती सुन्दर थी, सोने की सींक की तरह, इकहरा बदन था। वीरभद्र राव बेवजह उसको पीट बैठता। सुब्बाराय और जानकम्मा को सत्यवती का जीवन हमेशा दुखी करता। जाने लड़की के लिए जानकम्मा ने कितनी गंगा-यमुनाएँ बहाई थी।

सूर्यकान्तं—(नारायणराव की दूसरी छोटी बहन) बहन, मैं और छोटी बहन, कल दिन-भर भाभी के पास रही। पहले तो वह बोली ही नहीं, हमारे बहुत कहने पर फिर बोली अपनी पढ़ाई के बारे में, संगीत-सम्बन्धी, सभी के बारे में बताया।"

रावणम्मा—(नारायणराव के बाद की बहन) "मुझसे कोई दो-चार बातें की होंगी, सूरी से ही लगातार गप्पें लगाती जाती थी, उन दोनों की अच्छी जोड़ी है।"

वेंकायम्मा—"सूरी, क्या कहा था उसने ?"

इतने में सत्यवती की सास और वेंकायम्मा की सास ने जानकम्मा से कहा—"अभी तक बाल सँवारने के लिए बहू को नहीं बुलाया है ? गाँव वालों को गेंद के खेल के लिए बुलाया है। हम सब तैयार हैं, और आप अपनी लड़कियों से गप्पें लगा रही हैं।"

जानकम्मा—"बड़ी लड़की और सूरी दुलहिन को बुला लायगी। सत्यवती, माणिक्यं और आप सबको बुलाइये। सावित्री बाई का गाना

है—केवल स्त्रियों के लिए । यह वर पक्ष वालों का प्रबन्ध है । उठो उठो, सब अपना काम करो, तीन बजने वाले हैं ।"

चौथे दिन शाम को केवल स्त्रियों को ही मुद्रित निमन्त्रण-पत्र भेजे गए। यह पद्धति नारायणराव, लक्ष्मीपति, परमेश्वरमूर्ति की थी। निकट सम्बन्धी और स्त्रियां तीन कारों में जानकम्मा, श्री राममूर्ति की पत्नी, सूर्यकान्त, माणिक्याम्बा, श्री राममूर्ति की सास, वेंकायम्मा की सास बुलाने गए।

परमेश्वर मूर्ति ने हाल को बड़ी अच्छी तरह सजाया। निमन्त्रित स्त्रियों के बैठने के लिए विचित्र रूप से व्यवस्था की गई थी। पंखा झलने के लिए नौकरानियां नियुक्त थीं।

अलग-अलग कमरों में निमन्त्रित व्यक्तियों का काफी-फल आदि से सत्कार किया गया। स्त्रियों को पान-सुपारी, कपूर-मालाएँ, खद्दर के जाकेट के कपड़े, चाँदी के पात्र दिये गए। जज की पत्नी, अंग्रेज सब-कलेक्टर की पत्नी आदि आईं, क्योंकि यह एक नई जीत थी। इसलिए वधू पक्ष वाले भी आये। निमन्त्रित स्त्रियों को नाना प्रकार के उपहार दिये गए। सावित्री ने उस दिन गजब का गाना गाया। उसका गला वीणा के तार-सा था। उसके मधुर संगीत में वर-वधू मस्त हो गए। संगीत-कला-उपासक वर-वधू को मस्त देखकर सावित्री भी तन्मय हो गई।

१४ : और दिन

'जाने इस विवाह-सूत्र में क्या है कि समुद्र के नमक और जंगल के आमले की तरह दो जीवन मिल जाते हैं, दो नदियाँ कहीं-कहीं से बहती आती हैं, विवाह की वेदिका पर उनका मिलन होता है, एक प्रवाह बनता है।' यह सोचकर नारायणराव आश्चर्य कर रहा था।

जब उसे दूल्हा बनाया गया था, मंगल-स्नान करवाने पर, पीले रेशमी वस्त्र धारण करने पर, विवाह-वेदिका पर बैठने पर, शारदा के गले मे मंगल-सूत्र बांधने पर नारायणराव किसी विचित्र भाव-समुद्र में गोते लगा रहा था। शारदा के सामने बैठने पर उसमें प्रेम उमड आया था। उसे लगा—'जैसे वह माता हो, और शारदा छोटी-सी बच्ची, फिर मानो वह युग-युग का मित्र हो, फिर मानो शारदा महारानी हो और उसका वह सेवक, फिर मानो वे दोनो एक ही मेघ के दो टुकडे हो, और या दो जुडवाँ बच्चे हो, फिर मानो वह पुरुष हो और वह प्रकृति, वह पुरुषोत्तम, शारदा महा सृष्टि।'

उसने आँखें फाडकर शारदा को देखना चाहा। पर यह सोचकर कि उपस्थित लोग क्या कहेंगे, वह शरमा गया। उसका हृदय द्रवित हो गया। शारदा को आलिंगन करने की इच्छा बढ गई।

"परम, उन भावो का वही अन्त न था, क्या मुझे ही या हर वर को इस प्रकार के भाव आते हैं ? मेरा और उसका बन्धन ऐसा है जिसका मनुष्य विच्छेद नही कर सकते। उन मन्त्रो का कितना माहात्म्य है ? थोडे-थोडे समझ में आये। वह मन्त्रोच्चारण ऐसा लगा मानो दो भिन्न जीवनो को एक कर रहे हो। वे वल्कलधारी दाढी बढाये, ब्राह्मण ऋषियो की तरह मुझे दिखाई दिये। दोनों जीवनो को कलम लगाने वाले माली की तरह।

हाँ, प्रेम करके विवाह करने की अपेक्षा विवाह करके प्रेम करने वाला हमारा दाम्पत्य जीवन ही अधिक स्थायी है। और किसी के बारे में क्या कहूँ, मेरी ही बात लो, विवाह के समय में सयाना था, पर विवाह से पूर्व मैंने अपनी पत्नी को नही देखा था। उससे पहले कितने ही लोग मुझे लडकी देने आये, मैं भी उन्हें देखने गया, कई लडकियो को देखने के बाद मुझे एक लडकी जँची। वह लडकी बहुत सुन्दर थी। उसका सौन्दर्य अलौकिक था। सौन्दर्य की बात छोड दें, वह संगीत मे इतनी प्रवीण थी कि पत्थर भी पिघल उठते होंगे। मेरी आँखें छलक आई। मैंने सोचा अगर मेरी शादी उससे हो गई तो मेरा जीवन सार्थक हो जायगा; पर वे कम दहेज दे रहे थे। मेरे पिताजी अधिक माँग रहे थे। विवाह न हो सका। मैंने माँ से, पिता जी के दोस्तो से पिताजी को कहलवाया भी, पर कोई फायदा न हुआ। मेरा हृदय टुकड़े-टुकडे हो गया। मैंने जो हवाई किले बनाये थे, वे ढह गए। फिर एक लडकी

के बारे में चर्चा चली, वह पहले-जितनी खूबसूरत न थी, संगीत आदि भी जानती थी। वे हमसे किसी बड़े मच्छ को पकड़ने की कोशिश में थे, अगर वह न फँसता तो वे मुझे चुनना चाहते थे। यानी वहाँ भाव न पटा तो हमसे सौदा करना चाहते थे। मुझे ऐसा अनुभव हुआ, जैसे वह लड़की मेरे मन में आ रही हो, मेरी आँखें खुशी से मिच गईं। पर उनका दूसरी जगह भाव पट गया। तब मैंने शपथ कर ली, 'शादी के लिए किसी लड़की को न देखूँगा', आखिर, बिना देखे ही शादी निश्चित भी हो गई। मंगल-सूत्र बाँधते वक्त देखा कि लड़की उतनी सुन्दर न थी। वे दोनों लड़कियाँ याद आईं। आह निकली, पर न मालूम इस मंगल-सूत्र की भी क्या महिमा है, कि मैं तब से पत्नी को बहुत चाहने लगा हूँ।"

परमेश्वर ने नारायण को देखकर उसकी तरफ पीठ फेर दी, फिर उसने विषय को बदलते हुए कहा, "नारायणराव, हमारी शादियों और मुस्लिम शादियों में बहुत फर्क है।"

"क्योंकि मुस्लिम विवाह मजहबी नहीं होते। वे कान्ट्रैक्ट हैं, इसलिए उनको तोड़ देना आसान है।"

"हाँ, मुस्लिम-विवाह बिलकुल 'कन्ट्रैक्ट' है, ईसाइयों के गिर्जे की शादी का फिर भी धर्म से सम्बन्ध है। हमारे समाज में यह पूर्णतः एक धार्मिक विधि है। स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध में इतना पवित्र होने के लिए मालूम नहीं कितने युग लगे होंगे? मनुष्य पहले जंगलों में पशुओं की तरह फिरता था, अब वह बदल गया है तो इसका कारण विवाह की विधि ही है।"

"सच, पति जैसा भी हो, पत्नी भी वैसी हो जाती है। मानो वकील की पत्नी है वह, कानून की बातें सुनती रहती है, मुवक्किलों का आना, अदालत में पैरवी करना, जीतना हारना, इन सबमें पति के साथ एक हो जाती है। मान लो, वह ही एक डाक्टर की पत्नी है, रोगी, रोग, दवा, इन्जेक्शन, दिन-रात काम का होना आदि विषयों की आदी हो जाती है। मानो वह किसी मुलजिम की पत्नी है, वह उसके काम में घुल-मिल जाती है, पर हाँ, मुझे बहुत दिनों से एक प्रश्न सूझ रहा है, उसका उत्तर नहीं मिलता—वह यह कि पति के जीवन से पत्नी का जीवन अधिक प्रभावित होता है या पत्नी के जीवन से पति का।"

"यह प्रश्न तो अच्छा है। स्त्री का जीवन स्वच्छ है, पति का रंग उन पर पड़ने से वह लुप्त हो जाता है। घर-बार, गृहस्थी के मामलों में पत्नी का व्यक्तित्व ही अधिक प्रभावशाली है। इसलिए गृह को देखकर गृहिणी को देखने के लिए कहा गया है। और अगर पति जरा नरम स्वभाव का है तो यह भी देखा गया है कि पत्नी का उनके जीवन पर अधिक प्रभाव होता है।"

सुब्बाराव अपने दूसरे लड़के के विवाह के बारे में कई तरह से सोच रहे थे। उन्होंने अपनी चार लड़कियों और लड़के का अच्छे घरों में शादी की थी। वे सब सुखी-सम्पन्न थे। कई सम्बन्धियों के विवाह भी उन्होंने खुद करवाये थे। उनके लिए वे सब विवाह एक तरफ और नारायणराव का विवाह एक तरफ था। काफी पैसा खर्च हो गया था, और भी होता तो उसकी वे परवाह न करते। उस तरफ जमींदार का भी लाख से ऊपर खर्च हुआ होगा। क्योंकि वे जमींदार हैं इसलिए उनका कोई अनाप-खर्च नहीं होगा। जमींदार हैं, क्या इसलिए उन्होंने किसी की कम परवाह की थी? महाराजाओं की तरह उनका सम्मान किया था। साढ़ू बड़े योग्य हैं। स्त्रियाँ शोर कर रही हैं कि उनकी तरह की स्त्रियों ने उनका ठीक सत्कार नहीं किया। नया सम्बन्ध है, धीरे-धीरे शायद सब ठीक हो जायगा।

बड़े घर की लड़की शायद मेरे घर में आकर तकलीफें झेले। लड़का कहीं नौकरी नहीं तो वकालत करेगा। भले ही वह कमाये न, भगवान् की दया से उसे खाने-पीने, पहनने की कमी न होगी, नौकर-चाकर रखने की भी ताकत है, नारायण फिजूलखर्ची भी न करेगा। किसी चीज की कमी न होगी। मेरा लड़का बुद्धि में बृहस्पति के समान है। वह परिश्रम करके परिवार के लिए क्या कमायगा। फिर उसके निकम्मे होने के बारे में क्या सोचना? यह सच है कि इन दिनों ब्राह्मणों को नौकरी मिलना कठिन है, पर कमाने के लिए क्या यह जरूरी है कि नौकरी ही की जाय? मद्रास में वकालत करके लाखों रुपये कमाये जा सकते हैं। यह भी सच है कि शुरू से ही लड़के को कानून से नफरत है, पर मेरे कहने-सुनने से ही वह लॉ कालेज में भरती हुआ था। कुछ भी हो, उस पर उसके बारे में ज्यादा सोचने की जरूरत

नहीं। नारायणराव कल्पनावादी है, हर परिस्थिति का सामना कर सकता है। सोचना तो बहू के बारे में है।

मालूम नहीं लड़की कैसी है? साधारण तौर पर जमींदार-घरानों में घमंड अधिक होता है। जमींदार-लड़की का मेरे-जैसे परिवार में रहना मुश्किल है। शहरों में बाहर पढ़ी लड़कियों की तरह इतरायेगी नहीं? समझदार लड़की है। बिना उसकी इच्छा को जाने जमींदार मेरे लड़के को अपना दामाद न बनाते। वह नारायण को चाहती होगी, नारायणराव भी हर किसी के हृदय को परख सकता है, शक्ल-सूरत भी ऐसी है कि कोई भी लड़की उसकी पत्नी होने में अपना अहोभाग्य समझेगी। फिर यह सम्बन्ध अच्छा है या बुरा? सब भगवान् की इच्छा है। जाने किसके भाग्य में क्या लिखा है, उस परमेश्वर की लीला कौन जानता है? अब तक मैंने जिस चीज को भी पकड़ा वह सोना हो गई। पर आगे क्या होगा क्या मालूम?

सुब्बाराय गम्भीर, धीर, स्थिर प्रकृति के थे। उन्होंने ही परिवार-नौका को मँझधार से किनारे पर सही-सलामत लगाया था। बिना किसी को हानि पहुँचाए अपने परिश्रम से उन्होंने पैतृक सम्पत्ति को हजार गुना बढ़ा दिया था। इतना बढ़ाया कि वे छोटे जमींदार भी कहलाये जाने लगे। जिले में लोग कहा करते कि 'सुब्बाराय जी का वचन और भाग्य का वचन एक ही है।' कहलाने में रत्ने मनाने में से उन्होंने लड़के की शादी के खर्च के लिए २५ हजार रुपए निकाल रखे थे। उन्होंने यह भी नहीं सोचा कि क्या लड़का क्या सोचेगा?

श्रीराममूर्ति को ज्यादा खर्च करना पसन्द न था, पर जरूरत पड़ने पर वह आगे-पीछे नहीं देखता था। चारों बहनों की शादी पर, तीन बहनों के गौने पर, बन्धु-बान्धवों पर सुब्बाराय को पैसा लुटाता देखकर भी श्रीराममूर्ति क्रुद्ध न होता था, अगर पिता कोई गलत भूल भी करते तो वह उनको याद दिलाता।

सुब्बाराय ने साफ कह दिया था कि वे दहेज न लेंगे। पर जमींदार ने स्वयं चालीस एकड़ अपनी इनाम भूमि, बहुत-सी रजतवर्ण भूमि, तणुकु ताल्लुके में अपने गाँव के पास ही दी। जो चीज उपहार में दी थी उनका तो

गिनती ही न थी। लडकी के नाम बैंक मे पचास हजार रुपये जमा कर दिए थे।

सुब्बाराय ने बड़ी बहू की तरह छोटी बहू को भी दस हजार रुपये जेवर-जवाहरातो के लिए दिए।

१५ : गृह-प्रवेश

गृह-प्रवेश के लिए शारदा के साथ शकुन्तला देवी, जमीदार की भानजी ललिता, वरदकामेश्वरी की सम्बन्धी सरोजिनी, जमीदार का लडका केशवचन्द्र गये। सुब्बाराय ने सबको १४ दिन के त्योहार के लिए ठहरने के लिए कहा। सुब्बाराय बन्धु-प्रिय थे, स्वागत-सत्कार करने मे वे जनक समझे जाते थे। जानकम्मा के रिश्तेदार, बाल-बच्चो को सबको मिलाकर ३०० आदमी विवाह के लिए आये थे, उनमें से अधिक राजमहेन्द्रवरं मे चले गए थे। कुछ कोत्तपेट आये। कोत्तपेट में आठ तेलुगु ब्राह्मण और दो दाक्षिणात्य ब्राह्मण रसोई के लिए लगा रखे थे। सुब्बाराय ने वर-वधू के गृह-प्रवेश-सस्कार को भी विवाह की तरह धूम-धाम से सम्पन्न किया। एक दिन सबको निमन्त्रित किया गया, वधू के साथ आये हुए बन्धुओ का विशेष सत्कार किया गया।

वर पक्ष ने विवाह में खद्दर के वस्त्रो का ही उपयोग किया था। नही तो स्वदेशी वस्त्र या रेशमी वस्त्र उपहार में दिये गए थे। वधू पक्ष ने भी वर और उसके बन्धुओ को खद्दर के वस्त्र ही दिये थे। स्त्रियो को यथोचित साडियाँ, जाकेट आदि दी गई थी।

शारदा को ससुराल विचित्र-सी लगी। जितना उसके पिता के घर फर्नीचर था, उतना वहाँ न था। कही-कही तो दो-तीन कालीन जरूर थे, पर उसके घर में तो सभी जगह कालीन थे। वहाँ दीवारो पर तरह-तरह की

तस्वीरें टटकी हुई थीं, मेज, कुर्सी, अलमारी, चाँदी-पीतल-ताँबे की मूर्तियाँ थीं। चीन, आगरा, अजमेर, लखनऊ, बर्मा की कितनी ही चीज़ें थीं। पिताजी, दादाजी, माता जी, मौसी जी आदि के चित्र उसके घर में टँगे थे। और यहाँ सिर्फ उसके पति का ही कमरा ज़रा ठीक था। सूर्यकान्त ने सारा घर दिखाया। तंजौर के खिलौने, मामूली कुर्सियाँ, बेंत की कुर्सियाँ, गद्दे, सभी कुछ। उसके घर में स्वयं पिताजी ने बिजली के लट्टू और पंखे लगवाये थे और ससुराल में 'लस्टर लालटेन' और 'पेट्रोमैक्स' जलते थे। छी, यह भी कोई घर है।

शकुन्तला देवी ने बहन से कहा—"हमारी ससुराल में, घर में जितनी चीज़ें हैं, उतनी तो नहीं हैं, फिर भी वह जमींदार के किले की तरह है। मगर तू इस गँवार घर में आ पड़ी है, तो चारपाइयों और गद्दे होने-मात्र से क्या जमींदारी ठाट-बाट आ जाते हैं? हाय राम, तू कैसे घर में आ पड़ी, सुना है, बहुत पैसा है, ज़मीन है, पर क्या फायदा? शान-शौकत जन्म से आती है, न कि सीखने से।"

"इनके रहने-सहने के ढंग, तौर-तरीके सब विचित्र हैं।"

"तुम्हारे पति की बड़ी बहन हमेशा कुछ-न-कुछ बकती रहती है। मुझे, ललिता और सरोजिनी को बिठाकर वेदान्त का पाठ सिखाने लगी। दूसरी हमसे हमारे कुटुम्ब की बातें पूछने लगी, हमेशा मुँह फाड़कर मुस्कराती।"

ललिता—"हम उनका अपमान करने के लिए झट उठकर चली आईं।"

सरोजिनी—"तुम्हें मजाक-मखौल की आदत हो गई है, वे भी हम-जैसे इज्जतदार और हैसियतमन्द हैं। क्या सब जमींदार होते हैं? सारा प्रान्त छान आओ तो भी मुश्किल से दस जमींदार मिलेंगे। अगर तुम्हारे पिताजी के दस लड़कियाँ हों तो सबके लिए जमींदारी सम्बन्ध कहाँ से आयेंगे? लायेंगे?"

इतने में सूर्यकान्त वहाँ आई। उसके आते ही उनकी बातें रुक गईं। सूर्यकान्त नारायण भाई को बहुत चाहती थी। माँ-बाप, भाई-बहन सब थे, अगर नारायणराव न दिखाई देता, तो वह दुखी हो जाती। यह कहा जाय कि बचपन से नारायणराव ने ही पाला-पोसा था तो इसमें रत्ती-भर भी

मनिमनोगिता न होगी। जरा-सी चोट लगने पर वह 'भैया' चिल्लाती, भाई के साथ सोती, भाई के साथ खाती, 'भैया, भैया' की नित राम-राम जपती। भाई जब पढ़ाई के लिए कमलापुर, राजमहेन्द्रवर, मद्रास गया, या वह जेल गया, तो वह हमेशा रोती रहती। जब वह भाई से राजमहेन्द्रवर जेल में मिलने गई तो भाई ने जेलर की अनुमति लेकर उसे पास बुलाया, और उसके कान में देश-भक्ति पर कुछ बातें कहीं। "अगर वह रोयेगी तो गान्धी जी दुखी होंगे, उसको रोता देखकर उसका भाई भी उसके लिए जेल में रोयेगा, उसके लिए जेल में रहना मुश्किल हो जायगा, लोग कहेंगे कि उसकी बहन देशद्रोही की तरह उसे बाहर बुला रही है, आदि-आदि", कहा। तब सूर्यकान्त रोती-रोती मुस्करा दी, उसका चेहरा ऐसा चमकने लगा, जैसे कि घने बादलों के बरसकर चले जाने के बाद, निर्मल आकाश चमकता है।

इसलिए उसने जब से अपने भाई की पत्नी को देखा, तभी से वह अपने को काबू में रख सकी थी, उसको छोटी भाभी बहुत सुन्दर लगी। उसने उसका आलिंगन करना चाहा, शादी के पाँचों दिन, जब तक मौका मिला, वह नई भाभी के पास ही रही। उसके बाल सँवारती, बालों में फूल सजाती, उसके गहने ठीक करती, उसके पास बैठती। 'भाभी, तुम सुन्दर हो' कहती। शारदा उसे पहले बड़ी बावली-सी लगी। परन्तु सूर्यकान्तं का प्रेम-भरा व्यवहार देखकर उसका वह खयाल जाता रहा। वर-पक्ष के बन्धुओं में उसे केवल सूर्यकान्तं ही पसन्द आई।

सूर्यकान्तं ने भाभी का हाथ पकड़कर कहा, "मैंने कहा था न कि मैं अपनी लाल गी दिखाऊँगी। अगर तूने उसे एक बार देखा तो छोड़ेगी नहीं। अभी खेत से हमारे गाय, भैंस, बैल वगैरा सब आये हैं। बाकी पशुओं को बाग में ही पशुशाला में बाँध दिया जाता है। आओगी?"

उस दिन शाम को ठण्डी-ठण्डी बयार चल रही थी, सारा घर महक रहा था। कल ही सूर्यकान्तं ने घर के पीछे वाला बाग दिखाया था, चमेली, चम्पा, गुलाब, मन्दार, गेंदे तरह-तरह के फूल बाग में गायन करते-से लगते थे। नारायणराव बाग पर जान देता था, छुट्टियों में वह नये-नये पौधे लाता, वह उनको काटता, छाँटता, कलम लगाकर नये पौधे तैयार करता,

दोस्तो ने उसको 'माली' का नाम भी दे रखा था ।

वह पौधो से बातें करता, उसके हस्त स्पर्श से पौधे पुलकित होते । नारायणराव अपने मित्रो से कहता, "बोस ने जो कहा है उसमें बिलकुल अतिशयोक्ति नही है।"

भारत में जो फूल जहां होता, वहां से ही कीमत भले ही अधिक हो वह मँगाता । बगीचे में कई विदेशी पौधे भी थे ।

सूर्यकान्त भाई के शौक में, जोश में मग्न हो जाती । भाई जब पढ़ चला जाता तो माली का काम वह सँभाल लेती, मालियों से वह पौधो को पानी डलवाती, पौधो की रक्षा करती, भाई की आज्ञा का पालन करते वह गर्व का अनुभव करती, वह स्वय वनदेवी-सी हो जाती ।

शारदा को बगीचा देखकर आश्चर्य हुआ, कुछ ईर्ष्या भी हुई ।

जब वे दोनो बगीचे में टहल रहे थे नारायणराव ने उन्हें देखा । उसे लगा—मानो उसका जीवन सुगन्धित हो गया हो, उसने उन दोनों को गले लगाना चाहा । सारा ससार मानो उसके लिए प्रेममय था ।

चुपचाप वह उनकी ओर गया । "सूरी, क्या बगीचा दिखा रही हो?" पूछ तो बैठा, पर वह अपने साहस पर अपने-आप आश्चर्य कर रहा था

शारदा से बोलने के लिए शादी के दूसरे दिन ही वह मचल उठा था पर शर्म के कारण न बोल सका था । बडी सभाओ में, बिना शर्म के धुआँधार भाषण दिया करता था, पर उसको देखकर वह लजा गया । अगले दिन जब उनका जलूस निकल रहा था तो वह पूछ बैठा, "क्या तुम कालेज में पढना चाहती हो ?"

शारदा चौंकी । वह तरक्की-पसन्द थी, उसने पहले वर-वधुओ को बातें करते देखा था, देखकर वह सन्तुष्ट भी हुई थी । उसने भी उसी तरह बोलना चाहा, बोलने की कोशिश की, पर शरमाकर रह गई। उसने यह सोचा तक न था कि उसके पति आज इस तरह बातें करेंगे, पहले जब नारायणराव उसे देखने आया था उसने उसे निर्भय होकर देखा था, उसका सौन्दर्य देखकर वह हक्की-बक्की रह गई थी । उसको वाइलिन देखा तो उसका मन बल्लियो उछलने लगा ।

जब से सम्बन्ध निश्चय हुआ था तभी से उसकी माँ ...

ने शारदा के पास रोना-धोना शुरू कर दिया था। गाँव के इस सम्बन्ध को तोड़ने के लिए भगवान् से प्रार्थना किया करती थी। बन्धुओं में सिवाय दो-तीन स्त्रियों के सभी वरदकामेश्वरी के मत वाले थे। उसके साथ रोते,··· सम्बन्ध की निन्दा करते।

उन बातों को सुनकर शारदा के मन को चोट लगी। वह पति के प्रति कुछ उदासीन होने लगी। इस हालत में नारायणराव के बोलने पर अगर वह चौंकी तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है?

वह पति का उत्तर न दे पाई। नारायणराव ने सोचा कि शारदा शरमा रही है।

"शारदा, तू तो अंग्रेजी खूब जानती है, अंग्रेजी जानने वाली लड़कियाँ सुना है, शरमाती नहीं हैं। पता लगा है कि तू इस साल 'स्कूल फाइनल' परीक्षा में बैठने वाली थी, फिर तू मुझसे बातचीत करने में क्यों शरमा रही है?" नारायणराव ने अंग्रेजी में पूछा।

शारदा ने कोई जवाब नहीं दिया। वह चुप ही रही। चकित।

तुम्हारी अंग्रेजी अध्यापिका कह रही थी कि परीक्षा में तुम्हें अव्वल दर्जे के मार्क मिलेंगे। वह कहती थी कि बेपढ़ी स्त्रियों की तरह तुम शरमाती नहीं हो। शर्म क्यों करती हो? अगर उनकी बात सच है तो बात करो", नारायणराव ने अंग्रेजी में कहा।

शारदा को यह सुनते ही जोश आ गया। वह अंग्रेजी में बोली, "मद्रास यूनिवर्सिटी के लिए मैट्रिक्युलेशन के लिए दरख्वास्त दी है, स्कूल फाइनल के लिए स्कूल जाना लाजमी है न?"

"यह, हाँ, इस तरह जवाब देना चाहिए। तुम्हें वाइलिन अच्छी लगती या वीणा?"

"दोनों।"

"इन दोनों में कौन-सी अच्छी है?"

"दोनों ही अपनी-अपनी जगह।"

"ऐसे कहोगी तो फिर कैसे? जो तान वीणा पर बजाई जा सकती है, वह वाइलिन पर नहीं बजाई जा सकती। और जो वाइलिन पर बजाई जा सकती है, वीणा पर नहीं बजाई जा सकती। वीणा में जो ध्वनि है

वह वाइलिन में नहीं है।"

"यही, तो मैं कह रही थी, जो इसमें खूबी है, उसमें नहीं है। और जो उसमें है, इसमें नहीं है।"

"कभी तुमने सगमय्या को बजाते सुना है?"

"वे हमारे घर आकर, हर साल पन्द्रह दिन रहा करते थे, वे अपनी वीणा सुनाकर मुझे सिखाते थे।"

"तो क्या तुम सगमय्या जी की शिष्या हो? कितनी भाग्यशालिनी हो!"

इतने में जलूस घर के सामने आ गया था, इसलिए उनका सम्भाषण रुक गया।

इस तरह पत्नी से दो-तीन बार बातचीत करके नारायणराव मानो नशे में आ गया था।

आज पति के सूर्यकान्त से उस तरह पूछने पर उसे थोड़ा खराब लगा। नारायणराव भी यह ताड़ गया और मन मसोसकर चला गया। सूर्यकान्त भी उनके मन की बातों को जान गई। शायद उसने उनका ध्यान अन्यत्र आकर्षित करने के लिए कहा, "आओ, गौ को देखें," और वह दोनों का हाथ पकड़कर ले गई।

१६ : गृहस्थी

सुब्बाराय के घर के पिछवाड़े में एक पूर्वीय वेलमा का घर, दो गरीब कापू के घर, और पाँच पूर्वीय ग्वालों के घर थे। वे सब सुब्बाराय के नौकर-चाकर थे। कापुओं में कुक्कल सोमय्या बड़ा नौकर था। सुब्बाराव ने नौकरों के लिए साफ-सुथरे मकान बनवाये थे। सोमय्या का घर दूसरों के घरों से बड़ा था। सोमय्या का बड़ा परिवार था। वह बूढ़ा हो गया था,

परमर भी उसमें इतनी ताकत थी कि खेती-बाड़ी का काम करवाने में मशहूर था। सोमय्या के पिता ने सुब्बाराय के पिता के यहाँ नौकरी शुरू की थी। वह बहुत गरीब हो गया था, गुजारा मुश्किल था। सोमय्या के पिता वीरय्या ने सुब्बाराय के पिता थी रामभूर्ति की शरण ली, फिर वह अपनी समझदारी और वफादारी के कारण धीरे-धीरे बड़ा नौकर हो गया। तब सोमय्या भी मूँछों वाला हो गया था, वह भी पिता की मदद करने लगा था। उसे भी थी राममूर्ति वेतन देते थे।

वीरय्या को शुरू-शुरू में १८ बोरे धान मिलता था, फिर उसे २५ बोरे धान और पचास रुपया वेतन भी मिलने लगा। निन्यानवे वर्ष की उम्र में वह गुज़र गया। सोमय्या आज बड़ा नौकर है। पर सुब्बाराय उसको नौकर कहकर नहीं पुकारते थे, बल्कि मुमास्ता कहते थे। वे उसे १५ रुपये माहवार वेतन के साथ १ बोरा धान भी देते थे।

बाकी नौकरों को भी वे अच्छा वेतन देते थे। इसके अलावा और भी चार-पाँच नौकर थे। घर में बरतन माँजने के लिए, पानी लाने के लिए, उपले बनाने के लिए, पिछवाड़े में रहने वाले नौकरों की स्त्रियाँ ही मुकर्रर थीं। उनको भी तनख्वाहें मिलती थीं। सोमय्या की बहू, घर में बच्चों की देख-भाल, चावल ठीक करने, कपड़े धोने आदि का काम किया करती।

ग्वालों में अच्चम्मा विश्वास-पात्र नौकरानी थी, उसके माँ-बाप भी सुब्बाराय के घर में काम किया करते थे। उसका पिता गुज़र गया था और माँ बूढ़ी हो चुकी थी। वह घर का काम ही सँभाला करती थी। अच्चम्मा शादी करके पति को अपने घर ही ले आई थी। उसकी दो छोटी बहनों ने भी यही किया। वे भी सुब्बाराय के यहाँ नौकर थीं, उनके लड़के गौएँ चराते, वह भी खुद घर में नौकरी करती।

सुब्बाराय के पिछवाड़े के दूसरे घर में सोमय्या का दामाद रहता था। सोमय्या के तीन लड़कियाँ और चार लड़के थे, उसके सभी बच्चे चौथी क्लास तक पढ़े थे। सोमय्या ने अपने दामाद को भी सुब्बाराय के घर में नौकरी दिलवा दी और उसके लिए अपने घर की बगल में एक घर बनवाया। बाकी दोनों लड़कियों की भी उसने शादी कर दी थी, एक को दोप्पिपट्ल में, और दूसरी को गोपालपुरं में। वे सब सुखी और बाल-बच्चे-

जाते थे। गोपम्मा के क्योंकि एक के बाद एक लड़की पैदा हुई थी, इसलिए उसने दूसरी लड़की का एक गरीब घर में विवाह करके दामाद को घर में ही रख लिया था। अब गोपम्मा का लड़का बालिग वर्ग का था। छुट-पन से वह नारायणराव के साथ खेला था, नारायणराव राजकुमार बनता था और मनय्या दरबार।

पुर्वीय वेंकन्ना, दस वर्ष पहले सुब्बाराय के घर काम पर आये थे। वे चूँकि वकील के बड़े भाई के बगीचे में काम करते थे, इसलिए सुब्बाराय ने अपने बगीचे का काम उन्हें सौंप रखा था। वास्तव में, जिस परिवार ने ध्यान के बाग में काम किया था वह भी गाँव में, सुब्बाराय के तीस एकड़ के बाग में काम कर रहा था।

पाँचों ग्वाले-कुटुम्बों में से एक बछड़ों को पालने में बड़ा माहिर था। जिस पशु पर उसका हाथ लगता वह कभी बीमार न होता। मुर्रा भैंस, गौ, बूढ़े बैल आदि उसके पास सुख से रह रहे थे।

सुब्बाराय अपने पशुओं की बहुत परवाह करते थे। वे कहा करते थे कि उनको मनुष्यों से भी अच्छी तरह देखना चाहिए। उन्होंने बछड़ों को नाम दे रखे थे, और उन्हीं नामों से उन्हें पुकारते थे। अगर किसी का थोड़ा पैर भी दुखता तो वे मदद करते।

सुब्बाराय के यहाँ आठ जोड़ी बैलों की खेती होती थी। पाँच ओंगोल की नस्ल के, दो मैसूर नस्ल के और एक सिन्धी नस्ल का बैल था। सिन्धी नस्ल के केवल सवारी के लिए इस्तेमाल किये जाते थे। चार-पाँच बछड़े उनके पास हमेशा तैयार रहते।

भले ही मनुष्य फाके करे, बछड़ों को हमेशा पेट-भर मिलना चाहिए, यह सुब्बाराय का मत था। धान, चना, जौ, बिनौले आदि सुब्बाराय के घर में खूब रहते। पशुओं की हरी घास के लिए, दस एकड़ भूमि अलग कर रखी थी, बारहमास भी थे, चारे की कमी कभी नहीं होती थी।

सुब्बाराय के पास गौ-भैंसें भी बहुत थीं। ओंगोल की नस्ल की दस गौएँ थीं, और देशी नस्ल की १०। पाँच बड़ी भैंसें थीं, कुछ दूध दे रही थीं, कुछ सूख गई थीं। उनके घर में हमेशा दूध रहता। इनके अलावा, गुर्नाडु पन्नु नस्ल की भी गौएँ थीं। जाने इनको सुब्बाराय के दादा कहाँ

से लाये थे—ढाई फीट ऊँची, छोटा सिर, हरिण-जैसी आँखें, दुग्ध-सागर की तरह थी, कामधेनु की तरह सुन्दर।

वनलक्ष्मी के समान शारदा और सूर्यकान्त के साथ नारायणराव भी उनको फूल दिखाता, समझाता, पशुशाला में गया। पशुशाला में एक तरफ दो 'गुम्मडि पण्ड' गौएँ थी। एक दुधारू थी और दूसरी सूखी। नारायणराव को देखते ही उसका बछड़ा उछलता-कूदता उसके पास आया। नारायणराव उसे पुचकारने-दुलारने लगा। शारदा ने तो पहले ही पशुशाला की गन्दगी के कारण नाक बन्द कर रखी थी, फिर पति को बछड़े को दुलारता देख वह और भी सह न सकी। सूर्यकान्त से 'आओ, घर चलें', कहकर वह मुड़ गई, और पति की गँवारू आदतों के बारे में सोचती हुई घर की ओर चलने लगी। उसको जाता देखकर सूर्यकान्त ने उसका रास्ता रोककर कहा, "क्यों भाभी, बछड़े को देखे बगैर ही चली जा रही हो?"

शारदा ने कहा, "देख तो रही हूँ।"

नारायणराव पहले से कुछ विकल था। शारदा को जाता हुआ देखकर वह चिन्तित हो उठा। उसको पीछे लाने के लिए उसने सूर्यकान्त से कहा, "देख सूर्य, इधर तो आ, देख यह बातें कर रही है, पिताजी ने इसका नाम बरवाला रखा है। वह एक बार भाभी की तरफ देखती, फिर भाई की ओर। भाई के पास चली गई। न जाने शारदा ने क्या सोचा? वह कहीं रुक गई। उसने कहा, "उस सफेद बछड़े को इधर तो लाओ!" यह सुनकर सूर्यकान्त को अचरज हुआ। वह उस हाथी-दाँत की तरह सफेद बछड़े को आसानी से उठाकर उसके पास ले गई। नारायणराव भी लम्बी-लम्बी साँसें लेता हुआ वहाँ से चला।

उसी दिन शाम को सुब्बाराय का बाग देखने के लिए विवाह में आये हुए अतिथि मोटर में गये। सूर्यकान्तं, सत्यवती, परमेश्वर मूर्त्ति की पत्नी रुक्मिणी भी उनके साथ गई।

बाग में तरह-तरह के आम, मीठे माल्टे, कटहल, सुपारी, नारियल, अमरूद, नारंगी, आमला, सपोटा, चकोतरा, जामुन तथा नीबू के कई वृक्ष थे। बाग में दो-तीन रखवालों के घर थे। बाग महक-महक रहा था।

मालियों ने पेड़ पर लगे अमरूद, बगलौर में नारायण के लाये हुए बिना बीज के अमरूद, मसोटा लाकर दिये। अन्धेरा होने के बाद वे फिर मोटर में घर वापिस आये।

नारायणराव के मन में किसी अव्यक्त भय ने प्रवेश किया। उसने सोचा कि शारदा के व्यवहार में कोई जरूर खास बात है। फिर उसने अपने को समझाया, 'नहीं, यह भारतीय युवती की सहज स्वाभाविक लज्जा है।'

नारायण०—"भले ही हमारी स्त्रियाँ पाश्चात्य शिक्षा पायें, उनके रहन-सहन का अनुकरण करें, फिर भी भारतीय परम्परा उन्हें नहीं छोड़ती।"

परम०—"क्यों तुम यह सोच रहे हो? क्या कोई अच्छी पढ़ी-लिखी यहाँ दिखाई दी है, जो भारतीय परम्परा की भी हो?"

नारायण०—"हाँ, एक विचार से दूसरा विचार उपजता गया, यह निष्कर्ष था।"

परम०—"इस विचार-शृंखला की पहली कड़ी क्या थी?"

नारायण०—"हाँ, कुछ नहीं, वह तो मामूली बात है।"

परम—"मैं यों ही मनोवैज्ञानिक अन्वेषण के लिए पूछ रहा हूँ।

नारायण०—"क्या, जो मैंने कहा है वह झूठ है क्या?"

इतने में लक्ष्मीपति वहाँ आया।

लक्ष्मी०—"अरे, क्या बहस कर रहे हो?

परम—"देख, इसने एक बड़ा सिद्धान्त निकाला है, मुझे मानने के लिए कह रहा है। मैंने पूछा कि इस सिद्धान्त का पहला विचार क्या है तो इधर-उधर की कहने लगा।"

लक्ष्मी०—"पहले यह तो बताओ कि इसका क्या सिद्धान्त है?"

परम—"आजकल स्त्रियाँ भले ही पढ़-लिख जायें, पर उनके मन में भारतीय परम्परा ही घर किये रहती है।"

लक्ष्मी०—"वह तो यह हमेशा कहता रहा है।"

परम—"तू तो गान्धी जी की हर बात सच्ची और बड़ी बताता है, उन्होंने कहा है कि अगर राममोहन राय को पाश्चात्य शिक्षा न मिली होती तो वे और भी बड़े होते। इस पर 'माडर्न रिव्यू' वगैरा बिगड़ पड़े। इस तरह कहने का मतलब ही क्या है लक्ष्मीपति, इसका मतलब क्या यह

है कि पाश्चात्य शिक्षा के कारण भारतीय सभ्यता नष्ट हो जाती है।"

लक्ष्मी०—"हाँ, सच है!"

नारायण०—"पाश्चात्य शिक्षा के बावजूद भी मैंने कहा है, महात्मा जी का कथन, भारतीय स्त्रियों के बारे में लागू नहीं होता, जान-बूझकर या बिना जाने हमारे देश में हमारी परम्परा को और स्त्रियाँ ही प्रोत्साहित कर रही हैं।"

परम०—"किसको प्रोत्साहित कर रही हैं? एक तरफ माँग, सिनेमा, फैशन, तलाक, यही न?"

नारायण०—"हाँ, यह सब मानता हूँ, तो भी क्या इन ऊपर की चीजों से पाश्चात्य अनुकरण पूरा हो जाता है?"

परम०—"जब इतना हुआ है तो पूरा भी होगा, जहाँ पढ़ाई पूरी होने लगेगी वहाँ और चीजें भी पूरी होने लगेंगी। जरा सब्र करो!"

नारायण०—"हो सकता है, पर मैं वर्तमान स्थिति के बारे में कह रहा हूँ।"

लक्ष्मी०—"दोनों एक ही बात कह रहे हो! चलो, चलें!"

१७ : तीन रातें

जमींदार की चिट्ठी के कारण, और उनके भेजे हुए रंगराजू देशमुख के आग्रह पर, नारायणराव के साथ उसकी चारों बहनें, भाभी, सूर्यकान्तं की सास भी गये। देशमुख जमींदार के रिश्तेदार थे।

सुब्बाराय ने वधू के साथ आये हुए सम्बन्धियों को और रंगाराव देशमुख को वस्त्र, रजत-पात्र, फल और आलू आदि उपहार में दिये। उनके नौकर-चाकरों को भी इनाम दिये।

दामाद को देखते ही जमींदार जी का मुँह खिल-सा उठा। बीच में

हाल में श्रीनिवासराव, मृत्युंजय राव, सीताराम।जनेय, सोमय्याजुलू जी, आनन्दराव जी, भास्कर मूर्ति शास्त्रीजी, वसवराज राजेश्वर, श्रीजगन्मोहनराव जमींदार, नारायणराव का दूसरा जीजा, वीरभद्र राव आदि सोफों पर बैठे गप्पें लगा रहे थे। नारायणराव चुप-चाप उनकी बातें सुन रहा था। श्रीनिवास राव के उसकी ओर मुड़कर प्रश्न पूछने के कारण वह कभी गम्भीर चिन्तन करके उनका उत्तर देता। नारायणराव का मित्र राजेश्वरराव तभी आया और सबको नमस्कार करके वहाँ बैठ गया।

रैलों के बारे में बातचीत चल रही थी।

श्रीनिवास राव ने नारायणराव की ओर देखकर पूछा, "क्यों नारायणराव जी, देखिये, हमारे देश में रेलों का किसी कम्पनी द्वारा चलाना अच्छा है या सरकार द्वारा ?"

नारायण०—"सरकार द्वारा चलाये जाने में ही लाभ है ?"

श्रीनि०—"क्या आपके कहने का यह मतलब है कि जो कम्पनियों में लाभ की मनोवृत्ति है, वह सरकार में न होगी ?"

नारायण०—"लाभ की मनोवृत्ति की बात नहीं, सालाना लाभ को बढ़ाकर वह उस धन का अन्यत्र भी उपयोग कर सकेगी।"

मृत्यु०—"अगर रेलवे को भी एक डिपार्टमेण्ट बना दिया और रेड टेप चलता रहा तो आप कहते हैं तब भी सरकार को मुनाफा होगा।"

जमीं०—"आबकारी डिपार्टमेण्ट में फायदा नहीं हो रहा है।"

श्रीनि०—"देखिये अगर रेलवे सरकार ने ले ली, तो बड़ी-बड़ी नौकरियाँ अंग्रेजों को दी जायेंगी, बड़ी-बड़ी तनख्वाहें उनको देंगे। और वह धन आई० सी० एस० वालों के वेतन की तरह इगलैंड चला जायगा।"

राजे०—"कम्पनी में भी तो यही हो रहा है।"

नारायण०—"उनके कहने का मतलब है कि रेलों के ब्रिटिश सरकार के हाथ में होने से फायदा है, नहीं तो हिन्दुस्तानी कम्पनी के ?"

श्रीनि०—"ठीक है।"

नारायण०—"जब तक हिन्दुस्तान में ब्रिटिश सरकार है वह रेलवेज किसी हिन्दुस्तानी कम्पनी को नहीं देगी। अलावा इसके, फिलहाल हिन्दुस्तान में इतनी पूँजी वाली कम्पनियाँ भी नहीं हैं। और रेलवे के समझौते के

अनुसार रेलें कभी-न-कभी तो सरकार के हाथ में आयेंगी ही। कुछ आ भी गई हैं।"

जमी०—"रेलवेज से सम्बन्धित आँकड़े सब मेरे पास हैं, अब तक जितनी रेलवेज बनी हैं उनमें कम्पनी और ब्रिटिश सरकार को सूद वगैरा में नुकसान ही हुआ है, (नारायण को देखकर) मेरे पास आँकड़े हैं। वे मेरे अध्ययन-कक्ष में देखे जा सकते हैं।

नारायण०—"अच्छा, मैं भी उन्हीं आँकड़ों की तलाश में था।"

जमी०—"अकवर्त कमीशन की बात तो आप जानते ही होंगे।"

नारायण०—"उसकी रिपोर्ट भी पढ़ी है।"

मृत्यु०—"क्या है वह कमीशन ?"

जमी०—"सवाल यह है कि रेलवेज को कम्पनी के हाथ में रखने से अधिक लाभ होगा, नहीं तो सरकार के ले लेने से अधिक लाभ होगा ?"

नारायण०—"दूसरे देश सम्पन्न हैं, हमारा देश गरीब है। दूसरे देशों में यह आन्दोलन चल रहा है कि रेलवेज को सरकार को अपने अधीन कर लेना चाहिए।"

श्रीनि०—"जब सरकार के अधीन हो जायँगी तो लाभ के बारे में अलग कहने की जरूरत ही नहीं।"

नारायण०—"अगर हम पहले यह मान जायें कि रेलवेज द्वारा नफा हो रहा है,—मैं अभी उस बात पर आ रहा हूँ।"

श्रीनि०—"हाँ, फिलहाल मानता हूँ।"

नारायण०—"जो लाभ अब कम्पनी के कुछ लोगों को मिल रहा है वह सरकार को मिलने पर दूसरे टैक्स कम किये जा सकते हैं ? पर क्या वर्तमान सरकार यह करेगी ? क्योंकि वर्तमान ब्रिटिश सरकार स्वार्थी सरकार है, इसलिए यह न करेगी, और अगर कल कनाडा की तरह, भारत को भी 'डोमिनियन स्टेटस' या पूर्ण स्वतन्त्रता मिल गई तो यह सब लाभ जनता को ही तो मिलेगा।"

श्रीनि०—"अंग्रेज लोग करोड़ों रुपया लगाकर यहाँ रेल बनायें, और लाभ जनता को मिले ? क्या यह ठीक है ?"

नारायण०—"वे अपनी लगाई हुई पूंजी, और उसकी आय, हर साल ले

जा रहे हैं, फिर हमारे मांगने में क्या गलती है ?"

जमी०—"अगर सरकार से कोई रेलें लेना चाहे तो क्या यह जरूरी नहीं है कि सरकार को उसकी प्रति चीज के लिए हरजाना दे ? हरजाना देने के लिए हमारे पास पैसा कहाँ है ? इंगलैण्ड को फिर पैसा देना होगा ?"

नारायण—"पिछले सालों में, किस्तों में चुकाने का समझौता हो गया है न ?"

जमी०—"हाँ, हस्तगत करने के पूर्व के तीन सालों का लाभ, कम्पनी के हिस्सेदारों को बाँटना, बाजार में प्रचलित कीमत पर—यानी सौ-सौ रुपये के शेयरों पर १२० रुपये देना, उस पर साल-भर साढ़े चार प्रतिशत सूद लगाकर ७४ किस्तों में चुकाने का समझौता किया गया था, ऐसा कुछ मुझे याद है।"

जगन्मोहन—"क्या हमारे लोग रेल ठीक तरह चला सकेंगे ? अगर चलाना पड़ भी गया तो रोज दो बार या तो वे टकरायेंगी, नहीं तो जरूर गिरेंगी।"

सास्त्री—"यह आप क्या फरमा रहे हैं राजा साहब ? हममें कितने बड़े-बड़े इन्जीनियर, गार्ड, ड्राइवर, हैं। स्टेशन मास्टर हैं—सब हिन्दुस्तानी हैं, और या ये अंग्रेज बड़ी-बड़ी नौकरी कर रहे हैं ?"

जगन्मोहन—"अंग्रेजों की बराबरी करने वाले यूरेशियन।"

सास्त्री—"वह भी तो हमारे आदमी हैं। अगर हमारे हाथ में रेलवे आ गई तो क्या उनको बरखास्त करना जरूरी है ?"

मीना०—"ये जो लोग हैं, जो न काले हैं न गोरे हैं, जाने क्या अपने को समझते हैं, अंग्रेज ही इनमें सब, इनका सामना करना मुश्किल है।"

आनन्द०—"आप ठीक कह रहे हैं शास्त्री जी ! पर अब वे बदल रहे हैं, वे भी जान गए हैं कि अगर उनको यहाँ रहना है तो उनको हमारे साथ मरना-जीना होगा।"

मीना०—"क्या उनको ये गोरे अंग्रेज आने देंगे ?"

मृत्यु०—"अंग्रेज उनको बुरी नजर से देखते हैं, कहते हैं कि हमें ये नहीं चाहिए, और हम लोग कहते हैं कि ये हमारे नहीं हैं।"

नारायण०—"ऐसा न कहिये, भारतीय उनको हमेशा अपने में मिलाने के

लिए तैयार हं, वे ही सोचने आये हैं कि वे गोरे हैं और उनका 'होम' इंगलैण्ड हैं। गान्धी जी कहते आये हैं कि उनको भारतीयों में मिल जाना चाहिए।"

सीता०—"तो यानी वे चमगादड हैं ?"

जगन्मोहन—"आप भी क्या कह रहे हैं ? अगर न जानते हो तो चुप रहिये ! जो सौन्दर्य यूरेशियन युवती में है, क्या किसी अंग्रेज युवती में वैसा है ? क्या आपकी ब्राह्मण स्त्रियों में है ? जाने दो !"

नारायण०—"इस समय सौन्दर्य पर बात नहीं हो रही।"

श्रीनि०—"यह क्या राजा साहब नाराज हो गए ? देखिये, सोमयाजुलु शायद सीधे-सादे ब्राह्मण हैं, और देखिये, क्योंकि आप दुनियादार हैं, और इसलिए आपको यह सब मालूम है देखिये "

जमी०—"उन्होंने भी यों ही कहा है !"

सीता०—"जी, जी हाँ, क्षन्तव्य हूँ।"

इस बीच फलाहार की खबर आई। जमींदार साहब ने शास्त्री को अन्दर भेज दिया। और बाकी सब वहीं फलाहार की प्रतीक्षा करने लगे। उन सबके सामने मेजों पर, खाने-पीने की चीजें रख दी गई, घी में भुने काजू, दही-बडे, जलेबी, केले, कटहल, अनन्नास आदि चीजें सबको चाँदी की तश्तरियों में परोसी गई। कीमती पात्रों में चाय और काफी दी गई।

नारायणराव राजेश्वरराव को लेकर ऊपर अपने कमरे में गया। वहाँ दोनों मित्र शाम तक बातें करते रहे।

गँवार नारायणराव को अपनी बुद्धिमत्ता और वाक्-शक्ति से सबको प्रभावित करता देख, श्री जगन्मोहनराव को बुरा लगा। ऐसी बातें उसको शोभती हैं जो जमींदार घराने में पैदा हुआ हो, न कि इस गँवार को। उसकी बातें सुनकर कौन सन्तुष्ट होगा, और दूसरों के सन्तोष से उसे क्या मतलब ? यह बात जरूर निश्चित है कि शारदा बिलकुल सन्तुष्ट न होगी। जो बात मैंने यूरेशियन लडकियों के बारे में कही थी, कहीं उसने किवाड की आड़ में से सुन तो नहीं ली थी ?

१८ : वीणा

जब टहलने के बाद नारायणराव अपने ससुर के दुमंजिले मकान में पहुँचा तो कोई बालिका अपने दिव्य गन्धर्व-गान से वातावरण को भर रही थी। राजेश्वरराव ने यह सुनकर कहा, "कौन इतना अच्छा गा रहा है भाई?"

"यह, श्रीरामय्या जी, आज ही आये हैं। स्वयं वायलिन बजाते हुए वे अपनी शिष्या से कितना अच्छा गवाते हैं, मालूम है!"

"तेरी पत्नी है क्या?"

"अरे, इतने भी न जान सके, देख आलापन कर रहे हैं, बोलो मत, सुनो!"

"मुझे तो संगीत के नाम से ही सिर-दर्द होता है।"

"अरे, अभी से ही तुम्हें 'एप्थीन' की आदत हो गई है।" और वे कमरे के बाहर बिजली बुझाकर बरामदे में आराम-कुर्सियों पर बैठ गए।

ऐसा लगा मानो सारे "शान्तमु लेक सौख्यमु लेदु।" (शान्ति के बगैर सुख नहीं है)—गा रहे हों। अन्धकार में, मधुर फूलों की सुगन्धि, संगीत होकर सर्वत्रित हो रही थी। उस मधुर कण्ठ के मधुर संगीत की तुलना करने के लिए नारायणराव को संसार में कोई चीज नहीं मिली। वेणु, निर्झर, भ्रमर की झंकार, ये सब काफी न थे, कोकिल के कंठ से शायद उपमा दी जा सकती है, उसने सोचा।

नारायणराव का हृदय आनन्द और प्रेम से भर गया।

"ननु पालिम्प नडचिवच्चितिवो—(मेरी रक्षा करने के लिए पैदल ले आए हो?) गाया जा रहा था। छोटा-सा राम, मोते का बाण पकड़कर मुस्कराता हुआ उसे नजर आया। उसकी आँखें डबडबा आईं। उस कंठ में शायद श्रीराम ही हो। श्री रामय्या के गले में दुष्ट राक्षसों का संहार करने वाला साक्षात् दण्डपाणि राम, भाई लक्ष्मण के साथ दिखाई पड़ते थे।

दीन-रक्षक रामचन्द्र कितने अच्छे प्रभु हैं, रक्षा करनी हो तो वे ही रक्षा करें। श्रीराम रूपी नील मेघ भक्तों के मनों को सस्य-श्यामल कर देता है न? प्रकृति-रूपी सीता, परमात्मा-रूपी राम, नई चेतना प्रदान

करते हैं। भजन का काम राम-नाम जपना है, और तेरा काम रक्षा करना है,' सोचते हुए नारायणराव ने आँखें मोच ली।

राजेश्वर राव ने मित्र की ओर मुड़कर कहा, "रे नारायण, मैं अब तक शादी करना नहीं चाहता था, मुझे विश्वास न था कि जो कन्या मेरे माता पिता निश्चित करेंगे मैं उससे प्रेम कर सकूँगा। कई बहाने करके मैं अपने पिताजी को टरकाता रहा। पिताजी के जाने के बाद, आज माँ ने बहुत कहा। मैं कुछ कह न सका। कह दिया कि बाद में देखा जायगा।" उसने आराम-कुर्सी पर आँखें मोचे हुए नारायणराव से कहा।

राजेश्वर राव गोरे रंग का था। जाति का यद्यपि वह तेलगा[1] था, रूप-रंग से वह ब्राह्मण लगता था। उसका उच्चारण भी साफ था। छरहरा शरीर था, नोकीली नाक, समान माथा, बड़ी-बड़ी चमकती चमचे की-सी आँखें, आधी कटी फेशन मूँछें। आँखों पर रिमलेस ऐनक, बाल पीछे की ओर मुड़े हुए। काली भौंहें उसके मुँह को मनोहर बनातीं थीं। वह रेशमी कमीज और सफेद पतलून पहना करता, और पाँवों में शानदार चप्पल रहती।

नारायणराव ने चोटी से एड़ी तक देखा, फिर अपने मोटे-मोटे खद्दर के कपड़ों को देखकर मुस्कराते हुए उसने पूछा, "अरे, कभी ऐसा समय भी होता है जब तू बना-ठना नहीं होता?"

"घर में तहमद पहनता हूँ।"

"वह रेशमी है क्या?"

"हाँ!"

"तेरे बाल नींद में भी न बिगड़ते होंगे?"

"नहीं!"

"देखें हाथ!"

"मुझ पर एक निबन्ध लिख, नहीं तो कहानी गढ़!"

"बेचारे तेरे पर, या उन पर भी।"

"शाबाश, मगर दोनों की जोड़ी बन गई तो कहना ही क्या है?"

"इन अवस्थाओं में से बताओ फिलहाल कौन-सी अवस्था है?"

१. आन्ध्र की एक अब्राह्मण जाति।

"तुम्हारी तेरह ग्रवस्थाग्रों के बारे में तो मैं जानता नहीं हूँ। लगता है, प्रलय ग्राकर ही रहेगी।"

"किसके लिए? नायक के लिए, नायिका के लिए, नहीं तो उस 'पुग्रर फैचर' के लिए। ग्ररे तूने कहा था कि उसका पति तुझे रोकता ही नहीं है। ग्रौर तो ग्रौर खुश होना है। तेरी उस दिन की बात याद करके ग्राज भी मैं सिहर उठता हूँ।"

"ग्ररे, हम जानते हैं कि इन बातों पर हमारी एक राय नहीं है, ग्रौर हमने यह भी तय कर लिया था कि हम इन बातों पर बहस नहीं करेंगे।"

"हाँ, इसीलिए कह रहा हूँ कि तुम उसकी याद न करो, क्योंकि तूने शादी की बात उठाई है, कम-से-कम ग्रब तो छोड़ दे उस के-मुझे सम्बन्ध का, शादी के बारे में सोचना ही ग्रच्छा है।"

"नारायण, तेरे ये बाप-दादाग्रों के सिद्धान्त हमें पसन्द नहीं हैं, इक्ष्वाकु के दिनों की विवाह-पद्धति को लेकर ग्रब भी बीसवीं सदी में तू लटके रहने के लिए कहता है? यह मत भूल कि एक ऐसा भी समय था जब विवाह नहीं होता था। ग्रगर बीच में ग्राई हुई इस पद्धति पर किसी को ग्रापत्ति हो तो इसमें क्या हर्ज है, स्त्री-पुरुष के प्रेम-सम्बन्ध के लिए इस दुनिया-भर के झमेले की क्या जरूरत है?"

"तूने कहा कि एक समय यह भी था जब विवाह नहीं होता था, वह काल, पाश्चात्य विद्वानों की नजर में वह है जब मनुष्य जन्तुग्रों की तरह घूमा-फिरा करता था। इसलिए हम ग्राज वर्तमान जन्तुग्रों के बारे में सोचें तो उनका ग्रासानी से ग्रन्दाज कर सकते हैं।"

"तो तुम मेरी बात पर ही ग्रा रहे हो?"

"जल्दी मत करो, तुम यही कहते हो न कि जब कभी कामेच्छा होती है तो मनुष्य ग्रौर स्त्री पूरा कर लेते हैं ग्रौर ग्रलग हो जाते हैं। यह पाशविकता पशुग्रों में भी नहीं पाई जाती। उन जन्तुग्रों में तो कतई नहीं है जिनका मनुष्यों से सम्बन्ध नहीं है। भगवान् की दया से, नहीं तो प्रकृति की वजह से वे 'इन्स्टिक्ट' के कारण जो चाहें वे नहीं खाते, जैसे चाहें वैसे ग्रपने काम की पूर्ति नहीं करते। शरीर-रक्षा के लिए वे खाते हैं, ग्रौर जाति-वृद्धि के लिए काम की पूर्ति करते हैं। उनका यह 'इन्स्टिक्ट' ही बताता

है कि जो चाहा उन्होंने खाया और जैसे चाहा अपनी काम-वासना पूरी की, तो जाति नष्ट हो जायगी। इसलिए मामूली बन्दरों में कुछ बन्दरियाँ होती हैं, और गोरिल्ला वगैरा एक नर, मादा के साथ वफादारी के साथ रहता है। इसी तरह शेर, भेड़िया, भालू आदि की भी एक ऋतु होती है, उसी समय से अपनी काम-वासना पूरी करते हैं। यह पशुओं के लिए विवाह की तरह है।"

"तो तुम अपने गौ और कुत्तों के बारे में क्या कहते हो? साँड, गौ गौ में फर्क नहीं देखता, जब जो गौ तैयार हो उसके साथ साँड चला जाता है। गौ के लिए हर साँड बराबर है। एक ही ऋतु में एक कुतिया, दो-तीन-तीन कुत्तों के पास जाती है, जब गर्भ हो जाता है, तो रुक जाती है। भले ही इसके लिए, उसको अपने बच्चे के साथ ही जाना पड़ जाय। गधों की, सूअरों की बात भी यही है, अब क्या कहते हो?"

"मेरे अपने कहने में ही जवाब है। फिर भी बताता हूँ। जो मनुष्यों के जीवन के साथ हिल-मिल गये हैं, जैसे—कुत्ता, गधा, सूअर, बिल्ली वगैरा उनमें बहुत अंशों तक 'इन्स्टिंक्ट' नष्ट हो चुका है। मनुष्यों की तरह उनमें मन भी नहीं है। फिर भी वे ऋतु का पालन करते हैं। करते हैं कि नहीं?"

"हाँ, हाँ विवाह के बारे में कह रहे थे, वही कहते जाओ!"

पशु-जीवन से, मनुष्य अपने मानसिक बल के कारण ऊपर उठता गया। ज्यों-ज्यों मानसिक बल बढ़ता गया त्यों-त्यों 'इन्स्टिंक्ट' घटता गया। भोजन, निद्रा, मैथुन के अलावा वह और कई इच्छाओं को पूरा करने लगा। कला, ललित कला, कृषि, वाणिज्य, युद्ध, राज्य, शासन इस तरह की कई चीजों का उसने विकास किया। इन चीजों में निरन्तर साधना करते हुए उसने अद्भुत सभ्यता का विकास किया। जिनको आहार, निद्रा, मैथुन के सिवाय कुछ काम नहीं है वे सब जैसे थे अब भी वैसे ही हैं, पशु-तुल्य। जो अपनी मनुष्यता को सार्थक करना चाहते हैं, वे इनका कुछ हद तक ही उपयोग करते हैं। हमेशा काम-वासना या उदर-पूर्ति की फिक्र के लिए उनके पास फुरसत नहीं रहती। निद्रा और आहार को छोड़कर एकाग्र चित्त से काम करने वाले को स्वप्न में भी काम का ख्याल नहीं आता।

क्योंकि काम उत्पत्ति का मूल कारण है, इसलिए उसे सर्वथा छोड़े बगैर, सामान्य गृहस्थी एक स्त्री से सन्तुष्ट होकर, दूसरे कार्यों को करने के लिए, मन शान्ति प्राप्त करते हैं। बस, इतना ही। स्त्री और पुरुष अपनी-अपनी काम-वासना के लिए समाज में दरारें पैदा नहीं करते।"

"मैं यह मानता हूँ कि एक स्त्री के साथ रहना चाहिए, पर इसके लिए विवाह-संस्कार की क्या जरूरत है?"

"यह कहा, ठीक है, यह मेरे लिए काफी है। अगर तुम यह जान गये कि जाति और समाज के कल्याण के लिए एक स्त्री का एक पुरुष के साथ रहना आवश्यक है। विवाह-संस्कार त्याग भी दिया गया तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

"तो यह संस्कार आप क्यों कर रहे हैं?"

"यह दूसरी बात है। ये वे ही कहते हैं जो विवाह को धर्म और मोक्ष का कारण भी समझते हैं। फिर उसमें तेरा क्या वास्ता? आत्माभिमानी अपने चारों ओर एक दुर्ग बनाता है, उसमें अपना घर-बार बनाता है, फिर क्रमशः वह दुनिया से एकमात् हो जाता है, वह सब देश और मत से सम्बन्धित होते हैं। इसलिए तू इसे दर्शन कहेगा। हम इस बारे में बात न करेंगे।"

"अगर तू यह मान गया कि विवाह-संस्कार की जरूरत नहीं है, तो कोई झमेला ही नहीं है।"

"क्यों नहीं है, तुम्हारे मत के लोग तो यह मानते ही नहीं हैं कि एक स्त्री का एक ही पुरुष से सम्बन्ध होना चाहिए। तुम तो यहीं कहते हो कि काम-वासना पूरी हुई और अपना रास्ता नापा।"

"हाँ, अगर स्त्री को भी स्वतन्त्रता दी गई तो समाज की वही हालत होगी जो हम कह रहे हैं, क्यों?"

"उस हालत का कारण स्त्री-स्वातन्त्र्य हो या न हो, इतना जरूर है कि उनके कारण समाज का अधःपतन होगा, जज लिन्टसे ने जो अमरीका के बारे में लिखा है क्या पढ़ा नहीं है? रूस में, जहाँ तक तलाक की स्वतन्त्रता है, अमरीका से बहुत कम तलाक दिये जा रहे हैं। सुना है कि नहीं यह? इसलिए स्त्री-स्वातन्त्र्य के बावजूद अगर कुछ नीति-नियम न रहें, धर्म-

चलो हो, तो जिस स्थिति के बारे में हम डर रहे हैं, उसके आने की कभी नौबत न आयेगी। और अगर हम यह सोचने लगें कि हम आहार, निद्रा, मैथुन के लिए ही जी रहे हैं, तो वह स्थिति जरूर आकर रहेगी। न हमें न ये राज्य चाहिएँ, न स्वप्न ही चाहिएँ।"

"नारायणराव, छोड़ो वकालत, किसी प्राचीन धर्म का मठ स्थापित करो!" राजेश्वरराव नारायणराव की पीठ थपथपाकर चला गया।

१६ : प्रेम-स्वतन्त्रता

राजेश्वर राव बचपन से ही तिरुपति राव जी के शिष्यों में से एक था। तिरुपति राव जी जिस विषय का समाज में प्रचार कर रहे थे—स्त्री-पुरुष का परस्पर आदर्श सम्बन्ध, उसका वे आचरण भी करते थे। वे अकलंक पुरुष, दृढ़ व्रती, वीर पुरुष माने जाते थे। वे भी, जो उनके मत के विरोधी थे, उनकी इस गम्भीरता व दृढ़ निष्ठा की प्रशंसा किया करते थे। राजेश्वर राव उन तिरुपति राव जी का विश्वास-पात्र शिष्य था।

माँ-बाप ने उसको विवाह करने के लिए कहा, पर वह कोई-न-कोई बहाना करके उनको टरकाता रहा। तिरुपति राव उसे सदा कहते कि झूठ बोलना बुरा है, सत्य से उत्कृष्ट धर्म कोई नहीं है।

राजेश्वर राव जब राजमहेन्द्रवरं पढ़ने आया तभी नारायण से उसकी मैत्री हो गई थी। नारायणराव ने उसे कई बार तिरुपति राव जी का शिष्यत्व छोड़ने के लिए कहा। हाँ, परमेश्वर राव जरूर नारायणराव से कहा करता था कि तिरुपति राव जी का मार्ग स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध के लिए रामबाण-सा हो सकता है, पर राजेश्वर राव को उस पथ का पथिक नहीं बनना चाहिए। नारायणराव कहता, 'अब हम जानते हैं कि वह मार्ग बाल-विवाह का कारण है तो जान-बूझकर उस पर चलना नरक के द्वार

खोलना है।'

जब नारायणराव ने तंग आकर कहा, "अगर तू तिरुपति राव जी की संगति में रहा तो मैं तेरा मुँह भी न देखूँगा" तो राजेश्वर राव ने कहा, "तू यों क्यों खौल रहा है ? आ, तू भी हमारे गुट में शामिल हो जा ! तू भी तो घोटक ब्रह्मचारी है।'

तिरुपति राव के शिष्यवर्ग में कई पाश्चात्य विद्या-दक्ष विद्यादग्ध भी थे। एक की पत्नी के पास दूसरा आ-जा सकता है, स्त्री-स्वातन्त्र्य पर-स्त्री के उपयोग के लिए, दण्ड का विधान रद्द करना, गर्भ-पात, तलाक, स्त्री को भाई के साथ सम्पत्ति का अधिकारी समझा जाना आदि उनके मत थे।

उस संघ में घूमने-फिरने वाला राव पवित्र नहीं है, कौन कहेगा ? जब वह उस समाज में सुन्दर समझा जाता था, उस पर लड़कियों का फिदा हो जाना कोई आश्चर्य की बात न थी।

परन्तु उस संघ में भी कई ऐसे पुरुष-स्त्री थे, जो वर्षों से एक-दूसरे को प्रेम करते थे। उस संघ में प्राचीन रीति के अनुसार विवाहित व्यक्तियों में तिरुपति राव स्वयं थे। उनकी पत्नी विदुषी और पतिव्रता थी, वह पति के उपदेश, व्याख्यान, धर्म में विश्वास नहीं करती थी, पर फिर भी वह पति का विरोध नहीं करती थी। उनके संघ में काम करने की इच्छा के न होने पर भी, जिनके पास उसके पति जाने के लिए कहते, वह जाती।

तिरुपति राव के लिए वनिता-मान-अपहरण ही परम मन्त्र था। उनका कहना था कि स्त्री उपयोग के लिए ही पैदा हुई है। सृष्टि में सबसे विचित्र प्राणी स्त्री है। उसकी आँखों में नील मेघ बसते हैं। अधर मधु स्निग्ध निधि हैं, उसके वक्ष में अगम्य आकाश की तरह गम्भीर प्रेम होता है, उसका शरीर आलिंगन का प्यासा है। उसके कपोल, ग्रीष्म-तप्त शरीर के लिए कुसुम-से हैं आदि।

उस वर्ग में राजेश्वर राव को एक मित्र की पत्नी ने आकर्षित किया। वह राजमहेन्द्रवर के वकील की पत्नी थी। सुब्बय्या शास्त्री जी चालीस वर्ष के थे। उनकी ३२ वर्ष में दूसरी शादी हुई। विवाह के दो महीने बाद उनकी पत्नी उनके साथ रहने आई। इस समय उसकी उम्र बाईस वर्ष

परदे में रखती। केवल स्त्रियों को ही अन्दर जाने दिया जाता। जब कभी मुब्बय्या शास्त्री को उसे बाहर भेजना होता तो सिडान कार में भेजता। मोटर चलाने वाला भी पुराने ढर्रे का था, बीरस्वामी। उसको सिवाय मोटर के और कुछ न दीखता। पुष्पलीला, दुनिया देखना चाहती थी, वह अपना सौन्दर्य, गहने, दूसरों को—विशेषतः पुरुषों को दिखाना चाहती थी। इसलिए वह खूब सज-धजकर तितोलमा की तरह गली में देखती, आने-जाने वालों को सामने आती हुई गाड़ी और समय का भान न होने देती थी।

एक दिन शायद पुष्पलीला के पुण्य फल के कारण 'कृष्ण, कृष्ण' कहती-कहती सुब्बय्या शास्त्री की बूढ़ी माँ, इस दुनिया से चली गई। शास्त्री को ऐसा लगा, जैसे उसका दाहिना हाथ चला गया हो। उसे यह दुःख था कि अब उसकी पत्नी की देख-रेख करने वाला कोई नहीं रहा। पर पुष्पलीला को ऐसा लगा, जैसे वह पिंजरे में से छोड़ दी गई हो। सुब्बय्या शास्त्री को घर के सारे दरवाजे खुले दिखाई दिये। बड़ा घर, जवान स्त्री, मकानात का काम, सोचकर सुब्बय्या शास्त्री दह-सा गया।

पुष्पलीला को भले ही पति से गहरा अनुराग न हो, पर उसको उस पर घृणा भी न थी। उसने पति के साथ औरों की तरह सात साल वैवाहिक जीवन निभाया था। आज उसको ऐसा लगा, जैसे उसके ऊपर से बड़ा बोझ हटा दिया गया हो। जैसे आँखों पर से पट्टी निकाल दी गई हो।

सुब्बय्या शास्त्री पत्नी पर लट्टू हुआ हुआ था। वह किसी स्त्री को वचन देकर कभी मुकरा न था। पुष्पलीला की बात भी उसने कभी न ठुकराई थी। पत्नी उसके लिए षड्रसोपेत भोजन था, तो दूसरी स्त्रियाँ उसकी चपल जिह्वा की चंचलता को मिटाने के लिए फलाहार।

अभी तक पुष्पलीला की कोख फली न थी। उसकी कामुकता अभी तक पूरी तरह व्यक्त न हुई थी। अपने यौवन का पूर्णतः आनन्द लेने वाले की वह तलाश में थी। अब तक उसके मन की चाह को पूरा करने वाला व्यक्ति उसे नहीं मिला था।

मद्रास से लौटने के बाद राजेश्वर की पुष्पलीला को देखने की इच्छा हजार गुनी बढ़ गई थी। वह कई बार सुब्बय्या शास्त्री के घर गया, पर

वह उसको न दिखाई दी। सुब्बय्या शास्त्री की दूर की कोई बुआ उन दिनों उस पर पहरा दे रही थीं। एक दिन उसको बुखार आया। जब रविवार के दिन शाम को राजेश्वर राव सुब्बय्या शास्त्री के घर गया, तो वे चाय पी रहे थे। उसने कहा कि बुआ के बुखार के कारण वह चिन्तित है। राजेश्वर ने कहा कि मेरे पास बुखार की एक रामबाण औषधि है, उसको दो-तीन बार लेने पर बुखार उतर जायगा। वह अपनी साईकल पर घर जाकर वह औषधि ले आया।

अन्धेरा होने तक, राजेश्वर राव सुब्बय्या शास्त्री से गप्पें लगाता रहा। इतने में नौकरानी ने आकर कहा, "उन्हें पसीना आ रहा है।"

दोनों झट अन्दर गये। पुष्पलीला एक सफेद कपड़े से उनका चेहरा पोंछ रही थी। उसने सिर उठाकर राजेश्वर राव को देखा। राजेश्वर की भी उससे चार आँखें हुईं। रोगी का ज्वर भी ठीक हो गया।

राजेश्वर राव को तब से संसार में पुष्पलीला देवी के सिवाय कुछ न दिखाई देता। उसका जीवन उस स्त्री के सौन्दर्य से लिपट-सा गया। खाना ठीक न खाता। न सोता ही। न पढ़ने में ही मन लगाता। न खेल में ही दिलचस्पी लेता। मित्रों से भी दूर रहता।

राजेश्वर को देखकर पुष्पलीला को ऐसा लगा जैसे प्यासे को पानी मिल गया हो। उसकी चाल-ढाल, शान-शौकत और मर्दानगी देखकर वह मचल-सी उठी।

उसके बाद, राजेश्वर कई बार, किसी-न-किसी बहाने घर आया, और पति के बिना जाने उसको देखता भी रहा। दोनों एक-दूसरे को देखकर दिल की तपन को बुझाते।

\ जब पति अदालत में जरूरी काम पर गया हुआ था, तो उसने राजेश्वर राव के पास एक चिट भेजी। उसमें लिखा था कि बुढ़िया को फिर बुखार आ गया है इसलिए वह दवा लेकर जल्दी आवें। राजेश्वर राव भागा-भागा गया, परन्तु क्योंकि साथ सुब्बय्या शास्त्री भी आ धमका। राजेश्वर राव ने मन-ही-मन सैंकड़ों बार उसको कत्ल करना चाहा।

२० : वेदान्ती

राजाराव ने जल्दी जाकर कालेज में भरती होने की सोची। उस साल वह विक्टोरिया होस्टल में न रह सका था। लाचार होकर उसे विश्वविद्यालय द्वारा निश्चित एक मकान में रहना पड़ा था। इस साल उसकी पढ़ाई भी पूरी हो रही थी।

राजाराव पुरानी परम्परा का पक्का ब्राह्मण था। बचपन में ही उसके पिता वासुदेव शास्त्री ने उसको सन्ध्या के मन्त्र, पुरुष-सूक्त, स्त्री-सूक्त, ग्रादि सिखाये थे। वेद के कुछ मन्त्र भी उसके कण्ठस्थ थे, पर राजाराव को यह शिक्षा पसन्द न थी। वह पिता से बिना कहे ही मेडक्स से काकिनाडा भाग गया, सप्ताह में एक-एक दिन सात समृद्ध घरों में खाते हुए, उसने विज्ञान-समुद्र, भगवद्-भक्त, ब्राह्म समाज के नेता, ग्राचार्य श्री वेंकटरत्न नायुडु जी से छात्रवृत्ति भी पा ली।

उसका पता-ठिकाना जब मालूम न हुग्रा, तो उसके माँ-बाप दुखी हुए। उसकी माँ तो पागल-सी हो गई। रह-रहकर मूर्छित हो जाती। बाद में राजाराव ने चिट्ठी लिखी कि वह तीसरे फारम में भरती हो गया है, ग्रौर ग्रच्छी तरह पढ़ रहा है। माँ-बाप उसे देखने काकिनाडा गये। क्योंकि उसके बग़ैर वे रह नहीं सकते थे, इसलिए उन्होंने भी लड़के के साथ काकिनाडा में रहने का निश्चय किया।

राजाराव बहुत प्रतिभाशाली न था। इतना ग्रक्लमन्द जरूर था, कि मेहनत करके हर परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता था। वह इण्टरमीडियेट परीक्षा में द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण होकर, मद्रास के मेडिकल कालेज में भरती हुग्रा। काकिनाडा में उसके पिता छोटा-मोटा धन्धा करने, खेती की उपज को जमा करने, ग्रौर सूद का व्यापार करते हुए ग्रपना जीवन-निर्वाह करने लगे। ग्रपने लड़के को मेडिकल कालेज में पढ़ता देखकर वे बहुत खुश हुए।

जब राजाराव स्कूल फाइनल में पढ़ रहा था तभी एक ग्रच्छा सम्बन्ध ग्राया; ग्रौर उस साल उसका बड़े धूम-धाम से विवाह हो गया। इण्टरमीडियेट परीक्षा के पहले ही उसका गौना भी हो गया। मेडिकल कालेज के प्रथम वर्ष में उसके लड़की पैदा हुई।

नारायण राव से राजाराव की दोस्ती मद्रास में ही हुई थी। छुटपन का रामभक्त शास्त्री और अब का राजाराव, स्वभाव से जरा शर्मीला था, पाँच-दस आदमियों में बातें-वातें नहीं कर पाता था, अजनबियों से बात न करता था। छुटपन में वह कैसे बड़े-बड़े लोगों में बातें कर पाता था, बड़े होकर राजाराव न जान सका। क्योंकि नारायण राव गम्भीर प्रकृति का था, इसलिए सभा में वह झिझकता, हिचकता न था। राजाराव दब्बू था, सभा में मुंह न खोल पाता था।

राजाराव को एक दिन कोमल-विलास काफी-होटल में नारायणराव ने देखा। उससे बातें छेड़ीं, सच में मिलनसार नारायणराव उसके कमरे में आने-जाने लगा। सिनेमा जब भी जाता, और जब किसी को काफी-होटल में ले जाता देता, तो उसको भी बुलाता।

राजाराव को तेलुगु कविता की नई प्रवृत्तियाँ नहीं जँचती थीं। वह स्वयं कुछ लिख न पाता था। उसे पुराण-पठन में विशेष अभिरुचि थी। दर्शन पर तो वह प्राण देता था। विवेकानन्द, रामतीर्थ, अरविन्द, शान्तानन्द, प्रेमानन्द, राधाकृष्ण आदि के ग्रन्थ वह पढ़ चुका था। चैतन्य, रामकृष्ण परमहंस, हरनाथ बाबा, राधास्वामी आदि के जीवन व उनके उपदेशों पर भी वह अध्ययन कर चुका था।

नारायणराव को भी दर्शन में विशेष रुचि थी। पुराणों के अलावा, उसने वेद, ब्रह्मसूत्र, गीता, विचार सागर, वृत्ति वृत्ति प्रभाकर आदि पढ़े थे। योगवासिष्ठ, ज्ञानवासिष्ठ, सीताराम...नेय सवाद, अध्यात्म रामायण, उपनिषद्, शांकर भाष्य आदि ग्रन्थों के सार से वह परिचित था। बुद्ध पीठक, जातक कथाएँ, धर्मपद भी उसने पढ़े थे। जिन्द विस्ता, कुरान, बाइबल, जैन धर्म आदि के बारे में भी वह ज्ञान रखता था। कार्ल-मार्क्स, शोपनहार, बर्कली, एमर्सन, बेकन, हाल्डेन, एडवर्ड कारपेन्टर, टालस्टाय, रोम्याँ रोलाँ, बर्नार्ड शा, आइन्स्टीन, एडिंग्टन, प्लेटो, अरिस्टोटल, आदि पाश्चात्य विद्वानों का भी उसने अध्ययन किया था।

राजाराव से उन विषयों पर नारायणराव चर्चा करता, और आनन्दित होता। राजाराव को लगता कि वे क्षण ही, जब इन विषयों पर चर्चा होती थी, उसके जीवन के शुभ क्षण थे। वह गोचर कर उसकी प्रतीक्षा

करता।

"हमारे आर्य विज्ञान के सामने डारविन-सिद्धान्त बाल-शिक्षा के समान है, उसका विकासवाद कोरा मैटिरियलिस्टिक है। प्रारम्भ में ऐसे कृमि-कीड़े होते थे, जो सुन-देख न पाते थे। फिर दृष्टि, श्रवण-शक्ति से युक्त सरीसृप आये, फिर उसके बाद मेमलस आये, फिर थोड़ी-बहुत बुद्धि के साथ, बन्दर पैदा हुए, फिर मनुष्य का जन्म हुआ। जन्तुओं में ये विकास की अवस्थाएँ साफ दिखाई पड़ती हैं, इसका पता लगाने वाला ही उनके लिए ऋषि हो गया।" राजाराव कहा करता।

"सच है परन्तु इस अनन्त सृष्टि में उस विकास-कारण-कार्य की शृंखला दिखाना भी कोई आसान काम नहीं है। इस विषय पर आँखें बन्द करके पौराणिक कथाओं में विश्वास करने की अपेक्षा उनको प्रमाणों के साथ सिद्ध करना क्या अच्छा नहीं है। ऋषियों ने जिन सत्यों को दिव्य दृष्टि से अनुभव किया उसको ये प्रमाणपूर्वक प्रस्तुत कर रहे हैं।" नारायण राव कहा करता।

राजा०—"परन्तु प्रत्यक्ष प्रमाण पर कहाँ तक आधारित हुआ जा सकता है?"

नारा०—"वे प्रत्यक्ष प्रमाण से सन्देह का निवारण कर रहे हैं, पर प्रत्यक्ष प्रमाण से उनका परिशोधन समाप्त नहीं हो जाता।"

राजा०—"सच है, प्रकृति इन्द्रिय-ग्राह्य है, बुद्धि-ग्राह्य है, इसलिए वे जान सकते हैं। पर बुद्धि तो पहली सीढ़ी पर ही रहती है, वह नहीं बढ़ती। तुम उस परम तत्त्व के बारे में क्या कहते हो, जो बुद्धिगम्य नहीं है।"

नारा०—"जो प्रत्यक्ष प्रमाण को भी स्वीकार न करे उनके लिए खेती करना ही अच्छा है। निरन्तर अन्वेषण के फलस्वरूप उन्होंने 'एटम' का पता लगाया, आगे जाकर उन्होंने 'एटम' का भी विभाजन किया, और 'एलेक्ट्रोन' का पता लगाया। परन्तु वह रहा है कि 'एलेक्ट्रोन' भी तो अनित्य है। अनित्य से नित्य का पता नहीं लग सकता, यह तेरी युक्ति है। खैर, जहाँ तक वे बुद्धि द्वारा जा सकते हैं वहाँ तक जायेंगे, फिर वे भी हमारे रास्ते पर आ जायेंगे, पर परमात्मा-साधना में वे भी निरन्तर नये

अनुशासनमय मार्ग प्राप्त कर रहे हैं। वे भी जानते गये हैं कि सब बुद्धि-ग्राह्य नहीं है। वे भी दूर किसी प्रकाश ज्योति के दर्शन करने लगे हैं। 'मॉडरेटीज' और 'एक्स्ट्रीमिस्ट' इस तरह नव दल हो गए हैं। पहले सभी हमारे साथियों से याचना-साधना द्वारा उस निश्चय मार्ग पर आना था, पर आजकल वे मार्ग हमारे लिए कंटकाकीर्णमय हैं, पाश्चात्य विद्वान् विज्ञान के प्रभाव से उन मार्गों पर चल रहे हैं। और अगर यह आचरण है तो हमारे पूर्वज इसे पहले ही जानते थे, आप धीरज रखें, तो हम वहीं पहुँच जायेंगे।"

इस प्रकार का वाद-विवाद, श्रम नारायणराव और राजाराव की मैत्री को प्रतिष्ठित करने में मदद देता।

राजाराव दुनियादार न था। वह किसी से भी न मिलता-जुलता। अकेला रहता। महत्त्वाकांक्षी व्यक्तियों को मुँह उठाकर भी न देखता। वेश-भूषा से वह पुराने ढंग का था। उसकी वेश-भूषा को देखकर उसके साथ पढ़ने वाले हँसकर मज़ाक करते थे। मज़ाक करते। राजाराव को न समाज की परवाह थी, न परिहास की। वह अपने रास्ते पर चलता जाता।

परन्तु उसके हर मिलने वाले उसकी निष्कपटता, विनय और मधुर स्वभाव की प्रशंसा करते।

२१ : नौका-विहार

नारायणराव अमलापुरम से तीन दिन बुखार रहा था। तीसरे दिन उसका पत्र पाकर राजाराव, परमेश्वर मूर्ति, लक्ष्मीपति वहाँ आये। शनिवार को नारायणराव ने उन सब मित्रों को, जिनको उन्होंने उस दिन रेल में देखा था, उसके साथ तीन दिन बिताने के लिए अपने घर पर निमन्त्रण दिया। अपने दामाद से भी उन्हें चिट्ठी लिखवाई।

राजेश्वर राव दिन-भर वहीं रहा। परमेश्वर मूर्ति चित्र-रचना

की शिक्षा-पूरी करके उन दिनों बेकार बैठा था। उसने अमरेन्द्र के पास से आई हुई चिट्ठी को उन्हें दिखाया—"उन लोगों को, जो पेट के लिए अपने को बेच डालते हैं, कला सरस्वती साक्षात् नहीं होतीं, यदि कला पर विश्वास हो तो ऐसा कभी न होगा कि पेट न भरे। अब तू अपने कष्टों को कला में व्यक्त करता तभी तू सच्चे अर्थों में कलाकार बनेगा। नौकरी न मिलने के कारण चिन्ता न करो। तुम भाग्यशाली हो। इसलिए कला के अभ्यास के लिए तुम्हें इतना अवकाश मिला है। कला-सृजन का यही समय है, कला की उपासना करके जनता की श्रद्धा के पात्र बनो।"

"तुम जानते ही हो, यदि कभी मैं सहायता कर सका तो जरूर करूँगा। एक बार देश का पर्यटन करके प्रकृति के बाह्य व आन्तरिक सौन्दर्य का अध्ययन करो। प्रकृति से अच्छा गुरु कहीं न मिलेगा। विश्व-कर्ता की सौन्दर्य सृष्टि से मनुष्य की सृष्टि की तुलना करो। यह करो, दुःखी मत हो। धीरज धरो। जो दो चित्र तुम मेरे पास छोड़ गए थे, मित्र उनकी प्रशंसा करके खरीद ले गए हैं। उनके रुपये देने पर मैं तुम्हारे पास तुरन्त भेज दूँगा।"

यह चिट्ठी पढ़कर नारायणराव कुछ सोचने लगा। आन्ध्र देश में ललित कला के प्रोत्साहन के लिए कहीं उचित वातावरण नहीं दीख पड़ता था। वह सोचा करता था कि जिस दिन कला-पालक चक्रवर्ती, महाराजा वगैरा चले गए थे उसी दिन आन्ध्र की कला मिट्टी में मिल गई थी।

राजे०—"अच्छा, परम, दोस्त हो, कुछ बना रहे हो, इसलिए जो-कुछ तुम कहते थे मैं मान जाता था। परन्तु मैं कभी तुम्हारे चित्रों का विषय न समझ सका। ये मुर्गी की-सी आँखें क्यों हैं? ये टेढ़े-मेढ़े आदमी, ये ढोंगपंथ क्या? यह बंगाल-परम्परा क्या है?"

परम०—"तो चित्र कैसे बनाये जाने चाहिएँ?"

राजे०—"प्रकृति का अनुकरण करके बनाये जाने चाहिएँ।"

नारायण०—"मतलब? जरा साफ-साफ बताओ!"

राजे०—"रवि वर्मा के चित्र ही समझ लो, उनमें मनुष्य हूब-हू जैसे ही लगते हैं।"

परमे०—"कला सृजन है या अनुकरण, इसी पर तो तुम दोनों बहस

में भी उसका बड़ी बारीकी से देख रहा हूँ। परन्तु वह जीवन तो मुझे कहीं दिखाई ही नहीं देता।"

राजे०—"यह बात है तो तू भी हमारे मत में शामिल हो जा?"

नारायण०—"तुम्हारा मत एक और मेघाराम भी हरएक है, फिर, खिलखिलो, जीवन, आनन्द, खूब है।"

राजे०—"तुम दोनों ने ही मेरे प्रश्न का उत्तर न दिया।"

चरन०—"सबजी में जनता का अर्थ मनुष्य-सृष्टि ही है न?"

राजे०—"हाँ!"

इस बीच में जमींदार वहाँ आये। वे उन मित्रों को अपने साथ, गोदावरी में अपनी छोटी नाव में नौका-विहार करने के लिए ले गए। प्रान्तों पर क्या अलग प्रान्त होना चाहिए, इस विषय पर चर्चा चल पड़ी। राजेश्वर राव और लक्ष्मीपति का कहना था कि आन्ध्रों के लिए अलग प्रान्त आवश्यक है। रामाराव ने उनका अनुमोदन किया।

नारायण०—"मैं कभी उस आन्दोलन का समर्थन न करूँगा, जो देश के स्वतन्त्रता-युद्ध को छोड़कर, आन्ध्र प्रान्त की स्थापना के लिए किया जाय। जब देश का शासन हमारे हाथ में आ जायगा, तब हम इच्छानुसार भाषा के आधार पर, या किसी और आधार पर देश का विभाजन कर सकते हैं। आजकल तो यों ही खर्च अधिक हो रहा है, अगर इसके साथ नये प्रान्त बना दिये गए तो खर्च के लिए आवश्यक धन न होने पर, वे सब दिवालिये प्रान्त ही होंगे। इससे क्या फायदा?"

अमी०—"स्वतन्त्रता से तुम्हारा मतलब पूर्ण स्वतन्त्रता से ही है न?"

नारायण०—"कुछ भी हो, सम्पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं तो कनाडा, आस्ट्रेलिया की तरह डोमिनियन स्टेटस ही सही। मेरे कहने का मतलब यह है कि आय और व्यय की व्यवस्था हमें सौंप दी गई, तो आसानी से देश का निर्माण और उचित प्रान्तीयकरण हो सकता है।"

अमी०—"पर कभी तुमने इस बात पर भी सोचा कि हम लोगों पर किस प्रकार अन्याय किया जा रहा है। तमिल लोग ही बड़ी-बड़ी नौकरियों पर हैं। जितना धन तमिलनाड में व्यय होता है उतना आन्ध्र में नहीं होता।"

नारायण०—"परन्तु रामकृष्णन राव आदि आन्ध्र के ही तो मन्त्री हैं।

परम०—"हाँ, वही तो। हमारे देश के छोटे व्यक्ति भी जब आन्ध्र से बाहर जाते हैं तो बड़े हो जाते हैं, दामर्ल रामाराव को ही देखिये।"

लक्ष्मी०—"आन्ध्र देश छोड़ने से वे उचित ग्रह से मुक्त हो जाते हैं। इसलिए वे सफल हो जाते हैं।"

उर्मी०—"परमेश्वर मूर्ति जी, आप जो कह रहे हैं उसमें मुझे भी सचाई दीखती है, आपने जो कारण बताए हैं वे शायद नहीं हैं। यश पाना हो तो हमें अपना आन्ध्र ही नहीं, मद्रास छोड़कर जाना होगा। खैर, परमेश्वर मूर्ति जी, आपने कलकत्ता में अवनीन्द्र के पास कितने साल चित्र-कला सीखी?"

परम०—"बी० ए० कलकत्ता पढ़ने गया था। मैं पालि और संस्कृत लेकर, 'आर्कियोलाजी' शाखा में शामिल होना चाहता था, तब भी दामर्ल रामाराव की शैली को पसन्द करता था। जब मैं इन्टर में पढ़ रहा था तब मैंने उनके पास दो साल चित्र-कला सीखी। मेरे दो चित्र बम्बई में, और एक मद्रास में बिक चुके हैं। फिर कलकत्ता जाकर बी० ए० में पढ़ता और अवनीन्द्र के चरण कमलों में दो वर्ष चित्र-कला सीखता रहा।"

लक्ष्मी०—"उन्हीं दिनों बनाये हुए इनके दो चित्रों का प्रदर्शन इंगलैंड में भी हुआ था। एक चित्र आस्ट्रेलिया भी गया। उन दिनों परमेश्वर के कितने ही चित्र कलकत्ता में बिके थे।"

उर्मी०—"अगर आपने फिलहाल कोई चित्र बनाये हों, तो मुझे भी कुछ दीजिये! दाम अच्छा ही रखिये। मैं अपने अध्ययन-कक्ष में दो-चार चित्र रखना चाहता हूँ। आप और नारायणराव चित्रों का निर्णय करके जरूर भेजिये।"

राजे०—"नारायणराव ने परमेश्वर के चार चित्र खरीदे हैं, उनके पास बड़े चित्रकारों के बीस चित्र हैं।"

इतने में गुमाश्ते ने आकर कहा—"हुजूर, सात बज गए हैं, नाव वापिस करने की आज्ञा है क्या?" राजेश्वर राव ने "अरे, अरे, यह गोदावरी की हवा, लहरें," कहते-कहते अपने पैर पानी में लटका दिये।

जमींदार चौधियाने गये। उनके शरीर पर से जल की बूँदें मोतियों की तरह गिर रही थीं। 'यह अवतार पुरुष है', जमींदार ने सोचा। उनके मन में यकायक यमुना तट वृन्दावन, श्यामसुन्दर, गोपीजन, बिजली की तरह आये।

रात को आठ बजे वे घर पहुँचे।

जब वे घर पहुँचे तो एक सोफे पर बैठे जगन्मोहनराव और शारदा बातें कर रहे थे। शारदा ठहाका मारकर हँस रही थी। जगन्मोहन राव मुस्करा रहा था। इनके आते ही शारदा चुपचाप चली गई। जगन्मोहन राव का चेहरा तमतमाने लगा। शारदा का उठकर चला जाना केवल पहले आये हुए जमींदार और नारायणराव को ही दिखाई दिया। जमींदार के हृदय में एक प्रकार सकपका-सी पैदा हुई। विद्युत् की तरह चमककर चली जाने वाली शारदा को देखकर, नारायणराव के मन में गीत उठे।

दिन-प्रतिदिन शारदा के प्रति नारायणराव का प्रेम बढ़कर गोदावरी की तरह बहने लगा था। वह उसमें गोते लगा रहा था। वह पुलकित हो उठा था।

जवान स्त्री-पुरुषों के मन में उठने वाले प्रेम-भावों का आने क्या अर्थ है? बचपन में लड़के-लड़कियों के आपस में एक साथ हिल-मिलकर खेलने में प्रेम नहीं है क्या? वह अव्यक्त, मधुर, सरल प्रेम भी वियोग नहीं सह पाता। वे दोनों भी हमेशा एक साथ रहना चाहते हैं। एक-दूसरे के कन्धे पर हाथ रखकर घूमना चाहते हैं। एक-दूसरे को 'तू-तू' कहकर पुकारना चाहते हैं। उनका सौन्दर्य से कोई वास्ता नहीं। उन दोनों के जवान हो जाने से वह स्नेह कैसे 'प्रेम' में परिवर्तित हो जाता है? उनकी भाषा, नजरें क्यों बदल जाती हैं? इस तरह के लोगों का यदि विवाह न हुआ तो सुना जाता है कि उनका जीवन दुःखमय हो जाता है।

बचपन के उस अस्पष्ट प्रेम में काम कैसे पैदा हो जाता है? उस स्वाभाविक काम के लिए सौन्दर्य की क्या आवश्यकता है? अगर यह हो तो हर सुन्दर स्त्री को हर व्यक्ति क्यों नहीं चाहता? मैंने अभी तक कितनी ही सुन्दरियां देखी हैं, पर उन्होंने मुझे क्यों आकर्षित नहीं किया? प्रथम दर्शन में ही शारदा के लिए मेरे मन में प्रेम उपजा था या काम? अपरिचित, अज्ञात,

इस शारदा के मेरी पत्नी होने पर मेरा मन क्यों बल्लोलित हो उठा था? इसे क्या मैं दाम्पत्य-प्रेम कहूँ? यह प्रेम क्या जन्म-जन्मान्तर तक चलता रहेगा? इस संयोग और वियोग का अन्त कहाँ है?

इस तरह सोचते-सोचते नारायणराव ने भोजन करके अकेले ही पान खाती हुई शारदा के पास जाकर कहा, "मुझे भी पान दोगी?" वह चौंकी। एक क्षण पति की ओर देखकर बिना कुछ कहे, वह पान तैयार करने लगी। नारायणराव सन्तोष से मुस्कराता-मुस्कराता वहीं बैठ गया।

मालूम नहीं क्यों, शारदा को नारायणराव और भी सुन्दर लगा। विविध वर्णों के विद्युत्-दीपों के प्रकाश में उसका सौन्दर्य और भी आकर्षक हो गया था। अव्यक्त, मधुर, नूतन अनुभव के होते ही, लज्जावश उसके कपोल लाल हो गए। उसके ओठों पर चाँदनी-सी चमकने लगी। नीचा मुँह किये, आँखें फाड़कर, शारदा ने फिर अपने पति की ओर देखा। खादी के सफेद कुरते के अन्दर का शारीरिक सौन्दर्य उभरा-सा आता था। गम्भीर मुँह, विशाल मस्तक, सीधी नाक-कान, उसे देखते-ही कुमार स्वामी का सौन्दर्य प्रदान कर रहे थे। शारदा का सीना फूल आया। सुगन्धित द्रव्यों से बने सुन्दर पान को पति के हाथ में रखते हुए उसने स्पर्श-सुख अनुभव किया। उस लज्जाशीला बालिका को रोमाञ्च हुआ।

नारायणराव ने उसके मुलायम-मुलायम हाथ पकड़कर देखा, "तेरा हाथ देखना है।" वह हाथ की रेखाएँ देखने लगा। गुलाब की कली के समान उसके हाथों में रेखाएँ साफ थीं। नाखूनों पर सन्ध्या की लाली-सी चमक रही थी। अपनी छोटी अँगुली की नीलमणि-खचित अँगूठी को लेकर उसने उसकी दूसरी अँगुली में पहनाई। "देख, कितनी ढीली है" कहकर वह मुस्कराने लगा। और उसके हीरे की अँगूठी अपनी कनिष्ठिका पर पहनकर कहा, "देख कितनी तंग है।" कहते हुए उसने उसको चूम लिया। "मद्रास से एक अच्छी-सी अँगूठी लाकर इस छोटी अँगुली में पहनाऊँगा।" उसने उससे प्रेम पूर्वक कहा।

शारदा ने धीरे से अपना हाथ खींच लिया। उसका दिल धक्-धक् करने लगा।

"तेरे इतने मुलायम हाथ हैं, वीणा के तार लगने पर दर्द नहीं होता?"

"बाएँ हाथ में तो छाले ही पड़ गए हैं ?" उसने वह हाथ पति को दिखाया। उसने उसका हाथ पकड़कर कहा, "शारदा जब तक हम अपने शरीर को इस तरह क्षति नहीं कर देंगे, भला का मुल्य नहीं होगा। कितने घड़े उठाती है, जाने इन पंखुड़ियों को कितनी मेहनत करनी पड़ती है ?" उसने उन हाथों को चूमकर आँखों पर लगा लिया।

शारदा लजा गई। मुस्कराती-मुस्कराती वह किसी और कमरे में चली गई।

नारायणदास प्रफुल्लित होकर उसी तरफ देखता रहा, जिस तरफ उसकी पत्नी गई थी।

इतने में जमींदार ने किवाड़ [illegible] के बन्द खटखटाये। नारायण चौंककर उठा।

"बैठो भाई, शायद तुम्हारे मित्र तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। अब-प्याहन का पढ़ रहे हो। वह जानता है। पगली, दुष्ट है। तेरे और प्रीवियस में प्रथम नम्बर पर उत्तीर्ण होने पर मुझे बहुत खुशी है। मेरे साथ में भी मकान फाउंगा। तुम होस्टल में रहना छोड़ दो! किस्मत में मेरा बंगला है। उसमें रहना! मैंने जिलाधीश को मकान खाली कर देने के लिए कह दिया है। वे अगले महीने में जा रहे हैं। तुम अपने मन के मुताबिक बना लेना। हमारे वकील साहब उसे खरीदकर तुम्हें दे देंगे। डाक्टर को पहले ही उन्होंने कह दिया है। यह कार हम तुम्हें भेंट देते हैं।"

"मैंने एक छोटी कार आपके लिए पहले ही इन्तजाम कर लिया है।"

"मुझे इसको इच्छानुसार भेंट देने दो, ना न करो!"

"अच्छा!"

"शारदा!"

बगल के कमरे में से शारदा बोली, "क्या पिताजी?"

"इधर तो आओ बेटी!"

शारदा दरवाजे के पास आई।

"तुम जरा बाहर नीचे मोटर बजाओगी? अपने मालिक के कमरे में

"मैं अब न बजा सकूँगी।"

"जाने दो!"

"मैं यहीं अपने कमरे में बैठकर बजाऊँगी।"

"अगर तू नहीं बजाना चाहती तो मत बजा, कोई बात नहीं।"

"चाहने की बात नहीं, पर नीचे वाले कमरे में क्यों?"

"अच्छा, अच्छा!"

शारदा ने नौकरानी को बुलाकर संगीत के कमरे में से वीणा लाने के लिए कहा। जमींदार ने नारायणराव को देखते हुए कहा "संगीत के कमरे को मैंने कलकत्ता के ध्वनि-शास्त्र-वेत्ता से बनवाया है बहुत अच्छा है। कमरा जरा लम्बा है। इसलिए बीस-तीस आदमी बैठ भी सकते हैं। दोस्तों को ऊपर बुला लाओ!"

"अच्छा!" नारायणराव दोस्तों को ऊपर बुलाने गया।

शारदा वीणा ठीक करके गाने लगी।

नारायणराव और उनके मित्र ऊपर बीच के कमरे में आकर बैठ गए। जगन्मोहनराव शारदा के कमरे में आकर सामने एक गद्दे पर बैठकर उसको घूरने लगा।

जगन्मोहन को अन्दर जाता देख, राजेश्वर राव ने नाक-भौं सिकोड़ी।

नारायणराव, परमेश्वर मूर्ति संगीत-प्रवाह में उन्मत्त-से बहते जाते थे।

द्वितीय भाग

१ : 'मंगल गौरी'

श्रावण मास। गोदावरी के पवन में, बूँदा-बाँदी में, बदली में, सूर्य की आँखमिचौनी में, मंगलवार के दिन, स्त्रियाँ सुन्दर-सुन्दर रेशमी साड़ियाँ पहने, मंदिरों में दीप जलाती हैं।

स्त्रियों के लिए मंगलवार का दिन श्रावण मास में व्रत के लिए क्यों निश्चित किया गया? विवाह के बाद पाँच वर्ष तक यह व्रत रखा जाता है। व्रत के एक वर्ष बाद, व्रत का उद्यापन किया जा सकता है। विवाह में सप्त-पदी के दिन यह किया जाता है। वधू गले में मंगल-सूत्र बाँधकर पैरों में बड़ा पहनकर, पैरों की अँगुलियों पर मिठाई रखकर, १६ मीठे भटूरे, एवं बरतन में रखकर, उसके ऊपर आकेट या कपड़ा रखकर, हल्दी, कुंकुम रखकर व्रत का उद्यापन किया जा सकता है। श्रावण में मंगलवार के दिन स्नान करके धोये वस्त्रों से मंगल देवी की पूजा करके, उसकी कथा पढ़कर, सिर के ऊपर अक्षत डालकर, दीपक के काजल से आँखों को सुशोभित कर, महा नैवेद्य, वर्ष आदि का समर्पण करके विवाहित स्त्रियों के पैरों पर हल्दी लगाकर, चन्दन पोंछकर पान-सुपारी देनी चाहिए।

श्रावण मंगलवार के दिन स्त्रियाँ एक-दूसरे का परिचय पाती हैं। कुशल-प्रश्न पूछती हैं, गले लगाती हैं, दूसरों को बुरा-भला कहती हैं, सलाह-रायों के बारे में बातचीत करती हुई अपना समय बिताती हैं। रेशमी कपड़े और गहने पहनकर स्त्रियों के झुंड-के-झुंड इठलाते, मटकते-मचलते, अप्सरा की तरह दूसरों के घर जाते हैं। वे हाथ में रूमाल में चने लेती हैं। माताएँ बच्चों को उठाकर निकलती हैं। स्त्रियों का उल्लास देखने कई युवक सज-धजकर मस्त व्यक्तियों की तरह इधर-उधर मटरगश्ती करते हैं। अगर कहीं इस बीच वर्षा आ गई, तो सब एक जगह खड़े हो जाते हैं, और स्त्रियाँ तथा पुरुष आपस में एक-दूसरे को देखकर, कभी-कभी मुस्कराने लगते हैं।

हो गया था।

सुन्दर सुशोभित गृह को देखकर आनकम्मा बहुत प्रसन्न हुई। [illegible] सा। लड़का मन्मथ की तरह था पर इसके [illegible] की तरह। [illegible] ने एक-दूसरे के लिए जन्म लिया था।

उस दिन आनकम्मा ने गृह को नजर उतारी। नजर दोष दिखे या न दिखे, पर वे सदा जाने किसकी नजर लगी थी कि [illegible] ओर नहीं चली नहीं। परमेश्वरी देवी [illegible] रही।

शारदा को भी ये सब बातें विचित्र-सी लगती थी। जनूरात [illegible] सभी पुराने रिवाजों का ध्यान पूर्वक पालन करते थे। उनको बड़ी सास भी इन चीजों में बड़ी विश्वास रखती। कहीं व्यवहार-च्युत न हो जाए इसलिए दस-दस बार स्नान करती थी। रसोई के लिए आवश्यक सारा जल स्वयं लाती थी। दूसरों के लिए एक ब्राह्मण ही पानी लाता था।

दूसरे दिन आनकम्मा [illegible] चली गई।

आनकम्मा में भले ही बहुत परम्परा-परायणता न हो पर पहला होता कि वे पुराने ख्यालातों की ही थी।

चौके में कोई बच्चा नहीं आ सकता था उसका खाने का कमरा अलग था। सवेरे उसका खाना भी वहीं बनवाया जाता था।

लक्ष्मी नरसम्मा भोजन करते समय जिस लोटे से पानी पीती थी उसमें हाथ भी न धोने देती थी। अगर कोई रेशमी कपड़े पहनकर भोजन के लिए न आता तो वे उसे भोजन भी न परोसती थी। सबको ठीक तरह से पहना था। चाहे कोई भी हो, उनके लोक-व्यवहार विधि का पालन करने के लिए कहती। शारदा जब गृह-प्रवेश के लिए ससुराल गई थी तो उन्होंने उसे कई प्रकार के नीति-उपदेश दिये थे। जब वह खाना खा रही थी तो मुंह में एक तिनका-सा गया, उसे निकालकर उसने हाथ रूमाल से पोंछ लिये। तब वे बोली, "अरे, बेटी झूठ है हाथ धो लो उस रूमाल को मैले कपड़ों में डाल दो, नौकरानी आकर धो जायगी।"

"रहने दो बहन, इन बातों में तुम कब जग जीतोगी पड़ोसी?" आनकम्मा हमेशा कहा करती। पर क्या फायदा?

लक्ष्मी नरसम्मा दार्शनिक-सी थी। हमेशा दर्शन ग्रन्थ पढ़ती रहती।

आस पास के गाँवों में उसकी कई शिष्याएँ भी थीं। वे गुरु के दर्शन करने आने पर उनको नमस्कार करके फल, रुपये, चाँदी के बरतनों की उनको दक्षिणा देतीं। उनके उपदेश सुनकर सुख पातीं। गाँव-गाँव जाकर वे दार्शनिक विषयों पर व्याख्यान भी देतीं।

"जन्म, रजस्वला की प्राप्ति की तरह, पति-पत्नी की प्राप्ति मृग-मरीचिका भ्रान्ति है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य छः शत्रु हैं। इनसे पराजित मत होना। यहाँ तो अन्धकार में पड़, यह मेरा लड़का है, यह मेरा पति है, यह मेरा घर है, ये मेरे जेवर हैं, यह मेरा गृहस्थ है, इस माया में पड़कर सुख-दुःखादि में करवटें बदलता, स्थिर तत्त्वों को न ग्रहण करने से व्यक्ति मुक्ति से दूर हो जाता है। शुद्ध निर्गुण स्थिर तत्त्व ज्ञान को प्राप्त करना चाहिए। भवतारी का जप करना चाहिए।" लक्ष्मी नरसम्मा इस प्रकार अपनी शिष्याओं को उपदेश देती रहती।

उन्हें 'वर्षाचरण' सहज्य था। कथाएँ, बाद की कथाएँ भी अनेक जानती थीं। 'सीतारामजननम्' उनके निज कण्ठस्थ था। हमेशा 'भज निर्गुण सत्य कन्दार्थ नन्द के' गीत गुनगुनाती रहतीं।

शारदा को यह सब नया-नया-सा लगता। उसकी कभी इन चीजों में दिलचस्पी न रही थी। उसको आश्चर्य होने लगा कि शहरी औरतें भी आकर कैसे रह सकती हैं? उसने अपनी ससुराल की बातें सुना, तो व अन्य स्त्रियाँ न रहीं। सबने मिलकर उसका हँसी-मजाक किया।

मास के आने के बाद पाँच दिन शारदा 'रजस्वला' हुई। जमींदार के घर तीन दिन तक उत्सव मनाया गया, दावतें दी गईं। रोज स्त्रियाँ आतीं, मिठाइयाँ भरतीं, बाजे-गाजे बजाये, दावत के दिन सूर्यकान्त और माणिक्याम्बा ढाई सौ के कीमती भेंटें, रेशमी साड़ियाँ वगैरा देकर चली गईं। नगर के कितने स्त्री-पुरुषों को भोजन के लिए बुलाया गया।

गाँवों में कानाफूसी हुई कि वीरेशलिंगम के प्रिय शिष्य, जमींदार आज गाँव वालों से सम्बन्ध करके कर्मकाण्डी हो गए हैं।

श्रीनिवास राव ब्रह्मसमाजी थे। उन्होंने यज्ञोपवीत तक निकाल दिया था। उन्होंने अपने जमींदार मित्र से कहा, "लड़की का रजस्वला होना, उसके शरीर में होने वाले परिवर्तन का चिह्न है। उसके बारे में ढिंढोरा

निश्चय किया। स्कूल में ही नारायणराव के प्रबन्ध से रंगून-वासी आन्ध्र के बड़े रईस पुल्ल रेड्डी जी ने उसे अमरीका और जापान जाने के लिए पासपोर्ट दिलवा दिये थे।

रामचन्द्र राव के पिता के मित्र अमीरचन्द गिरधारीलाल उसको लिवा लेने बन्दरगाह पर आ पहुँचे। गिरधारीलाल का अमरीका, जर्मनी, जापान, फ्रांस, इटली, इंग्लैंड, रूस, चीन आदि देशों से व्यापारिक सम्बन्ध था। वे इन देशों में कई बार गये थे।

इसलिए वे रामचन्द्र राव को स्वदेश जाने के लिए न कह सके। फिर भी मित्र की हिदायत पर भोजन के बाद, रामचन्द्र राव से उन्होंने यों कहा, "रामचन्द्र, अभी तुम्हारे ठीक मूँछें भी नहीं आई हैं। बहुत छोटे हो, यह देश नया है, बहुत धोखेबाज इधर-उधर मिलेंगे, तुम काशी, लखनऊ और कलकत्ता में भी तो उच्च शिक्षा पा सकते थे?"

"आप मेरे पिताजी के मित्र के नाते यह कह रहे हैं, मैंने निश्चय कर लिया है। न मैं अब अपना निश्चय बदल सकता हूँ, न बदलूँगा ही। आप बड़े हैं, पिता के समान हैं। आपका कहना न मानना अच्छा नहीं है।"

"अच्छा, अच्छा तुम्हारी मर्जी, कोई बात नहीं, मैं सब मालूम कर लूँगा। हमारा एक रिश्तेदार लालचन्द ओनिलपाल न्यूयार्क में रहता है, उसे चिट्ठी लिखूँगा, और आपको एक चिट्ठी दे दूँगा।"

"अच्छा, मैं आपकी मदद कभी न भूलूँगा।"

"तुम्हारे पिता जी ने तुम्हें भेजने के लिए कुछ रुपये भेजे हैं। वे तुम्हें दे दूँगा। होशियार रहो, अभी तुम बच्चे हो!"

"अच्छा, बहुत अच्छा!"

अगले दिन पुल्ल रेड्डी ने अमनमाल के घर आकर रामचन्द्र राव से पूछ-ताछ की। वे दोनों दोस्त थे, एक-दूसरे का आदर करते थे।

पुल्ल रेड्डी अनन्तपुर ताल्लुके के एक गाँव के रहने वाले थे। वे बचपन में ही कुली बनकर रंगून चले गए थे, फिर थोड़े दिन बाद कुलियों का सरदार बनकर, उन्होंने थोड़ा-बहुत रुपया जमा किया। जब उनके मालिक गुजराती साहूकार ने उनको अपने व्यापार पर सिंगापुर भेजा, तो उन्होंने अपने ढंग से वहाँ व्यापार किया। वापिस जब आये, तो उन्होंने अपने

२५ हजार रुपये बना लिये । मालिक का काम भी उन्होंने सफलता और लाभ पूर्वक किया । तब से अपद्द पुल्लन्ना, पुल्ल रेड्डी हो गया । मालिक ने उनको भी व्यापार में एक आने का हिस्सा दिया । वे भी साझेदार हो गए । तब से जो-कुछ वह करता, वह सोना हो जाता । उन्होंने चार लाख रुपये के करीब कमाया । चालीस वर्ष की उम्र में वे उस गुजराती सेठ से अलग हो गए । उन्होंने अपना व्यापार अलग शुरू किया । दस वर्ष में तीन लाख रुपये कमाये । रावबहादुर का खिताब भी कमाया । अंग्रेज उनको पलियन रेड्डी कहा करते थे । दानशील होने के कारण, वे रंगून के नागेश्वर राव कहे जाते थे ।

रंगून के लगभग सभी आन्ध्र मजदूरी करते हैं । कुछ लोग ही नौकरी पर हैं । व्यापार करने वाले तो और भी कम हैं । उनमें कम ही रईस हैं । रंगून और मेगियोन आदि इलाकों में तो उनकी संख्या काफी थी, दक्षिण बर्मा में वे कहीं-कहीं थे । दूर देश में व्यापार करने के लिए, धर्म-प्रचार के लिए, राज्यों की स्थापना करने के लिए गये हुए प्राचीन आन्ध्रों के साहस के मुकाबले में आज का हमारा भय, आलस्य, निष्क्रियता लज्जास्पद है न ? आजकल पेट के लिए कुली होकर, बर्मा, आसाम, मलाया, नेताल जाने वाले आन्ध्रों के सिवाय और कोई नहीं दीख पड़ता । सुनते हैं, बर्मा में तैलंग नाम की एक जाति है । वे कभी पल्लव, चालुक्य अथवा काकतीयों के युग में वहाँ गये होंगे । पुल्ल रेड्डी को, जिन्होंने अपने दसवें वर्ष में आन्ध्रों का इतिहास सुना था, रामचन्द्र राव का साहस देखकर बहुत सन्तोष हुआ । रेड्डीजी ने चालीसवें वर्ष में पढ़ना-लिखना सीखा था । महाभारत, रामायण आदि प्राचीन ग्रन्थ, और आन्ध्रवासियों का इतिहास पढ़कर सुनाने के लिए एक विद्वान् को वेतन देकर रख रखा था ।

वेंकटरत्न नायडु आदि प्रसिद्ध व्यक्तियों से नारायणराव ने रेड्डी जी को अपने बहनोई के बारे में चिट्ठी लिखवाई थी । रंगून के एक साप्ताहिक के सम्पादक, अवरपल्लि नारायणराव जी के नाम भी उसने कई चिट्ठियाँ लिखवाईं ।

रेड्डी जी अमरचन्द, और नारायणराव की सलाह पर रामचन्द्र राव जापान गया । उसने वहाँ टोकियो, याकोहामा, फूजी पर्वत आदि

देंगे। रामविहारी बाद भी बहुत में उनके आवास का निरीक्षण भी देखा। उन्होंने वहाँ बन-वाटिकाओं के दर्शन में भी बहुत की। शिवाने, बादाम, नाशपाती, नारू, भुट्टे, कच्चा, गन्ना, मेवा, इलायची और मिर्चा ही यहाँ जापान के हमारे जान न पाती है।

रामचन्द्र राव ने उन लम्बी बाँध सीढ़ियों कि कारण लाने एक पर्वतीय अर्न-भाग पर्यटकों को दिखाकर उसने और समृद्ध होगा। बुद्ध धुन और रंग महोत्सव उनके आगमनकाल के लिए बने।

रामचन्द्र राव का स्वदेश आने का दिन नजदीक आया। रामविहारी बोस को राजनीतिक कारणों से भारत छोड़ना पड़ा था। जापान ही अब उनकी दूसरी मातृभूमि हो गई थी। वे स्वप्न और जागृत अवस्था में गंगा, यमुना और हिमालय पहाड़ के सपने देखे करते। उन्होंने रामचन्द्र राव का हाथ पकड़ कर कहा, "बन्धु, जो भारतवासी यहाँ-यहाँ आते जाते हैं, वह ही मेरे लिए मातृ देश है। उनके सिर पर, हृदय पर मैं सदा देश के भेद देखता हूँ खड़ा-खड़ा के पुत्र भूखा हूँ। उनकी दर्शन से गंगा का दर्शन करता हूँ। उसके सामने पर मैं अपने देश का नवीन स्वप्न देखता हूँ।

पंजाब, सिन्धु, गुजरात, मराठा, द्राविड़, उत्कल, बंगा,
विन्ध्य, हिमाचल, यमुना, गंगा, उच्छल, जलधि, तरंगा।

तुम धन्य हो। मेरे देश के भाग्य पुत्र हो। रामचन्द्र, तुम चार वर्ष में फिर मातृ-भूमि की गोद में स्नान करोगे। मातृ-भूमि की मिट्टी में लुढ़क सकोगे, अपने दिये हुए मित्रों से भेंट करोगे। उसकी पवित्र वायु में श्वांस लोगे। उस माँ के स्नेह भरी गोदावरी के पानी पी सकोगे। ध्यानी, मुझे कर्म-भाव पर भार नहीं लगाओ! अगर भारतीय राष्ट्र के, इधर भी करता हो मैं तुम छोड़ूँगा। पहुँचते ही मुझे चिट्ठी लिखना।"

उस बहादुर के आँखों से अन्दर-अन्दर आँसू भरे गए।

कुछ समय बाद हुआ, फिर सीटी बजी, और वह जहाज धीरे धीरे के पार याकोहामा बन्दरगाह से निकला। रामविहारी बोस की सलाह पर उसने पहले बनारस आने का निश्चय किया था।

समगीत गलियों की सीढ़ी पार बैठा। पैसे वालों का व्यापार करता है। अभी ही कोई यहाँ विश्रामस्थान के लिए यहाँ हैं। परन्तु

उसे वहाँ घूमने-फिरने की अनुमति नहीं है। वह भारतवर्ष से बड़ा है, कुल दस करोड़ की आबादी है, और कहते हैं कि उनके लिए वह काफी नहीं है। अमरीका वाले लोगों को कुत्ते, बिल्ली, घोड़े से भी बदतर समझता है। नीग्रो, चीनी, जापानी, मंगोलियन, रेड इण्डियन, हर रंग के हिन्दुस्तानी वहाँ रहते हुए भी उस देश के नहीं हो सकते। वे कुछ वर्ष ही वहाँ रह सकते हैं। अगर कोई नीग्रो गलती करे तो उसे अदालत में नहीं ले जाया जाता, उसको खुल्लम-खुल्ला मार दिया जाता है, जला दिया जाता है। नहीं तो घोड़े की पूँछ से बाँधकर उसे पत्थरों पर घसीटा जाता है। उसे वहीं मरने दिया जाता है और घोड़ा निरन्तर भगाया जाता है।

अमरीकनों की नज़र में भारत देश एक अजीब देश है। उनकी दृष्टि में भारतीयों का कोई धर्म नहीं है। पत्थरों के पूजने वाले मूर्खों से भारत-भूमि भरी पड़ी है। इसलिए करोड़पतियों का देश, भारत में धर्म-प्रचार करने के लिए मिशनरियों को भेजता है। भारत के राजाओं-महाराजाओं को भी अमरीका के बड़े-बड़े होटलों में नहीं ठहरने दिया जाता। उन्हें अमरीका के 'पुल मेन' डब्बों में सफर नहीं करने दिया जाता।

उत्तुंग तरंगों वाले समुद्र को देखा। एक पंजाबी नवयुवक की बातों को याद करता हुआ वह जहाज के अग्रभाग में खड़ा था।

जापान कल ही सैकड़ों मील दूर रह गया था। वह रात-भर न सो सका। बारह बजे के करीब कुछ नींद आई। फिर नाविकों का चार बजे का घंटा सुनकर वह भी जाग गया। नहा-धोकर, अच्छे कपड़े पहनकर, वह जहाज के ऊपर वाले भाग में चला गया। सूर्योदय देखने लगा।

जिधर देखो उधर समुद्र था। आकाश और समुद्र एक हो गए थे। पालने की तरह जहाज इधर-उधर झूल रहा था। जहाज के यन्त्रों का शब्द, व अन्य शब्द रामचन्द्र राव को ताल की ध्वनि की तरह लगते थे, जहाज को आगे चलाने वाले चक्कों की ध्वनि, जल का गम्भीर नाद, उसके हृदय को उत्कृष्ट संगीत-सा लग रहा था।

स्वप्नों में, कहानियों में, ग्रन्थों में, साप्ताहिकों में लिखे विदेशी शब्द, सब मिलाकर रामचन्द्र राव को विचित्र-से लगे। वह स्तब्ध रह गया। जिन चीज़ों की कल्पना भी न की जा सकती थी वे वहाँ मामूली थीं। उसने

आँखें मींच लीं। इतने में किसी ने उसके कन्धे को थपथपाया।

३ : जापान

रामचन्द्र राव ने चौंककर पीछे देखा तो अर्जुनसिंह दिखाई दिये। जापान में रासबिहारी बोस के घर में उनकी उनसे मैत्री हो गई थी। उसने साथ एक अमरीकन व्यक्ति और बालिका खड़ी थी।

"जी, यह महाशय हमारे भारत के दक्षिण में स्थित आन्ध्र देश का रहने वाला है। उत्तम ब्राह्मण है। नाम है कुटुम्बरु रामचन्द्र राव। आपके देश में अध्ययन के लिए जा रहा है। रामचन्द्र राव जी, ये न्यूयार्क के रोनाल्डसन हैं, सुप्रसिद्ध डॉक्टर। बड़े-बड़े व्यापारी इनके दास हैं। ये इनकी लड़की हैं। हावर्ड में बी० ए० आनर्स में पढ़ रही हैं। नाम इनका सिमोनेरा है।"

"रामचन्द्र रावजी, हमें आपसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई। नमस्कार!"

रामचन्द्र राव शरमा गया। स्वदेश छोड़ने के बाद रामचन्द्र राव ने किसी विदेशी से मनचाहा सम्भाषण न किया था। इसलिए वे प्रतिदिन वह और कोई विदेशी भाषा न जानता था। बड़ों से हिल-मिलकर बातें करने के लिए वह बचपन से ही हिचकता था। पिता के पास भी भय-भक्ति से रहता था। इसलिए रामचन्द्र राव नमस्कार करके चुप-चाप खड़ा रहा।

अर्जुनसिंह—"रामचन्द्र राव बड़े नरम दिल के हैं। हमारे देश के प्रतिष्ठित कुटुम्बों में से इनका एक कुटुम्ब है। इनका विश्वास है कि अमरीका में ज्ञान की झोलियाँ-की हैं। वे पेट-भर ज्ञान का पान करना चाहते हैं।"

डा० रोना०—"रामचन्द्र राव जी, कहा जाता है कि अगर ब्राह्मण अपना देश छोड़कर बाहर जाय तो वह नरक को जाता है, आप कैसे आये?"

राम०—"आजकल ऐसा अन्ध-विश्वास नहीं है।"

लियो०—"जात-पात का भेद जन्म से ही होता है न, वे आपस में शादी नहीं करते और साथ-साथ भोजन भी नहीं करते।"

राम०—"जी हाँ, प-र-र-"

रोना०—"क्यों अर्जुनसिंह जी, क्या आपके सिख भी हिन्दू हैं ?"

अर्जुन०—"हिन्दुस्तान में रहने वाले ईसाई भी हिन्दू हैं।"

लियो०—"कैसे ?"

अर्जुन०—"अमरीका में ज्यू हैं, मुसलमान हैं, बौद्ध हैं, पर ये सब अमरीकन हैं। हिन्दू देश के रहने वाले सब हिन्दू हैं।"

रोना०—(हँसते हुए)—"तो इसका मतलब यह हुआ कि सिख और ईसाई हिन्दू नहीं हैं।"

अर्जुन०—"हमारा धर्म सर्व-धर्म-सम्मत है, माता की तरह हिन्दू धर्म ने सभी धर्मों को अपने पेट में रखा हुआ है। हिन्दू धर्म की त्रुटियों को हटाने के लिए गुरु नानक ने हमारे सिख धर्म की स्थापना की। इसलिए हमारे धर्म का उद्भव सुधार के रूप में हुआ। इसी तरह के धर्म जैन और बौद्ध हैं। आजकल ब्रह्म समाज, आर्य समाज और सत्संग भी इसी प्रकार हैं।"

लियो०—"इनमें क्या ब्राह्मण हैं ?"

अर्जुन०—"जी नहीं, इनमें जात-पात का भेद नहीं है।"

रोना०—"एक मजहब वाले क्या दूसरे मजहब वालों से विवाह कर सकते हैं ?"

अर्जुन०—"नहीं, पर किसी भी लड़की से विवाह करने पर वे आपत्ति नहीं करते, गलती नहीं समझते।"

लियो०—"आपने आन्ध्र देश कहा है, यह कहाँ है ?"

अर्जुन०—"भारत में पन्द्रह सोलह बड़ी भाषाएँ हैं, उनमें आन्ध्र भाषा या तेलुगु भाषा एक है। उस भाषा को बोलने वाले तीन करोड़ से अधिक हैं।"

लियो०—"रामचन्द्र राव जी, आप अमरीका में क्या पढ़ने के लिए जा रहे हैं ?"

राम०—"जी, गणित !"

लियो०—"किस विश्वविद्यालय में ?"

देता है। प्रेम जगत् को प्रकाशित करने वाली दिव्य ज्योति है। प्रेम की अनुपस्थिति में ही क्रोध, हिंसा, स्वार्थ, माया, अभिमान, असत्य अपना सिर ऊपर उठाते हैं। वे मित्रों से कहा करते थे कि युद्ध, चोरी, व्यापार में धोखेबाजी, प्रेम के न होने के कारण ही पनप रहे हैं।

अगर कोई स्वतन्त्रता, युद्ध के विरुद्ध, वर्ण-भेद-निवारण के लिए अमरीका में काम करता तो रोनाल्डसन उनकी भरसक सहायता करते थे। मारलेण्ड, होल्म, बोरा उनके मित्र थे।

"रामचन्द्र जी, अमरीकन अजीब ख्याल वाले हैं। जो स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए प्रयत्न करते हैं, उनकी सफलता चाहते हैं। उनकी सफलता पर खुश होते हैं। परन्तु फिलिपाइन्स देश को वे स्वतन्त्रता देना नहीं चाहते। वे दूसरे देशों में ईसाई मत के लिए करोड़ों रुपया खर्चते हैं, और अपने देश में ईसाई मत के प्रचार करने के लिए कानी कौड़ी भी नहीं खर्चते। उन्होंने अंग्रेजों से लड़कर अपनी आजादी पाई। पर हिन्दू देश की स्वतन्त्रता के लिए सर्वस्व अर्पित करने वाले ईसा के अवतार, गांधी जी के बारे में वे ऊटपटांग झूठी बातें प्रकाशित करते रहते हैं। चाहे कितना भी कहा जाय, समझाया जाय, प्रति शिक्षित अमरीकन के लिए भारत देश माया से भरा सर्वमत सर्वजननी सर्व-कला का उद्भव-स्थान अजायबघर-सा लगता है। प्रत्येक हिन्दू योगी और वेदान्ती लगता है। इसीलिए प्रति वर्ष अनेक अमरीकन हिन्दू देश का पर्यटन करते हैं, करोड़ों रुपया खर्चते हैं। पिछले साल से मैं और मेरी लड़की एशिया का दौरा कर रहे हैं। पहले साल हम अमरीकी महाद्वीप में घूमे। फिर एक साल यूरोप गये।

लियोनारा की माँ इटालियन हैं। वह प्रसिद्ध नवयुवक, रोनाल्डसन से चिकित्सा कराने के लिए आई। रोगी और वैद्य एक-दूसरे को देखकर प्रेम करने लगे। वे 'म्यारियाने, काण्टवेलिरी फेबियानो' की पुत्री थीं। वे वाशिंगटन में इटली के राजदूत थे। उनकी लड़की को कोई हृदय रोग हुआ, और चिकित्सा के लिए उन्हें डा० रोनाल्डसन के पास ले जाया गया। धन्वन्तरि रोनाल्डसन ने देह-सम्बन्धी हृदय की चिकित्सा करके उनमें मन-सम्बन्धी काम के रोग को पैदा कर दिया। फेबियानो-दम्पति ने भी उनके प्रेम का अनुमोदन किया।

रौनाल्डसन-दम्पति के यहाँ लियोनारा चन्द्र-किरण की तरह जन्मी।

लियोनारा स्वप्न की तरह सुन्दर थी। अच्छी तरह गा सकती थी। 'नेटिव' देश-वासियों का सौन्दर्य, 'नार्डिक' जाति वालों के स्वर्ण केश, निर्मल, नील आँखें, स्निग्धता और चापल्य उसमें थे। उस समय की प्रम-शीघ्न लड़कियों में वह भरपूर सुन्दरी थी। आध्यात्मिक बातों में उसकी विशेष अभिरुचि थी। हिन्दू देशों, चीन, जापान, बर्मा, जावा, बाली, सिहल देश के इतिहास, कहानियाँ व कविताएँ उसको आकर्षित करतीं।

पिता-पुत्री भारतीयों से मैत्री करने के लिए हमेशा लालायित रहते। जब प्रसिद्ध भारतीय अमरीका आते, वे अपने घर में उनका आतिथ्य करते। रवीन्द्रनाथ, मेहर बाबा, प्रेमानन्द स्वामी, कृष्णा भी उनके घर में अतिथि रह चुके थे। तारकनाथ, सुधीन्द्र बोस, लालचन्द्रराय अक्सर उनके घर आया करते थे।

यह जानकर कि रामचन्द्र एक उत्तम ब्राह्मण घराने के हैं, भारतीय हैं, उनको अपने घर में लाकर हार्वर्ड में दाखिल करने के लिए उन्होंने निश्चय किया।

४ : हार्वर्ड

सहा समुद्रों में प्रशान्त महासागर विचित्र है। इसमें द्वीप अधिक हैं। इनमें पैदावार भी अधिक होती है। यहीं पपीता, टमाटर, आलू, तम्बाकू, अनन्नास, काजू पहले-पहल पैदा किये गए थे। निर्मल गगन के नक्षत्र समुद्र के जल पर प्रतिबिम्बित हो रहे थे। तरंगों पर ज्योत्स्ना की परत जमी हुई थी। वह जहाज बड़ी तेजी से चलता जाता था।

डा० रौनाल्डसन ने अपने मित्रों से रामचन्द्र का परिचय कराया।

में एस० एम० एम० की डिग्री लेकर वे उच्च शिक्षा के लिए हार्वर्ड गये थे। वहाँ उन्होंने कई और परीक्षाएँ पास कीं। विद्या ही उनके लिए पत्नी थी, माँ थी, बच्चा थी। न मालूम वे कब हमारे भारत आ सकेंगे? अपने गुरु के साथ उन्होंने 'बायो केमेस्ट्री' में कितनी ही नई चीजों का पता लगाकर संसार का कल्याण किया है।

रामचन्द्र राव की बुद्धिमत्ता को देखकर, हार्वर्ड विश्वविद्यालय के बड़े-बड़े पंडितों को आश्चर्य हुआ। गणित-शास्त्र के प्रसिद्ध पंडित थर्मिगम भी उनसे प्रभावित हुए; और उनको उन्होंने अपने साथ ही रख लिया।

५ : गाढ़ी मित्रता

नारायणराव मद्रास में बी० एल० की श्रेणी में प्रविष्ट हुआ। टेनिस, फुटबाल, क्रिकेट का वह अच्छा खिलाड़ी था। लॉ कालेज के आन्ध्र विद्यार्थियों ने उसे अपने संघ का मन्त्री चुना। नारायणराव के कहने पर उसका मित्र परमेश्वर भी उसके साथ मद्रास में रह रहा था। आर्त भी हमेशा उसके साथ रहता।

परमेश्वर को चित्र-कला से सम्बन्धित कोई नौकरी न मिली। परन्तु विश्वदाता नागेश्वर राव ने उसको 'आन्ध्र पत्रिका' कार्यालय में काम दिया। नारायणराव ने उसे सलाह दी कि वह 'भारती' में कहानियाँ व कविताएँ लिखे, और दिन में दो घंटे चित्र-कला का अभ्यास करे। उसकी हर तरह से मदद करने का उसने वचन दिया। नारायणराव ने अवकाश के समय परमेश्वर राव के साथ मिलकर बड़े सुन्दर चित्र बनाये।

परमेश्वर के चार भाई थे। परमेश्वर मूर्ति के पिता वेंकटरमण मूर्ति मुन्सिफगिरी करके रिटायर हो चुके थे। कुटुम्ब बड़ा था। इसलिए वे बहुत रुपया जमा न कर सके थे। लड़की के विवाह पर छः हजार रुपया

राव देखने-मात्र से सब-कुछ समझ जाता था। गूढ़-से-गूढ़ समस्या को सरल-से-सरल शब्दों में व्यक्त कर सकता था। व्याख्यान दे सकता था, नारायणराव की स्मरण-शक्ति बड़ी तेज थी, उसकी ज्ञान-पिपासा किसी एक विषय तक सीमित न थी। वह हर विषय में दिलचस्पी लेता। जितनी दिलचस्पी उसको 'रमण प्रभाव' में थी, उतनी ही आन्ध्र के इतिहास में भी। न्यूटन, आइन्स्टीन, एडिसन, गौतम, कणाद, नागार्जुन आदि भी उसके चिरपरिचित थे।

परमेश्वर का ज्ञान नारायणराव के ज्ञान की तरह अगाध न था। दोनों के हृदय रसिक थे। परमेश्वर में कला का अधिक प्रभाव था। दोनों ही सौन्दर्योपासक थे। ज्ञान-पिपासु भी। परन्तु यदि परमेश्वर भौंरा था तो नारायणराव शहद का छत्ता था। यही उनमें भेद था।

नारायणराव का हृदय गम्भीर था और परमेश्वर का दर्पण-जैसा। वह कोई भी रहस्य छिपा नहीं पाता था। तो भी उसका ज्ञान सर्वतोमुखी था। उसकी जन्म-राशि में बुध था।

परमेश्वर लता की तरह किसी-न-किसी बुद्धिमान मित्र से हमेशा लिपटा रहता। अगर कभी मित्र न होता तो वह सोचा करता कि मित्र के बगैर वह संसार में न रह सकेगा। परन्तु कई घंटे ध्यान-मग्न हो, वह अकेला रह सकता था। परमेश्वर किसी बात कम न था। खेल जाने में वह किसी से पीछे न था। वह अकेला गोदावरी में बत्तख की तरह मीलों तैर सकता था।

परमेश्वर का हृदय नवनीत की तरह था। स्त्री की तरह हिल-मिल सकता था। वह हर तरह के गीत गा सकता था। अभिनय कर सकता था। स्त्री के वेश में वह स्त्रियों को भी मात करता था।

दुनिया की चीजों के प्रति उसमें मोह न था। वह उन्हें क्षणभंगुर, तात्कालिक समझता था। वह सदा सन्तुष्ट रहता।

नारायणराव को जो कोई भाता, उससे प्रेम करता; परन्तु परमेश्वर सभी का मित्र था। लेकिन वह कुछ ही को अपना सम्पूर्ण हृदय दे सकता था। नारायणराव का प्रेम एक बार होने पर आजीवन दिव्य ज्योति की तरह उज्ज्वल रहता। परमेश्वर किसी से भी प्रेम कर लेता था। भले ही दूसरा

भूल जाता, पर वह अपना प्रेम न भूलता।

नारायणराव का प्रेम-पात्र होने के कारण परमेश्वर हमेशा भगवान् को धन्यवाद देता। कभी सोचता, अन्याय हो जाता। सचमुच नारायणराव है कि नहीं, यह जानने के लिए वह उसकी आँख पर स्थिर दृष्टि रखकर सोचने लगता। उसकी पत्नी उसे अक्सर छेड़ा करती, "नारायण राव आपका भाई है या पति, या पत्नी ?"

६ : कविता

नागेश्वर राव जी ने 'भारती' में परमेश्वर मूर्ति को ५० रुपये वेतन देना शुरू किया। वह अपनी पत्नी के साथ मद्रास में रहने लगा। वो राजमहेन्द्रवर से आया। दाल, तेल आदि जितनी ही चीजें नारायणराव यह कहकर दे जाता कि उसके पिता जी ने कोत्तपेट से भेजी हैं। रुक्मिणी को शहर दिखाने के लिए, सिनेमा दिखाने के लिए अवकाश के दिन नारायण-राव अपनी कार उनको भेज देता। नारायणराव ने उससे एक अच्छा घर किराये पर लेने के लिए कहा। उसके लिए पलंग आदि आवश्यक फर्नीचर का भी उसीने प्रबन्ध किया।

राजाराव जब कभी समय मिलता था तो परमेश्वर के घर, नहीं तो परमेश्वर के साथ नारायण के घर में रहता। दोस्तों से मिलता। जिस किसी मित्र से वे मिलना चाहते या तो नारायणराव अपनी कार भेज देता, या उन्हें स्वयं देख आता। राजाराव, लाल, परमेश्वर मूर्ति, नारायण ये सब आपस में बड़े गहरे दोस्त थे।

परमेश्वर उन दिनों के कवियों की कविताओं को प्रायः मीठे स्वर में गाता रहता। उसने कितनी ही सभाओं में गाया था। वह कविता लिखता, गीत बनाता, छोटी-छोटी कहानियाँ लिखता। उसकी रचनाएँ 'भारती'

में प्रकाशित भी होती थी।

एक बार एक गीत लिखकर वह नारायणराव के पास गया

कहाँ जा रहे बाबा तुम तो,
कौन तुम्हारा गाँव ?
नहीं नगर हैं नहीं, मुहल्ला,
देश समूचा तेरा है,
गाँव के बाहर पास तलैया–
के लग जाता डेरा है,
कहाँ जा रहे बाबा !
बछड़े पर घर-बार तुम्हारा,
सब चीजें जिस पर रख लेते,
साप मगर बच्चे लग जाते,
तो अचरज कर खेल दिखाते,
कहाँ जा रहे बाबा !
देने वाली माई को लख,
वैरागी का वेश सजाते,
आयेगा कब 'आने वाला'
हाथ देखकर तुरत बताते,
कहाँ जा रहे हो बाबा !

परमेश्वर जब यह गीत गा रहा था तब राजाराव वहाँ आया। आल गीत के खत्म होने के बाद आया। उसने परमेश्वर से फिर गाने को कहा। परमेश्वर ने फिर गाया। गाँवों में घूमने-फिरने वाले उनके आँखों के सामने प्रत्यक्ष से हो गए।

भिक्षा मांगकर जीने वाली जातियाँ सदियों से भिक्षा माँगती आई है। जगम, बुडबुक्काल, वैरागी, मगिरेड्डी, दासरिवारो, बोम्म दासरुलु, कोदवाड़, एरुकल, मन्दगोल्लु, मडवी चंचुलु रामदास, भर्गादि, भागवतुलु, नून गुड्डेल वाड़, अम्मवारि देवरलु, दानुलु, तोल बाम्मल वाड़, दोम्मरिवाडलु, मजल वाड़, काशी परमलवाड़, भटराजुलु, बीवी नोचारलु, गगा नम्मा, मस्तु, अगालु आदि भिक्षुक हमारे ही इलाके में भीख माँगते फिरते हैं।

नारायण०—"अच्छा, तो इन भिखारियों को तुम कभी कोई काम दिलाओगे ?"

राजा०—"मैं यही तो कह रहा हूँ कि इनको काम दिलाकर भिक्षा-वृत्ति बन्द कर देनी चाहिए।"

नारायण०—"यही तो बात है, पागलपन ठीक न हो तो शादी नहीं होती। शादी न हो तो पागलपन ठीक नहीं होता। अब खेती में, गाड़ी चलाने आदि की मजदूरी में, शहरों की 'फैक्टरियों' कितने हो लगे हुए हैं। इसलिए भिखारियों को काम देने के लिए काफी काम नहीं है। कभी काम मिल भी जाता है तो छः महीने काम करता है और छः महीने खाली रहते हैं। आधा पेट खाकर रहते हैं। अगर इन भिखारियों को काम दिया गया तो उन बेकारों को महीने-भर भी काम न मिलेगा, क्योंकि जितने मजदूर हैं, उतने ही भिखारी हैं।"

राजा०—"यह सब मैं मानता हूँ, परन्तु हमारे यहाँ कितनी ही ऐसी खाली भूमि है, जहाँ खेती नहीं हो रही।"

नारायण०—"तीन चौथाई भूमि खेती के लायक बनाई जा सकती है, बाकी सब पहाड़, जंगल और रेगिस्तान है।"

राजा०—"तीन चौथाई है न ?"

नारायण०—"है, परन्तु उस भूमि को खेती के लायक बनाने के लिए सैकड़ों रुपये खर्चने होंगे, उतना रुपया कहाँ मिलेगा ? आजकल की सरकार वे नहीं सकती, फलतः देश में कम है। वे दे भी नहीं सकते। देश में सभी जगह पैसे की कमी है।"

राजा०—"तू कह रहा था कि मजदूर ही उनके गाने आदि से दिल बहलाते हैं। वे भीख देकर भी हो अपनी आय आधी कर रहे हैं।"

नारायण०—"पर उनसे भिखारी जो भीख पाते हैं, वह धनियों की भीख से एक तिहाई भी नहीं होती।"

राजा०—"जब तक हमारी स्त्रियों पर पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव नहीं पड़ता, तब तक हमारे भिखारियों को कोई डर नहीं है। यदि हो भी जाय तो यह पुरानी परम्परा इतनी जल्दी जायगी नहीं।"

परम०—"तुम दोनों चाहे कुछ भी कहो, भिखारी कला के अंग हैं। उनमें

मार्लं—"मैं यह सोच रहा हूँ कि तुम सबको मुस्लिम बना दूँ।"

नारायण०—"तेलुगु मुस्लिम और तमिल मुस्लिमों का हिन्दुओं से कोई विरोध नहीं है, फिर तुम सबको क्यों न हिन्दू बनाया जाय ?

७ : जगन्मोहन राव

श्री राजा कलेश्वदि धराय राज श्री जगन्मोहन राव बहादुर, गंजाम जिले के नारसिंला बलस के जमींदार हैं। नारसिंला बलस बरहमपुर से थोड़ी दूर पर है। उनकी जमींदारी सिर्फ दस गांवों की है। सालाना आमदनी तीन हजार रुपये है।

परन्तु जगन्मोहन राव बड़े उदार पुरुष हैं, उनका मत है कि धन एक जगह जमा नहीं रहना चाहिए। किसी भी तरह धन को दुनिया में चालू रखना कल्याणप्रद है। वेश्याएँ, ब्राण्डी की दुकान के मालिक, जुआखोर, दोस्त वगैरा धन को फैलाने के लिए मशहूर हैं। अगर उनकी मदद न रहे तो धन एक ही जगह सड़ता रहेगा। यह उनकी अर्थ-नीति है। बिना शैम्पेन ब्राण्डी के हम विश्व के सौन्दर्य का अनुभव नहीं कर सकते। सिगरेट बुद्धि को साफ करके ज्ञान की अभिवृद्धि में मदद देती है। वेश्याओं को प्रोत्साहित करना ललित कला की वृद्धि के लिए आवश्यक है।

अगर कोई यह कहता कि जमींदारी में किसानों का कल्याण मुख्य है, तो वे अट्टहास करते; और कहते कि अगर यही बात है तो सरकार जमींदारी-पद्धति को क्यों अपनाती। रैयतवारी पद्धति को ही रखती। इसलिए जमींदार को अपनी इच्छानुसार जमींदारी का उपयोग करना चाहिए। कर्ज करने से जमींदारी कैसे बिगड़ेगी ? क्या जमींदारी की जमींदारी शाश्वत है ? जितने दिन जीवित हैं उसका आनन्द उठाना चाहिए। भले ही बाद में वह किसी और को मिले। इस सम्पत्ति का उपयोग हमेशा एक

उसके घुड़सवार को मैं अभी से कण्ट्रैक्ट दे आया हूँ। मगदूर रेयोनाल्ड्स को घोड़े को सिखाने के लिए यह आया हूँ। आओ, घूम आयें, डायना।"

फिर उसने उसका गाढ़ आलिंगन किया, और उसके ओठ, आँख, गला, तथा कान चूम लिये।

वे दोनों कार में बैठने ही जा रहे थे कि जेम्स की माँ ने आकर कहा, "जल्दी टहलकर आ जाना।"

जेम्स ने अभी विवाह नहीं किया था। घर में माँ या हो कोन-बाला था। उसीने डायना और जगन्मोहन का परिचय कराकर, परिचय को दिन-रात बढ़ाया था। जगन्मोहन, डायना को हर मास २०० रुपये देता था। भेंट, उपहारों को मिलाकर वह साल में उस पर तीन-चार हजार रुपये खर्चता था।

डायना सुन्दर थी। उसका रंग गोरा था, और हाथी के दाँत की तरह वह चिकनी थी। होठ लाल-लाल थे। वे मधु बरसाते-से लगते थे। ठिगनी थी, पर बनावट अच्छी थी। वह एंग्लो इंडियनों द्वारा 'सुन्दर जन्तु' शब्द से प्रशंसित होती थी। तैरने, टेनिस, वालीबाल तथा नाचने में वह बड़ी माहिर थी। पियानो बड़ा अच्छा बजाती थी। वाल्टेयर में होने वाले 'क्रिसमस' उत्सवों में वह नायिका का पार्ट अदा करती। संगीत में वह प्रवीण थी। वाल्टेयर और विशाखपट्टन के यूरोपियन और एंग्लो इण्डियन्स में कोई ऐसा न था जो उसे न चाहता हो। पर उसने उन सबमें जगन्मोहन को चुना था।

उनकी कार सिंहाचल के रास्ते से नलमण्डा आदि गाँवों से गुजरती हुई भीमनिपट्टनं पहुँची। वे कार से उतरकर समुद्र-तट की रेती पर बैठ गए। समुद्र के संगीत के साथ उस अन्धकार में वे अपने को भूल गए।

कुछ देर बाद, मुस्कराते-मुस्कराते बातें करते करते, कार में आ बैठे। विशाखपट्टन पहुँचने से पहले, वाल्टेयर में रोजरिया नामक गार्ड के घर रुककर, गार्ड-दम्पति और उनकी लड़की को देखकर वे गये। उस दिन जेम्स के घर जगन्मोहन की दावत थी। जगन्मोहन सिवाय चोफ के और कोई मास न खाता था, माक्लिन ने अपनी प्रियतमा—रोजरिया की लड़की, और उसके माँ-बाप को भी निमन्त्रित किया था। उनके लिए माक्लिन और उसकी माँ उद्विग्न वेश में प्रतीक्षा कर रही थी।

जेम्स मार्टिसन ने घर के कमरों में दीवारों पर रंगीन चित्र, जेंटों के सिर, भाले, ढाल आदि लगा रखे थे। नक्काशीदार कुर्सियां, मेज, मेज पर शीशे के फूलदान, और उनमें पुष्प सजे हुए थे। इस कमरे में दोनों तरफ रोशनी की गई थी।

सब लोग कुर्सियों पर बैठ गए। उस दिन मेज में घटी किसी घटना पर, 'मिस्टर रोजरियो' मुस्कराता-मुस्कराता डायना की तरफ मुड़कर कह रहा था। डायना की माँ और मिसेज रोजरियो, एक-दूसरे को कुछ कह रही थीं। उनकी बातें किसी और को सुनाई नहीं पड़ती थीं। जेम्स अपनी प्रियतमा 'रोजलिन' को लेकर बाहर ले गया। दो-चार कदम चलने के बाद उसने प्रेमभरे स्वर में कहा, "मैंने तुम्हें अपना दिल दिया है, चाहे जो कुछ भी करो, अब तुम्हारी जिम्मेदारी है।" जगमोहन डायना की आँखें फाड़-फाड़कर देखने में तन्मय था।

इतने में देशीय क्रिश्चियन 'बटलर' ने आकर दोनों को एक गिलास में अंगूरी लाकर दी। सब उसे धीरे-धीरे पीने लगे।

डायना, भोज-कालोचित वस्त्र पहनने अन्दर गई। जगमोहन भी अपने साथ एक जोड़े के सूटकेस में कपड़े लाया था, वह भी कपड़े बदलने चला गया।

नौ बजे के लगभग विशाल भोजन-कक्ष में बड़ी मेज के चारों ओर सब बैठ गए। मेज पर सफेद मेजपोश बिछा था, उस पर दस मोमबत्तियां जल रही थीं। मेज अंडे के आकार की थी। कहीं कपड़े खराब न हो जाएँ, इसलिए वह लिए हुए रुमालों को सबने अपने शरीर पर बिछा लिया। पहले-पहल वे उप पदार्थ लेते हैं, फिर मुर्गों का मांस, अन्त पेस्ट्री आदि एक के बाद एक खाते हैं। बीच-बीच में वे सोडे में मिली व्हिस्की भी पीते जाते थे।

साढ़े दस बजे के करीब भोजन समाप्त हुआ। फिर वे तरह-तरह की शराबें भी पीते रहे।

जगमोहन ने डायना से पियानो बजाने के लिए कहा। फिर वे सब संगीत-कक्ष में गये। डायना ने पियानो बजाकर गाया।

उसके बाद डायना ने बजाया और मालिन ने गाया। पाश्चात्य संगीत में एन्नी इर्विंग्टन बहुत प्रसिद्ध है। यूरोपियनों की सभा में, वे

आकर गाते हैं और श्रोताओं का मनोरंजन करते हैं।

पाश्चात्य और भारतीय संगीत का स्रोत एक ही है। परन्तु भारतीय संगीत एक पृथक् मार्ग पर चलकर बहुत उन्नत हुआ। उसी मार्ग पर पाश्चात्य संगीत भी कुछ काल तक चला, फिर रुक गया। तब जर्मन आदि ने उसको पुनर्जीवन देकर नई परम्परा बनाई।

भारतीय परम्परा ने राग और ताल की वृद्धि की। पाश्चात्यों ने श्रुति को उन्नत किया। उनके लिए श्रुति मुख्य है, राग-गुण है, इसलिए उन्होंने दो या तीन राग लिये। भारतीय संगीत में राग अनेक हैं, ताल भी।

८ : एंग्लो इण्डियनों का सहवास

जगन्मोहनराव भारतीय संगीत का आनन्द नहीं ले पाता था। पाश्चात्य संगीत भी उसके हृदय को द्रवित न कर पाता था। दिखावे के लिए, मर्यादा के लिए वह उसे सुनने का अभिनय करता, पर वह अपने ही विचारों में मग्न रहता। गानेवाली स्त्री, अगर तरुण होती तो वह संगीत-सभा में जाता। वह गानेवाली के ओठ, कण्ठ, वक्ष, देखते-देखते अपनी कामुक कल्पनाओं में मस्त रहता। परन्तु दुनिया कहती कि जगन्मोहन राव बहुत ही संगीत-प्रिय है।

जब तक डायना क्वारी रही, उसका संगीत का सुनना तो अलग, वह उसके गले के सौन्दर्य और उसके बाल देखने में लीन रहा। उस औरत का उसकी प्रियतमा होना वह अपना भाग्य समझता था। उससे विवाह करने में अपने को धन्य समझता था, भले ही वह उससे दो वर्ष बड़ी हो, पर उस प्रकार के विवाह पाश्चात्य देशों में कितने नहीं होते? वास्तविक सभ्यता उन्हीं लोगों में है। उनकी तरह जीने वाले मनुष्य को और क्या सौन्दर्य चाहिए? कई लोग उसकी यह कहकर निन्दा करते कि वह एंग्लो

पाश्चात्य हमें नहीं अपनाते। उनका कहना है कि हमारी धमनियों में शुद्ध यूरोपियन रक्त नहीं है। इस तरह दोनों जातियों से बहिष्कृत हुए-हुए हमको शीघ्र ही अपने कर्त्तव्य और मार्ग का निश्चय करना होगा। हिन्दू देशों में हमारी जन-संख्या बहुत कम है, पर हम सारे देश में फैले हुए हैं। इसलिए हमारे वोटों की किसी को परवाह नहीं है। स्थानीय संस्थाओं में, विधान-सभाओं में हमें उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिलता। हमारे बहुत-से लोग रेलवेज में ड्राइवर, गार्ड, टिकट चैकर के तौर पर काम कर रहे हैं। अब तक रेलवेज अंग्रेजी कम्पनियों के हाथ में हैं, हमें नौकरी के बारे में डरने की कोई जरूरत नहीं? अगर वे सब सरकार ने ले लीं, और प्रजा का शासन आया तो हमारी क्या हालत होगी? आजकल यह आन्दोलन चल रहा है कि रेलवेज में अधिक भारतीयों को नियुक्त करना चाहिए, मिडलो ने यह कहा था, याद है?" रोजरिया ने पूछा।

जगन्मोहन—"हाँ, परन्तु एंग्लो इंडियन हर बात में अंग्रेजों के समान हैं, जब वे उन्हींकी सन्तान हैं तो मेरी समझ में यह नहीं आता कि वे डरते क्यों हैं?"

रोजरिया की पत्नी—"हमारा देश इंगलैण्ड है, हमें कभी-न-कभी वहाँ जाना ही होगा, एक अंग्रेज नेता ने कहा था, तुमने नहीं सुना?"

जगन्मोहन—"मैंने पहले ही कहा है कि आप इस तरह क्यों डर रहे हैं? यह ब्रिटिश सरकार नहीं जायगी, और जब तक यह सरकार है, कोई डर नहीं है।"

जेम्स—"राजा बहादुर, हम यह नहीं सोच सकते, हमें कभी-न-कभी अपने को भारतीय समझना ही होगा।"

रोजरिया—"भारतीय हमें अपनाते नहीं हैं, कह रहे हैं..."

जेम्स—"हाँ, क्योंकि हम अंग्रेजों के प्रिय शिष्य हैं इसलिए हम भारतीयों से बड़े हैं—हमें यह विचार छोड़ना होगा कि हमें दिखाकर उन्हें घृणा करनी होगी। जो भारत के हित को बातें हैं हमें भी उनमें हिस्सा लेना होगा। इसलिए रेल में काम करने वाले दूसरे भारतीयों से मिलकर ट्रेड यूनियन चला रहे हैं। हड़ताल आदि में भी हमारे आदमी उनके साथ मिलकर काम कर रहे हैं।"

रोज़—"बैंक का कहना ठीक है, हम इस देश में पैदा हुए हैं, इस देश में रहकर इसी देश की मिट्टी हो जायेंगे। क्या अंग्रेज़, डैन्स, जर्मन हमें अपने घरों में भोजन के लिए बुला रहे हैं? क्या हमसे वे रिश्ता कर रहे हैं? सिवाय हाथ-पैर के हमारे पास कुछ है नहीं, इसलिए हमें भारतीयों के स्वतन्त्रता-आन्दोलन में बिना पीछे हटे उनका साथ देना चाहिए और सरकार को अपनी कृतज्ञता राजभक्ति दिखाकर हमें उसकी कृपा का भी पात्र होना चाहिए।

डाल्सा—"आपका कहना ठीक है, पर यहां दोनों में दुराव दिखता ही?"

रोज़—"इस परिस्थिति से बचने के लिए मैंने यह मार्ग बताया है।"

डाल्सा इस सम्भाषण से ऊब गई। उसने डिस्को का नृत्य करना चाहा। भाई को वायलिन बजाने के लिए कहा और माँ को पियानो। गैरेल्ड वायलिन भी बजाते हुए 'डिस्को' नृत्य की मर्मांत-भंगिमा उतारने में रहे।

इन दोनों के बजाने पर [illegible] नृत्य समाप्त हुआ। रोज़रिता-दम्पति [illegible] चले गए। [illegible] डाल्सा के साथ ऊपर के कमरे में चला।

जेम्स कम्पाउंड में बेंच पर बैठकर '[illegible]' का घूंट पीने लगा।

२ नेम

अनन्या की शादी बड़े-बड़े ही धूम से हुई थी। वह बचपन से ही [illegible] थी। गोरा
२ रंग, भरा शरीर, लम्बे नयन, आकर्षक चेहरा। कॉलेज जमाने में भी वह [illegible]। उसके बाद अनन्या का घर पावन हो गया था। वह हृदय

उस गरीब परिवार की कन्या को बहू के रूप में चुनकर लाया था।

"क्या सौ रुपये दहेज देना काफी है? हमारा भाग्य अच्छा होना चाहिए। अगर अच्छा न हुआ भले ही एक हजार रुपये दहेज दो, बहू के घर में पैर रखते ही सब भस्म हो जाता है। मेरी बहू महालक्ष्मी है। देखते रहिये, हमारे लड़के का जीवन पावन हो उठेगा!" अक्सर सोमय्या अपने बन्धु-बान्धवों से यह कहा करता। गहने पहनकर मुस्कराती, लक्ष्मी-सी सूरम्मा सुब्बाराय के पिछवाड़े में आई।

जब वर-वधू, जानकम्मा और सुब्बाराय के दर्शन करने आये तो सुब्बाराय ने उनको सौ रुपये दिये, गृहस्थी के सुख-दुखों के बारे में समझाया। सत्तय्या से पत्नी को फूल की तरह रक्षा करने के लिए कहा। फिर उन्होंने आशीर्वाद दिया 'दीर्घायुरारोग्याभिवृद्धिरस्तु दीर्घ सुमंगली भव, पुत्रपौत्राभिवृद्धिरस्तु !'

"बेटी, सास-ससुर का मन न दुखाना, ठीक तरह रहना, उनकी सेवा करना! सत्तय्या, इन रुपयों से इसके लिए गहने बनवाना! तुम दोनों-जोड़े को देखो!" जानकम्मा ने आशीर्वाद देकर वधू को एक साड़ी, सिन्दूर, हल्दी, नारियल वगैरह दिये।

अगले दिन सोमय्या धान बोये हुए खेतों में निराई करवाने गया। कुंकुम, कोलामणि, भद्रगट्टु, मकुल, कृष्णकाटुकलु[1] और सुब्बाराय के घर के खर्च के लिए पाटगड़[2] पालाटोमम[3] बोये गए थे। खेतों में धान काफी बड़ा हो गया था। पहले ही अस्सी एकड़ की निराई हो गई थी। बाकी बीस एकड़ में हरिजन निराई कर रहे थे। सोमय्या ताड़ के पत्ते की छतरी लगाकर मेड़ पर बैठा काम देख रहा था।

हरिजनों के मुखिया बूढ़े नागन्ना ने कहा, "आजकल के लौंडे भला काम करते हैं? देख ले इधर, गप्पें मारते हैं, काम नहीं करते हैं,—अपने सुख-दुःख कर।"

गोमय्या—"ये दोनिगा, क्या है ये? निराई कर रहा है या चर रहा है? क्या मालूम है कलवार? इसे जड़ से निकाल, नहीं तो क्या फिर

१. २. ३. धान के विविध नाम।

नहीं डरेंगे ? नागन्ना देख उसका काम; अगर काम ठीक न किया तो मजदूरी न मिलेगी। उस लड़की को देखकर ही कम-से-कम कामकर, नहीं मार-मारकर पीठ सीधी कर दूँगा।"

नागन्ना—"बाबू, अब इनका काम बेकार है, बड़ों की बात सुनें तब न ?"

सीनप्पा—"अबे मुखिया, अच्छी कहानी सुना,—सुनते-सुनते काम अच्छा करेंगे, ठूँठ की तरह खड़े हैं, काम के नाम पर रोते हैं।"

नागन्ना—"गा-गाकर सुनाऊँगा, इन सबको हाँ-हाँ कहने के लिए कहिये!"

सब—अन्दर—जी, हाँ—स्वर हाँ-हाँ करने लगे।

नागन्ना ने कहानी सुनानी शुरू की।

"एक देश में एक शहर था न ?"

"हाँ, हाँ,"

"उस नगर के थोड़ी दूर पर हरिजनवाड़ा था। उस हरिजनवाड़े में दो सौ घर थे। सब एक-से-एक सटे हुए।"

"हाँ!"

"उस हरिजनवाड़े का मुखिया, राजाओं के यहाँ नौकरी-चाकरी कर-करके अब उनको लगान देता रहता, बड़ा वफादार था न वह ?"

"हाँ।"

"उस मुखिया के पास भूमि, पशु, घर, धन-सम्पदा, सब थीं। माथ पर लगाके भी कोपीन पहने, इसी लिये जब वह गली में निकलता तो देखते ही बनता था। वह बड़ा भक्त था। हमेशा भजन किया करता, पढ़ता, गाता। उसे कृष्ण-साक्षात्कार दिखाई देते। वह जो कहता, सब निकलता। अगर उसने विभूति दी तो भूत-प्रेत भी रफू-चक्कर हो जाते। हाथ उठाते ही बीमारी काफूर हो जाती। भगवान भी उसके पुकारने पर 'हाँ' कहा करते।"

"हाँ!"

"उसका एक लड़का था। उसे न भगवान् का डर था, न भूत का ही। वह भूतों से भी अधिक ताकतवर था। राक्षसों-जैसी शक्ति थी उसमें। नाद की तरह उसका पेट था। उसे देखते ही सब काँपते थे।"

"हूँ।"

"उसका नाम मन्नन था। वह मछलियों पर नज़र गाड़े देखकर [illegible] उछलता। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] पानी में देखना [illegible] [illegible] किसी [illegible] से [illegible] [illegible] सिर पर [illegible] [illegible], जैसे किसी [illegible] [illegible] देखता हो [illegible] [illegible] [illegible] है वैसा।"

"हाँ!"

"न [illegible] देखना न [illegible] का [illegible] [illegible] उन [illegible] के पीछे पड़ता, वह पेट के लिए करता, वह पेट के लिए करता। कभी, एक बार पूछने पर, वे बड़ा [illegible] नहीं हूँ?' वह [illegible] मूँछें मरोड़ता।'

"हाँ!"

"[illegible], [illegible], [illegible] [illegible] जब [illegible] आती तो वह ऐसा पीछे पड़ता मानो [illegible] [illegible] में ही [illegible] हो। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] तो ऐसा [illegible] मानो [illegible] न [illegible] [illegible] [illegible] हो।"

"हाँ!"

"[illegible] [illegible] न [illegible] न [illegible] की बात सुनता। [illegible] [illegible] भी उसे [illegible] न था।"

"हाँ!"

"सब गाँव के बड़े बूढ़ों, छोटे-मोटे आदमी, [illegible] [illegible] में उसकी शिकायत करने की वह बड़ा काइयाँ, [illegible] नहीं तो बस, घर में नहीं तो [illegible] में, आदमी नहीं [illegible], कोई-न-कोई उसे [illegible] [illegible]। वह [illegible] [illegible] नहीं है। वह आदमी नहीं है। उसकी बुराई उसे [illegible] हो।"

"हाँ!"

"[illegible] [illegible] की तरह था। उसके [illegible] के लिए [illegible] और [illegible] की तरह थे। उसके [illegible] [illegible] [illegible] के समान बन था।"

"हाँ।"

"उस [illegible] के पेड़ [illegible] तालाब के किनारे [illegible] [illegible] की [illegible] थी। उसके उसकी [illegible] [illegible] की [illegible] थी। वह [illegible] [illegible] की पत्नी थी। उसको देखकर [illegible] और [illegible] [illegible] थी।

चमचमाता शरीर, मुलायम हाथ, चाँद-सा मुखड़ा, तारों-जैसे दाँत, चढ़ती जवानी में थी।"

"हाँ!"

"उसका पति गोदावरी की तरह सीधा आदमी था। नीला और उसके पति पीपल-नीम की तरह, कबूतरों की जोड़ी की तरह एक-दूसरे को बिना छोड़े प्रेम से रहते।"

"हाँ।"

"पति किसी काम पर हैदराबाद गया था। इसलिए वह मैहर चली आई थी। बब्बर शेर को जैसे भी दीख गई हो, मकर की नजर भी नीला पर पड़ी।"

"हाँ,"

"जब उसने उस लड़की को देखा उसका मन उसके काबू में न रहा, 'अगर उसे न पाऊँ तो यह जन्म किस काम का? यह शक्ति किस काम की? जिन्दगी किसी काम की?' उसने सोचा। उसने नीला के पिता के पास आम, केले, साड़ी वगैरा भेजी। नीला के पिता ने वे सब चीजें ले जाकर उसीके घर में पटक दीं। और उसके पिता से उसने कहा 'तेरे लड़के की करतूतों की कोई हद नहीं है, तू जरा उसे ठीक कर दे तो हम सबको खुशी होगी'।"

"हाँ।"

"उस दिन नीला को तालाब से पानी लाने के लिए जाता देखकर मकर ने कहा, 'तेरी आँखों पर मेरा दिल है, तेरे शरीर पर ही मेरी नजर है, तेरे हाथ, तेरी पीठ, तेरी खूबसूरती ने मुझे कुत्ता बना दिया है। आ, तू और मैं, मिलकर रहें। अपने पति को भगा दे, उसे जितने पैसे की जरूरत होगी मैं दे दूँगा। मैंने इतनी किसी की खुशामद नहीं की है, मैं तेरा गुलाम हूँ। तेरे सामने मेरा बल पानी-पानी हो गया है, मुझे बचा।' नीला डर के कारण काँप गई। 'अरे, भाई मैं तो तेरी बहन हूँ, क्या तुम्हें इस तरह करना चाहिए।' उसने कहा। वह दो-तीन बार उसकी खुशामद करता रहा, आखिर उसने उसकी साड़ी पकड़ ली, हाथ पकड़ लिया।"

"हाँ!"

"हाथ छुड़ाकर वह भाग गई। 'यह दो नहीं सुनेगी। जबरदस्ती करनी ही होगी, बड़ा कड़ा दिल है। जो इसका चुम्बन कर सके उसीका जन्म सार्थक है।' वह सोचने लगा।"

"हाँ!"

"एक दिन अन्धेरा होने के समय, बाप को खलिहान में भोजन देने के लिए आती हुई अकेली लाला को उसने देखा। उसका शरीर फूल-सा गया, उसकी आँखें लाल हो गईं, उसका दिल थम-सा गया। वह बैरागी, इमली के पेड़ के पास अपने साथियों के साथ छिपा हुआ था। 'मेरी, मेरी, तेरी आँखें पिघलें, तेरा दिल पिघले, आ मेरे हाथों में आ,' कहता-कहता वह उस पर कूद पड़ा। वह हिरणी की तरह भाग गई। उसे मनाया, डराया, जाने कैसे उसके हाथ से वह निकल गई। 'अरे आदमी, बचाओ!' चिल्लाती-चिल्लाती वह भागती जाती थी। वह आगे-आगे थी और पीछे-पीछे मगर और उसके दोस्त। मालूम नहीं कैसे वह वेंकटदास के घर में जा गिरी।"

"हाँ!"

"वेंकटदास ने पूछा, 'क्या बात है? बेटी, डरो मत' उसको पकड़कर कुछ कहता-कहता, वह घर का दरवाजा बन्द करने जा रहा था कि मगर दरवाजा धकेलकर अन्दर आ गया। ऐसा लग रहा था, जैसे किसी भूत ने उसे पकड़ लिया हो। पिता को देखकर वह रुक गया, और उसके साथी दरवाजे के पास ठहर गए।"

"हाँ!"

"वेंकटदास-'राम राम, अरे ब्राह्मन घर में घुसा तो मेरी जान चली जायगी, तेरा बुरा समय यहाँ तक आया है। तू गलती से मेरे घर में पैठा हुआ है, मेरी भक्ति खराब न कर,' कहता-कहता रास्ता रोककर खड़ा हो गया।"

"हाँ!"

"पर उसने पिता की परवाह की, न दुनिया की। पिता से बचकर वह काँपती हुई लाला पर जा पड़ा। पिता ने उसे खींचना चाहा, अलग करना चाहा। उसने पिता को धक्का दिया, वह घोड़े की तरह दूर जा गिरा।"

"हाँ!"

"मकर पिशाच-सा हो गया, नीला की साड़ी उतारकर उसने कोने में फेंक दी? चमचमाता हुआ उसका शरीर सिकुड़-सा गया। तब क्या था? मेरा सूअर हो गया, व्याघ्र हो गया, जंगली भैंसा हो गया, उसने भी अपने कपड़े फेंक दिये। उसे इसका भी ख्याल न रहा कि पिता देख रहा है, दोस्त देख रहे हैं, वह नीला पर ।"

"कोने में लपेटे हुए कपड़े की तरह, झाड़ू की तरह, वेंकटदास पड़ा कह रहा था, 'राम-राम, हे महाप्रभु, रक्षा करो,' उसने आँखें, खोलकर देखा। उसने मकर को उन पर पड़ता देखा। वह लड़की चिल्लाई, 'वेंकटदास पिता जी, मुझे बचाओ, बचाओ! वह उसके साथ झगड़ रही थी, सुन नहीं रही थी।"

"हाँ!"

"हुंकारता, क्रुद्ध, वेंकटदास उठा। उसमें जाने कहाँ से हजार हाथियों का बल आ गया। उसने काली को बलि देने के लिए, बकरी को काटने का गड़ासा उठाया, 'अल अल अल, भैरव हूँ, आकाश भैरव हूँ,' उसने तीन बार गड़ासा फिराकर, लड़के के गले पर धर दे मारा, सिर दूर जा गिरा, धड़ छटपटाने लगा। 'हुई, अलल अलला,' वेंकटदास अपने लड़के का खून अपने शरीर पर पोतकर 'मैं भैरव हूँ, मैं आजनेय हूँ,' कहता-कहता गली में निकल गया। उसे जाने कहाँ से ताकत आ गई, फिर मकर के दोस्तों के पीछे उसने भागना शुरू किया। उनमें से दो का काम-तमाम कर दिया। बाकी चिल्लाते-चिल्लाते इधर उधर भाग गए।"

"हूँ।"

"तब भी उसका प्रभाव न हटा, धुआँ किया गया, नारियल चढ़ाये गए, मुर्गियाँ मारी गईं, खून मुँह पर छिड़का गया, तब जाकर उसका असर हटा। वेंकटदास को होश आया। यह देखकर कि लड़के और उसके दोस्तों को उसने मार डाला है, "वेंकटदास, 'सीताराम तेरी दया' कराहता-कराहता दो दिन चारपाई पर पड़ा रहा? फिर सीताराम में मिल गया। नीला का सतीत्व जब भ्रष्ट हुआ था, तभी उसने आँखें मूंद ली थीं, फिर उसने आँखें न खोलीं, वह मर गई।"

"हाँ।"

"जब नीला के पिता को पता लगा कि उसकी लड़की मर गई है, वह भी छुरी लेकर, मकर के सब दोस्तों को मार आया। और खुद जाकर नदी में डूब मरा।"

"हूँ।"

१० : नौकर

शंनो मित्र शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा,

शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः।

भारत देश प्रकृति-प्रधान देश है। अगर हम इतिहास का परदा हटाकर देखें तो जानेंगे कि यह देश सदा से कृषि-प्रधान रहा है। सुब्बाराव बैठे हुए यह सोच रहे थे, 'हे वरुण देव! हमारे खेतों को वर्षा से सींच। हे इन्द्र! तेरे सप्त वर्ण धन हमें आनन्दित करें। हमारी भूमि को फलवती करो!' ये आर्य सूक्त उनके मन में प्रतिध्वनित हो रहे थे।

सुब्बाराव हमेशा अपने को देश की गति-विधि से परिचित रखते। वे 'आन्ध्र', 'कृष्णा पत्रिका' पढ़ा करते थे। जो कोई पत्र-पत्रिका आन्ध्र में प्रकाशित होती, वे उसे जरूर मँगाते। 'आन्ध्र प्रकाशिका' मँगाते थे, 'मनोरमा' मँगाते थे। आन्ध्र-भाषा-वर्धिनी-समाज, विज्ञान चन्द्रिका मण्डली आदि कई प्रकाशन-संस्थाओं के वे सदस्य थे। वे हर पुस्तक को गौर से पढ़ते, और उसके विषय को याद रखते। उनके पास दस हजार के करीब पुस्तकें थीं। एक आदमी को रखकर उनको उन्होंने विषयानुसार सूची भी बनवाई थी। संसार में क्या-क्या फसलें कब-कब पैदा होती हैं, यह जानने के लिए उन्होंने भूगोल-शास्त्र भी पढ़ा था। इसलिए पाश्चात्य विद्या में शिक्षित नारायणराव और राममूर्ति भी उनसे बातें करते दंग रह जाते

थे। नारायणराव ने वे अंग्रेजी की अर्थशास्त्र की पुस्तकें पढवाकर सुनने। चर्चा करके उनका अर्थ समझने। उन देशों में कितनी आय थी और कितना कर! आय और कर का क्या सम्बन्ध है, आदि विषय मालूम करते।

भारत देश में और वस्तुओं की तरह भूमि का दाम भी अच्छा था। जब से युद्ध शुरू हुआ था, तब से दाम और भी बढ़ गए थे। भूमि का दाम चढ़ता देखकर लोग अधिक खर्च करने लगे, अधिक व्यय के कारण कर्ज बढ़ते जा रहे थे। सुब्बाराव सोच रहे थे, न जाने यह देश किधर जा रहा है। सूद बहुत बढ़ गया था। मारवाड़ी साहूकार सौ पर तीन-चार रुपये महीने का सूद वसूल कर रहे थे। उन्होंने प्रतिज्ञा कर रखी थी कि आठ आने या दस आने से अधिक वे कभी न लेंगे। उधार देते समय ही साहूकार अपना कमीशन ले लेते थे, सौ रुपये पाने वाला सचमुच छियानवें ही पा रहा था बाकी पाँच रुपये कमीशन में चले जाते। इनके अलावा मुनीम वगैरा को मामूली देना पड़ता। उधार लेने के बाद सूद पंजाब मेल की रफ्तार से बढ़ता जाता।

"भाई, ये जो दाम हैं, देखने लायक नहीं है। जाने यह युद्ध क्यों आया, सब जगह दाम बढ़ गए हैं। खैर, इन दस वर्षों में हमारे लोग पहले की तरह रहते तो कर्ज चुकता हो जाता, और पांच-दस रुपये बचते भी। तू मेरे पास कर्ज के लिए आया है। जब तक ये दाम हैं, तू कर्ज चुका नहीं पायगा, और तुझे जमीन बेचनी पड़ेगी। नौकरी करके किसी ने पैसा कमाया हो तो वह खरीदेगा। उस तरह के आदमी क्या हमेशा मिलते हैं? क्यों भाई वसन्तय्या?" उन्होंने गोपालपुर के बड़े किसान वसन्तय्या से, जो उनके पास कर्ज लेने आया था, पूछा। वसन्तय्या को भूमि को रेहन रखकर चार हजार रुपये चाहिए थे।

"अपने-आप खेती करने से कभी फायदा हुआ है? हम अपने पिता जी के जमाने से खुद खेती कर रहे हैं। एक साल भी फायदा नहीं हुआ। कितनी ही फसल हो, इन करों के चुकाने में ही सब खतम हो जाता है। यही नहीं, हर घड़ी देश से बाहर धन जा रहा है, इस कारण और भी आफत आ पड़ी है।"

"यह क्या कह रहे हैं। जिसे देखकर हम कहते हैं मोटा-ताजा है, वह भी

अन्दर से खोखला है।"

"इसका क्या कारण है?"

"कर्ज !"

"कर्ज क्यों होता है?"

"अभी तक आप जो कारण बता रहे थे वे ही हैं। बिना कुछ सोचे, कर्ज कर बैठे। हमारे छुटपन में चाँदी के गहने होते थे। कर्ज न लिया होता तो अब सोना कहाँ से आया होता? जब से युद्ध शुरू हुआ तब से सोना खरीदना शुरू किया है। हम पर कर्ज सवार है और औरतों के बदन पर सोना-ही-सोना है।"

"हाँ, कम-से-कम यहाँ सोना तो दिखाई दे रहा है। और खर्चों के बारे में क्या कहते हो? हाँ बाबू, बच्चों की तालीम का खर्च हमारे दोनों लड़के, एक राजमहेन्द्रवर कालेज में, और दूसरा हाई स्कूल में पढ़ रहा है, पैसा निगल रहे हैं।"

"मैं यह नहीं कहता कि शिक्षा खराब है, हम पढ़ने-लिखने के लिए बच्चों को क्यों भेज रहे है? युद्ध से पहले पढ़े-लिखे कम थे, इसलिए उन्हें नौकरियाँ मिल गई थीं। उनके हाथ में हमेशा दो-चार रुपये रहते हैं। हम किसानों के हाथों में फसल कटने पर ही दो-चार रुपये आते हैं।"

"जी हाँ!"

"तब हमारे लोग नौकरी के पीछे पड़े। भूमि छोड़ दी, और पढ़ाई ।: जाती रही। हमारे देश में शिक्षा जितनी मंहगी है उतनी और कोई चीज नहीं। पहले शिक्षा का आन्तरिक मूल्य अधिक था। शुल्क, पुस्तक, होस्टल, कापी, होटल, इन सबके खर्च के लिए रुपया पानी की तरह बहाना पड़ता है। इतना खर्च करके वह भला क्या बनेगा? हाँ, तुम अब्राह्मणों के लिए फिलहाल पढ़ाई का फायदा हो सकता है, परन्तु ये शिक्षा हमें आगे उजाड़कर ही रहेगी। हम जानते हैं कि नौकरी के लिए पढ़ना कतई मूर्खता है, इसलिए कृषि करते हैं तो नुकसान-ही-नुकसान होता है।"

"मैं तीन एकड़ की खेती कर रहा हूँ, चार सौ पचास बोरे से अधिक धान होता है। कर आदि के लिए अस्सी बोरे चले जाते हैं। नौकर, कुली, मजदूर, बीज के लिए सौ बोरे और चले जाते हैं। बच बचे हुए

२२० बोरों में से घर के खर्च के लिए पचास बोरे चले जाते हैं। २३० बोरे बेचने पर १३८० रुपये मिलते हैं, जिसमें साल-भर गुजारा करना होता है। इसीमें पढ़ाई का, कपड़े का खर्च है। बाबू, हमारी कमाई औरतों के कपड़ों के लिए भी काफी नहीं है।"

"खर्च तो और भी हैं। मुकदमा, फौजदारी, रजिस्ट्री, बेचने की रजिस्ट्री, खरीदने की रजिस्ट्री, रिश्वत, रेल, मोटर, कितने ही खर्च हैं, और अगर कहीं शादी आ गई तो भगवान् भला करे।"

"हाँ, अब तीसरी लड़की की शादी का खर्च सिर पर है। अब तक जो शादियाँ की थीं, मेहनत करके उनका कर्ज चुका दिया है। मामला पुराना कर्ज पन्द्रह सौ, और इस विवाह के लिए खर्च। कुल मिलाकर चार हजार पाँच सौ रुपये चाहिएँ।"

"कहाँ का रिश्ता है?"

"पुल्ल गाँव का। खूब पैसे वाले हैं। छोटा लड़का है, हमारे लड़के के साथ राजमहेन्द्रवर में पढ़ रहा है। दहेज चार हजार और अन्य खर्च के लिए पन्द्रह सौ रुपये।"

"शादी का खर्च दो हजार, चार हजार पाँच सौ रुपये कैसे काफी होगा?"

"घर में कर्ज चुकाने के लिए पन्द्रह सौ रुपया रखा है, मेरी पत्नी ने एक हजार दिया है।"

"तुम बड़े किसान हो, तीस एकड़ जमीन मेरे पास रेहन रखने की जरूरत नहीं है। बीस काफी है, दस किस्तें हैं, सूद वही आठ आना। चाहिए तो पन्द्रह भी और ले जाओ।"

"जो कर्ज मैं ले रहा हूँ, उसे मुझे ही चुकाना होगा। मैंने आपके कर्ज के सिवाय कहीं और कर्ज नहीं लिया है। मैं आपके सिवाय किसी और के पास कर्ज माँगने भी नहीं जाता हूँ।"

प्रोनोट लिखाने के लिए मुहूर्त निश्चय करके वसन्तय्या चला गया।

सुब्बाराव हर रोज अपने खेत देखने जाते। उस दिन शाम को वसन्तय्या को भेजकर अन्दर जाकर कपड़े पहनकर, अच्छा, चुरट सुलगाकर चाँदी से जड़ी छड़ी लेकर, किम किरदार चप्पल पहनकर, बूढ़े नौकर-

चाकर, दो किसान और एक क्षत्रिय किसान को साथ लेकर वे खेत देखने निकले।

रोज इस तरह जाना मुत्थाराय की आदत थी। कभी-कभी बाग देखने जाते। कौन-सा खेत किस हालत में है, वे स्वयं देखते। बैंगन, जौ, अरहर, मूंग, मिर्च, हल्दी उनकी भूमि में खूब फलते।"

अन्धेरा होने तक वे खेतों में घूमते रहते। चिराग जलने के बाद वे घर आते। घर आते ही नाई उनके पैर दबाता। फिर जाड़े में गरम पानी से स्नान करते। नहीं तो ठंडे पानी में नहाते। तब सन्ध्या करते।

मुत्थाराय को कभी बोल्शेविज्म का ख्याल आता, 'संसार में कब तक लोग यह कहते रहेंगे, यह मेरी सम्पत्ति है, यह मेरा पैसा है, सम्पत्तिहीन निर्धन सम्पत्ति वाले धनिकों से अधिक हैं न। अगर वे निश्चय कर लेंगे तो भला धनी कहां रहेंगे?'

'इन सेनाओं को रोकना होगा। मनुष्य का हृदय कितना अजीब है। सिवाय रूस के क्या कहीं दूसरे देश में प्रजा तथा सेना ने विद्रोह किया है? और देशों में जहां राजा पद-च्युत किये गए हैं, वहां राजा के कर्मचारियों और रईसों ने ही बलवा किया था, सैनिकों न या कम वेतन पाने वालों ने नहीं किया था अर्थात् पैसे में एक प्रकार की सम्मोहन-शक्ति है। रईस को देखकर मामूली आदमी कितना ही घबराता है। हाथ-पैर नहीं हिला पाता। रूस की बहुत हीन स्थिति रही होगी। नहीं तो वहां के गरीब क्रांति न करते।' यह सोचते-सोचते मुत्थाराय मौन कर रहे थे।

'नारायण आदि का कहना है कि प्राचीन भारत में बोल्शेविज्म से भी उत्कृष्ट राज्य-पद्धति थी। मालूम नहीं, वह कहां तक सच है। आजकल पैसा छोड़ने के लिए कौन तैयार है। गान्धी-सरीखे महात्मा व्यक्ति देश में पांच-दस ही तो हैं।'

११ : विष-बीज

शारदा दिन-प्रतिदिन बड़ी होती जाती थी, उसका सौन्दर्य भी बढ़ता जाता था।

वह अपना सौन्दर्य जानती थी। वह यह भी जानती थी कि वह और भी सुन्दर होगी। सवेरे से लेकर रात में सोने तक उसे अपने सौन्दर्य का ख्याल रहता। सगीत सीखते समय, पाठ पढ़ते समय, बाजार में कार में जाते समय, भोजन करते समय वह सोचा करती कि दूसरे उसका सौन्दर्य निहार रहे हैं। अगर कोई उसे लगातार देखता तो उसका मन गद्‌गद् हो उठता।

'पर पुरुष व चरित्र' ये शब्द अभी उस बालिका के मन में न आये थे। वह अभी स्त्री-पुरुष के परम रहस्यपूर्ण कृत्यों से परिचित न थी। उसके मन में कामेच्छा, कली की तरह थी। उसका स्त्रीत्व अभी उसके सौन्दर्य में ही प्रकट हो रहा था।

उसने सुना था कि दशहरे की छुट्टियों में ससुराल वाले आयेंगे। ससुराल वालों का इस तरह बात-बात पर आना उसे गवारा न था। पैसे न होने की वजह से तो नहीं, पर किसी बहाने जमींदार के घर रहने आ रहे हैं क्या? फिर भी उसकी सास एक ही बार उसके घर आई थी। उसके ससुर आये ही न थे। उनकी ससुराल भी अच्छी खाती-पीती थी। उनका बगीचा उसके बगीचे से कहीं अच्छा था।

कुछ भी हो, शारदा को ससुराल वालों से प्रेम न था। शायद इसलिए ही जगन्मोहनराव मद्रास जाता-आता जब राजमहेन्द्रवर उतरता तो शारदा ने बढ़-चढ़कर, हँस-हँसकर उससे बातें कीं। गृह-प्रवेश के दिन, कोतपेट में किये गए सत्कारों का उसने परिहास किया।

जगन्मोहन शारदा को देखकर चकित हो गया। उसने सुन रखा था कि वह रजस्वला हो गई है। यौवन के साथ स्त्रियों में कितने ही परिवर्तन हो सकते हैं। वह सोचा करता।

'यह कन्या, यह जगन्मोहिनी, जिसको कभी मेरी रानी होना चाहिए था, किसी मूर्ख को दे दी गई थी। अगर वह मेरी पत्नी होती तो मैं उसे इंगलैंड ले जाता। उसकी फूलों से पूजा करता। जमींदारनी अगर कोई

है तो यही है। अगर मुझे मालूम होता कि इसका सौन्दर्य इस प्रकार निखरेगा, तो मैं इसका विवाह ही न होने देता। कितने ही तरीके हैं। तब मेरे फूफा क्या करते ? आखिर उन्हें शारदा की शादी मुझसे ही करनी पड़ती। मेरी मित्र एंग्लो इण्डियन लड़कियाँ, वेश्याएँ, शारदा के सामने क्या हैं ? अगर यह पैट्रोमैक्स लैम्प है, तो वे निरी लालटेन हैं।' जगन्मोहन सोचता।

उसका स्निग्ध सुन्दर शरीर, गहना, कपड़े देखकर वह मन-ही-मन पुलकित-सा हो जाता। किसी-न-किसी बहाने शारदा से बातें करता। उसके साथ बैठा रहता। उसे घूरता रहता।

उसके मन में होने वाली खलबली को उसकी बूआ ने शान्त किया। वरदकामेश्वरी अपनी भाई के लड़के को बहुत चाहती थी। भले ही उसके हृदय के अन्तरतम भाग में अपनी सन्तान के लिए कितना ही प्रेम हो, पर वह अपने लड़के-लड़कियों से अधिक जगन्मोहन राव को ही पसन्द करती थी।

"क्यों मोहन, भाभी क्या विशाखपट्नम में है ? तू क्या मद्रास जा रहा है ? बूआ से प्रेम है, इसलिए थोड़े ही आया है। कितनी बार मद्रास गये हो पर कितनी बार यहाँ उतरे हो ?"

"बूआ काम रहता है ? मैं भी फूफा की तरह शासन-सभा का सदस्य होने का प्रयत्न कर रहा हूँ। पता नहीं क्या हो, इसलिए आज मद्रास जा रहा हूँ। फिर भी तुम्हें और शारदा को देखने यहाँ उतर गया। बूआ, शारदा बड़ी खूबसूरत हो गई है।"

वरद०—"जिसको तेरी पत्नी होना चाहिए था, उसके भाग्य में यह लिखा है। तुम दोनों की क्या अच्छी जोड़ी होती ? सब तरह तुम दोनों अच्छे थे। मेरी आँखें भी निहाल हो जातीं। तेरी खूबसूरती की बराबरी शारदा करती है, और शारदा के सौन्दर्य का मुकाबला तू कर सकता है। दोनों मन्मथ-रति की तरह रहते। मैं तुम्हारे फूफा का मतलब समझ नहीं पाती हूँ। मुझे दामाद को देखकर—"

जग०—"यों न कहो, बूआ ? क्या वह किसी से कम सुन्दर है ?"

वरद०—"सुन्दर ? बड़ा राक्षस है।"

जग०—"शारदा देव-कन्या की तरह है।"

वरद०—"इसको ससुराल कैसे भेजूं, यही सोचकर मैं सूखती जाती हूँ।"

जग०—"तो क्या जमाई को घर में ही रखोगी ?"

वरद०—"घर में ? उसे देखते ही मुझे डर लगता है। अगर रोज उसे घर में देखना पड़ा, तो मैं मर ही जाऊँगी।"

माँ और जगन्मोहन की बातचीत शारदा सुन रही थी। उसको उनकी बातचीत विचित्र न लगी। उसकी माँ ने कई बार उसके सामने जमाई की निन्दा की थी, बुरा-भला कहा था। वह भी ससुराल वालों के प्रति घृणा-सी करने लगी थी। सूर्यकान्त को वह अब भी चाहती थी। उसे यह गर्व होने लगा था कि वह बड़े घर में पैदा हुई थी। [illegible] -कान्त के बारे में सोचते समय वह उस पर तरस खाया करती थी।

'और पति ? पिता जी उसको क्यों इतना चाहते हैं, लोग कहते हैं वह बुद्धिमान है। आजकल के उपन्यासों के नायक-नायिकाओं की तरह मैं किसको प्रेम कर रही हूँ। सब कहते थे कि मैं सुन्दर हूँ। मुझ-जैसी सुन्दर लड़की के लिए योग्य पति कौन है ?' वह हमेशा सोचा करती।

"शारदा क्या सोच रही हो ?" जगन्मोहन राव ने पूछा।

"कुछ नहीं।"

उन दोनों को वहाँ छोड़कर वरदकामेश्वरी देवी अन्दर चली गईं।

"पति के बारे में सोच रही हो ?"

"छी !"

"छी, क्या, क्यों छी, खैर, मुझे क्या पड़ी है ? तू इतनी सुन्दर हो गई है ? मैंने कितनी ही सुन्दर स्त्रियों को सिनेमा में देखा है, पर तुम-जैसी कोई नहीं देखी है।"

"तू हमेशा तारीफ करता रहता है।"

"तारीफ ? मैं तो सच कह रहा हूँ शारदा, अगर आज विश्व-सुन्दरी का चुनाव हो तो तू चुनी जायगी। मैंने दुनिया देखी है, अंग्रेज युवतियों को देखा है, दूसरे देशों की स्त्रियों को देखा है, जमींदारनियों को, कर्मचारियों की स्त्रियों को—कितनों को ही देखा है। पर तेरी बराबरी कोई नहीं कर सकता।"

"तो तू भी पिता जी की तरह शासन-सभा का सदस्य होने जा रहा है ?"

"हाँ।"

जगन्मोहन ने शारदा के पास जाकर उसकी कमर में हाथ डाल दिया। "हम दोनों एक-दूसरे के लिए बिलकुल ठीक हैं। यह भगवान् क्यों इस तरह के ऊटपटांग काम करता है। इंगलैंड में अगर विवाह ठीक न हो तो रद्द किया जा सकता है। यहाँ वैसा नहीं करते। विवाह रद्द कर दिया तो उन देशों में बार-बार शादी की जा सकती है।"

शारदा ने नाक-भौं सिकोड़ी।

"शारदा, तुम इस साल स्कूल-फाइनल दे रही हो न? परन्तु हम जमींदारों के लिए भला परीक्षाएँ किसलिए? शिक्षा नौकरी के लिए ही है न?"

"तो क्या पिता जी ने नौकरी के लिए पढ़ा-लिखा था?"

"तुम्हारे पिताजी जमींदार हैं। उनका पढ़ना-लिखना सचमुच एक बड़ी बात है। परन्तु मामूली लोग क्यों पढ़ते हैं? नौकरी के लिए ही न?"

"रईस बड़प्पन के लिए ही तो पढ़ते हैं।"

"उनका सिर, क्या बनिये बड़प्पन के लिए पढ़ते हैं?"

"तो फिर क्यों?"

"यो ही।"

"पर हम-जैसे जमींदारों के लिए पढ़ना-लिखना भी एक शौक है। शौक न हो तो न पढ़ने से कोई हानि भी नहीं है।"

"अच्छा, तो बता, तेरे लिए मद्रास से क्या लाऊँ?"

"मुझे कुछ नहीं चाहिए।"

"शारदा, क्या तू मुझे चाहती है?"

शारदा ने कुछ न कहा। वह केवल मुस्करा दी। 'मुझे नहीं मालूम।' का उसने संकेत किया।

"इंगलिश वाले कहते हैं कि कोई चुप रहे तो इसका अर्थ स्वीकृति है। तुम क्या कहती हो? बताओ भी?"

शारदा मुस्कराना खत्म करके कुछ सोचने लगी।

"शारदा, तुम्हें देखकर अगर कोई मुग्ध हो जाय तो वह आदमी नहीं

है। तुम्हें देखकर ऋषि भी प्रेम करेंगे। फिर मुझ-जैसे का तो कहना ही क्या?"

इतने में शारदा का भाई कुमार राज केशवचन्द्र राव वहाँ भागा-भागा आया। वह पाँच साल का था।

"बहन, आज मेरा कुत्ता कल के सरकस वाले कुत्ते से भी अधिक खेल कर रहा है।" उसने कहा।

"क्यो, तू भी सरकस चलायगा?" जगन्मोहन ने उससे पूछा।

"बड़ा सरकस रखूँगा, पिताजी के पास घोड़े तो हैं ही, हाथी और तीन शेर खरीदूँगा।"

"कितनी कीमत पर खरीदोगे भाई?"

"सौ रुपये, नही लाख रुपये खर्च करके खरीदूँगा।"

१२ . केशवचन्द्र राव

कुमार राज केशवचन्द्र राव शारदा के बाद तीन बच्चे मर जाने के उपरान्त पैदा हुआ था। वह लड़कियो की तरह सुन्दर था। मक्खन-जैसा मुलायम था। बहुत लाड़-प्यार से पाला गया था। बड़ी बहन से अधिक वह छोटी बहन को ही चाहता था। वह माँ का तो बहुत ही लाडला था। वह उसे जमीन पर पैर नहीं रखने देती थी। हमेशा डाक्टरो का आना-जाना रहता। उसे कुछ हुआ कि नही उसकी माँ न सोती, न खाती, उनके प्राण उस बच्चे में ही अटके रहते।

पिता लड़के को देखकर फूले न समाते थे। वह बच्चो को पास बुलाकर कम ही बात करते थे। कभी वे एकान्त में लड़के का आलिंगन करके उसका मस्तक चूमा करते थे।

केशवचन्द्र की बातें मीठी-मीठी थी। वह लड़का कुछ लोगो के पास

जाता और कुछ से कतराता था। जब से नारायणराव शारदा को देखने आया तब से ही वह उसे पसन्द आया था। शादी में वह उससे एक मिनट भी अलग न हुआ था। नारायणराव भी उसको पास बुलाकर उसके प्रश्नों का उत्तर देता जाता। छोटी-छोटी कहानियाँ सुनाता।

नारायण के पास केशवचन्द्र का जाना जमीदार को बहुत भाता था। पर वरदकामेश्वरी को यह गवारा न था। उसे डर था कि कहीं उसके सख्त हाथों में वह पिस-पिसा न जाय। वह लड़के से कहा करती कि नारायणराव गँवार है उसके पास जाओगे तो तुम भी गँवार हो जाओगे।

"जीजा गँवार नहीं है, अच्छे हैं। मुझे कहानी सुनाते हैं। कितनी ही बातें बताते हैं। जीजा बहन से अच्छा वाइलेन बजाते हैं।"

माँ इसका जवाब न दे पाती। चली जाती। उसके छोटे-से दिल में भी हल्का-हल्का भास होने लगा था कि पिता के सिवाय सब जीजा का परिहास कर रहे थे। जब उसने आज शारदा को जगन्मोहन राव से बातें करते देखा तो उसका मन छोटा-सा हो गया। जगन्मोहन राव ने उसे देखकर पूछा, "क्यों कुमार राजा साहब, तेरी किताबें कहाँ है ?"

"नहीं है, जाने कहाँ है ?"

"क्या नाराज हो गए हो ?"

"नहीं तो!"

"नाराज तो लगते हो।"

"मुझे काम है, अरे रामडु!"

"बाबू", कहता रामडु आया। केशवचन्द्र ने उसे उठाने का इशारा किया। सेवक उसे उठाकर ले गया। शारदा अन्दर चली गई।

जगन्मोहन सोफे पर बैठा शारदा को देख रहा था। उसको देखकर लगता था, जैसे वह पति को नहीं चाहती। वह अपने को अपनी बुआ का जमाई समझ रहा था। जाने या बिना जाने उसकी बुआ उसकी मदद कर रही थी। अगर वह मदद करती रही तो मैं शारदा का आलिंगन कर सकूँगा। अगर यह बात दूसरों को पता लग गई तो क्या कहेंगे ?

शारदा अन्दर चली गई। संगीत-कक्ष में जाकर वह श्री रामय्या जी के सामने बैठकर वाइलेन बजाने लगी।

शारदा देवी के लिए एक मित्र द्वारा उनके पिता ने हालेण्ड से वाइलेन मँगवाया था। यह अरबों का वाद्य है। वह सारंगी की श्रेणी का है। जब अरब पाश्चात्य देशों में फैले तो फ्रेञ्च लोगों ने उनके प्रभाव में वाइलेन बनाया। विशेष रूप से फ्रांस, इटली, जर्मनी, हालेण्ड आदि देशों में वाइलेन बड़ा अच्छा बनाया जाता है। बहुत-से वाइलेन पचास हजार रुपयों के भी होते हैं। उनकी ध्वनि गम्भीर और सूक्ष्म होती है।

सारंगी, भारत में पाँचवीं या छठी सदी में आई। १८ वीं सदी में फ्रेंच व्यापारी बाटलन लाये। १६ वीं ईसवी में भारत के वाद्यों में यह एक मुख्य वाद्य हो गया। आज पुरातन वीणा की तरह इसका भी संगीत में स्थान है।

आन्ध्र देश में यह वाद्य खास तौर पर वेश्याओं के नर्तन में प्रयुक्त होता था। जब से विद्वानों ने इसको उत्तम वाद्य के रूप में स्वीकार किया है तब से दक्षिण में गोविन्द स्वामी पिल्ले, चौडय्या, आन्ध्र में कोडय्या जी, वारण सी बच्चय्या, रमरामय्या, हरिनागभूषण, द्वार वेंकटस्वामी नायडू ने इसके बजाने में बहुत प्रसिद्धि पाई है। दक्षिण में तो इसका इतना प्रचार हुआ है कि कई ऐसे भी लोग हैं जो यूरोप के संगीतज्ञों का मुकाबला करते हैं। जापान में भी इसका प्रचलन है। हालेण्ड में जिस प्रकार वाइलेन बनता है, उसी प्रकार जापान में भी बनने लगा है।

श्री रामय्या वाइलेन बजाने में प्रवीण थे। संगीत में वे पण्डित थे। संगीत सिखाने में भी उनकी असाधारण प्रतिभा मिली थी। गान-विद्या में जो पारंगत हैं, वे हमेशा उत्तम अध्यापक नहीं होते। उपाध्याय का हृदय अच्छा होना चाहिए, शिष्य के हृदय व अभिरुचि को परखने की शक्ति होनी चाहिए नहीं तो वह किसी को विद्या न दे सकेगा। भले ही वह स्वयं विद्वान् हो, उसकी विद्या गुप्त धन की तरह ही रह जायगी। कई एम० एस० सी० और डी० सी० पढ़े विद्वान् भी शिष्यों के सामने मुँह नहीं खोल पाते।

श्री रामय्या शिष्यों को बड़ी अच्छी तरह सिखाते थे। उनके पास सीखने के लिए जाने शारदा ने क्या पुण्य किये थे। अक्सर जमींदार यह सोचकर प्रफुल्लित हुआ करते थे।

उस दिन श्री रामय्या जी शिष्या को 'एन्दरो महानुभावुलु—'

त्यागराय की कृति सिखा रहे थे।

कुमार राजा केशवचन्द्र राव को छुटपन में भी संगीत का शौक था। जब शारदा अच्छी तरह गीत गीख जाती और बजा रही होती, वह भी कहीं से उसे सुनने के लिए आ जाता। आनन्दित होकर बाद में एक मिनट भी वहाँ न बैठता।

उस दिन भी जब तक शारदा पुरानी सीखी-सिखाई कृति बजाती रही तब तक वह बैठा रहा। नई कृति शुरू होते ही उसने रामुडु को बुलाया।

"छोटे बाबू क्या चाहते हैं?" रामुडु ने आकर कहा।

ब्राह्मण जमीदारों के घर कोई भी नौकर रखा जा सकता है। परन्तु बलमा, क्षत्रिय, काप्, कम्मा, जमीदारों के घरों में 'कासा' ही पारस्परिक रूप से नौकर रखे जाते हैं। वे आमतौर पर जमीदार के बच्चों को 'बाबू', 'छोटे बाबू', 'कुमार राजा' कहकर पुकारते हैं।

जमीदार के लड़के यों ही लाड़ले होते हैं। क्योंकि वह बहुत दिनों बाद पैदा हुआ था, इसलिए नौकर भी उससे लाड़-प्यार करते थे। उससे दूर न होते थे। उसके खेल-खिलवाड़ के लिए कई खिलौने थे। रेल, मोटर, ट्राम, इञ्जिन, खेलने की सभी चीजें थीं।

केशवचन्द्र बच्चा होता हुआ भी मितभाषी था। जो-कुछ बोलता, मीठा बोलता। कई बार तो उसमें बड़ों जैसी गम्भीरता भी आ जाती।

उसकी माँ कभी उसको कृष्ण का वेश पहनाती, कभी अकबर बादशाह बनाती। कभी उसको सम्राट् जार्ज की पोशाक पहनाती।

१३ : शासन-सभा

जमीदार शासन-सभा की बैठक के लिए मद्रास गये। स्टेशन पर उनका दामाद उन्हें लिवाने आया। बातें करते-करते वे घर पहुँचे। चूंकि

सों धारेज एक बजे बन्द कर दिया जाता था इसलिए नारायणराव ने कहा कि मौका मिलने पर वह भी शासन-सभा देखने जायगा।

शासन-सभा के सदस्य दो भागों में बँटे हैं। सरकारी सदस्य अध्यक्ष के दाहिनी ओर, और विरोधी पक्ष उनके बाईं ओर बैठता है। सरकारी सदस्यों में मन्त्री, गवर्नर की कार्यकारिणी-सभा के सदस्य, सरकार द्वारा नामजद सदस्य आते हैं। सरकार की गलतियाँ, असावधानी जताने के लिए, सरकारी ढोंग-ढकोसले की पोल खोलने के लिए विरोधी पक्ष के लोग सरकार से प्रश्न पूछते हैं।

प्रश्नों के बारे में पहले ही इत्तिला दे दी जाती है। प्रश्न के आने पर तत्सम्बन्धी और भी प्रश्न पूछे जा सकते हैं। प्रश्न की सूचना देते ही उससे सम्बन्धित जिले के कलक्टर के पास उसे उसके उत्तर के लिए, आवश्यक सामग्री एकत्रित करने के लिए वह प्रश्न भेज दिया जाता है। उन्हीं का उत्तर शासन-सभा में सुना दिया जाता है। कई मुख्य बातों पर विरोधी पक्ष अपने प्रश्नों से सरकारी दल के छक्के छुड़ा देता है।

मद्रास में ब्राह्मण-अब्राह्मण-समस्या प्रबल है। यह समस्या कुछ हद तक बम्बई में भी है। जब अंग्रेज मद्रास आये तभी ब्राह्मणों ने नौकरियाँ हड़प ली थीं। उनमें तमिलनाड के अय्यरों और अय्यगारों ने बड़ी नौकरियाँ हथिया ली। दक्षिण में ब्राह्मण अब्राह्मणों को बहुत हीन दृष्टि से देखते थे। ब्राह्मणों की गली में अब्राह्मणों का आना बहुत मुश्किल था। भले ही कोई अब्राह्मण ब्राह्मण का मित्र हो, ब्राह्मण के घर में भोजन के लिए निमन्त्रित किये जाने पर ब्राह्मणों के भोजन के बाद, बरामदे में उसे परोसा जाता। काफी-होटलों में ब्राह्मणों के लिए अलग जगह और अब्राह्मणों के लिए अलग जगह निश्चित थी।

होते-होते अब्राह्मणों को ब्राह्मणों के प्रति क्षोभ होने लगा, वे चिढ़ने लगे। उन्होंने भी अपनी स्थिति सुधारने की ठानी। डा० नायर की अध्यक्षता में उन्होंने अपना संगठन किया। व्याख्यानों और लेखों में कोड़े की तरह वे ब्राह्मणों के विरुद्ध प्रचार करने लगे। यह समस्या आन्ध्र में भी फैली। त्यागराज शेट्टि, कूर्मा वेंकट रेड्डि नायुडु, राजा पानगल, रामस्वामी मुदलियार आदि इस आन्दोलन के नेता हुए। आन्दोलन के प्रारम्भ-

कर्ता डा० नायर दिवंगत हो गए हैं। इस बीच में देश की स्वतन्त्रता के लिए गान्धी जी ने अपना सत्याग्रह-आन्दोलन प्रारम्भ किया। अब्राह्मण सरकार की तरफ हो गए। माटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों के अनुसार शासन-सभा के सदस्यों में से मन्त्री चुने गए। सुना जाता है कि अब्राह्मण नेताओं ने यह धमकी दी थी कि अगर उन्हें मन्त्री न बनाया गया तो वे कांग्रेस में शामिल हो जायेंगे। तब लार्ड विलिंग्डन ने राजा पानगल को मुख्य मन्त्री और वेंकटरेड्डि नायुडु तथा परशुराम पात्रो को उपमन्त्री नियुक्त किया।

महात्मा गान्धी का प्रारम्भ किया हुआ बारडोली-सत्याग्रह जब चौरा-चौरी की घटना के बाद बन्द कर दिया गया तब प० मोतीलाल नेहरू और देशबन्धु चित्तरञ्जन दास की बनाई हुई स्वराज्य-पार्टी ने शासन-सभाओं में प्रवेश किया।

क्योंकि असहयोगियों की संख्या अधिक थी इसलिए स्वराज्य-पार्टी को नागपुर और बंगाल में ही सफलता मिल सकी। मद्रास में भी इसके प्रबल होने के चिह्न नजर आते थे। कई राष्ट्रवादी अपनी अलग पार्टी बनाकर स्वराज्य-पार्टी की मदद कर रहे थे। उनमें हमारे जमींदार साहब भी थे।

उस दिन शासन-सभा में जमींदार ने कृष्णा और गोदावरी जिले के किसानों के बारे में कई प्रश्न पूछे। सामी वेंकटाचलम सेट्टि आदि ने जमींदार का समर्थन किया। आध घण्टे तक ऐसा लगा कि सरकार कोटों पर घसीटी जा रही हो।

इतने में जमींदार ने आन्ध्र के विभाजन के लिए एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया—

"अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव दूसरी बार प्रस्तुत कर रहा हूँ। आन्ध्र के नेताओं ने इस सभा में इस आन्दोलन के बारे में कहा है। यह आन्दोलन पिछले पन्द्रह साल से चल रहा है। अखिल भारतीय कांग्रेस ने इस आन्दोलन के औचित्य को स्वीकार करके आन्ध्र को अलग प्रान्त माना है।

"आन्ध्र मद्रास राज्य में करीब-करीब आधा है। तेलुगु-भाषी ग्यारह

ज़िलों के अलावा एजेन्सी क्षेत्र भी है। इस क्षेत्र की आबादी दो करोड़ से अधिक है। आन्ध्र की आधी आमदनी इसी भाग से आती है। आन्ध्र देश आसाम, मध्यभारत और पंजाब से बड़ा है। फिलहाल सरकारी कार्य भी दो भागों में होता है। पुलिस, आबकारी, रेवेन्यू, विद्या, पब्लिक वर्क्स के महकमे, अरण्य, जेल आदि महकमों के मुख्य अधिकारी प्रान्तीय हैं। प्रान्तीय अधिकारी और ज़िला अधिकारियों के बीच, दो-चार अधिकारी ऐसे भी हैं, जो प्रान्तीय अधिकारियों के समान हैं। अखिल भारतीय महकमों के लिए पोस्ट, तार, आय-कर, इनकम टैक्स का भी कार्य ऐसा होता है जैसे दो प्रान्त हों। मुख्य अधिकारी के नीचे दो-तीन अधिकारी होते हैं।

"जहाँ तक उन्नत न्याय स्थान का सम्बन्ध है वह इस समय मद्रास में है। इसके समुचित सचलन के लिए न्यायाधिकारियों को दुगना करना पड़ेगा। क्योंकि बिना फैसले के मुकदमे सालों चलते रहते हैं। इस हालत में दो उन्नत न्याय-स्थानों की स्थापना करना उचित है। मैंने जो आँकड़े दिये हैं, उनसे यह साफ है कि आन्ध्र के विभाजन से किसी प्रकार का खर्च अधिक न होगा।

"अगर विभाजन न हुआ तो यह आन्दोलन जोर पकड़ता जायगा कि तमिल भाई आन्ध्र को आगे बढ़ने नहीं दे रहे हैं। अगर दो प्रान्त बना दिये गए, तो दोनों परस्पर सहृदयता और मैत्री के साथ रह सकेंगे।"

इस तरह ज़मींदार डेढ़ घंटे तक भाषण देते रहे। उनके बाद कई और बोले। क्योंकि समय अधिक हो गया था इसलिए प्रस्ताव पर मत न लिये जा सके।

जब उपाहार के लिए शासन-सभा विसर्जित हुई तो ज़मींदार ने शासन-सभा-उपाहारशाला से अपने लिए, दामाद के लिए और उसके दो-तीन के लिए खाने की चीज़ें मँगवाई। उन्होंने अपने मित्रों का परिचय दामाद और उसके मित्रों से करवाया। जब वे दो कारों में घर जाने को तैयार हो रहे थे, तब 'आन्ध्र पत्रिका' की तरफ से शासन-सभा की कार्यवाही की रिपोर्ट करने के लिए आये हुए परमेश्वर से ज़मींदार ने यों कहा—

"देखा आपने-परमेश्वर मूर्ति जी, यह है मामला और यह है हमारी

हालत। सरकार वाले दूसरों को कठपुतली बनाकर अपना उल्लू सीधा करते रहते है। हम अपने-आप कुछ भी नही कर सकते। मान लिया कि चुने हुए व्यक्ति सरकारी मदस्यों से अधिक है, हममें से अगर कोई प्रस्ताव पास करवाना चाहे तो उसके लिए गवर्नर और वाइसराय की अनुमति चाहिए। उसके बाद देश में प्रकाशन करना होगा, तब उसके अध्ययन के लिए एक समिति बनाई जायगी। अगर वह बहुमत से सभा में पास हो गया तो उस पर गवर्नर की, गवर्नर जनरल की, इण्डिया सेक्रेट्री की मुहर लगाई जायगी। इतने चक्कर के बाद वह लॉ बनेगा। अब आप ही अनुमान कीजिये कि इसका रास्ता कही भी रोका जा सकता है।"

परम०—"इसीलिए तो नारायणराव कहता है कि जब तक ठीक तरह स्वराज्य नही मिलता, तब तक यह मखौल चलती ही रहेगी। अगर शासन की स्वतन्त्रता मिल गई तो वह काफी है। उसे चाहे हम डोमिनियन स्टेट्स कहें या प्रजातन्त्र कहे, इसमें कोई बात नही है।"

जमी०—"अगर हम तब तक मुख बन्द रखें, तो सरकार की करतूतों की हद ही न रहेगी। इसलिए कुछ खलबली करते रहने से थोड़ा-बहुत फायदा होगा ही।"

नारायण०—"यह बात तो नही, पर वह फायदा कुछ ऐसा होगा जैसे भूमि के लिए मुकदमा चल रहा हो, और फसल के बारे में तू-तू मैं-मैं हो रही हो। मुकदमा अगर खिचता गया तो मुकदमा करने वालो का ही नुकसान है। अगर यह मान भी लिया जाय कि खर्च के लिए डिग्री दे दो गई, पर जैसे उनको आशा नही होती कि खर्च मिल सकेगा वैसे हमें भी आशा नही करनी चाहिए। हम कह रहे है कि देश का कर्ज बढ रहा है। अब तक जो कर्ज सरकार ने लिया है उसका सूद बढता जा रहा है। नये कर्ज लिये जा रहे हैं। अगर हमारा कभी उनसे समझौता हुआ तो ये शासन-सभाएँ हमें उन पर से कर्ज भी न लादने देंगी। तब हमें नुकसान ही है। इसलिए अगर सब मिलकर स्वतन्त्रता के लिए लडेंगे तो एक दिन सरकार सुलह करेगी ही। यह कांग्रेस कर रही है।"

जमी०—"हाँ, नारायणराव, हमारे उद्देश्य ऊँचे ही होते है, परन्तु मनुष्य के स्वभाव का भी खयाल रखना चाहिए। एक छोटे-से परिवार में

ही चारों भाई चार रास्तों पर जाते हैं न ? हमारे ३० करोड़ आदमियों में कम-से-कम ३ करोड़ विचार होंगे । पर भले ही मार्ग भिन्न-भिन्न हों, पर क्योंकि सब एक ही गम्यस्थान को जा रहे हैं, इसलिए हम वहाँ पहुँचेंगे ही । 'सर्वदेव नमस्कार, केशव प्रति गच्छति' । और अगर एक पार्टी यह जिद पकड़े कि बाकी पार्टियाँ भी उसमें आ मिलें तो रास्ते में रुकावट पड़ेगी ही । यह मेरा खयाल है ।"

नारायण०—"मैं यह नहीं कहता कि आप गलत कह रहे हैं । मैं यही निवेदन करूँगा कि महात्मा गान्धी को मूर्ख बताना असमंजस है । बड़ी बीमारी के लिए बड़ी दवा चाहिए । अनुभवी वैद्य रोग के लिए अनुकूल दवा ढूँढ निकालता है । महात्मा गान्धी भी उसी प्रकार के वैद्य हैं । अगर उनकी दवा न मानी गई तो देश की बीमारी कैसे दूर होगी ?"

जमी०—"देशबन्धु दास की पद्धति को अमल में लाकर देखना भी तो अच्छा है ?"

परम०—"इसीलिए तो गान्धी जी ने उनको नहीं रोका, स्वयं अलग होकर वे खद्दर और हरिजनोद्धार का कार्य करने लगे ।"

जमी०—"पर जनता स्वराज्य-पार्टी का समर्थन नहीं कर रही । इसलिए स्वराज्य-पार्टी की हालत चमगादड़ की-सी है । शासन-सभा में सदस्य होकर स्वराज्य-पार्टी की शक्ति बढ़ाकर, भरसक प्रजा का कल्याण करना क्या अच्छा नहीं है ?"

परम०—"अगर सरकार ने यह न माना तो ?"

जमी०—"न मानेगी तो गवर्नर को शासन-सभा रद्द करनी होगी । फिर चुनाव होगा, और चुनाव में हमारे लोग आ जायेंगे । फिर हमारे ही मंत्री बनकर सरकार के विरुद्ध युद्ध कर सकते हैं ।"

परम०—"अगर [illegible] ?"

जमी०—"तब हम शासन-विधान को नष्ट करके नई प्रतिनिधि-कार्यकारिणी समिति द्वारा शासन चलायें । लोगों को मालूम हो जायगा कि यह शासन-सभा एकदम धोखेबाजी है ।"

नारायण०—"महात्मा गान्धी पहले ही जान गए हैं कि यह धोखेबाजी है और इस बीमारी को जड़मूल से नष्ट करना चाहते हैं ।"

फायड के बीमार को—डाक्टर यह जानकर भी कि उसे मलेरिया नहीं है, दुनिया को यह दिखाने के लिए कि उसे टाइफायड है, कुनैन देता है, दे-देकर यह दिखाता है कि उसे मलेरिया नहीं है; और वह टाइफायड की चिकित्सा करता है। यह बात तो कुछ ऐसी ही हुई न ? हो सकता है कि इस बीच में रोगी की हालत ही नाजुक हो जाय।"

जमी०—"और मान लिया जाय कि मलेरिया ही हो तब ?"

नारायण०—"यही सोचकर ३५ साल चिकित्सा की जा चुकी है। और कितने साल करनी होगी ?"

परम०—"हमारा देश दिव्य है, अगर दो-चार साल की देरी भी हो गई तो क्या रखा है ?"

नारायण०—"हाँ, हमारी आत्मा अनादि है, अनन्त है, तब चिकित्सा ही किस लिए ?"

१४: श्यामसुन्दरी देवी

नारायण अगले दिन हाईकोर्ट में श्री अल्लाडि कृष्णस्वामी अय्यर, श्रीनिवास अय्यगार की कचहरी में हिन्दू-धर्म-शासन के बारे में बहस सुनने गया। चार बजे तक वहीं रहकर रामकृष्ण संघ-होम में खूब खा-पीकर कार में ससुर के घर कोल्पाक गया। वहाँ उसका एक तमिल सह-पाठी उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। ससुर अभी न पधारे थे।

दोस्त के हाथ पकड़कर उसने पूछा, "क्यों भाई कितनी देर हो गई है ?"

"भाई नारायण, तुम आधे घंटा लेट हो!"

"दो जरूरी चिट्ठियाँ एकाएक लिखनी पड़ गईं, इसलिए देरी हो गई। माफ करो!"

"हूँ, कोई बात नहीं।"

"दस मिनट में तैयार होकर आता हूँ। काफी, फल लीजिये।"

"कोई जरूरत नहीं।"

नारायण जल्दी-जल्दी अन्दर गया। हजामत करके उसने गरम पानी में स्नान किया। अपने कमरे में आकर खद्दर के कपड़े पहनकर बालों पर यूडिक्लोन लगाया और उन्हें ठीक पीछे की तरफ सँवारकर, कन्धे पर उत्तरीय डाल, चप्पल पहन, हाथ में छड़ी लेकर मित्र के पास गया। उससे पहले ही उपाहार-कक्ष में उसके मित्र ने नाश्ता लिया था।

ससुर जी की बड़ी कार के आँगन में आते ही दोनों दोस्त उस पर चढ़कर आगे बैठ गए। कार पुरसवाकम हाई रोड, एग्मोर, हारिस पुल, राउंड थाना, माउण्ट रोड होती हुई तिरुवल्लिकेणि आकर वहाँ अक्बर साहब गली में एक दुमंजिले मकान के सामने रुकी।

तमिल दोस्त—"ये लोग यहाँ से जल्दी चले जाएँगे, यह मकान न कोई खास अच्छा है, न खराब ही।"

नारायण०—"हाँ, यह मोहल्ला उतना अच्छा नहीं है। क्या ये रईस लोग हैं?"

त० दोस्त—"हाँ, पिता जिले के मुख्य डाक्टर के तौर पर काम करके रिटायर हुए थे। पेन्शन मिलती थी। अब वे गुजर गए हैं। अब इसमें माँ, अपने चार लड़के और लड़कियों के साथ रहती है। पिता ५० हजार रुपए छोड़ गए हैं।"

नारायण०—"क्या ये मंगलूर के ही हैं?"

त० दोस्त—"ये तेलुगु हैं और मैसूरी भी। सबको अंग्रेजी, तेलुगु सभी भाषाएँ आती हैं। माँ मंगलूर की हैं और पिता मैसूर के।"

यों बातें करते-करते दोनों दोस्त अन्दर गये। बैठक बड़ी अच्छी तरह सजाई हुई थी। वहाँ बेंत की कुर्सियों पर तरह-तरह के कपड़े बिछे हुए थे। बैठक के बीचों-बीच तिपाई पर फूलदान, फूलदान में तरह-तरह के फूल। वहाँ कुर्सी पर अट्ठारह वर्ष का लड़का बैठा हुआ था। इनको आता देखकर उस लड़के ने उठकर पूछा, "तो नटराजन, आप आ गए हैं? आइये!" उसने अंग्रेजी में कहा।

नटराजन—"ये हैं मेरे तेलुगु मित्र नारायणराव, वाइलेन बहुत अच्छा बजाते हैं ये। ये हैं मगेश्वर राव, बी० ए० के पहले वर्ष में पढ़ रहा है।"

नारायणराव और मगेश्वर राव ने हाथ मिलाये।

मगे०—"बैठिये, मैं अन्दर जाकर अपनी बहनों को बुलाये लाता हूँ।"

वह अन्दर चला गया। नारायणराव के लिए पढ़ी-लिखी लड़कियों से बातें करने का यह पहला मौका था। नारायणराव स्त्री-शिक्षा का हिमायती था। स्त्रियों की शिक्षा राष्ट्रीय होनी चाहिए। यह प्राप्त न हो तो उन्हें पाश्चात्य शिक्षा ही मिलनी चाहिए, किसी भी हालत में उन्हें अशिक्षित नहीं रहने देना चाहिए। वह सोचा करता, 'अगर वे अशिक्षित ही रहीं तो स्वतन्त्र होने पर उनको अच्छी देशीय शिक्षा दी जा सकेगी।' उसके पिता कहा करते।

इस बीच, मगेश्वर राव अपनी चार बहनों के साथ वहाँ आया।

चारों लड़कियाँ स्वर्ण-लता-सी थीं। गोदावरी की तरंगों-सी। उनके सौन्दर्य में आर्यत्व था।

"नारायण राव, ये श्यामसुन्दरी देवी हैं, ये रोहिणी देवी हैं, ये सरला देवी हैं, और ये नलिनी देवी हैं, ये नारायण राव हैं," नटराजन ने अपने मित्र का उन लड़कियों से परिचय कराया। सब एक-दूसरे को नमस्कार करके बैठ गए।

"नारायण, ! श्यामसुन्दरी देवी वाइलेन, रोहिणी देवी वीणा, सरला देवी जलतरंग, सितार, सारंगी कितने ही वाद्य बजाती है। नलिनी बाँसुरी अच्छी तरह बजाती है। इनके पिता पेन्शन लेने के बाद बहुत दिन मैसूर में रहे। वहाँ के दरबारी विद्वानों ने इन्हें संगीत सिखाया। श्याम-सुन्दरी देवी जी, इन नारायणराव जी ने इस विद्या को बड़ी श्रद्धा से सीखा है। बचपन में ही, रामस्वामी अय्यर को सौ रुपये माहवार देकर यहीं महीनों सीखा था। अगर आप दोनों में मेल-मिलाप हो गया तो आपका हुनर और भी बढ़ेगा। ऐसा मेरा ख्याल है," नटराजन खुशी-खुशी हाथ मलने लगा।

श्यामसुन्दरी देवी २२ साल की थीं। सुनहले रंग की थीं। "आपको

देरी से आया हुआ देख हम सोच रहे थे कि शायद आप रोज न आ सकें।"

नारायण०—"देरी का कारण मैं ही हूँ। माफ कीजिये, मगेश्वर राव भी क्या कोई बाजा बजा सकते हैं?"

नट०—"क्यों नहीं, कभी सीखा तो नहीं है, पर बहनों को बजाता सुन, देख-दाखकर वह भी सभी बाजे बजा लेता है।"

नारायण०—"ऐसी बात है मगेश्वर राव जी, तब तो आप बहुत किस्मत वाले हैं।"

मगे०—"नटराजन यों ही कुछ-न-कुछ कहता रहता है।"

रोहिणी—"बाजों में सबसे अच्छा आप कौन-सा है, नारायण-राव जी?"

नारायण०—"मेरे ख्याल में वीणा और वाइलेन।"

श्याम—"इन दोनों में कौन-सा अच्छा है?"

नारायण०—"यह बड़ा पेचीदा प्रश्न है। पुराने लोगों को वीणा अधिक प्यारी है, वे लोग भी अब वाइलेन पसन्द करने लगे हैं, पर जो बात वीणा में है, वह वाइलेन में नहीं है, और जो चीज वाइलेन में है वह वीणा में नहीं है। अगर हृदय आनन्द से भरपूर हो तो दोनों ही अच्छे हैं। पर मेरा मन भी वीणा को ही चाहता है, अभी मैंने सीखना छोड़ा नहीं है।"

नलिनी० (हँसकर)—'आपकी गवाही न इधर की है, न उधर की ही।" सब हँसने लगे।

नारायणराव हँसते हुए—"अगर आप पूछें कि आप मालवीय जी को चाहते हैं या गांधी जी को, तो मैं क्या कहूँ? मैं इस प्रश्न का ठीक उत्तर नहीं दे सकता; पर जैसे मैं वीणा को चाहता हूँ, वैसे वाइलेन को नहीं चाहता। स्वामी वेंकट, नायडु, बलरामय्या, गोविन्दस्वामी पिल्ले आदि का संगीत मुझे बहुत अच्छा लगता है।"

नलिनी०—"फ्ल्यूट?"

नारायण०—बांसुरी न? यह भी बड़ी अच्छी है। पर यह दूसरे बाजों से कम ही है न? सजीव राव-जैसे लोग बाँसुरी पर भी वीणा और वाइलेन का मुकाबला कर सकते हैं। आप बाँसुरी कैसी बजाती हैं, यह सुनने की इच्छा हो रही है।"

श्याम०—"नारायण राव जी, क्या आप वाइलेन लाये हैं ?"

नट०—"हाँ कार में है, मँगाता हूँ !"

नारायण०—"मेरी क्या बात है, पहले आप बजाइये ! सुनूँगा ।"

श्याम०—"नहीं, पहले आप ।"

नट०—"आप बहनों को पहले बजाना होगा, यह मेरा निवेदन है ।"

श्याम०—"अच्छा !"

मगेश्वर राव, नलिनी, सरला अन्दर जाकर तम्बूरा, वीणा, वाइलेन, बाँसुरी, सितार आदि ले आए । रोहिणी ने तम्बूरा पकड़ा, श्यामसुन्दरी ने वाइलेन सँभाला, दोनों ने श्रुति मिलाई । श्यामसुन्दरी, पल्लवी राग का आलापन करके बजाने लगी ।

१५ : बहनें

उन बहनों में कौन अधिक सुन्दर थी और कौन कम, यह निर्णय करना मुश्किल था । वे सब समान थीं । यकायक देखने से उनमें भेद नहीं जाना जा सकता था । बारीकी से देखने वाले देख सकते थे कि लड़कियों की नाकों, नीचे के ओठों और चिबुकों में भेद था । उनकी आँखों का रंग भी अलग था, शक्ल का ढाँचा, दूसरी और चौथी बहन का एक-सा था, पहली और तीसरी का एक-सा । पहली दोनों बहनों के बाल घुँघराले थे, और छोटी दो बहनों के सीधे । बड़ी और छोटी कद की कुछ कम थीं और बाकी दोनों उनसे बड़ी थीं ।

श्यामसुन्दरी देवी का कण्ठ पंचम स्वर से पूरित था ।
रोहिणी देवी का कण्ठ निषाद-श्रुति-सम्पन्न था ।
सरला देवी का कण्ठ वेणु-नाद-पूरित था ।

नलिनी देवी का गला अभी सधा न था। पर उसका माधुर्य स्पष्ट था।

श्यामसुन्दरी देवी वाद्य-विद्या के तीसरे वर्ष में पढ़ रही थी। उसकी बहन बी० एस० सी० के तीसरे वर्ष में थी, तीसरी लड़की इण्टर के प्रथम वर्ष में थी। और चौथी पाँचवीं कक्षा में पढ़ रही थी।

श्यामसुन्दरी देवी के कुटुम्ब के बारे में नटराजन ने नारायणराव को बताया था। राजाराव श्यामसुन्दरी देवी से क्लास में बातचीत तो कर लेता था, पर उसका औरतों से परिचय न था, क्योंकि स्वभाव से वह जरा शर्मीला था। नटराजन भी वाद्य-विद्या सीख रहा था। उसका श्यामसुन्दरी देवी के परिवार के साथ सस्नेह सम्बन्ध था। जबसे नारायण राव और परमेश्वर को मालूम हुआ था कि श्यामसुन्दरी और उनकी बहनें संगीत में प्रवीण हैं, तभी से वे उनके घर जाकर संगीत सुनने को उत्सुक हो रहे थे।

परमेश्वर स्त्रियों से देखते-देखते दोस्ती कर लेता था। नारायणराव भी उन स्त्रियों से ही परिचय करता जो उससे परिचय करना चाहतीं। एक राजा राव ही स्त्रियों से बहुत शर्माता था।

नारायण राव और नटराजन के एक घंटे बाद ही परमेश्वर और राजा-राव को वहाँ आने का मौका मिला। नटराजन ने ही इन मित्रों के परस्पर संगीत सुनने-सुनाने का प्रबन्ध किया था।

इस बीच परमेश्वर और राजाराव वहाँ आये। यह कवि, चित्रकार, संगीतज्ञ है। अभिनय में भी पारंगत है। विविध-विचित्र विषय विषयों पर कविता कर सकता है। इस प्रकार परमेश्वर का परिचय दिया गया। राजाराव से सब पहले ही परिचित थे।

बैठक पूरी हो गई थी। नारायणराव ने वाइलिन बजाया। परमेश्वर ने अभिनय के साथ गीत गाये। नटराजन ने भी तमिल गीत सुनाये। श्याम, रोहिणी, सरला, नलिनी सबने अपना-अपना कौशल दिखाया। मगेश्वर राव ने भी राचप्प, कर्कटप्पा, बाल गन्धर्व फड़केकर की नकल में कुछ गाने सुनाये।

एक-दूसरे की उन्होंने प्रशंसा की। सब आनन्द में उन्मत्त-से हो गए

थे। नारायणराव ने तोड़ी राग बजाया। अस्पष्ट, मधुर ध्वनि, सूक्ष्म ध्वनि—धीरे-धीरे, क्लाइमैक्स तक लाकर उसने बजाना बन्द कर दिया। श्यामसुन्दरी देवी ने झट उठकर उसको नमस्कार करके कहा, "पाण्डित्य की बात अलग, आपका प्रवाह, लहजा, गति बहुत ही आकर्षक है। आपने इस तरह बजाना कहाँ सीखा?"

"मैं हमेशा वाइलेन बजाता रहता हूँ। हमारे देश में समय-समय पर उत्कृष्ट संगीतज्ञ जन्म लेते रहे हैं। अपनी नई-नई सृष्टि से हमारी समृद्ध संगीत-परम्परा को सवर्धित करके, आकाश के तारे की तरह हो गए हैं। त्यागराय के बाद अब तक कोई नहीं जन्मा है। मैंने एक पाश्चात्य वाइलेन-प्रवीण के पास संगीत में पाश्चात्य प्रवाह सीखा है। जापान, बर्मा, स्याम, पर्शिया, रशिया आदि देशों का संगीत भी ध्यान से सुना है। गति, राग, ताल का अध्ययन करके नई-नई पद्धतियों को अपने राग और लय में सम्मिलित किया है।"

"रात के आठ बज रहे हैं, हमें इजाजत दीजिये।" कहता हुआ राजा राव उठा। और भी लोग उठते हुए एक-दूसरे को नमस्कार करने लगे। नारा-यणराव, राजाराव, परमेश्वर, नटराजन कार में चढ़कर, गलियों में से होते हुए समुद्री-तट पर गये।

हरेक को अपने-अपने घर छोड़कर नारायण अपने घर गया। श्याम-सुन्दरी को देखने के बाद से उसका हृदय कल्लोलित-सा हो उठा था। उसे श्यामसुन्दरी अपनी बहन-सी लगी। उसने सोचा कि उसकी [redacted] बहनें हैं। श्यामसुन्दरी में उसने सूर्यकान्तं को देखा। सूर्यकान्त उसकी बहनों में आखिरी थी। वह उसे बहुत चाहता था। सूर्यकान्तं उसकी एक अंश थी। यह श्यामसुन्दरी कुछ दूर की बहन थी। सूर्यकान्त ने उसका वात्सल्य ले लिया था। उस वात्सल्य में अब श्यामसुन्दरी भी हिस्सेदार हो गई थी।

पर यह सम्बन्ध कैसे हुआ? जन्म-जन्म की सहृदयता प्रत्यक्ष हुई थी। उसने अपनी छोटी पत्नी को प्यार किया था। शारदा उसकी प्राण थी, भाग्य थी। दिव्य स्त्री थी। उसको देखकर उसका पुरुषत्व उफन-सा आया था। उसका आलिंगन और चुम्बन करने के लिए वह उतावला-सा

हो गया। शारदा को देखते ही उसके मन में प्रेम, दया, हृदय में संगीत, गालों पर गरमी, शरीर में मस्ती, आत्मा में आनन्द पैदा होता था। क्या कोई स्त्री उसको इस तरह पुलकित कर सकती थी? शायद यही प्रेम है, यह प्रणय की महिमा है।

श्यामसुन्दरी उसके शरीर को पुलकित न करती थी। वह उसकी बहन-सी थी।

परमेश्वर अपने विचार में मस्त था। वह यह भी न जान सका कि उसके घर के सामने कार रुकी थी। "अरे कवि, स्वप्नों में से जगो!" नारायण राव ने उससे कहा।

"मैं स्वप्नों में था तो शायद तू क्या आँखें खोले बैठा था? आप बैठे रहे, एक बात भी नहीं कही? क्यों?"

"यह सोचकर कि तू कुछ सोच रहा है।"

"अच्छा, तो मुझ पर मेहरबानी करके तूने मुझे भी सोचने दिया, क्यों? वाह!"

"तू क्या सोच रहा था? मैं भी हाँ, सोच ही रहा था।"

"हाँ, तो यह बात है? आज मेरी पत्नी मुझ पर शक करेगी, वह मेरे मन को जानती है।"

"यह आखिर क्यों? क्या तूने आज अपने मन में प्रेम के विष को या अमृत को मथ-मथकर तैयार किया है?"

"अरे वे अप्सराएँ हैं। उनके साथ ऋषि भी निष्कलमष हृदय होकर नहीं रह सकते। रोहिणी देवी चाँद-सी लगी।"

"परमेश्वर का मूर्धाभरण समझा, यानी तुम सचमुच परमेश्वर हो!"

"हाँ, हम दोनों की आँखें चार हुईं, जब तक वह बयाती रही वह मेरी तरफ ही देखकर गाती रही। आह उसकी आँखें भी क्या थी?"

"वह क्या उतनी सुन्दर है?"

"अरे तुम कवि हो, चित्र-कला से भी प्रेम है, प्रकृति-चित्र भी बनाते हो, कहते हो कि संगीत ही जीवन है, क्या तुम नहीं जानते?"

"अरे परमेश्वर, अगर हमें अपना जीवन सार्थक करना है तो स्त्री का दर्शन भक्ति-भाव से करना चाहिए, हमारा अभी तक तो यही खयाल था

न कि स्त्री कोई चीज है ?"

"और तू तो अभी तक बह रहा है, हमारा तो त्रिशंकु स्वर्ग है। हम न प्राचीन वैदिक परम्परा का ही पालन कर रहे हैं, न नूतन सभ्यता का ही ?"

"तो ये कैसे हैं तुम्हारी राय में ?"

"हम देख रहे हैं कि जो हम पाश्चात्य सभ्यता के मोह में पड़ते हैं, न घाट के होते हैं, न घर के ही। फिजूल का दिखावा, भड़कावा। दुनियादार हो जाती है।"

"हाँ, यानी सुन्दर जन्तु हो जाती है। उनको देखकर दूसरे आनन्दित हो रहे हैं कि नहीं ? ऐसी स्त्रियों के बारे में तो राजेश्वर को ही अधिक मालूम होगा। मन बह आ रहा है। बात-बात पर वह राजमहेन्द्रवरं भाग जाता है। उसकी हालत कुछ अच्छी नज़र नहीं आती।"

१६ : पुण्य शीला

राजेश्वर राव बी० ए० में पढ़ रहा था। इस साल उसकी पढ़ाई ठीक नहीं चल रही थी। माँ की बीमारी का बहाना बनाकर वह राजमहेन्द्रवर चला गया था और वहाँ पुण्यशीला से मिलने के लिए तरह-तरह की चालें चल रहा था। पुण्यशीला भी उससे मिलने के लिए व्याकुल थी। उन दिनों जो प्रेम पुण्यशीला पति के प्रति दिखा रही थी उसकी सीमा न थी। सुब्बय्या शास्त्री भी उसे देखकर फूले न समाते थे।

एक मित्र वैद्य से यह सर्टिफिकेट लिखवाकर कि उसकी माँ बीमार थी, राजेश्वर राव ने कालेज के प्रिंसिपल को वह भेजकर दस दिन की और छुट्टी ले ली थी। पुण्यशीला से एकान्त में मिलने का मौका न मिला था। सुब्बय्या के नौकर-चाकर विश्वास-पात्र थे। वे सावधानी से हर वस्तु को,

स्त्री को भी देखते, ताकि उन्हें कोई चुरा न ले जाय । न वे रिश्वत लेते थे, न झूठ-मूठ बातों में ही आते थे ।

पुष्पशीला यह नहीं चाहती थी कि उसकी इच्छा के बारे में किसी को पता लगे । उसे वह या तो घर में एकान्त समय में देखना चाहती थी, नहीं तो कहीं बाहर ।

राजेश्वर ने एक दिन उसने आलिंगन किया था । उस आलिंगन की स्मृति अब भी ताजी थी । अगर 'राजी' उसका पति होता तो उसका जीवन तर जाता । पर अब उसे राजेश्वर राव से मिलने का रास्ता ही न मिल रहा था । क्योंकि उसकी नैहर भी राजमहेन्द्रवरं थी । क्यों न वह उससे वहाँ मिले ? अच्छा ख्याल था ।

उस दिन पुष्पशीला ने पति को और भी प्यार किया । सुब्रम्मा शास्त्री को संसार सुनहला-सा, बादल-सा लगा । क्या स्त्रियाँ इतना आनन्द दे सकती हैं ? उनका जन्म ही आनन्द है । स्त्री के बिना मनुष्य का जन्म मरुभूमि है ।

"क्या तुम्हें इतना प्रेम है पुष्प ?"

"मेरा जीवन ही प्रेम है ।"

"तू फूल की तरह शीलवती है, प्राण सुन्दरी !"

"आप पर मैं कविता लिखूंगी, अब तक सब पुरुष ही कवि हुए हैं, मैं उपनाम से आप पर लिखी कविताएँ पत्रिकाओं में प्रकाशित करवाऊँ क्या—?

'स्वामी मेरे, तुझे देखकर,
तेरे उर का मधुरस बनकर
रग-रग में तेरी दौड़ूंगी,
[redacted] पर्वत है ऊँचा,
मैं हो हूँ नीला मेघ,
तुझ पर ही मैं टिकी निरन्तर,
करती सुख से नृत्य रहूँगी ।"

"हाँ, जरूर, पर भेजने से पहले मुझे दिखा देना, मुझे कविता नहीं आती, नहीं तो मैं ही तुम पर हजारों कविताएँ लिखता ।"

अगले दिन पति के दफ्तर में जाने के बाद नौकरानी से पीछा छुड़ाने के लिए, एक चिट्ठी देकर उसको पति के पास भेजा। गली के एक लड़के के हाथ राजेश्वर राव को खबर भेजी, वह पिछवाड़े के रास्ते से आ गया। रसोई करने वाली रिश्तेदार को भी कोई काम सौंप दिया। चुके-चुके राजेश्वर-राव को दुमंजिले पर भेज दिया। यह कहकर कि सिर-दर्द है, वह आराम के लिए ऊपर चली गई और उसने दरवाजा बन्द कर लिया।

कई स्त्रियाँ अस्पष्ट हाव-भाव से पुरुष को अपनी इच्छा बताकर उसको पूरा कर लेती हैं। कई भय और लज्जा के कारण उसे प्रकट ही नहीं करतीं। स्वयं इच्छा बताकर पुरुषों से मिलने वाली कम ही होती हैं। इन लोगों की कामुकता को कौन रोक सकता है?

पुष्पलीला को भी राजेश्वर राव पर इसी प्रकार का प्रेम था। वह जैसे भी हो अपनी इच्छा पूरी करना चाहती थी। वह हमेशा 'राजेश्वर राव' को अच्छा पाती। उसकी हँसी, बातें गुदगुदी-सी लगतीं।

मिनट-भर में वह सज-धज गई और बन-ठनकर कमरे में चली आई। कमरा बन्द कर दिया। राजेश्वर राव के लिए एक-एक घड़ी युग की तरह बीत रही थी।

"मैं सोच रहा था कि तुम न आओगी। जब उस दिन बुढ़िया बीमार हुई तो मैं आया, पर तुम्हारा पति भी आ गया। आगे भाग्य क्या आ पड़े?— मैं सोच रहा था।"

"आप घर-घुसू हैं, मुझे यहाँ नहीं आना चाहिए, मैं चली जाऊँगी?"

"तो मुझे क्यों बुलाया था?"

"यह जानने के लिए कि आप क्यों हमारे घर के आस-पास रोज मँडराते हैं? क्या दोस्तों से यहाँ गपशप करते हैं।"

"हाँ, हाँ," राजेश्वर राव ने उसका आलिंगन किया।

सहपाठियों के यह लिखने पर कि यदि वह न आया तो उसकी हाजरी मारी जायगी, राजेश्वर राव, राजमहेन्द्रवरं से निकला। उसने नारायण-राव को सिटी के रास्ते में मिलने के लिए कहा, यही बात उसने परमेश्वर से भी कहने को कहा था।

नारायणराव सवेरे कार में बैठकर 'सेण्ट्रल स्टेशन' गया। मेल आई। सिवाए छुट्टी पर आने वाले दो-तीन तमिल-परिवारों के मेल में सभी तेलुगु वाले थे। व्यापार, अदालत के काम पर आने वाले थर्ड क्लास में भरे पड़े थे।

गाड़ी के रुकते ही सैकड़ों तमिल-कुली जमा हो गए, "सामान उतारने के बाद भाव-ताव किया जा सकता है,—आप ही मालिक हैं······गरीब हूँ," कुली कह रहा था। कई सम्बन्धी और मित्र मिलने आये थे। होटलों के एजेण्ट भी प्लेटफार्म पर थे। इन सबका शोर-गुल हो रहा था। नारायणराव के इण्टर के दर्जे के पास पहुँचने पर राजेश्वर राव मुस्कराता-मुस्कराता उतरा।

"अरे, आ गए, तुम्हारी माता जी की बीमारी कैसी है?"

"हाँ ठीक है, इसलिए आ गया हूँ।"

"आँखें धँस गई हैं, शायद दिन-रात माँ की सेवा-सुश्रूषा की होगी, पगले उतर, ठीक कर दूँगा तेरा हाल!"

"कुली!"

"जी हुजूर!"

"सामान कार तक ले आओ!"

"क्या दोगे, हुजूर?"

"तेरा सिर, आ आ!"

कुली सामान ले आया। दोनों मित्रों ने कार के पीछे सामान बाँध दिया। नारायणराव कार चलाता हुआ गवर्नर-भवन के रास्ते से मेडिकेट होता हुआ गिण्डी की ओर चला।

रास्ते में राजेश्वर राव ने अपनी सुशविस्मती की बात सुनाई। "जिस काम पर गया था वह पूरा हो गया, निहाल हो गया, अरे नारायण! तूने उस-जैसी स्त्री न देखी होगी, न कभी उसके बारे में सुना ही होगा, उस पुरुष का जन्म व्यर्थ है जो सुन्दर स्त्री का सागत्य न करे!"

"अरे तेरी इन बातों को सुनकर मेरा दिमाग खराब हो रहा है।"

"नारायण, तू एकदम डरपोक है, और तू अपने डर को धर्म कहता है।"

"अरे, तेरा कचूमर निकाल दूँगा। सुन, ठीक तरह बहस करना सीख! 'मैंने गलती की है, मैं अपने को काबू में न रख सका यह मेरी कमजोरी है।' यह कहने के बदले, तू हमें ही डरपोक बता रहा है, क्योंकि मैं तुझे चाहता हूँ, इसलिए ही ये बातें कह रहा हूँ। चाहे तू कैसे भी रहे, तू मेरा मित्र है। पर-स्त्री, पर-भार्या को तूने गंगा में ढकेल दिया। कम-से-कम उसे किनारे तो लगा। आगे तेरी इच्छा, बस मैं यही कहूँगा।"

१७ : राजेश्वर राव

राजेश्वर के साथ एक रात बिताने के लिए नारायणराव और परमेश्वर उसके होस्टल गिण्डी में गये। राजेश्वर ने दोनों मित्रों से पुष्पशीला के प्रेम के बारे में कहा। मेरा जन्म दुःखमय है, कुछ भी हो वह मुझे चाहिए, न पढ़ाई चाहिए, न जमीन-जायदाद ही, न बन्धु, न मित्र ही, पुष्पशीला ही चाहिए," राजेश्वर राव ने कहा।

"जब तक वह पति के साथ है उसके पास आना-जाना मुश्किल है, चाहे जमीन-आसमान एक करने पड़ जायँ, वह पूर्ण रूप से उसको लेकर ही रहेगा।" उसने मित्रों से कहा।

नारायण०—"तुझ पर फौजदारी करके, उसका पति तुझे जेल भिजवा सकता है।"

राजे०—"इस जेल से वह जेल ही भली।"

[illegible]०—"[illegible] तुझे क्या फायदा? तेरे साथ पुष्पशीला [illegible]

[illegible] शिष्य है, देश के लिए [illegible] जैसे पवित्र लोग [illegible] के लिए [illegible] जेल जाने के लिए तैयार [illegible] कामों के लिए

जाऊँगा जो मुझे पवित्र धर्म लगता है। जब देश में इसको लेकर आन्दोलन चलेगा और कानून बदल दिया जायगा। दूसरे देशों में क्या किसी को किसी की स्त्री के साथ भाग जाने के कारण दण्ड दिया जाता है।"

नारायण०—"दूसरे देशों में विवाह एक धार्मिक सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि यह व्यक्ति-व्यक्ति द्वारा किया हुआ एक समझौता है, इसलिए ऐसा करने से दूसरे को हरजाना दिया जाता है। पति की इच्छा पर वह विवाह रद्द किया जा सकता है। यह प्रथा हमारे देश की नीच जातियों में भी प्रचलित है। आर्य विवाह मोक्ष-सम्बन्धी धर्म से जुड़ा हुआ है। मनुष्य के जीवन की यात्रा आत्मानुभव के लिए, चार आश्रम, चार मंजिलें हैं। इसलिए जो विवाह एक बार हो गया वह रद्द नहीं किया जा सकता।"

राजे०—"तू यह बता, न्याय क्या है? क्या आजकल हम जीवन को धर्म की दृष्टि से देख रहे हैं? जो सवेरे से शाम तक हम काम करते हैं, क्या हम उन्हें धर्म के अनुसार कर रहे हैं? सब अन्ध-विश्वास में करते जाते हैं, उस हालत में विवाह को रद्द करने का कानून, स्त्री को पर-पुरुष के साथ जाने का अधिकार क्या नहीं होना चाहिए?"

नारायण०—"आजकल सरकार ने पैनलकोड में उन्हीं चीजों को रखा है, जिनको वे चाहते हैं, जिनको वे नहीं चाहते, उनको कान्ट्रेक्ट लॉ में धकेल दिया है। अगर वे रद्द भी कर दिये गए तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। पर विवाह को रद्द करने का कानून मुझे कतई पसन्द नहीं है।"

परम०—"यह भी क्या है, तो सुन—आजकल जो कानून है वह सरकार का बनाया हुआ है, हमारे प्राचीन धर्म अमल में नहीं हैं। उस हालत में कितने भी और कैसे भी कानून बनें, हमारा क्या जाता है?"

नारायण०—(क्रोध में)—"यों हो गुस्सा आ रहा है, तिस पर—हमारे दौर्भाग्य से देश दूसरों के अधीन है, वह इस वजह से, अपरिहार्य रूप से कुछ दोष आ गए हैं, इसलिए कम-से-कम उस धर्म की तो रक्षा करनी चाहिए, जो अभी तक कानून की चौखट में नहीं आया है, तुम चाहते हो कि हमारा और अध:पतन हो, ? मैं उन नादानों में से नहीं हूँ जो अपने को पूर्वाचार-परायण या सनातनधर्मी कहते हैं। परन्तु मैं कहता हूँ, उदार हृदय से दिये गए, विवेकानन्द और महात्मा गान्धी जी के उपदेशों को हमें कार्य-रूप में

लाना चाहिए, उसमें ही देश का भला है, यही न ?"

राजे०—"शरम न हो ! अब बता मुझे क्या करना चाहिए ? परम, तू क्या कहता है ? बता तो मैं जला जा रहा हूँ । पढ़ नहीं पाता हूँ, सो नहीं पाता हूँ, खा नहीं पाता हूँ । बताओ, नहीं तो किसी दिन 'हिन्दू' में पढ़ोगे, 'एक युवक को मृत्यु, एम० आई० आर० लाइन पर शव, आत्म-हत्या ।"

परम०—"छि छि ! मैं काँपा जा रहा हूँ, मेरा दिल धड़-धड़ कर रहा है ।

राजे०—"कहीं दिल गले के रास्ते न निकल जाय ।"

नारायण०—"तू उसके बारे में न कह ! रविवार को मैं, राजू, परम आयेंगे, सब तेरी बात सोचेंगे, आओ, चलें सोएँ ।"

राजे०—"नारायण, मुझे नींद नहीं आती, तो भला मैं तुम्हें क्यों सोने दूँ ?"

नारायण०—"अरे, तेरा सिर फोड़कर तुझे सुलाऊँगा !"

राजे०—"तू आन्ध्र में, मद्रास के आन्ध्र विद्यार्थियों में भले ही बलवान हो—रास्ते में धोबी के लड़के को रखकर, साईकल पर से उतरकर यूरोशियन को उसे बूट से पीटता देख, भले ही तू आँखें लाल-पीली करके उसे डरा दे, उससे माफी मँगवा ले, पर क्या तेरी चोट से मुझे नींद आयगी ?"

तब हँसे, नारायण लेटते ही सो गया । परमेश्वर और राजेश्वर बातें करते रहे । सवेरा हो गया ।

सहृदय परमेश्वर ने कई बातें करके राजेश्वर को सान्त्वना दी ।

प्रेम को कौन जान सकता है ? प्रेम को कितनी ही अवस्थाएँ हैं ? कुत्तों की कामेच्छा भी प्रेम है, सुन्दर स्त्री को चाहना भी प्रेम है, दया भी प्रेम की एक अवस्था है, दो आत्माओं का एक हो जाना प्रेम को उत्तम दशा है । प्रेम की परमावधि आत्मा का परमात्मा में लीन हो जाना है ।

"मैं इतने दिनों से एक ऐसी लड़की की प्रतीक्षा में हूँ जो मेरे हृदय को आकर्षित कर सके, जो मुझे प्रेम कर सके, जिसे मैं प्रेम कर सकूँ, तेरा उद्देश्य तो इतना बड़ा नहीं है, तेरे लिए स्त्री चाहे-जैसी भी हो, तड़क-भड़क हो तो काफी है । मेरे लिए यह काफी नहीं है, मुझे कला-पूरित हृदय चाहिए,

कला को सौन्दर्य अधिक चाहिए, दोनो कहाँ-कहाँ एक साथ मिलेंगे ? अगर मुझे ऐसी लडकी मिल गई तो मुझे उससे देह-सम्बन्ध की भी वाछा नही। भले ही तू मुझे नपुसक कह, ढोगी कह, कोई बात नही, कुछ भी कह ! कोई बात नही है, मैं नही कहता कि मैं पवित्र हूँ, दो सुन्दरियो से मैंने ·· किया, पर फिर उनका मुँह न देखा। सिवाय नारायण के किसी और ने नहीं कहा है, 'मैं दूसरी स्त्री को नही जानता हूँ, नही चाहता हूँ,' अगर कोई कहे तो जानना कि वह झूठ कह रहा है।"

"दो दिन पहले राजो, मैंने श्यामसुन्दरी की बहन रोहिणी को देखा था। वह हर तरह से मेरी मित्र है, सुन्दर भी है, मेरे उद्देश्य के अनुकूल है। मैं जिस सुन्दर देवी को युग-युगो से स्वप्नो में देखता आया था, वह वही है। तब परमेश्वर ने यो गाया ·

'अरी सखी, तू कौन है,
स्वप्न सुन्दरी तू है सखि या,
प्रकृति-प्रेम-बाला नूतन है,
परे नील मेघो के नभ में
चम चम तारो में नर्तित है,
महानन्द लीला में मग्ना,
और स्वर्गगा में ज्योतित है,
बता, मुझे तू कौन है ?
अरी, सखी तो तू कौन है' ?"

"श्यामसुन्दरी कौन है, वही मगलूर की लडकी न, जो मेडिकल कालेज में पढ रही है ? मै उन्हें खूब जानता हूँ, वे बहने बडी सुन्दर है। उनमें से बडी तीन बहनो को पाने की मैंने बहुत कोशिश की। श्यामसुन्दरी के बारे में बहुत-कुछ मालूम किया, पर कोई फायदा न हुआ। श्यामसुन्दरी बडी अजीब है, खद्दर पहनती है, १९२१ में वह कालेज छोड़ गई थी। फिर कालेज में शामिल हुई है, पवित्र जीवन है। पहले तो मुझे ढोग लगा, पर बाद में मालूम करने पर यह सच निकला। मैं तुम्हारे साथ वहाँ आ नहीं सकता, श्यामसुन्दरी को मुझसे भय है।"

सोता हुआ नारायणराव मालूम नही कैसे यकायक उठ गया। "क्यो,

श्यामसुन्दरी देवी को क्या बात है ? क्या उन्हें तू जानता है ?"

राजे०—"अरे भाई, यह क्या ? स्त्री का नाम लेते ही क्यों उछल पड़े हो ? श्यामसुन्दरी नाम में क्या रखा है ?"

नारायण०—"अरे राजी, मुख बन्द कर, बकवास न कर ! मैं जानता हूँ कि श्यामसुन्दरी का चरित्र निष्कलंक है। यही बात मुझे स्वप्न में भी मालूम हुई, और उसी समय तुम भी यही कह रहे थे, क्या बात है, ?"

परम०—"यह भी यह कह रहा है कि वह पवित्र है, उसने 'जासूसों' से भी यही मालूम किया है।"

नारायण०—"कुछ भी हो, भारतीय स्त्रियाँ उत्तम चरित्र वाली होती हैं।"

परम०—"हाँ, हम भी मानते हैं।"

राजे०—"खैर, तूने उठकर परमेश्वर की कहानी रोक दी है। सुना है, उसको स्वप्न-सुन्दरी, आदर्श स्त्री मिल गई है ?"

नारायण०—"रोहिणी देवी न ? वे बहनें सचमुच बड़ी प्रभावशाली हैं, अरे राजी, अगर तू आदितवार शहर आया तो सब मिलकर वहाँ चलेंगे।"

राजे०—"वे मुझे जानती हैं, मुझे देखते ही डरती हैं, यह फिर कभी बताऊँगा।"

परम०—"उनको भी इधर-उधर फुदकनी तितली जानकर इसने उस पर टोपी डालनी चाही, पर मुँह की खानी पड़ी, और वे इससे डर गए।

नारा०—(हँसते हुए) "अरे, अभागे, बावले, परम मूर्ख !"

परम०—"मेरा नाम न ले !"

सब हँसते-हँसते बिस्तरों पर से उठे।

१८ : दशहरा

दशहरे की छुट्टियों में नारायणराव, जानकम्मा सुब्बाराय, सूर्यकान्तं रमणम्मा, और लक्ष्मीपति, जो उन दिनों राजमहेन्द्रवर में रह रहे थे, वेंकाम्मा, उसके बच्चे, सत्यवती और उसके बच्चे, श्री राममूर्ति और उनका परिवार सब राजमहेन्द्रवर में जमींदार के घर गए।

जमींदार स्वयं जाकर इन सबको बुलाकर लाये थे। सुब्बाराय ने बहुत कहा कि "मैं न आ सकूँगा, आप लड़की और सास को ले जाइये।" पर जमींदार ज़िद करके उनको ले ही गए।

जमींदार ने सुब्बाराव जी के बड़े दामादों को भी बुलाना चाहा, पर उन्होंने आने से इन्कार कर दिया।

जमींदार और सुब्बाराव के मित्रों के प्रभाव से लक्ष्मीपति को राजमहेन्द्रवर के गवर्नमेंट कालेज में आचार्य की नौकरी मिल गई थी। तब से पत्नी रमणम्मा के साथ, और माँ के साथ वह राजमहेन्द्रवर में ही रहने लगा था। जमींदार की बड़ी लड़की शकुन्तला भी आई हुई थी। बड़े दामाद दो दिन त्योहार के समय पर आने वाले थे। वरद कामेश्वरम्मा ने बहू-सुनकर पति से जगन्मोहन राव को भी निमन्त्रण भेजा था, उसने उसको शारदा से भी लिखवाया। मद्रास से आनन्दराव की पत्नी आई।

नारायणराव को पहले ही छुट्टी मिल गई थी। वह कोत्तपेट जाकर बन्धुओं से मिलकर ससुराल आया।

जमींदार के बड़े दामाद, डिप्टी कलक्टर और मद्रास से आनन्दराव भी त्योहार के दिन आ गए।

नारायणराव जब तक मद्रास में रहा, आनन्दराव ने भूलकर भी उसे अपने घर न बुलाया। जमींदार जब शासन-सभा की बैठक के लिए आये तब वे अपनी कार में उनके घर गये, और उनको अपने घर बुला ले गए। नारायणराव से बात भी न की।

जमींदार के घर में उनकी बहन, सुन्दर वर्धनम्मा ने नारायणराव से बात की। जमींदार के गरीब रिश्तेदारों में से रंगम्मा ने बड़े प्यार से उसका आदर किया, नौकर-चाकर डर के कारण उसको प्रेम की दृष्टि से

देख रहे थे, क्योंकि उसकी सास, नौकरानियों के सामने उसे बुरा-भला कहती थी, इसलिए वे मौन रहती थी।

जमीदार के बाद, नारायणराव से प्रेम करने वाला केशवचन्द्र ही था। केशवचन्द्र जीजा को न छोड़ता। जीजा के साथ ही भोजन करता, वह उससे बातें करता, सोने के समय तक वह उसके साथ ही रहता, कहानियाँ सुनता रहता। यह लड़का जो कभी किसी के पास नहीं जाता था, उसको नारायणराव के पास जाता देखकर जमीदार को आश्चर्य और सन्तोष होता।

जमीदार ने एक कमरा, नारायणराव को, एक बड़े दामाद को, एक सुब्बाराय को, एक आनन्द राव को, एक स्त्रियों को दिया—इस तरह सभी निमन्त्रित बन्धुओं के रहने की व्यवस्था की। कमरे सजाये गए थे, शयनकक्ष दूसरी मंजिल पर और नीचे दाहिनी तरफ थे। पिछले और सामने के कमरों में सम्बन्ध था। जमीदारी का 'दफ्तर' जमीदार के घर से ५० गज दूर था। वह भी दुमंजिला था, वहाँ मैनेजर का कमरा, रिकार्ड कमरा, खजाना आदि सब थे।

जमीदार के घर, कलश-प्रतिष्ठापन, दसों दिन पूजा, हरि-कथा, संगीत का कार्यक्रम रहा। जमीदार चूँकि वीरेशलिंगम् पन्तुलु के शिष्य थे, इसलिए पूजा आदि में उतनी दिलचस्पी दिखाते थे।

श्रीराजे राजा विश्वेश्वर राव—डिप्टी कलक्टर, ने नारायणराव को एक बार देखकर मुँह नीचा कर लिया था, उनका खयाल था कि ससुर उसको अधिक चाहते थे। उसे ईर्ष्या होने लगी, "भले ही रईस हो, पर इस मामूली घर के लड़के को क्यों ससुर इतना चाहते थे, मालूम नहीं," वे सोचा करते।

उन्होंने उस दिन ससुर को नारायणराव से कितनी ही बातें करते देखा। जमीदार ने बड़े दामाद से कहा कि नारायणराव बहुत बुद्धिमान् था और विश्वविद्यालय की सभी परीक्षाओं में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ था।

दोनों दामादों में बातचीत शुरू हुई. "आप तो जेल हो आए हैं? फिर आप क्यों कालेज में दाखिल हुए?" विश्वेश्वर राव ने पूछा।

"मैंने गलती ही की, माँ-बाप की एक न सुनी, इण्टर पास होते ही मैंने उस साल गर्मियों में सत्याग्रह किया, जेल भी गया।"

"राजमहेन्द्रवर में ही थे क्या ?"

"दो महीने राजमहेन्द्रवर में, चार महीने वल्लौर में !"

"अच्छा !"

"जेल से बाहर आया, जेल जाने से पहले मैंने देश का भ्रमण किया, व्याख्यान दिये। खद्दर का प्रचार किया। पहले पाश्चात्य शिक्षा छोड़कर संस्कृत पढ़ने की सोची। गुजरात विद्यापीठ में दाखिल होना चाहा। छोटा था, हिम्मत अधिक थी, फिर यह ख्याल आया कि परीक्षाएँ पास करके देश की सेवा और अच्छी तरह की जा सकती है। मैं मद्रास जाकर बी० ए० आनर्स की श्रेणी में शामिल हुआ। १६२३ में फिजिक्स में आनर्स पास हुआ। इस बीच में स्वराज्य-पार्टी का बोल-बाला अधिक हो गया, और मैं उसमें ऊबकर ला कालेज में दाखिल हो गया।"

"आप सत्याग्रही तो अदालतों का बहिष्कार करते हैं न ? इसलिए आपका लॉ कालेज में दाखिल होना आश्चर्यजनक है।"

"हर किसी को आश्चर्य हो सकता है, मैंने इसलिए यह नहीं किया कि मैं वकालत करूँगा। मैंने अभी कुछ निश्चय नहीं किया है, पर मैं जानता हूँ कि मैं एक ऐसा काम कर रहा हूँ, जिसे मेरा मन कतई नहीं चाहता।"

"मैं तो यह कहूँगा कि आप सत्याग्रह आदि छोड़कर, हाईकोर्ट में वकील बनकर—अगर—मुन्सिफ का काम मिनटों में पाया जा सकता है, और जेल कैसी थी ?"

"पहले-पहल तो डर लगा, फिर आदत-सी हो गई।"

"क्या काम करवाया गया था आपसे ?"

"हम-जैसों को तेल के कोल्हू चलाने, या चक्की चलाने का काम दिया जाता था। रस्सी बनाना, कम्बल बनाना आदि भी। राजमहेन्द्रवर जेल में उन्हीं दिनों मोपले आये थे, उनके पैरों में जंजीरें बाँधकर जंजीरों को एक सींखचे में घुमाकर, पशुओं की तरह बाँधा करते थे।"

"भोजन ?"

"साम्बमूर्ति जी ने हमारे लिए अलग भोजन का प्रबन्ध करवाया। सीताराम शास्त्री ने जेल के मुख्याधिकारी के सामने चौदह शर्तें रखीं। लालटेन, लिखने के लिए कागज, पाखाने की जगह अलग-अलग, पेशाब-

घर, भोजन में दाल-शाक का अलग-अलग तैयार किया जाना। घी, मट्ठा दिया जाना। श्राद्ध करने दिया जाना। महीने में दो पत्र, महीने में एक बन्धु या मित्र का दर्शन, पैरों से जंजीर निकाल देना, रसद का बढ़ाना आदि।"

"क्या ये सब बातें मानी गईं?"

"कहाँ मानते? राजमहेन्द्रवर में लिखने के लिए कागज और कलम दिया गया, साबुन, थालियाँ, घी, मट्ठा दिया गया। हर किसी को अपनी लालटेन लाने की अनुमति दी गई। पर ये सब सुविधाएँ कडलोर में वापिस ले ली गईं। वहाँ फिर आन्दोलन हुआ, तब वही चीजें दी गईं। इतने में मेरे छः महीने खत्म हो गए, और मैं बाहर आया।"

"बड़ी तक़लीफ है, न जाने आप वहाँ कैसे रहे, मैं इस असहयोग-आन्दोलन को सर्वथा व्यर्थ समझता हूँ। जो-कुछ हक मिले हैं, उन्हींको लेकर अगर हम सन्तुष्ट होकर शासन करते जायँ, तो और भी हक मिलेंगे, स्वराज्य भी मिलेगा।"

"अलग-अलग मत है, उनके बारे में एक राय होना असम्भव है।"

उनकी बातचीत जमींदार चुपचाप सुन रहे थे। जेल के बारे में जब नारायणराव कह रहा था उनकी आँखों में नमी आ गई थी। पास में बैठे सुब्बाराय जी की भी हिचकियाँ बँध गई थीं।

जमींदार ने सोचा कि नारायणराव वीर है। सुब्बाराय जी उसको पुत्र रूप में पा, अपने को धन्य समझ रहे थे।

नारायणराव ताड़ गया कि उसका परिहास करने के लिए ही विश्वेश्वर राव ने ये सब बातें उससे पूछी थीं। नारायणराव का हृदय निष्कलंक था, वह सत्यभाषी था। सत्यभाषी ही उसके मत में सर्वशक्तिशाली था।

वह ससुर के हृदय को जानता था। पिता के हृदय से भी वह अपरिचित न था। छोटे लोगों की छोटी बातों से नारायणराव लजा गया था। उसने अपने हृदय को खोजा, उसे अपने घराने में कोई दोष न दिखाई दिया।

—धीरे-धीरे अन्धेरा हो गया।

१६ : दनाम

शारदा अपनी सास के पास नहीं गई। जानकम्मा ने यह भी देखा कि शारदा की माँ उससे बातचीत न करके, अपने बन्धु-बान्धवों से ही हिल-मिलकर बातें कर रही थी, पर सुन्दर वर्धनम्मा, हजार आँखों से जानकम्मा और उसकी लड़कियों की देख-भाल कर रही थी।

जगन्मोहन के तरस खाने पर कि उसका पति गँवार था, शारदा के मन में भय पैदा हो गया था। जगन्मोहन राव ने कहा था कि अगर पति पढ़ा-लिखा है तो भी क्या फायदा? जगन्मोहन के हल्के पीले रंग के सामने श्यामल नारायणराव का रंग उसे काला लगने लगा। दशमी के दिन जब वे एक साथ भोजन करने के लिए बैठे तो सब जगन्मोहन राव के मुकाबले में काले ही लगे। उसकी माँ ने उसे यह भी दिखाया था कि लक्ष्मीपति और नारायणराव भीलों की तरह थे। यद्यपि उसका मन कहता था कि पति गोरा है। वह उसके विशाल वक्ष, विलास गमन, ज्ञान, धैर्य, बल, वेश-भूषा से प्रभावित थी, तो भी माँ के बहकाने पर वह उसको न भाता था।

जब भोजन के उपरान्त सब पान चबा रहे थे तो शारदा के पिता ने चाहा कि वह भी रामय्या के साथ अपना संगीत-कौशल दिखाये, "क्या मुझे इन सबके लिए गाना भी होगा?" शारदा ने पिता से पूछा। "पिता जी, आज गाने की मर्जी नहीं है।" उसने कहा।

जमींदार अपनी दोनों लड़कियों और लड़के से खूब प्रेम करते थे, उन्होंने जब जो माँगा तब उन्होंने दिया, वे तीनों पिता से डरते भी थे, और उन्हें प्रेम भी करते थे। उनको सन्तुष्ट करने का भी प्रयत्न करते थे। जब शारदा ने पिता को उदास देखा तो शारदा की आँखों में नमी आ गई। उसने कहा, "मैं जरूर गाऊँगी।" "अच्छा!" पिता ने कहा। पर उसकी आँखें छलछलाती देख उन्होंने कहा—"अगर तबियत ठीक नहीं है तो न गाओ, फिर कभी सही।"

शारदा झट वहाँ से भाग गई। लाडली लड़की यों दुखी क्यों हो रही थी? जमींदार ने सोचा।

नारायणराव अपनी छोटी पत्नी के लिए जितने ही उपहार लाया था,

सोने का हार, मणि-मोतियों से जड़ा, हुआ उसकी कीमत १८०० सौ रुपये थी। स्वयं पत्नी के गले में हार डालने के लिए वह लालायित हो रहा था।

उसने रंगम्मा को धीमे-धीमे उसे दुमंजिले पर लाने के लिए कहा। क्योंकि वह उसे एक उपहार देना चाहता था। रंगम्मा कोई बहाना बनाकर शारदा को ऊपर ले आई। नारायण राव ने आकर कहा, "शारदा, त्योहार पर, मैं तेरे लिए यह तोहफा लाया हूँ।" उसने वह हार दिखाया, शारदा उसे बिना लिये ही हैरान खड़ी रही। रंगम्मा ने कहा, "ले लो न बेटी, नहीं तो अच्छा न होगा।" शारदा ने हार ले लिया, अपने कमरे में जाकर उसे सन्दूक में रख कर, वह नीचे चली गई। नारायण राव उसको वह हार पहने देखना चाहता था।

रंगम्मा को कोई अजीब घटना दिखाने के बहाने दुमंजिले पर ले आना, और पति का उसे यह उपहार देना, देखकर शारदा चौंक-सी गई। वह कुछ कह नहीं सकती थी। रंगम्मा पर भी लाल-पीली नहीं हो सकती थी। सोचती-सोचती वह छोटे भाई के खेलने के कमरे में जा बैठी।

"हाथी, तेज दौड़ता है, या घोड़ा?" भाई ने पूछा।

"हाथी।"

"पर चाबी देकर दौड़ाने से दोनों एक ही जैसे क्यों भागते हैं?"

शारदा ने हँसते हुए कहा, "वह घोड़ा और वह हाथी इसी तरह भागते हैं।"

"बहन-कभी छोटे जीजा ने तुझे कहानियाँ सुनाई हैं?"

शारदा चुप रही।

"क्या छोटे जीजा तुझे मद्रास ले जायेंगे?"

"छी, अरे जाने भी दे।"

"अच्छा, अगर तुझे इतना गुस्सा आता है तो तुमसे अच्छे छोटे जीजा ही हैं?"

शारदा उचकती-उछलती वहाँ से चली गई। उसने रास्ते में जगन्मोहन को देखा। जगन्मोहन ने कहा, "शारदा जरा इधर तो आओ, कहाँ छिपी हुई थी? तुम्हारे लिए सारी जगह छान मारी।"

शारदा तब भी गुस्से में थी। वह कुर्सी घसीटकर बैठ गई।

"इतने गुस्से में क्यों हो ? किस पर ? कहीं मुझ पर तो नाराज नहीं हो ? देख, तेरे लिए उपहार लाया हूँ, त्योहार पर ! देख, यह कितनी छोटी घड़ी है, चूड़ी पर जड़ी हुई है, देख !" उसने कहा।

शारदा ने वह देखकर कहा, "बहुत अच्छी घड़ी है, पिता जी की दी हुई घड़ी में भी अच्छी है।'

"हाथ तो दो, शारदा का बायाँ हाथ लेकर उस पर वह घड़ी पहनाकर हाथ को इधर-उधर हिलाते हुए उसने हाथ का चुम्बन किया। शारदा काँप-सी गई। शारदा की कमर में हाथ डालकर उसने उसके सिर को अपने हृदय पर लगा लिया। शारदा का हृदय धक्-धक् करने लगा। उसका हाथ छुड़ाकर शारदा ने कहा, "तेरी घड़ी माँ को दिखाऊँगी ?" वह वहाँ से चली गई।

उसी दिन शाम को एकान्त में वह जगन्मोहन के आलिंगन के बारे में सोचने लगी—'वह अच्छा है, खूबसूरत है, परन्तु उसका आलिंगन मुझे अच्छा क्यों नहीं लगा ? यह सच है कि मेरा शरीर पुलकित जरूर हो गया था। दोनों के उपहारों में किसका उपहार अच्छा है ? दोनों ही उपहार अच्छे थे।' उसे मानना पड़ा।

उसे बताया गया था कि जगन्मोहन राव बहुत सुन्दर है। पर वह अब यह निर्णय नहीं कर पा रही थी कि नारायणराव खूबसूरत है या जगन्मोहन राव ? किन्तु यह कैसे हो सकता है कि जगन्मोहन राव उससे अधिक सुन्दर न हो।

जगन्मोहन से यदि वह विवाह करती तो वह एक जमींदारनी हो जाती। अब गाँव में रहना होगा। पति नौकरी करे तो क्या फायदा ? जगन्मोहन हमेशा दिलचस्प गप्पें लगाता रहेगा, कितना ही प्रेम करता था। क्यों ? शायद वह मुझसे शादी नहीं करना चाहता। उसने सोचा, उसकी माँ और बहन ने कई बार सोचा था कि बदकिस्मती से वह उस घर में ब्याही गई थी। अब उसका अपना खयाल भी यही था ?

२० : बाप-दादाओं की गप्प

त्योहार के दिन, भोजन के बाद, जमींदार ने स्वयं सुब्बाराय जी को सफ़ेद रेशमी कपड़े दिये। केशवचन्द्र के हाथ उन्होंने दामादों को, व अन्य सम्बन्धियों को, लक्ष्मीपति, व श्री राममूर्ति को भेंट भेजी। स्त्रियों को जमींदारनी ने उपहार दिये। सबने नये वस्त्र पहने।

त्योहार से अगले दिन सुब्बाराय सकुटुम्ब श्रीलनेट पहुँचे। सुब्बाराय के परदादा के लड़के के लड़के राधाकृष्णय्या, दोण्डपेट से आये। वे ७५ वर्ष के वृद्ध थे। गाड़ी पर नहीं चढ़ते थे, कितनी ही दूर जगह हो, पैदल चलते थे। सफ़ेद पकी मूँछें—बड़े बाल। भीष्म की तरह थे। सुब्बाराय से भी अधिक बलशाली थे।

"रे सुब्बाराय, बाल-बच्चे ठीक हैं न? देखने आया हूँ, जाने फिर देखने को मिले या नहीं, अरे कमजोर हो गए हो? आजकल तुम्हारी उम्र में भी लोग बूढ़े होने लगे हैं। तेरे बच्चे कहाँ हैं? यह बड़ा है, और यह छोटा, तेरी चार ही लड़कियाँ हैं न? वह बड़ी है। तेरे बच्चे कहाँ हैं श्री राममूर्ति? यह छोकरा तेरा लड़का ही है? हमारी बहू कहाँ है? शादी के लिए राजमहेन्द्रवर आना चाहता था, पर विजयानगर जाना पड़ गया। पैदल ही जाता, पर इस बार चलवैय्या ने जिद पकड़ी कि गाड़ी में ही जाना होगा। मैं उससे पहले ही पहुँच जाता, परन्तु यह अनुभव भी अजीब है, पहली बार ही गाड़ी पर चढ़ा था,—क्यों कितनी जमीन-जायदाद कमाई है?"

"है, तेरे से कौन-सी बात छिपी है?"

"तेरा काम अच्छा है। सुना है जमींदार के घर सम्बन्ध जुड़ाया है। खुशी है। तेरी दूसरी बहू को देखना है। राजमहेन्द्रवर जाऊँगा, तू अपने साढ़ू को लिख दे कि मैं वहाँ आऊँगा। उसे देखकर मोटर में द्राक्षाराम जाऊँगा।"

"तू दस-पन्द्रह दिन यहाँ रह!"

"नहीं, यह नहीं हो सकता।"

"नहीं, यह कहने से काम नहीं चलेगा।"

"अच्छा!"

. तटवर्तीय-वश का नाम, बडा ही था। प्रान्त में वे सभी जगह है। काफी जमीन-जायदाद कमाई है। राधाकृष्णय्या जी की भी अच्छी सम्पत्ति थी, पर चूंकि उनके लडको में बटवारा हो गया था इसलिए चार लडको को बीस-बीस एकड जमीन मिली। इसके अलावा, विवाह आदि के लिए कर्ज लिया गया था। वह अब बढ रहा है।

"बाबू, क्या सब कर्ज चुका दिया है?"

"क्या चुकाना? लगता है, हमारे बच्चो की जिन्दगी मारवाडियो के हाथ जायगी। रामचन्द्रपुर वालो को सात हजार देना है, जिसे देखो उसी पर कर्ज है, हर जगह कर्ज बढ रहा है, कैसे चुकाया जाय? कोई ऐसा नही दीखता, जिसके पास चार रुपये जमा हो।"

"हाँ, देश की फसल कहाँ जा रही है? लोग कहते है कि यह सब सरकार द्वारा निश्चित रुपये और सोने की कीमत की वजह से है। एक्सचेंज की दर कम करके अगर रुपये की कीमत ठीक कर दी गई तो यह बला न रहेगी। जापान में यही किया जाता है। इसीलिए उनकी चीजें इतनी सस्ती है। न वहाँ कर्ज है, न गरीबी ही।" नारायण कह रहा था।

"जाने क्या बात है, हमने बचपन में जो खाया था, चावल खाया था, चीजें बडी सस्ती थी। हमारे बाप-दादाओ के पास सब मिलकर २०० एकड जमीन थी, स्वय खेती करते, साग-सब्जी पैदा करते। मेरा पिता, जौ की पुआल खेत से ढोकर लाया करता था, दुनिया उनसे कॉपती थी। कम्पनी के राज्य से पहले जमाने की बातें हमारे बाबा रामय्या मुझे सुनाया करते थे। तुम्हारे पिता भी जानते होगे। तुम्हारा बाबा इस गाँव में दामाद होकर आया था। उन दिनो जब हमारे बाबा के पिता पालकी पर निकलते थे, तो लोगो को उन्हें देखने के लिए गलियो में जगह नही मिलती थी। तुम्हारे बाबा का बाबा, मेरे बाबा का पिता था, जानते हो? वे नवाब के पास भी पालकी में जाया करते थे मुन्नाराय!"

नारायण०—"क्यो बाबा, आपके बाबा बहुत लम्बे-चौडे थे?"

राधा०—"अरे, नारायण, मुझे देखा है न, मेरे मुकाबले में, मेरा बाबा, को बस मन्दिर का गोपुर ही समझ! उनका बल, उनकी शक्ति हममें कहाँ है?"

नारायण०—"जो आपके पास है, हमारे पास नहीं है।"

राव०—"तुम उनके सामने क्या हो? हमारा पिता कर्णीक के लिए, १४ गांव फिरकर दोपहर को जब घर आते थे, तो हमारी माँ धान कूट-कर चावल बनाती, बड़ू वा शाक बनाती। रसोई होने पर बाबा आते, स्नान करते, सन्ध्या होते होते बारह बजते, अतिथि-अभ्यागत सब मिलकर बीस आदमी घर में खाते थे।"

नारायण०—"मैं मद्रास जाने से पहले जरूर दोण्डपेट आकर सम्बन्धियों को देखूंगा।"

राधाकृष्ण चार दिन रहे। सुब्बाराय ने अपने चाचा को खेत, घर, बाग-बगीचे सब दिखाये।

आन्ध्र ही नहीं सारा भारत अधोगति में था, यह राधाकृष्णय्या का मत था। हर कोई हमेशा बीमार, दस कदम सीधे होकर चल नहीं सकते, सौ साल की बात अलग सत्तर वर्ष भी जीते नहीं रहते।

"अरे सुब्बाराय कभी हमारे देश ने अच्छा किया था इसलिए आज जिन्दा है। नहीं तो कभी का बरबाद हो चुका होता। तुम्हारी क्या राय है?"

"हाँ, बाबू, कोई रास्ता नहीं दिखाई देता, पढ़ाई-लिखाई, सभ्यता, मोटर-रेल, रद्दी भोजन, यह सब बढ़ता जा रहा है।"

"हाँ, इन्हीं चीजों के कारण हमारी यह गति हो रही है। कहा जाता है कि डेल्टा जमीन वाले औरों से अच्छे है। पर सच कहा जाय तो उनमें अधिक कोई गरीब नहीं है। नहर के नीचे की जमीन सब बंजर हो गई है न?"

"फिर इसके साथ मिल का घिसा चावल!"

"और क्या, तुम्हारे घर में कुटे हुए चावल को देखकर बड़ी खुशी हुई। आजकल इन लोगों के गरीब हो जाने, कमजोर हो जाने के क्या कारण है? क्योंकि इनमें देव-भक्ति नहीं है, सन्ध्या नहीं करते, मन्दिर नहीं जाते, पूजा नहीं करते, इनके कारण देश का यह हाल है।"

नारायण०—"बाबा, तुम यह क्या कह रहे हो? ये पूजा-पाठ किस जमाने में हुआ करते थे?"

राव०—"किस जमाने में? हमारे जमाने में!"

नारायण०—"तो हम-जैसों का पैदा होना आपकी वर्दाश्तमनी है, या हमारी ?"

राधा०—"तुम्हारी भी, हमारी भी।"

नारायण०—"तुम्हारी ही समझो! उस हालत में हमारी गलती कोई नहीं है न? हममें भक्ति के न होने का कारण क्योंकि आप हैं, इसलिए इसमें हमारा दोष कोई नहीं। मान लिया जाय कि हम कारण हैं, तो इस हाल के लिए कभी-न-कभी तो दुष्कर्म किया होगा, यानी उन दिनों भी नास्तिक थे। जब तब थे, तो अब होने में क्या आश्चर्य है?"

राधा०—"अरे मुख्याराय, तेरा लड़का बड़ा बकने वाला है!"

उस दिन शाम को नारायणराव बाबा की बात याद करता रहा। उसे वे दिन भी याद आये जब वह कहा करता था कि न राम है न भगवान् ही। 'इगर सोल' के ग्रन्थ को उसने कितने ही साल सच माना था। आजकल के युवक भक्ति-हीन हो गए हैं। उसे वे दिन भी याद आये जब कि प्रान्त में घूमते-घूमते मन्दिरों में वह भक्ति की भावना में आ जाता था।

भक्ति किस लिए? मोक्ष के लिए? मोक्ष का क्या मतलब है? मोक्ष क्या भगवान् से तादात्म्य है? मोक्ष न हो तो क्या हानि है? पैदा होते और मरते रहेंगे, पैदा होने और मरते रहने से भगवान् से दूर रहकर शैतान बने रहने में क्या हर्ज है? भगवान् कौन है? कोई शक्तिशाली व्यक्ति? उस शक्तिशाली व्यक्ति को किसने पैदा किया? नहीं। वह नाम-रूप आदि हीन शक्ति है, न यह है, न वह है, नहीं है। कुछ भी न हो तो क्या खराबी है? यो जोर-शोर से नारायणराव कभी युक्ति दिया करता। आज वे सब बातें फिर याद आईं।

'इस अनन्त विश्व में, इस सौर मण्डल में, एक भूमि में, कीड़े के समान उसका भगवान् के बारे में कहना क्या सच है? 'शिवोऽहं' का ज्ञान प्राप्त कर लेना ही मुक्ति है? नहीं तो मैं ब्रह्म हूँ, समस्त संसार ब्रह्म है, एक सम्राट् की तरह जो स्वप्न में अपने पद को भूल जाता है पर उठते ही वह अपने को सम्राट् समझने लगता है। क्या ब्रह्म भी अपने को इसी तरह समझता है? आत्म-ज्ञान के परिपक्व हो जाने पर इन ग्रन्थों के पढ़ने से कुछ पता लगता है, क्या पता लगता है? जो कुछ पता लगता है वह

सब माया हो सकता है। सत्य का साक्षात्कार शायद उत्तम पुरुष को ही होता है। क्या मैं इस जन्म में सत्य का साक्षात्कार कर सकूँगा ? मुझमें से अभी तक एक भी इच्छा नहीं गई है ? शारदा मेरी है, बन्धु मेरे हैं, सम्पत्ति मेरी है, मित्र मेरे हैं, मेरी विद्या, मेरी, मेरी मेरी ।' वह सोचता रहा ।

२१ : स्त्री-जीवन, हीन जीवन

अगले दिन सुब्बाराय को उनकी दूसरी लड़की से चिट्ठी मिली। सत्यवती २० वर्ष की उत्तम स्त्री थी। शक्ल-सूरत में भी सुन्दर थी, परन्तु भय के कारण सींक की तरह हो गई थी। पति हमेशा सताता। पहली लड़की के बाद बच्चे पैदा हुए और मर गए। अब वह फिर गर्भवती थी।

वीरभद्र राव बड़ा शक्की और निर्दय, कर्मकाण्डी ब्राह्मण था। छुट-पन में वह बड़ा खुशदिल था पर अब दिन-रात आग उगलता था। उसकी माँ भी उससे डरती थी, पेद्दापुर में डिप्टी कलक्टर के दफ्तर में वह क्लर्क था, ५० रुपये वेतन था, ८० रुपये तक आमदनी हो जाती थी।

रैवेन्य-सम्बन्धी बातों में वह बड़ा समझदार समझा जाता था। घर में अगर वह शेर था, तो दफ्तर में वह भीगी बिल्ली बन जाता था। अफसरों के सामने काँपता था, उनको खुश रखा करता था, पटवारियों पर व भेड़िये की तरह टूटता। अगर उसके पास कोई बड़ा आदमी काम पर आता, तो मिनटों में काम कर देता। अगर छोटे लोग आते तो इधर-उधर का गुस्सा, रौब दिखाता, और अगर कोई ऊबकर कहता, 'क्यों भाई, क्या बात है ? इन सबकी गवाही से ही, मैं कलक्टर को दरख्वास्त लिखूंगा, डिप्टी कलक्टर से अभी शिकायत करूँगा, ठहर,' तो वीरभद्र राव मुस्कराकर मेमने की तरह कहता, "काहे को गरम होते हो ? तंग हो गया था, इसलिए कह दिया, सवेरे से काम कर रहा हूँ, शाम तक थक-थकाकर तंग हो हीं

जाने है लोग ! जल्दी न करो, कहो क्या काम है ?"

उसका खाता-पीता परिवार था और प्रतिष्ठित भी। इसीलिए सुब्बाराय ने अपनी लड़की उस घर में दी थी। परन्तु अब लड़की को मुसीबतें झेलता देखकर सुब्बाराय हमेशा चिन्तित रहते।

सत्यवती नारायणराव की बहनों में सबसे अधिक सुन्दर थी। आँखें साफ बच्चों की-सी थी। वह हरिण की तरह सीधी-सादी, साध्वी, पतिव्रता थी। बुद्धिमती भी। जब डंडे से उसका पति उसे पीटता तो वह कुछ न कहती, 'राम राम' कहती, आँसू बहाती।

सत्यवती की लड़की भी सोने की मूर्ति-सी थी, माँ-जैसी थी। पिता जब माँ को मारते, तो वह भी खूब रोती। एक बार जब पिता माँ को पीट रहे थे, तो उसने रोका, "पिता जी, मत मारो, खून निकल रहा है," तो उस निर्दयी ने उसे भी धुन दिया।

जानकम्मा के नाम सत्यवती की लड़की नागरत्न ने चिट्ठी लिखी, "नानी, आज पिता जी ने माँ को इतना मारा कि माँ मूर्छित हो गईं। दो घंटे बेहोश पड़ी रहीं, पिताजी के डाक्टर को बुलाने जाने पर हमारे घर की किराये-दारिनी विजयलक्ष्मी ने मुझे चिट्ठी लिखने के लिए यह कार्ड दिया। वे ही इसे भेज देंगी। आजकल पिताजी बहुत गुस्सैल हो गए हैं। गलतियों के लिए माफी, आपकी पौत्री—नागरत्न !"

यह चिट्ठी पढ़ते ही जानकम्मा की आँखों से आँसुओं का फव्वारा फूट पड़ा। सुब्बाराय भी बिगड़े, सोचने लगे कि क्या किया जाय ? 'अगर मेरे बचपन में इस तरह की घटना मेरी बहन के साथ घटती तो मैं क्या करता? उस बहनोई को गढ़े में दबाकर क्या बहन को मैं घर न ले आता ? नहीं, यह नहीं करना चाहिए। स्त्री पतिव्रता है, पति-भक्ति-परायणा है, पति चाहे मारे भी, सब सह लेती है। भले ही वह बुरा हो, क्या वह चाहेगी कि उनका साला उनका काम-तमाम कर दे। कुछ भी हो, मेरी लड़की की यही गति है, मगर मैंने उसको अपने घर रख भी लिया तो क्या वह खुश होगी ? जाने दो, यदि बिना किसी के जाने उसे ले आया, और वापिस न भेजा तो ? बिगड़ेगी, तो मेरी लड़की ही। कुछ भी हो उस बेचारी को भुगतना ही पड़ेगा।' इसी उधेड़-बुन में सुब्बाराय बैठे रहे।

राधाकृष्णय्या ने यह सुनकर कहा,"क्यों सुब्बाराय, मौसी को भी उसका पति बहुत पीटता था। उनके घर वह दो साल भी नहीं रही थी कि दो बार कुएं में गिर पड़ी। दोनों ही बार किसी ने बचा लिया। उसके बाद उनमें ऐसी शक्ति आई कि उन्होंने पति के छक्के छुड़ा दिये। इसलिए तू क्या कर सकता है ? मैं क्या कर सकता हूँ ? मियाँ-बीबी के झगड़े कौन सुलझाये ?"

नारायण ने जब यह सुना तो पिता जी से कहकर वह पेद्दापुरं चला गया। उसकी बहन पिछले दिन त्योहार पर घर आकर वापिस गई थी। इस बीच में क्या हो गया ? स्त्रियों को सताने वाले पढ़े-लिखे पशु भी इस संसार में हैं। उनको सज़ा देना शायद भगवान् भी नहीं जानता।

तीसरे पहर दो बजे के करीब नारायणराव पेद्दापुरं पहुँचा। घर में जीजा न था। उसकी बहन और भानजी नागरत्नं घर में थी। "छोटे मामा, अम्मा को कल ही होश आया था, अम्मा का सिर फोड़ दिया था, पट्टी बँधी है, डंडे से पीटा था पिता जी ने, मुझे भी मारा!" नागरत्न ने कहा।

"अरे, मैया, मेरी यह बदकिस्मती! पर तुम्हारे रोने से क्या फायदा ? इस पगली ने, बता, तुम्हें क्यों चिट्ठी लिखी। माँ-बाप को दर्द देने के सिवाय इसका और क्या मतलब है ?"

"क्यों मारा था ?"

"किसी लिए भी मारा हो तब भी क्या ? पूर्वजन्म में किये पापों का फल भुगत रही हूँ। कोई वजह रही होगी। वे भले आदमी हैं, शहर भर के लिए अच्छे हैं, इसलिए जब लोगों को मालूम हुआ कि उन्होंने मुझे मारा है, तो उन्होंने मुझे ही बुरा-भला कहा। मैं कैसे कह सकती हूँ उनसे कि जो आप मेरे बारे में सोच रहे हैं, वह गलत है, मेरा कर्म ही ऐसा है।"

"जब से बड़े मामा अम्मा को घर छोड़कर गए थे तब से ही पिता जी माँ पर गरजने लगे। तब से आग-बबूला हो रहे हैं।" नागरत्नं ने कहा।

"परन्तु तुझे इतनी बुरी तरह मारने का क्या कारण है ?"

"और क्या है ? त्योहार पर घर जाकर कहते हैं कि मैंने हर आदमी को देखा, और भी क्या-क्या कहा। मैंने कोई जवाब न दिया। देती, तो तभी प्राण खो बैठती।"

"तो अच्छा, यह बात है।"

"भैया, मेरी कसम, अगर तूने जल्दी में, गुस्से में कुछ किया, तो तुम मुझे कुए में पाग्रोगे।"

"बहन, तेरा पति पशु है। जन्म लिया है तो मनुष्य को मनुष्य की तरह रहना चाहिए, न कि पशु बन जाना चाहिए। क्या वाहियात जिन्दगी है, इससे तो कुत्ते की जिन्दगी भली, सूग्रर की भली। ये बेहूदे पत्नी को मारकर दूसरी शादी कर लेते हैं, और दूसरी पत्नी के पैर दबाते हैं। कमीने कहीं के! इनकी जिन्दगी कोडों-जैसी है।"

"ग्ररे, तुझे गुस्सा आयगा, ताक़तवर है। कहीं हाथ उठा बैठेगा, मेरी ग्रौर भी बुरी हालत होगी। अपना-अपना मुकद्दर है, मुझे भुगतने दे। तू जा, घर जा!"

"बहन, तुम यह फालतू क्या सोच रही हो? मैं जीजा को मार नहीं सकता। ग्रगर मार पाता तो ग्रच्छा ही होता। ताक़त की बात नहीं है, मैं यह नीच काम नहीं करना चाहता।"

शाम को वीरभद्र राव घर आया। साले को आराम-कुर्सी पर बैठा देखकर चौंका। "क्यों भाई कब आये हो?" उसने पूछा।

"दोपहर को।"

"क्या काम है?"

"मद्रास जाने से पहले तुम्हें देखना चाहता था।"

"यह बात है?" अन्दर जाकर उसने अपनी लड़की नागरत्न को बुलाकर पूछा, "तुम्हारा छोटा मामा क्यों आया है?"

नागरत्न भय से काँप गई। उसकी आँखें डबडबा आईं। नारायण यह जानकर जीजा के पास गया, और उससे उसने कहा, "जीजा, इधर-उधर की कहने-सुनने से क्या फायदा? नागरत्न ने अपनी माँ के बिना जाने, पड़ोसियों के कार्ड देने पर हमारे घर चिट्ठी लिख दी थी। मैं पढ़कर चला आया। जीजा, तुम पढ़े-लिखे हो, लड़की की शादी होने वाली है,—दुनिया तुम्हारे बारे में क्या सोच रही है, क्या तुम नहीं जानते जीजा? हमारे परिवार में कभी कहीं ऐसा हुआ है?"

"मेरा तरीका यही है, मुझे क्या करने को कहते हो? मुझे जरा गुस्सा ज्यादा आता है। उसे रोकने की कोशिश करता हूँ, पर रोक नहीं पाता हूँ।

कहो, क्या करूँ ?"

"हाँ, रात को बात कर लेंगे, अभी कुछ न कहो।"

नारायणराव उसके लिए एक घड़ी खरीदकर लाया था; पर जब उसने दी तो वीरभद्र राव ने लेने से इन्कार कर दिया। नारायणराव ने उसकी ओर घूरकर कहा, "जीजा, तुम रोज-ब-रोज अजीब होते जा रहे हो। हम लोग मर्द हैं, स्त्रियाँ हमारे अधीन हैं। हमें स्त्रियों को भी मनुष्य समझना चाहिए। पर कई की नजर में वे पशु हैं, इसलिए उन्हें मार भी दिया तो कोई कुछ न कहेगा, क्यों? अफ्रीकी नीग्रोओ के लिए स्त्रियाँ एक चीज ही तो हैं? गुलाम हैं स्त्रियाँ? क्या हमें यह प्रयत्न करना चाहिए कि हमारे देश में भी यह गुलामी रहे? जीजा, तुम्हारा हृदय अच्छा है, लोगों में प्रतिष्ठा पा रहे हो। तुम अपना सारा गुस्सा घर वाली पर दिखाते हो, या अपने अधिकारियों पर भी दिखाते हो? अगर उन पर दिखाया तो मैं तुम्हें एक हजार रुपए दूँगा। यह गुस्सा, जो बड़े अधिकारी के गुस्सा करने पर भी तुम्हें नहीं आता, अपने अधीन स्त्री पर क्यों आता है? अधिकारी पर आने वाला गुस्सा क्या होता है? हम उसे दबा लेते हैं, काबू में रखते हैं। वही संयम हमें अपने अधीन व्यक्तियों पर क्यों नहीं करना चाहिए? युग पुरुष, क्या गान्धी, क्या बुद्ध, क्या ईसा, प्रेम का ही तो उपदेश देते हैं? क्रोध को शान्त करके यदि हम प्रेम करें तो हमारे प्रेम-पात्र युग-युग तक अपनी कृतज्ञता दिखाते हैं। और एक पर हिंसा का बर्ताव करके सारे संसार में अहिंसा का बर्ताव अगर कोई करे तो यह असत्य है, झूठ है। गुस्सा आने का मतलब है कि हममें से अभी पशुत्व नहीं गया है। तुमसे तो बेपढ़ा येनादि—आन्ध्र की एक निम्न जाति—अच्छा है। सोच रहे होगे कि मैं व्याख्यान दे रहा हूँ, पर जीजा क्या हरेक को मुझे इन बातों पर व्याख्यान देना पड़ता है? जीजा, तुम मुझे खूब जानते हो? सास और ससुर तुमसे इस बारे में बिगड़े हुए हैं। सब दुखी हैं, तेरा दिल भी दुखी है। मैं छोटा हूँ, परन्तु अपराध की वजह से तुझे यह रहा हूँ।"

"स्त्रियाँ मार सह लेती हैं, कुछ कह नहीं पाती, यह पतिव्रत धर्म है। यह उनके लिए स्वाभाविक है, पर वे भी हम-जैसे मनुष्य हैं, मैं तुमसे यही प्रार्थना करूँगा।"

२२ · मेरी जिम्मेवारी है

साले की बात सुनकर वीरभद्रराव को पहले तो गुस्सा आया, फिर लज्जा आई, फिर दुःख हुआ। उसने कुछ न कहा। उसकी आँखों में आँसू आ गए। इतने में गुस्सा आ गया। फिर वह मुस्कराया। नारायणराव सोच रहा था कि उसके उपदेश के कारण जीजा उबल पड़ेंगे।

सत्यवती भी घबरा रही थी कि क्या होगा, वह मन-ही-मन काँप रही थी। उसने जाकर जल्दी-जल्दी भोजन तैयार कर दिया। भाई और पति हाथ-मुँह धोकर भोजन के लिए बैठे। वीरभद्र राव को भोजन न रुचा। नारायणराव ने उसे देखकर कहा, "तुम सन्तोष से भोजन करो, नहीं तो मैं भी न कर पाऊँगा।"

भोजन के बाद वीरभद्र राव ने नारायण से पूछा, "क्या तुम अपनी बहन को घर ले जाओगे?"

"यह क्या कह रहे हो जीजा? दो दिन पहले ही तो आई थी बहन, फिर सातवें महीने में ले जायेंगे? मेरी माँ कह रही है कि सब विधियाँ पूरी करनी होंगी। प्रसव के लिए हम उसे राजमहेन्द्रवर से जाने की सोच रहे हैं, तुम क्या कहते हो? तुम बुरा न मानो तो मैं उसे अपनी ससुराल ले जाऊँगा। नहीं तो हास्पिटल में रखेंगे, और नहीं तो मैं मद्रास ले जाऊँगा। सोच लो, माँ वगैरा आयेंगी।"

वीरभद्र के मन में यकायक वे सारी बातें आईं जिनके कारण उसने पत्नी को मारा था। जमींदार ने आकर बुलाया था। जमींदार ने डिप्टी कलक्टर को, वीरभद्र राव को भेजने के लिए कहा था। डिप्टी कलक्टर ने वीरभद्र राव को जाने की अनुमति दे दी, और जमींदार को यह भी लिखा कि वीरभद्र राव आफिस में सबसे अच्छा क्लर्क था, और उसकी तरक्की के लिए उसने सिफारिश भी कर रखी थी। इस बीच कलक्टर को जरूरी काम पर बाहर जाना पड़ा। उनका खयाल था कि वीरभद्र राव के सिवाय उनका काम और कोई नहीं कर सकता। यद्यपि उन्होंने जाने की अनुमति दे दी थी, तो भी उन्होंने कहा, "तुम ठहर जाओ, अपनी पत्नी और लड़की को भेज दो।" वीरभद्र राव कुछ कह नहीं सकता था, इसलिए लाचार होकर उसने

पत्नी और लडकी को जमीदार के घर भेज दिया। जमीदार अपनी कार मे आगे ड्राइवर के साथ बैठे, और पीछे सत्यवती और लडकी को बिठाया। वे राजमहेन्द्रवरं चले गए।

वह जानता था कि जमीदार बडे थे, पूज्य थे। यह जानता था कि सन्देह करना हास्यास्पद है। त्यौहार के चारो दिन वीरभद्रराव इस तरह रहा, मानो काँटो में हो। जाने कितने ही आदमी, जमीदार के घर आये होगे ? पत्नी शायद उन्हें देखे ? वे भी आँखे फाड-फाडकर पत्नी को देखेंगे। इससे पहले जब पत्नी को मायके जाना होता तो वह उसके साथ-साथ आता। उसने भी त्यौहार के लिए राजमहेन्द्रवर आने की कोशिश की। पर डिप्टी कलक्टर ने न जाने दिया।

श्री राममूर्त्ति उसकी पत्नी को घर छोडकर गये थे कि वह पत्नी पर गुस्सा करने लगा।

"तू अच्छी नही है, तू पेद्दापुरं की वेश्या से भी नीच है, नही तो तू क्यों जाती ? यदि तेरा दिल खराब न होता तो क्या तू यह करती ? नीच कही की। जाने कितनों को तूने वहाँ से चिट्ठी लिखी होगी ?" इस तरह की कई बातें, जो सुनी भी नही जा सकती, न लिखी ही जा सकती है, उसने उगली।

आज वीरभद्र राव को अपनी नीचता का भान हुआ। उसे आज सत्यवती की सेवा, प्रेम, नरम दिल सब याद आये। फिर उसके मन में सन्देह का भूत आया। सन्देह यह न था कि वह दूसरो को चाहती है, पर यह कि वह उसे नही चाहती।

नारायणराव दो दिन वहाँ रहा। वह उपदेश देता रहा, दूसरे देशो की स्त्रियों के बारे में उसने बताया। यह भी कहा कि भारत सदा से स्त्रियो का गौरव करता आया है।

"जीजा, हमारे लिए स्त्री बहुत गौरवणीय है। हमारी सभ्यता, नीति, जाति की वे ही रक्षा कर रही हैं। खड्ग तिक्कन्ना को याद करो, रुद्रम्मा देवी, तरिगोण्ड वेन्कमाम्बा आदि वीर स्त्रियो को स्मरण करो ! माचाला ने पति के लिए तपस्या की, पति जब वेश्या के जाल में फँसा तो उसने पति की रक्षा के लिए परमात्मा से प्रार्थना की। वह पति-चरणों का स्मरण कर

रही थी कि बाल चन्द युद्ध में जाने की अनुमति माँगने जब माचाला के पास आया तो उसने तलवार देकर उसे युद्ध में भेजा। जब पति युद्ध में मारा गया तो वह भी सती हो गई। मल्लम्मा देवी का जीवन नहीं जानते हो जीजा?"

फिर नारायणराव ने कुछ घंटे उसकी प्रशंसा की। "जीजा, तेरा हृदय बड़ा अच्छा है, मैं जानता हूँ कि तूने कई का उपकार किया है। अगर तुम-जैसे हमारे असहयोग-आन्दोलन में शामिल हो सकते हैं तो वे बड़े नेता हो सकते हैं। नौकरी में होने के कारण तेरा हृदय इस तरह बिगड़ गया है। परन्तु नौकरी में भी रहकर न्याय-मार्ग पर चलने वालों की क्या अब भी लोग प्रशंसा नहीं करते?"

अगले दिन जीजा से विदा लेकर बहन को पिता के दिये हुए बीस रुपये सौंपकर वह कोत्तपेट चला गया।

उसने माँ को सब बताया। यह भी आश्वासन दिया कि वह दो-चार महीने में बहनोई का हृदय बदल देगा।

"बेटा, तुम यह कह तो रहे हो, पर उस निर्दय का हृदय कौन बदल सकता है? इसी तरह कष्ट सह-सहकर सत्य कुएं में आ कूदेगी, बेटा!"

"यह नहीं माँ, तुम क्यों सूखी जाती हो? उसका दुःख हटाना मेरी जिम्मेवारी रही। अगर उसने कभी बहन को तंग किया तो मैं उसके घर जाकर उपवास शुरू कर दूँगा। इस तरह कम-से-कम उसका मन पूरी तरह बदल जायगा।"

२३ : अइउण ऋलृक

नारायणराव मद्रास के लिए रवाना हुआ। साथ ही राधाकृष्णय्या बाबा भी गये। दोपहर के करीब वे नारायणराव की ससुराल पहुँचे। जमींदार ने दामाद के दादा का आदर किया। उन्हें घर में कम-से-कम चार-पाँच

दिन ठहरने के लिए कहा। परन्तु राधाकृष्णय्या ने कहा कि उन्हें बहुत काम है। बन्धुओं को देखकर उन्हें वापिस जाना था।

नारायणराव उस दिन मेल से मद्रास न जा सका। जमीदार के बहुत कहने पर राधाकृष्णय्या भी उस दिन वहीं रहे। उन्होंने उनका सत्कार किया। राधाकृष्णय्या ने भी शारदा को एक चाँदी की थाली उपहार में दी। उसको नारायण के अनुकूल पत्नी जानकर वे सन्तुष्ट हुए। लक्ष्मीपति को देखकर अगले दिन वे मोटर से द्राक्षाराम चले गए।

राधाकृष्णय्या के जाने के बाद, जगन्मोहन उनके बारे में शारदा और बुआ के सामने मखौल करने लगा।

"फूफा की अक्ल मारी गई है। लगता है, सब ऐरे-गैरों का सत्कार करते रहते हैं?"

"देख, वे कितने बूढे हैं!" शारदा ने कहा।

"मैं उन्हें देखकर डर गया। यह बूढा तुम्हारे पति का बाबा है न?"

"हाँ, सुना है।"

"तुम्हारा पति और वे जब अगल-बगल में खड़े थे तो लगता था जैसे एक बड़ा बन्दर और छोटा बन्दर खड़े हों। मैं हँसी नहीं रोक सका। शारदा, हाँ हाँ, हाँ!"

शारदा चुप रही। जमीदारनी ने कहा, "तेरी उपमा बिलकुल ठीक है!"

उस दिन जमीदार के बन्धुओं में नारायणराव के परिवार का परिहास किया गया। मजाक किया गया।

उस दिन शाम को जगन्मोहन ने शारदा के पास जाकर कहा, "शारदा, आओ, बगीचे में टहलने चलें!"

पूर्णिमा थी। चाँदनी दुग्ध-सागर में तरंगें लेती-सी लगती थी।

शारदा बगीचे में निकली। उसका सौन्दर्य भी चन्द्रिका की तरह निखर रहा था।

जगन्मोहन इधर-उधर देखता हुआ उसके पीछे-पीछे चलता जाता था। वे एक वेदिका के पास गये। साथ में जगन्मोहन को देखकर शारदा मुग्ध-सी हो गई। जगन्मोहन ने नहा-धोकर पतली धोती और कुरता पहना हुआ था।

पाउडर लगा रखा था। महक रहा था। शारदा को वह मन्मथ की तरह लगा। 'उससे शादी करती तो क्या अच्छा होता ?' यह सोचकर शारदा ने एक लम्बी साँस ली। वह जान गई कि छुटपन से वह उसे ही प्रेम कर रही थी। 'प्रेम' के बारे में उसने उपन्यासों में पढ़ रखा था। हर लड़की किसी-न-किसी लड़के से तो प्रेम करती ही है। उस पुरुष से यदि विवाह हो जाय, जिससे वह प्रेम न करती हो तो उसकी गति क्या होगी ? यह मेरा दुर्भाग्य है कि पिता को मेरे लिए पति चुनना पड़ा। 'जितने भी उपन्यास मैंने पढ़े हैं, सभी में नायक और नायिका का विवाह माँ-बाप ने इसी प्रकार किया है क्या ?' वह सोच रही थी।

"क्या सोच रही हो शारदा ? अब तक मैं इस ख़याल में था कि तेरा बहता खून ही बाहर नज़र आता है, अब तेरे विचार भी दिखाई देते हैं।"

"कुछ नहीं सोच रही।"

"शारदा, तेरा और मेरा सौन्दर्य मिल जाय तो क्या ही अच्छा हो ? यदि मैं तेरा पति होता तो हमेशा तेरे चरणों के पास बैठकर तेरी सेवा करता रहता।"

शारदा ने कुछ कहा तो नहीं, पर वह जगन्मोहन की बात पर फूली नहीं समाती थी।

शारदा की कमर पकड़कर उसका मुँह उठाकर वह चूमने वाला ही था कि केशवचन्द्र उधर भागा-भागा आया और उसने कहा, "बहन, पिता जी तुम्हारी इन्तजार कर रहे हैं।"

केशवचन्द्र की आवाज सुनते ही दोनों चौंक पड़े। जगन्मोहन अपना हाथ हटाकर दूर खिसक गया। शारदा भी झट उठकर अन्दर चली गई।

जगन्मोहन वहीं अकेला बैठा रहा। 'जाने यह लड़का भी क्या है ? खुद जमींदार का लड़का है, पर उस गँवार पर जान देता है। शायद पिता की तरह है। अगर एक मिनट यह न आता तो मैं चुम्बन कर लेता, शारदा मेरी ही है।' वह सोच रहा था।

शारदा जब अन्दर गई तो जमींदार आराम-कुर्सी पर बैठे अख़बार पढ़ रहे थे। उसे पास बुलाकर उन्होंने पूछा, "कहाँ गई थीं बेटी ?"

"बगीचे में, पिताजी !"

"भाई कह रहा था कि जगन्मोहन ने तुम्हे पीटा है ?"

केशवचन्द्र पिता के हाथ पर अपने दोनो हाथ रखकर पिता का मुंह देखकर कहने लगा, "हाँ पिताजी, वे शारदा को पास खीचकर, पीटने वाले ही थे। यह सब मै खिडकी से देख रहा था, चाहे तो आप रगम्मा से पूछ लीजिये !"

जमींदार ने बेटे को गोदी में से गले लगाकर उतार दिया ।

"क्यो बेटी, जगन्मोहन राव बगीचे में है क्या ?"

"हाँ, पिताजी ! हम दोनो बाग में गये थे । यह देखकर भाई ने सोचा होगा कि वह मुझे पीट रहा है ।"

"यही होगा, और क्या ? तुम अन्दर जाओ बेटी ! बेटी, तुमने खाना नही खाया, तुम्हें किसी ने सुलाया नही ? बेटी, बाबू यह नही चाहता कि तुम जगन्मोहन राव से बाते करो !"

शारदा फिर आयगी, इसी आशा में जगन्मोहन वहा बैठा था । वह न आई । भोजन का समय हो गया, पर वह वहीं बैठा रहा । शारदा की कमर जब उसने पकड़ी थी तब उसकी आंखे लाल हो गई थी, शरीर कांप गया था, उस कँप-कँपी को काबू में करता और शारदा के बारे में सोचता हुआ वह वहीं बैठा रहा । विजयनगर की वेश्या से उसने जो भी खिलवाड की थी वह सब याद आने लगी । उस लडकी को वह कई लाख देने के लिए तैयार था, पर वह किसी के पास न गई । उसको उस दिन उसके साथ जो आनन्द आया था, उससे कही अधिक आनन्द शारदा के साथ पाता । वह नीचा मुंह किये हुए यह सब सोच रहा था ।

लड़की को जगन्मोहन राव के साथ अधिक बातचीत करता देख शारदा से जमीदार ने कहा, "बेटी,तुम्हें, जगन्मोहन से इतनी बातें नही करनी चाहिएँ। तुमने आजकल पढना-लिखना कम कर दिया है, इस बार जरूर स्कूल-फाइनल परीक्षा में पास होना होगा, समझी ! तुम्हारे अध्यापक से कहूँगा कि वह और होशियारी से तुम्हें पढाये । तुम अन्दर जाओ !"

शारदा हैरान थी । उसने कहा, "पिता जी, मैं पढ़ रही हूँ । मैं जरूर परीक्षा में पास होऊँगी ।" उसकी आंखे भर आईं ।

वह यह सन्देह करके डरी कि पिता यह ताड गए हैं कि जगन्मोहन उससे

प्रेम कर रहा है। उसके हाव-भाव में निर्ममता थी। उसका हृदय निष्कम्प था। उन्होंने उसको एक क्षण देखा। फिर उन्होंने लड़की को दुलारा-पुचकारा। शारदा अन्दर चली गई।

जमींदार यह सब जानते थे कि जगन्मोहन राव विजयनगर की किसी वेश्या के घर आया जाया करता था। एंग्लो इण्डियन्स की मोहबत में भी वह था। जमींदारी की आय उसके ऐश के लिए काफी न थी, इसलिए उसने कर्ज ले रखा था।

सपने में छोटे जोगा को कहानी सुनाता-सुनाता देखकर केशवचन्द्र सो गया।

नारायणराव मद्रास की ओर मेल में चला जा रहा था।

गाड़ी क्या गाती है? वेग से। कभी-कभी ऐसा लगता है जैसे गाड़ी ताल दे रही हो—टक, टक, टक। शारदा उसके मन में बिजली-सी आई। वह गुनगुनाने लगा।

कविता, तू विश्वमोहिनी है, क्या तू शिव के डमरू से उपजी है?

अइउण ऋलृक्।

इस रेल का शब्द क्या इनमें निकला है?

अइउण, ऋलृक,

श्री वाणी गिरिजादिचरायुदधतो वक्षोमुखाजयमे।"

कविता सर्व-कला-स्वरूप है, विश्व-स्वरूप है। सर्व-सृष्टि-मय है। अ, ई, उ, अई, उण, वह सो गया।

●

तृतीय भाग

१ : गौना

नारायणराव का बी० एल० परीक्षा में पहला नम्बर निकला। तदनन्तर वह मद्रास-हाईकोर्ट के एक प्रसिद्ध एडवोकेट के पास 'एप्रेण्टिस' रहा। एप्रेण्टिस परीक्षा में भी वह १९२८ में प्रथम रहा। शारदा भी स्कूल-फाइनल परीक्षा में उत्तीर्ण हुई। जमींदार उसे इण्टर परीक्षा के लिए पढ़वा रहे थे।

उस साल की गर्मियों में पति-पत्नी का गौना करवाने के लिए उन्होंने बन्धु-बान्धवों को निमन्त्रित किया। नारायणराव के मित्र इस अवसर पर भी उसी प्रकार आये जिस प्रकार वे विवाह में उपस्थित हुए थे।

सम्बन्धियों का इस प्रकार गौने पर आना यद्यपि नारायणराव को पसन्द न था तो भी वह पिता जी की इच्छा के विरुद्ध कुछ न कर सकता था। इसलिए वे बन्धु-मित्रों के साथ जमींदार के घर गये।

प्रातःकाल ही पति-पत्नी, पीठिका पर बिठा दिये गए थे। कई उत्तम ब्राह्मण दूर-दूर से आये थे, सभा-मण्डप सुशोभित था। बन्धु-मित्रों, पंडितों और घर के लोगों से मण्डप खचा-खच भरा पड़ा था।

नारायणराव भरी जवानी में चमचमा रहा था। भौंरे-सी मूँछें, उसके मुँह पर चार चाँद लगा रही थी। वह कृष्ण की मूर्ति की तरह सभासदों को आकर्षित कर रहा था। सन्ध्या-वन्दन के बाद सफेद गीले करके सुखाये गए, वस्त्रों को पहनकर वह पीठिका के पास खड़ा हुआ।

सर्वाभरणभूषित होकर शारदा अच्छे कपड़े पहनकर बालों को फूलों से सजाकर, पति के पास खड़ी हो गई।

मंगल-वाद्यों का तुमल घोष हुआ। दम्पति को पीठिका पर बिठाया गया।

'ओं, केशवाय नमः स्वाहा, ओं नारायणाय स्वाहा, ओं माधवाय स्वाहा' कहकर उनसे आचमन आदि करवाया गया।

तब नीची निगाह से नारायणराव ने अपनी पत्नी को देखा। उसका यौवनमय शरीर चम्पा की तरह चमक रहा था। उसकी आँखें निश्चय निर्मल रात्रि के तारों की तरह प्रकाशित हो रही थीं। उसके कपोलों पर

ऊषा की लाली थी। ऐसा लग रहा था, मानो उसके शरीर पर सोने की परत लगा दी गई हो।

उसकी चाल में नजाकत, हाव-भाव में नफासत, शरीर में कान्ति, आँखों में अनन्त नीलिमा देखकर नारायणराव को लगा, मानो वह कोई दिव्य राग सुन रहा हो। वह आँखें मूँदकर उसके बारे में सोचने लगा। मन-ही-मन उसने उसका आलिंगन किया। उसे उसने अपनी आत्मा की आत्मा, प्राणों का प्राण समझा।

जब उसने आचमन के लिए उसके हाथ पर पानी डाला तो उसकी अँगुलियाँ उसे चन्द्रमा की किरणों की तरह लगी।

पुरोहित ने क्या-क्या किया था, कब ससुर-सास द्वारा उसको और उसकी पत्नी को नये कपड़े दिलवाये थे, कब उसने उन कपड़ों को पहना था, किस प्रकार उसे आशीर्वाद दिया गया था, किस प्रकार आरती उतारी गई थी। इन सबका नारायणराव को ख्याल ही न था।

पीठिका से उठने पर परमेश्वर ने नारायणराव से कहा, "तू तो पीठिका पर बड़ी शोभा दे रहा था, तू बैठा-बैठा क्या सोच रहा था? तुम दोनों को साथ बैठा देखकर, मैं सोच रहा था कि क्या इससे भी अच्छी जोड़ी कहीं हो सकती है?"

"शुरू कर दी तूने स्तुति?"

"स्तुति की क्या बात है, क्या तेरी स्त्री-सी सुन्दर और तुम-सा मनमोहन युवक कहीं है? तुम दोनों सिनेमा में शामिल होकर आदर्श कलाकार क्यों नहीं हो जाते?"

"तुम्हारा कहना है कि हम डगलस फेयर बेन्क्स और मेरीपिक फोर्ड हैं।"

"हाँ!"

"गनीमत है, तूने अपने देश के नये तारों से तुलना नहीं की, रोज-रोज हमारे कलाकार बिगड़ते जा रहे हैं।"

नारायण०—"छुटपन में परमेश्वर एक खूबसूरत लड़की की तरह हुआ करता था। हमेशा स्त्री का पार्ट अदा किया करता था।"

परम०—"क्या तूने कालेज में कृष्ण-अर्जुन-हरिश्चन्द्र आदि पात्रों का

अभिनय नहीं किया था ?

नारायण०—"मेरा क्या कहना ? तुझसे कूल्डे ने अंग्रेजी नाटकों में भी स्त्री का अभिनय करवाया था।

परम०—"लक्ष्मीपति ने भी उन दिनों नाटकों में हिस्सा लिया था।"

लक्ष्मी०—"हम-जैसों को तो चपरासी ही बनाया जाता था।"

नारायण०—"जब मैं आया था तब वह चला गया था।"

परम०—"मगर तू होता तो मुझे न छोड़ता। तेरी अक्लमन्दी, प्रतिभा आदि देखकर तेरा हर तरह से वह उपयोग करता।"

लक्ष्मी०—"क्या हमारे नाटक पाश्चात्य नाटकों की तरह हैं ?"

नारायण०—"क्यों, कैसे हूं ? उनके पास पैसा है, वास्तविकता का भ्रम पैदा करने के लिए वे लाखों रुपये खर्चते हैं। असली घोड़े पर चढ़कर मंच पर आते हैं। रंगमंच पर चाहें तो वे उत्तरी ध्रुव भी बना लेते हैं। रंगमंच, रंगमंच रहता है क्या ? सब वास्तविक-सा लगता है। रंगस्थल पर सचमुच मन्दिर, गोपुर, घर आदि दिखाई देते हैं।"

परम०—"पैसे वाले हैं, इसलिए पन्द्रह रुपये का टिकट रखने पर भी, लाखों रुपया आता है, हजारों रुपये वेतन देते हैं। इसलिए उस देश के प्रतिभाशाली युवक किसी और नौकरी में नहीं जाते। वह भी एक अच्छा पेशा है, सरकार भी उन्हें, 'सर' आदि का खिताब देती है। कहने का मतलब यह कि हमारा देश गरीब है।"

लक्ष्मी०—"नारायणराव जो कहता है तू उसमें हाँ-में-हाँ मिलाता जा ! यह अच्छा है, वह सब तो मैंने ही नहीं देखा है। मैं तो सिर्फ यह कह रहा हूँ हमारे वीथि-नाटकों से उनके नाटक अच्छे हैं।"

परम०—"हमारे वीथि नाटकों की तरह उनमें भी 'वीथि नाटक' हैं, उनके नाटकों की तरह क्या हमारे संस्कृत में नाटक नहीं है ?"

नारायण०—"संस्कृत के नाटकों की तरह तेलुगु देश में भी है क्या ?"

परम०—"नहीं ! हैं परन्तु यक्ष-गान, भामा-कलाप, गोल्ल-कलाप है, संस्कृत नाटक भी खेले जाते हैं।"

लक्ष्मी०—"तेलुगु में नाटक अभी आये हैं। पहले नहीं थे, यह तो मानते हो ?"

नारायण और परम दोनों—"हाँ !"

लक्ष्मी०—"संस्कृत के नाटक अंग्रेजी नाटक की तरह हैं क्या ?"

नारायण०—"हाँ, पर हमारी परम्परा भिन्न है, उनकी परम्परा भिन्न है; पर पद्धति एक ही है, आन्तरिक भाव भिन्न है।"

परम०—"उनके भाव इहलौकिक हैं, और हमारे आध्यात्मिक।"

लक्ष्मी०—"क्या उन लोगों में भी 'वीथि नाटक' है ?

नारायण०—"ग्रोटेस्क है न ! वह कुछ-कुछ हमारे 'वीथि नाटकों' की तरह हैं। 'ग्रोटेस्क' और साधारण नाटक मिला दिये जायें तो वे हमारे 'वीथि नाटक' के समान हो जायेंगे।"

लक्ष्मी०—"पर जाने लोग कैसे इतना शोर-शराबा सह लेते हैं ? रानी भी शोर करती है, सम्भाषण होता ही नहीं। सब मिलकर शोर करते हैं। वह सब मुझे प्रहसन-सा लगता है। राजा का वेश पहनकर, कलाकार स्वयं चिल्लाता आता है, 'राजा, पुर प्रमुख के साथ प्रवेश कर रहा है।' वह भी कोई अभिनय है ?"

नारायण०—"यह 'वीथि नाटक' का दोष नहीं है ? दरअसल में ही इसकी खूबियाँ हैं।"

परम०—"शास्त्र के अनुसार जिस पात्र का तुम अभिनय कर रहे हो, तुम्हें वही हो जाना चाहिए। क्योंकि तू वह हो नहीं सकता। इसलिए यह दिखाना जरूरी है कि तू उस पात्र का अभिनय-मात्र कर रहा है। अभिनय भी चित्र-कला की तरह एक कला है। भ्रान्ति की स्थापना करना ही इस कला का मुख्य उद्देश्य है।"

लक्ष्मी०—"तू युक्ति नहीं दे रहा है, कविता कर रहा है। तू बता नारायणराव, वह क्या कहना चाहता है।"

नारायण०—"सुन, भारत देश की सभी कलाएँ कलाकार की भावनाओं को व्यक्त करती हैं, वह सच है। वे भ्रान्ति पैदा करने की कोशिश नहीं करते। यह हरिश्चन्द्र है, यह भ्रान्ति पैदा करने का प्रयत्न न कर! यह व्यक्त किया जाता है कि मेरी समझ में हरिश्चन्द्र इस प्रकार का है, मैं हरिश्चन्द्र-पात्र का अभिनय कर रहा हूँ। वह कहता है, हरिश्चन्द्र आ रहा है, और स्वयं हरिश्चन्द्र हो जाता है, यानी उसके कहने का मतलब यह है कि हरिश्चन्द्र

इस प्रकार का है।

लक्ष्मी०—"तुम दोनों ने एक ही बात एक तरह से कही है। और साफ करके बताओ।"

२ : शयन-कक्ष

बहुत वक्त गुजर गया। पर शाम न हुई। नारायणराव ने ताश खेले। 'ब्रिज', 'लिटरेचर' सब खेला, पर कुछ न सूझा। हिन्दुस्तान के क्लबों में, ग्रन्थालयों में, घरों में, पाश्चात्य देशों से १९ वीं शताब्दी में ताश आया। ताश में 'ब्रिज' का खेल महाराजा ही है। आन्ध्र के लोग इस खेल में विशेष दक्ष माने जाते हैं। यह अनेक भेदों के साथ देश में सर्वत्र प्रचलित है। गाँवों में भी यह खेला जाता है।

'बेस्लाट्' आन्ध्र का अपना खेल है। बाजी लगाकर खेलने पर भी अधिक नुकसान नहीं होता। आध आने या एक आने की बाजी लगाकर ही अगर बहुत बरबाद हो गए हैं तो कई ने बहुत कमाया भी है। 'रनमोर' का खेल, जो जुआ कहा जा सकता है, बहुत लोग छुपे-छिपे खेलते हैं।

इसी उधेड़-बुन में नारायणराव 'बेस्लाट्' में दो रुपये खो बैठा। वह इस प्रतीक्षा में था कि कब अन्धेरा हो। वह अपने हृदय के भावों को सिवाय परमेश्वर के किसी और को न जानने देना चाहता था।

रात का शुभ मुहूर्त पास आया। नारायणराव रेशमी कपड़े पहनकर खड़ा हुआ। शारदा बहू, नारियल, केले, खजूर, हल्दी, अक्षत के ढेर के पास खड़ी थी। वे दोनों पुरोहितों के कहने पर एक पीठिका पर बैठ गए। दम्पति ने श्रीगणेश की पूजा की।

पुरोहितों ने मन्त्र-पाठ किया। जमींदार और उनकी पत्नी ने अनेक उपहार दिए। मन्त्रों से दिग्दिगन्त प्रतिध्वनित हो रहा था।

मंगल-वाद्य बजाये गए।

थोड़ी देर बाद पति-पत्नी को अन्दर ले जाया गया। शयन-कक्ष खूब सजाया गया था। लगता था, मानो दीवारें भी संगमरमर की हों। नन्दलाल बोस, प्रमोद कुमार चटर्जी, देवी प्रसाद राय चौधरी, असित कुमार हालदार आदि के चित्र आन्ध्र के दामर्ल रामाराव और परमेश्वर मूर्ति के चित्र टंगे हुए थे। विशाल शयन-कक्ष में तरह-तरह की रोशनियाँ की गई थीं। चन्दन, और चाँदी की मूर्तियाँ, लोहे के खिलौने और जाने क्या-क्या सजाकर रखे गए थे। एक बड़ी मेज पर केले, माल्टे, नारंगियाँ, अनन्नास, अंजीर, अनार, मयूर, किशमिश, खरबूजे आम रखे हुए थे। एक थाल में लड्डू, बर्फी, पेड़ा, मैसूर-पाक, रसगुल्ला, खाजा वगैरह आदि रखी हुई थीं। अगरबत्तियों की सुगन्ध से कमरा महक रहा था।

ज़मींदार ने इस कमरे को सजावट करने के लिए मद्रास से एक कारीगर को भी रुपया देकर बुलाया था। कमरे में कई लाख रुपयों के फूल, गुलाब, और जाने कैसे-कैसे फूल रखे गए थे।

अप्सराओं की तरह सज-धजकर कुछ युवतियाँ वहाँ उपस्थित थीं, उन्होंने दम्पति को मान और वस्त्र उपहार में दिये।

नारायणराव ने पुलकित होकर पत्नी को देखा। उस पर चन्दन लगाया। पान खाकर उसे खिलाया। शकुन्तला देवी ने बहन के पति को देखकर सोचा कि वह कितना सुन्दर है। उसे अपना गोवा याद आया। नारायण राव-जैसे हाव-भाव, उसके पति ने क्यों नहीं किये थे? उसके-जैसा उसके परिवार में कोई न था, यह सोचकर वह किसी बहाने उसको छूती। उसने अपनी बहन को उससे मिलाया। पान दिलवाया, सूर्यकान्त और जानकम्मा, बहन ही सुख थी। ज़मींदार की सम्बन्धी स्त्रियाँ, नारायण राव के चारों ओर मँडराती रहीं।

शारदा वहीं उदासीन थी। उसकी उदासी को नारायणराव की प्रफुल्लता दूर न कर सकी।

लड़कियों ने गाया, शारदा ने बहुत कहने पर भी कुछ न गाया। कई लड़कियों ने राधा-कृष्ण के गीत गाये। रात के दूसरे पहर में कमरे का दरवाज़ा बन्द करके सब चले गए। शकुन्तला, शारदा को लेकर कहीं

चली गई।

नारायणराव का हृदय आध घंटे तक तेजी से चलता रहा। वह पलंग से उतरकर सोफे पर बैठकर प्रतीक्षा करने लगा। वह कल्पना करने लगा कि उसकी पत्नी के दिल में क्या गुजर रही होगी। काफी देर हो गई, पर शारदा अन्दर न आई।

नारायणराव उठ खड़ा हुआ। कमरे की साज-सज्जा देखने लगा। परन्तु उसकी आंखों को सिवाय शारदा के कुछ न दीखता था। शारदा, सर्वाभरणभूषित थी। शाम को खिले गुलाब के फूलों से उसे सजाया गया था। साड़ी भी क्या कीमती थी कि उसे पहनते ही शारदा का सौन्दर्य कई गुना बढ़ गया था। उसको छूते ही उसे रोमाञ्च होता था।

एक घण्टा हो गया, तब भी शारदा न आई। नारायणराव ने घड़ी की ओर देखा, वह एक तरह के नशे में था। उसने जो गौने देखे थे, क्या उनमें भी इस प्रकार की देरी की गई थी?

वह उठकर पलंग पर लेट गया। पलंग पुराना था, शायद ससुर के पूर्वजों का था।

एक-एक देश की शायद एक-एक रस्म है, प्रथम रात्रि में मुग्ध बालिकाओं का कैसा व्यवहार होता है?

स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध इतना मोहमय क्यों है? मनुष्य अपना सर्वस्व स्त्री के लिए अर्पित कर देता है। स्त्री-पुरुष का यह सम्बन्ध संसार के इतिहास को भी बदल सकता है।

वह क्या करेगा?

घड़ी ने मीठी आवाज में दो बजाये।

झट शारदा को अन्दर भेजकर शकुन्तला और उसकी फूफी ने बाहर किवाड़ पर चटखनी लगा दी।

सर्वत्र निस्तब्धता थी।

उस निस्तब्धता में किसी की कराहट उसको सुनाई दी। नारायणराव चौंका। शारदा ही रो रही थी, क्यों? शायद शर्म के कारण? भय? शायद थोड़ी देर बाद यह रोना कम हो। वह भी शर्म के कारण कुछ न कर सका।

वह धीरे से उठकर शारदा के पास गया। उसने उससे पूछा, "शारदा! यहां क्यों खड़ी हो?" शारदा ने कुछ न कहा, वह अन्दर-ही-अन्दर और भी रोती जाती थी।

नारायनराव का हृदय दयार्द्र हो उठा। वह उसको एक तरफ लाया। वह सिकुड़-सी गई, फूल की तरह कुम्हला गई।

"तू क्यों रो रही है पगली? तुझ-जैसी स्त्री मुझे मिली है, यह मेरा सौभाग्य है न? मैं, अपना पुरुषत्व, बुद्धिमत्ता, सम्पत्ति, सब-कुछ तुझे अर्पित करता हूँ। शारदा, मैंने अभी तक किसी को प्यार नहीं किया है? जिस दिन से मैंने तुझे देखा है, तभी से तुझे अपनी हृदयेश्वरी समझता आया हूँ।"

शारदा और भी रोने लगी। नारायनराव को अचरज हुआ। वह मन मसोसकर रह गया। उस लड़की को वहीं छोड़कर, दीवान पर जाकर बैठ गया, हथेली पर मुँह रखकर अन्यमनस्क हो, वह शून्य की ओर देखने लगा।

आध घंटे बाद शारदा का रोना बन्द हुआ। नारायनराव उसकी ओर देखता रहा। वह किवाड़ के पास खड़ी थी। पन्द्रह वर्ष की सुन्दरी थी वह। यह भी क्या है? दुनिया में शर्म है, गुस्सा है, परन्तु पढ़ी-लिखी कन्या के लिए यह क्या। नारायनराव उसको बार-बार देखता-सा लगता था।

थोड़ी देर बाद नारायनराव ने उठकर कहा, "शारदा तू पलंग पर सो जा, वहाँ इस तरह क्यों खड़ी है?" उसने उसको पुष्प की तरह अपनी ओर खींचा। आलिंगन करके वह चूमने को ही था कि वह पीछे हट गई। नारायन-राव घबरा गया। उसने उसको पलंग पर लिटाया। थोड़ी देर बाद, उठकर वह फिर उसी जगह जा खड़ी हुई।

कहीं यह अभिनय तो नहीं है? स्त्रियाँ शायद ऐसा ही करती हैं, अब मुझे क्या करना चाहिए? न राजाराव ने, न परमेश्वर मूर्ति ने ही अपनी प्रथम रात्रि के बारे में कभी यह बताया था। राजा राव की पत्नी थोड़ी घबराई जरूर थी, पर किवाड़ों के बन्द होते ही, उन दोनों ने आलिंगन कर लिया था। परमेश्वर मूर्ति की पत्नी ने थोड़ी देर की थी, पर बाद में

वह पति के हृदय में तन्मय हो गई थी। नई और पिता का भी यह ही अनुभव था। पर यह क्या विचित्र बात है ?

"शारदा तुम पढ़ी-लिखी हो, समझदार हो, क्या बात है ?" पति ने उसे मनाया। शारदा इतनी जिद्दी क्यों हो गई थी ?

'शारदा शायद मुझे प्रेम नहीं करती।' उसके हृदय में यह आवाज कहाँ से आई, 'क्या वह बदसूरत है ? क्या वह मूर्ख है ?'

अनुराग और विराग का कारण मनुष्य का रूप या बुद्धिमत्ता, या गुण या अवगुण नहीं है। शायद यह पूर्व जन्म का परिणाम है।

शारदा के पास फिर नारायणराव गया। वह लड़की खड़ी भी न रह सकी। वह वहीं कालीन पर बैठ गई।

३ : व्यर्थ मनोरथ

तब घड़ी ने तीन बजा दिए थे। शारदा के पास जाकर, बैठकर, नारायणराव ने कहा, "शारदा, इस शुभ मुहूर्त को यों शायद व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिए। तेरा इस प्रकार यहाँ लेटे रहना अच्छा नहीं है। उस पलंग पर सो जा! अगर तू नहीं चाहती है, तो मैं सोफे पर लेट जाऊँगा। हमें यों फालतू जागना नहीं चाहिए।"

वह सिर नीचे किये बैठी रही। "पर एक बात न भूलना—मैं तेरा पति हूँ—इसलिए मैं अपने अधिकार या हक नहीं माँगता। अगर तू नहीं चाहती है तो मैं अपना मुँह फिर तुझे न दिखाऊँगा। तेरे हृदय को कष्ट न दूँगा, हम पढ़े-लिखे हैं, तू भी परीक्षाएँ पास कर रही है, सभ्य है।"

शारदा चुप रही।

नारायणराव जाकर सोफे पर औंधा लेट गया। मन में ज्वाला उमड़ रही थी। उसने अपना मुँह हाथ से ढक लिया। जब से परीक्षा में

सफल हुई थी, तब से शारदा को यह गर्व था कि वह पढ़ी-लिखी है, सभ्य स्त्री है, उसका खयाल था कि उपन्यासों की पढ़ी-लिखी नायिकाओं की तरह प्रेम का तत्त्व जानना होगा। जिस पर प्रेम न हो वह पुरुष पर-पुरुष है, प्रेम-बन्धन ही विधि-उक्त विवाह-बन्धन है।

जिस पर प्रेम न हो उस पुरुष को कैसे छुआ जाय ? उसकी अध्यापिका अमरीकन लेडी ने उसको प्रेम के बारे में भी बताया था। पाश्चात्य देशों में, विशेषत अमरीका में, सुना जाता है जब स्त्री-पुरुष यह जान जाते हैं कि उन दोनों में प्रेम नहीं है, वे अपना विवाह रद्द कर देते हैं, फिर एक-दूसरे का मुँह तक नहीं देखते।

वह एण्टर परीक्षा के लिए परिश्रम करके पढ़ रही थी। घर पर ही तैयारी कर रही थी, और पढ़ी-लिखी कन्याओं से उसकी मैत्री भी हो गई थी। कहते हैं, पढ़े-लिखों के लिए विवाह से बढ़कर कोई गलती नहीं है। पाश्चात्य विधि से शिक्षित लड़कियों के हृदय में फर्क के परदे नहीं रह जाते। बे-पढ़ी स्त्रियों को यह तक मालूम नहीं कि प्रेम किस चिड़िया का नाम है। वे पशुओं की तरह ससुराल जाती हैं, वहाँ चाहे पति कुछ भी करे, वे सब सह लेती हैं। अपने जीवन में उद्देश्य को बिना जाने नष्ट हो जाती हैं। परन्तु पढ़ी-लिखी स्त्री प्रेम करना जानती है। जब उनको हृदय में प्रेम उत्पन्न होता है, तो वे कैसे विवाह करते हैं ? अपने प्रेमी के लिए वे सर्वस्व अर्पित कर देती हैं।

इस तरह की बातें उसकी पढ़ी-लिखी सहेलियाँ किया करतीं। मेरा विवाह हो गया है, मैं पति से प्रेम क्यों नहीं करती ? मेरा परिवार अलग है ? मेरे पति के परिवार की इतनी हैसियत नहीं कि मेरे पिता के यहाँ नौकरी भी कर सके ? पढ़े-लिखे हैं तो क्या ? उनमें ठाट-बाट नहीं है, सम्भ्रान्तता नहीं है। क्या ईमाई लोग नहीं पढ़ रहे हैं ? हट्टा-कट्टा शरीर, कुलियों के भी तो हट्टे-कट्टे शरीर होते हैं। यही बात जगन्मोहन राव ने कई बार कही थी।

जगन्मोहन की प्रतिष्ठा, उसके ठाट-बाट उसके ससुराल वालों में कैसे आ सकते हैं ? क्या वह जगन्मोहन राव से प्रेम करती है ? उसने कहा तो नहीं है, पर उसे जगन्मोहन राव प्रेम करता है। वह प्रेम करना जानता है। वह जगन्मोहन से प्रेम करती है कि नहीं, यह पता नहीं; पर इतना

जरूर पता था कि वह अपने पति से प्रेम नहीं करती थी।

महीने गुजर गए। पढ़ाने वाली अमरीकी अध्यापिका ने पढ़ाई के सिलसिले में यह बताया था कि अमरीका में जमींदार, राजा-महाराजा न थे। जो आज मजदूरी का काम करता है वह कल देश का अध्यक्ष भी हो सकता है। इसीलिए जमींदार-जैसे शब्द का भी उस देश में उपयोग नहीं होता।

तब शारदा को उस अध्यापिका पर गुस्सा आया था। परन्तु पति के बारे में उसकी राय न बदली थी। जब वह गौने की बात सुनती तो सहसा कांप जाती। माँ के सामने रोई-धोई भी। माँ ने जमींदार के पास जाकर कहा, "मैं नहीं चाहती कि लड़की का इस समय गौना हो।"

"क्यों?"

"वह अभी छोटी है।"

"सोलहवां वर्ष चल रहा है। १८ वें वर्ष तक न करना ही अच्छा है। परन्तु उनके सारे पुराने खयालात के हैं। उनके ससुर भी चाहते हैं कि जल्दी ही गौना हो जाय, मैं न ना कर सका। मैं भी मान गया।"

"इन दकियानूसी के घर लड़की क्यों दी?"

"अगर वे पुराने खयालात के लोग हैं, तो क्या हुआ? उन-जैसे उदार-हृदय प्रतिष्ठित परिवार इन रियासतों में कहाँ हैं? लड़का इतना अच्छा है कि महाराजाओं का दामाद होने लायक है, सचमुच उस-जैसे जमाई का मिलना मेरा अहोभाग्य है।"

"आप अपने जमाई की तरफदारी करते हैं। कुछ भी हो, आप इस गौने को फिलहाल न कराएँ। यही मेरी प्रार्थना है।"

"वचन दिया है, जैसे-तैसे गर्मियों तक स्थगित कर दूंगा। एक महीने से सिलसिला आ रहा है। सुब्बाराय ने कहा है कि अच्छा हो अगर गौना तब तक किया जा सके। कल मैं उनकी बात मान गया था। आज लिख दूंगा कि गर्मियों की छुट्टी तक गौना न हो सकेगा।"

सब तात्कालिक रूप से शारदा की 'आपत्ति' टल गई।

परन्तु सुब्बाराय जी ने चैत्र मास में जमींदार जी को यों चिट्ठी लिखी—

"हम सब यहाँ सकुशल हैं। श्री महाराजश्रीः स्वयं बहन जी, भाभी जी, वधू शकुन्तला और शारदा, और कुमार राजा केशवचन्द्र तथा बन्धु-

मित्रों का कुशल क्षेम जानना चाहता हूँ ।

लड़के के गौने के सम्बन्ध में जैसा कि आपने लिखा है, इस वैशाख मास में अच्छे मुहूर्त हैं । तारों-नक्षत्रों का भी शकुन पूर्ण सम्मिलित है । अनुगृहीत होऊँगा, यदि आप मुहूर्त निश्चित करके मुझे सूचित कर सकें ।

भवदीय विनीत,

रा० मुख्तारराम्।"

नारायणराज की माँ उतावली हो रही थी कि शीघ्र ही लड़के का गौना हो, और बहू घर में आये । उन्होंने ही पति से चिट्ठी लिखवाई थी ।

मुख्तारराम की चिट्ठी पत्नी को सुनाकर जमींदार ने कहा कि अब गौना न टाला जा सकेगा । शारदा को जब यह पता लगा तो उसने माँ से अनुरोध किया कि जैसे भी हो एक साल और गौना स्थगित कर दिया जाय । वह तब तक इस ख्याल में थी कि साल-दो-साल तक गौना स्थगित कर दिया गया है । वह चिन्तित हो गई । माँ ने जाकर पति से फिर कहा कि लड़की छोटी है । आप ही तो कहा करते थे कि लड़कियों की शादी अठारह वर्ष से पहले नहीं होनी चाहिए । जमींदार जानते थे कि जो-कुछ वह कह रही थी, सच था । वे भी गाँव वालों की नासमझदारी पर झिझकने लगे ।

जमींदार को झुकना पड़ा । जमींदारनी ने कहा कि शारदा को यह शुभ-कार्य कतई नापसन्द है । जमींदार ने कहा, "हूँ, शारदा को नापसन्द है, हाँ, लड़की छोटी है, खेल-खिलवाड़ का शौक नहीं गया है । पढ़ने का शौक भी पूरा नहीं हुआ है । तो मैं लिख दूँगा कि फिलहाल गौना नहीं हो सकता ।"

"शारदा आँखों में नमी लाकर, मेरे सामने रोई भी थी ।"

"रोई थी, वह क्यों ? बावली, क्यों आँखों में नमी ? शर्म के कारण या इस डर से कि पढ़ाई रुक जायगी ? पढ़ी-लिखी लड़कियाँ जल्दी ससुराल जाना नहीं चाहतीं ? कुछ भी हो, पर शारदा को रोने की नौबत क्यों आई ?"

जमींदार जान गए थे कि उनकी पत्नी और सम्बन्धी शारदा के ससुराल वालों का परिहास कर रहे थे । फिर भी किसी भी हालत में वे यह नहीं चाहते थे कि गौना स्थगित कर दिया जाय । यह जरूरी नहीं है कि गौने

में प्रेम होने के बाद विवाह किये जाते हैं ? विवाह और गौने के बाद, सौ में नब्बे लोग प्रेम से गृहस्थी निभा रहे हैं। क्या वे प्रेम करना नहीं जानते ? युवक को युवती चाहिए, और युवती को युवक। हमारी विवाह-पद्धति यह सिखाती है कि वे दोनों साथ रहें, एक-दूसरे के साथ स्नेह से रहें। अगर उनके सम्बन्ध में प्रेम हो, तो गंगा का प्रवाह समझो। न हो तो भी वे मित्रों की तरह जिन्दगी बिता देते हैं।

'क्या यह लड़की मुझे नहीं चाहती ? क्या कभी चाहेगी भी नहीं ?'

दयार्द्र होकर उसने आखिरी बार प्रयत्न करना चाहा। उसने सोती हुई शारदा को उठाकर पलग पर लिटाया। उसका चुम्बन करना चाहा, शारदा चौंककर उठी। "अरे !"

"लोगों को मालूम हुआ तो हँसेंगे। कम-से-कम यह तो दिखाओ कि पलग पर सोये थे, सवेरा हो रहा है उठकर जा सकती हो। आखिरी बार पूछ रहा हूँ। हो सकता है कि तुम्हें मुझ पर प्रेम न हो, पर दूसरों की भी सोचो! क्या तुम्हारे पिताजी ने तुम्हारी माँ से तब विवाह किया था जब दोनों में प्रेम हो गया था ? पर वे कितने प्रेम से रहते हैं। क्या तुम्हारी बहन ने तुम्हारे जीजा से प्रेम करके विवाह किया था ? पर दोनों प्रेम से रहते हैं। उनके सुन्दर बाल-बच्चे भी हैं। इसी तरह हमारे कुटुम्ब में सभी जगह हो रहा है। जैसा तू कर रही है शारदा, वैसा कहीं नहीं देखा गया। मैं मामूली पति भी नहीं हूँ। अगर मेरे 'पतिदेव' में कोई कमी है तो मेरे स्नेह में क्या खराबी है ? हर कोई मेरे साथ प्रेम से रहता है।

शारदा सिर झुकाकर पलग पर बैठ गई। नारायणराव सोचने लगा कि उसका मन पिघल गया होगा। उसने हिम्मत करके उस पर हाथ रखा। शारदा बोली, "अरे यह क्या ?"

नारायणराव ने अचम्भे से अपना हाथ हटा लिया। लम्बी साँस खींचकर उसने कहा—

"तुम धीरे से किवाड़ खोलकर चली जाओ, मैं सवेरा होने तक यहीं रहूँगा।" कहकर वह पलग पर लेट गया।

शारदा कमरे के दरवाज़े के पास जाकर यह याद करके कि बाहर से

उसकी बहन ने चटखनी लगा दी थी, रुक गई। नारायणराव यह देखकर वहां गया। दरवाजा खींचकर देखा, वह खुला था। फिर वह आकर पलग पर इस प्रकार लेट गया मानो सो रहा हो।

प्रेम के दिव्य चक्षु है, इसलिए हम प्रेमी को आसानी से पहचान जाते हैं। अगले दिन शकुन्तला को मालूम हो गया कि उसकी बहन अपने पति को प्रेम नही कर रही थी। नारायणराव के प्रति उसका प्रेम उभर आया। सोचने लगी कि क्या ही अच्छा होता अगर वह उसका पति होता। सुन्दर है, अच्छा अक्लमन्द है। क्या नही है, उससे अच्छा पति प्रेम करने के लिए कहाँ मिलेगा ? शारदा पगली है। मेरे पति से उसका पति कही अच्छा है, पूजनीय है। ऐसा पति पाकर उसका खुश होना तो अलग वह उससे नाखुश है, यह उसकी शरारत है। क्या हम सबने इस लडकी का दिल खराब नहीं किया है ? इसके सामने क्या मैंने, माँ ने, देव-तुल्य इसके पति की मखौल न की थी ?

शकुन्तला देवी ने बहन से पूछा, "क्यो शारदा, ऐसी क्यो हो ?" शारदा कुछ न बोली। शकुन्तला उसे समझाने लगी, "तेरा पति बहुत अच्छा है, वह इस तरह इन्तजार लगा रहे थे और तू पीछे हट रही थी। कही ऐसा करते है ? अगर मुझे वैसा पति मिलता तो मुझे इस ससार मे और किसी चीज की जरूरत न होती। तुम-जैसी किस्मत वाली कोई नही है। मर्दों का दिल बहुत नरम होता है। तूने गलती की है। खबरदार ! वह प्रेम से तेरे चारो ओर किला बना सकता है, कितना सुन्दर है, कितना समझदार है, यह कोई आलतू-फालतू जमीदार सम्बन्ध नही है। क्या तुम मेरी तकलीफो के बारे में नही जानती ?"

शारदा यह सुनकर गुस्से में बोली, "तू भी तो उनके बारे में जली-कटी कहा करती थी," यह रोने लगी। इतने में शारदा की बुआ वहाँ आई।

शारदा को अन्दर जाने के लिए कहा। जमीदारनी यह जानकर कि लडकी दामाद को नही चाहती, सन्तुष्ट थी। परन्तु अगर लोगों को मालूम हुआ कि लडकी गौने के दिन पति के पास नही गई, तो वे क्या सोचेंगे ? इसलिए उसने भी कहा, "बेटी अन्दर जाओ !"

बुआ और बहन के बहुत मनाने पर, समझाने पर, वह दिल मसोस-

कर कमरे में जाने को राजी हो गई, और कोई रास्ता न था। लाड़ली लड़की को जाता देख, जमींदारनी आँसू बहाने लगी। वह लड़की को गले लगाकर पकड़े रही। शकुन्तला शेरनी की तरह आँखें बड़ी करके गरजी, "माँ, क्या मेरी अक्ल मारी गई है? सब चले गए हैं, सबेरा होने वाला है।"

"क्यों कामेश्वरी अम्मा, लड़की को अच्छी अक्ल दे रही हो। बस करो, कोई सुनेगा तो हँसेगा! बस करो, भाई को पता चला तो हमारी गत बना देगा। ऐसी बात न कहीं सुनी है न देखी है। शारदा, यहाँ आओ!" हाथ पकड़कर वह कमरे के पास ले गई और दरवाजा खोल दिया। शकुन्तला ने धीरे से कहा "ठहरो माँ, वह देख लेगा!" शारदा को अन्दर भेजकर कमरे के किवाड़ पर बाहर से चटखनी लगा दी।

शकुन्तला देवी बहन के बारे में सोचती रही, रात-भर सो न सकी।

शकुन्तला देवी २१ वर्ष की थी, दो बच्चों की माँ थी। वह शारदा की तरह सुन्दर थी, पर दो प्रसवों के कारण कुछ मुटिया गई थी। गोरा रंग था, बहन की तरह बड़े बाल थे, बड़ी-बड़ी आँखें, छोटा मुँह।

बगल के कमरे से उठकर जाती, किवाड़ पर कान लगाकर सुनती, फिर आकर लेट गई, चटखनी भी हटा दी।

सवेरा होते ही शारदा ज्यों ही उसके बिस्तरे पर लेटी त्यों ही वह चौंक-कर उठी। बिजली जलाई, शारदा को ध्यान से देखा। फिर बिजली बुझा दी, और दोनों एक-दूसरे के बगल में सो गए।

अगले दिन रात की गप-शप में नारायणराव ने बड़ा उत्साह दिखाया। पर शारदा पहले-जैसी ही थी। शकुन्तला देवी सोच रही थी कि सब ठीक हो जायगा।

नारायणराव यह न चाहता था कि उसकी प्रथम रात्रि का अनुभव किसी को गलती से भी मालूम हो। वह किसी को यह पता भी न होने देना चाहता था। इसलिए वह और भी सोत्साह बातचीत कर रहा था।

शारदा यह सब देखकर आश्चर्य कर रही थी।

गप-शप और मनोरंजन के बाद, सबके चले जाने के बाद, शारदा कमरे में आकर किवाड़ के पास सिर झुकाकर लेट गई। नारायण राव का बढ़ा-

सारा उत्साह ठंडा हो गया। मुँह नीचा करके कुर्सी पर बैठा वह कुछ सोचने लगा। उसे ऐसा लगा, जैसे सारा जीवन मरुभूमि हो गया है।

पता नहीं मेरे निर्मल चरित्र पर क्या कलंक लगेगा?

क्या मेरी आराध्य देवी शारदा मेरी नहीं होगी? कैसे? अभी तो मेरे घर की तेल रानी कुआरनी होगी तब देखा जायगा। नारायणराव निराशा के बादलों को हटाकर मुस्कराता-मुस्कराता शारदा के पास गया, "तुम्हें आनन्दमयी कहूँ, या मुग्ध कल्पना? मैं यह सोच रहा हूँ। क्या शारदा, तुझे मैं क्या कहकर पुकारूँ?" उसने पूछा।

शारदा सिकुड़ गई, कुछ न बोली।

"क्या तुम चाहती हो कि हमारा जीवन यों ही व्यर्थ हो जाय? अच्छा तो यही सही। मैं दूसरों को कष्ट नहीं देना चाहता, देना आता भी नहीं। मैंने स्वप्न देखे थे कि एक सुन्दर स्त्री मेरी पत्नी होने आ रही है। वह पढ़ी-लिखी है, खूब गाना-बजाना जानती है, मैं विष्णु की तरह उसे मन में रखूँगा, उसके साथ शिव की तरह अर्धनारीश्वर हो जाऊँगा, ब्रह्मा की तरह उसे वाणी पर रखूँगा—मुझे ऐसा लगा, जैसे मेरे स्वप्न तुममें साकार हो गए हों। सोचा करता था कि मेरा जन्म पावन हो गया है। तू सितार बजायगी, और मैं वायलिन। स्वर्गिक सुख का आनन्द लेंगे। हर परीक्षा में प्रथम उत्तीर्ण होता हुआ सोचा करता था कि भाग्य में मुझे एक विदुषी स्त्री लिखी है। मैं फूला नहीं समाता था।

सोचा करता था कि तेरे कारण मेरी चित्र-कला, और कवित्व की प्रतिभा निखर उठेगी। कई भाषाओं में अपनी वाणी को विभिन्न करूँगा, कई रंगों में उसका सौन्दर्य दिखाऊँगा। सबकी आलोचनाओं से प्रश्न-विवाद करूँगा। जन्म-जन्म तक तुझसे प्रेम करने के लिए मेरे मन में निरंतर प्रेम की नदी बह रही है,... इतना प्रेम कि तेरे प्रेम की कमी को भी पूरा कर दे। मैं इस नदी में तुम्हें तैरा दूँगा। अपना कर लूँगा। किन्तु प्रेयसी, कमलनयन तू ऐसे सुखी रह! मनमाने मन से हाँ नहीं, मेरा प्रेम स्वीकार करो! यहाँ पर तू हम दोनों के जीवन की उन नदियों की तरह न बना, जो मरुभूमि में लुप्त हो जाती हैं।

५ : मुझे प्रेम नहीं है

जब तक पति कहता रहा, शारदा चुप रही। एक-दो बार, पति की बात ठीक समझकर नरम भी पड़ी। पर जगन्मोहन की बातें ही उस समय उसे स्पष्ट याद आती रहीं।—'ऐसे व्यक्ति को, जिस पर प्रेम न हो, छूना भी पाप है।' उसको यह बात बिजली की तरह गरजती लगती।

नारायणराव स्त्रियों से अधिक हिल-मिल न पाता था। वह यह भी नहीं जानता था कि वह इतना कैसे कह गया था। फिर उसके मुँह से बातें न निकलीं। थोड़ी देर बाद उसने पूछा, "शारदा, बात क्यों नहीं करती हो?"

शारदा भयभीत थी। सोच रही थी, कि सब कहने से वह छोड़ देगा। उसने कांपती आवाज में कहा—"मुझे प्रेम नहीं है।" और सहसा वह रो पड़ी।

नारायणराव को ऐसा लगा जैसे किसी ने मुंह पर कोड़ा मार दिया हो। वह पीछे हटा। मतिहीन-सा हो गया। लड़खड़ाया, और जाकर सोफे पर गिर गया। अब क्या है? सब खत्म हो गया है, अन्धकार-ही-अन्धकार। उसके हवाई किले ढह गए। जीवन व्यर्थ हो गया। उसे ऐसा मालूम हुआ, जैसे जिन्दगी-भर तड़पने के लिए किसी ने शाप दे दिया हो।

नारायणराव ने घबराये हुए हृदय से, कृत्रिम मुस्कराहट से, ससुराल में, अपने घर कौलपेट में, शेष रात्रियां एक नाटक की तरह काट दीं। मित्रों को भी पता न लगा। गौने की विधि इस प्रकार समाप्त हो गई।

उसके घर पिता ने सत्यनारायण-व्रत करने की ठानी। जाने क्या हो? कैसे हो?

शारदा अपने घर गई। उसे कुछ अस्पष्ट, कुछ स्पष्ट रूप से यह अनुभव होने लगा कि उसने पति और पिता के प्रति अपराध किया है।

बालक केशवचन्द्र को लगा, जैसे कोई अनिष्ट होने वाला हो। उसका हृदय अशान्त हो गया। उसने बड़ी बहन के पास जाकर कहा, "छोटे जीजा, बड़े अच्छे हैं," शकुन्तला ने भाई को गोद में उठाकर चूमा। केशवचन्द्र ने ओठ भिगोते हुए पूछा, "क्या छोटे जीजा अच्छे नहीं हैं?"

"तो इसका मतलब है कि तुम्हारे बड़े जीजा अच्छे नहीं हैं ?"

"अच्छे नहीं हैं।"

"क्यों ?"

"जाने क्यों ?"

उसने शारदा के पास जाकर, उसके मुँह को ध्यान से देखते हुए कहा—"छोटे जीजा, परमात्मा के अवतार हैं न ? मुझे विश्वास है।"

शारदा उसकी बात सुनकर चौंकी।

शकुन्तला ने अपनी बहन से पूछा, "शारदा, क्या तुम्हारे पति मद्रास जाते हुए हमारे यहाँ आयेंगे ?"

शारदा ने सिर हिलाकर बताया कि उसे मालूम नहीं।

शकुन्तला बहन के पति से प्रभावित थी। उसने निर्मल हृदय से माँ, बहन, बुआ और पिता के सामने उसकी प्रशंसा की। शारदा को उसकी बातें बुरी लगीं। उसे सन्देह भी हुआ। वह उससे बच-बचकर रहने लगी।

एक भयंकर आपत्ति टल गई थी। उसे भय था कि कहीं पति उसके साथ बलात्कार न करे, परन्तु उसका मृदु व्यवहार देखकर उसके मन से मानो कोई बोझ हट गया।

वह पढ़ाई की ओर ध्यान देने लगी। वह फिर संगीत का अभ्यास करने लगी। त्यागराय के कीर्तन गा-गाकर मन-ही-मन प्रसन्न होने लगी।

शारदा को देखकर शकुन्तला कहा करती, "तू किस्मत वाली है बहन, तुझे ऐसा पति मिला है जो महाराजा की रानियों को भी माँगे नहीं मिलता था! मेरा गला तो खराब हो गया है। तुम्हारे जीजा और मुझमें ऐसा वाद-विवाद होता है कि स्वर में अपश्रुति आ गई है। वीणा भी नहीं बजा पाती। बच्चे हमेशा शोर करते रहते हैं।"

शारदा बहन के बच्चों को हमेशा खिलाती। उनसे एक क्षण भी दूर न रहती।

क्या जमींदार घरानों में स्त्रियाँ इसी प्रकार का व्यवहार करती हैं ? या उस पर ही इस प्रकार बीती है। उसका दिल संगीत में भी न लगा। बाग में जाकर वह अपना हृदय वहाँ के पौधों के समक्ष रखता। नारायणराव को ऐसा लगा, जैसे गुलाब, मल्लिका आदि फूल, उसे देखकर, उस पर तरस

खा रहे हों।

पिता, ससुर, भाई चाहते थे कि नारायणराव राजमहेन्द्रवर में वकालत शुरू करें। वह भी उसके लिए उद्यत था। पर अब कैसे? वकालत क्यों? अच्छा हो कि गान्धी जी फिर सत्याग्रह शुरू करें, और जेल जाने की अनुमति दें। सब छोड़कर सन्यास लेने में ही शायद भला है। श्मशान वैराग्य है क्या? क्या मुझमें इच्छा समाप्त हो गई है? किसी-न-किसी तरह देश की सेवा करनी है। क्या किया जाय? ग्रन्थालयों के लिए काम किया जाय? पर अब वे आकर्षित नहीं करतीं। खद्दर-उत्पत्ति? यह तो एक फैक्टरी की-सी बात हुई। औषधालय खुलवाऊँ? पर मैं तो वैद्य-विद्या से दूर हूँ। राजू हर तरह से सौभाग्यशाली है। वह परीक्षा में उत्तीर्ण होकर मद्रास के बड़े हास्पिटल में काम सीख रहा है।

परमेश्वर अच्छे दिल का है, सन्तुष्ट है। कष्ट आते हैं, पर उसको परवाह नहीं। जाने उसका जीवन कैसे पार लगेगा उस मरुभूमि से?

क्या मेरे जीवन में कला नष्ट हो गई है? संगीत, साहित्य, चित्रकला—इनमें मुझे क्या काम?

एक दिन उठकर नारायणराव ने पिता से कहा—"पिताजी, मैं देश का भ्रमण करना चाहता हूँ।"

पिता को आश्चर्य हुआ। "बेटा, पढ़ते समय सारा दक्षिण देख तो आये थे?" पिता ने पूछा।

"पिता जी, इस बार उत्तर भारत देखना चाहता हूँ।"

"उत्तर भारत?" सुब्बाराय ने पूछा। इसलिए नहीं कि वे उत्तर भारत का अर्थ नहीं समझते थे। पर आश्चर्य से उन्होंने यह प्रश्न किया था।

"काशी, प्रयाग, सब देख आऊँगा!"

"अकेले?"

"मैं और परमेश्वर जायेंगे।"

"कितने दिन के लिए?"

"एक-दो महीने के लिए।"

"हाँ, देखा जायगा।"

"नहीं, पिता जी, वकालत शुरू कर दूँगा तो घूमने का मौका न मिलेगा।"

"वह तो दिया है बेटा, कि देखा जायगा ।"

उस दिन शाम को गुब्बाराम ने पत्नी को अकेला देखकर कहा, "नारायणराव काशी जाना चाहता है, बाद में वह जा नहीं सकेगा। देश का भ्रमण करने के बाद वकालत प्रारम्भ करना अच्छा ही है।"

जानकम्मा का माथा ठनका। काशी जाना कोई मामूली बात है? अगले दिन, पुरोहित को बुलाकर गुब्बाराम ने यात्रा के लिए शुभ मुहूर्त निश्चय करवाया। गुब्बाराम उनकी पत्नी, उनकी बहन, पहले नाराज हो गए थे। इसी कारण, जानकम्मा ने जैसे-तैसे पुत्र का जाना स्वीकार कर लिया था।

नारायणराव ने बोरिया-बिस्तर सँभालकर चार सौ रुपये ले लिये। पिता ने कहा कि अगर और जरूरत हो तो तार भेज देना। उनको नमस्कार करके वह माँ के पास गया। लड़के को पास बुलाकर सिर पर हाथ रखकर उसकी माँ ने कहा—"बेटा मुझे भगवान् ने राम-लक्ष्मण की तरह दो लड़के दिये हैं। होशियारी से जाना! तुम्हारी राह देखती रहूँगी। तुम उतावले आदमी हो, चलती गाड़ी में चढ़ते हो, दूसरों की मदद के लिए इधर-उधर भागते हो। सावधानी से रहना बेटा!" उन्होंने आशीर्वाद देकर पुत्र को विदा किया।

जो बन्धु-बान्धव, बहनें, सीने के लिए घर आई थीं, सभी की अपने-अपने घर जा चुकी थी। सूर्यकान्त को कुछ नहीं सूझ रहा था, उसने भाई के पास आकर कहा, "भैया, तुम कहाँ जा रहे हो? मेरा मन तो यों ही नहीं लगता है।"

भाई ने बहन को पास खींचकर कहा, "सूरी तेरे लिए क्या लाऊँ?"

"भैया, जो तुम ठीक समझो। सबसे पहले तुम्हारा जल्दी आना ही मुझे चाहिए।"

"अच्छा, यह बात है!"

यह लड़की, मेरी बहन, प्रेम की मूर्ति-सी है, उसका हृदय मक्खन-सा है। इस लड़की से शादी करने वाला रामचन्द्र हो राजगुरु भाग्यशाली है। इन दोनों का जीवन देखने की इच्छा होती है न?

'मूनलाइट सस्फेंड' 'टिम्पर माइडोन', 'टिम्पर बेन्जगान', 'हाय-ड्रोजन परोक्साइड', 'आनन्द भैरवी', 'सोहानु रग', 'सन्निपात भैरवी', 'कारो-

मल' की गोलियाँ, 'अमृताजन' आदि दवाइयाँ, ६० फीट लम्बी रस्सी, बरतन, पाँच सेर घी, तेल, चावल, मिर्चें, इमली, कुछ साग-सब्जी, अचार आदि चीजें, चाय, दो महीने के लिए कपड़े, दो मसहरियाँ, बेम्पकोट, दो बिस्तरे, दो चमड़े के सूटकेस, दो लकड़ी के ट्रंक लेकर नारायणराव सफर के लिए तैयार हो गया।

नारायणराव ने पहले ही परमेश्वर मूर्ति को चिट्ठी लिख दी थी कि पत्नी को मायके, या ससुराल में छोड़कर वह उसके साथ देश-यात्रा के लिए चला आये। उसने यह भी सूचित किया था कि सफर का सारा खर्च वह ही उठायगा। अगर वह न आया तो उसे फिर कभी जाने का अवसर न मिलेगा। परमेश्वर मूर्ति ने देशोद्धारक नागेश्वर राव—'आन्ध्र पत्रिका' संस्थापक के पास जाकर अनुमति ली। छुट्टी लेकर पत्नी को मायके में छोड़कर वह नारायणराव से राजमहेन्द्रवर में मिला।

ठीक समय निश्चित करके कहीं ऐसा न हो कि राहु या वर्ज्य, आ जायें, माँ-बाप बड़े-बुजुर्गों को साष्टांग करके, बहन को गले लगाकर नारायणराव मोटर में जब घर से निकला तो शुभ शकुन के रूप में विवाहिता स्त्रियाँ सामने से आईं।

उस दिन शाम को परमेश्वर मूर्ति, पेनेकर में राजमहेन्द्रवर आया। नारायणराव उसको अपने बहनोई लक्ष्मीपति के घर ले गया।

तीनों मित्र उस दिन रात-भर बातें करते रहे। नारायणराव ने चाहा कि लक्ष्मीपति भी साथ चले, पर उसे छुट्टी न मिल सकी।

अगले दिन सवेरे-सवेरे रमणम्मा ने नारायणराव और परमेश्वर मूर्ति को गरम-गरम भोजन परोसा। रमणम्मा को पास बुलाकर नारायणराव ने कहा, "रमणम्मा, तेरे लिए और बच्चों के लिए तस्वीरें लाऊँगा।" फिर वे लक्ष्मीपति को साथ लेकर दो ताँगों में निकले। उन्होंने दो टिकट ईस्टर के सुरदा रोड से होते हुए पुरी के लिए लिये। दस 'गोल्ड फ्लेक' के डब्बे, दस 'थ्री केसल्स' के डब्बे लेकर और कुछ किताबें लेकर वे मेल पर चढ़े। लक्ष्मीपति से हाथ मिलाये। थोड़ी देर बाद गाड़ी चल दी।

६ : उत्तर भारत की यात्रा

भारत देश अति प्राचीन काल से संसार को सभ्यता, मानव धर्म, आध्यात्मिक ज्ञान देता आ रहा है। हिमालय से कन्याकुमारी तक इस समृद्धशाली देश में कितनी ही जातियाँ, कितने ही राज्य बने, बिगड़े, और नष्ट हो गए। एक जाति ने दूसरी जाति को पैदा किया, नई जातियों को अपने में समा लिया। भारत प्राचीन परम्परा का पालन करता रहा।

शिशुनाग से गुप्त तक, गुप्त से सिकंदर, अफगान् व मुगल-काल तक कितना हुआ महाराजाओं की तरह से भारतीय भारत का असली इतिहास कहाँ से शुरू हुआ, और कहाँ आ रहा है? मालव-गुजरात और गंधार-मूर्ति, पुरी, कोणार्क, भुवनेश्वर भी कला से बहुत प्रभावित हुए।

कलिंग के मन्दिर भारत देश में बेजोड़ समझे ही हैं। एक उड़ीसा देश में कोणार्क में है। कहते हैं कोणार्क के देवालय में मूर्ति की प्रतिष्ठा नहीं हुई थी। महाराजा ने मन्दिर बनवाने के उद्देश्य से यह काम बारह हजार शिल्पियों को सौंपा था।

शिल्पी का एक लड़का था। उसने पिता की देख-रेख में रहकर शिल्प का अभ्यास किया। एक दिन उसने पिता से दूर-दूर देशों में जाकर, वहाँ की कला का ज्ञान प्राप्त करने की अनुमति माँगी। पिता ने कहा, "भारत और शिल्प में मुझसे बड़ा कोई नहीं है।" और उसने अपने लड़के को जाने नहीं दिया। लड़के को यह ठीक नहीं जँचा। उसने पिता से कहा, "सब ज्ञान का भण्डार है।" और वह विदेश यात्रा पर निकल पड़ा।

इधर पिता ने मन्दिर को विचित्र ढंग से निर्माण कर बना दिया। नृत्यमण्डप, भवन-मन्दिर, विवाह मण्डप, भोगमण्डप आदि बना दिये। सिंह, गज, अश्व, अद्भुत सुन्दरी स्त्रियाँ देवी-देवताओं की मूर्तियाँ उसने और उसके शिल्पियों ने बनाईं। मन्दिर की चोटी बाकी थी। पर मुश्किल यह थी उन शिल्पियों को यह न पता था कि 'शिखर' किस प्रकार तैयार करें। यह महाराजा के कानों में भी पहुँच गया। यह पता कि उस जगह काम है यह और देशों में कला शिल्पों को देखने निकल पड़ा।

इतने में ज्योतिषियों ने महाराजा से कहा कि पन्द्रह दिन में अमावस

मुहूर्त है, और वैसा मुहूर्त फिर वर्षों तक न आयगा । शिल्पी ठीक समय पर चला गया था । इसलिए महाराजा ने उसके शिष्यों से पूछा कि कोई उनमें से शिखर बना सकता है, पर कोई इस कार्य के लिए योग्य न था । इसलिए राजा ने शिल्पी के लिए आदमी दौड़ाये ।

इस बीच, शिल्पी का लड़का देश-देशान्तर का भ्रमण करके वापिस आ गया । उसे यह पता लगा । कहीं ऐसा न हो कि पिता की बदनामी हो, उसने वह कार्य अपने ऊपर ले लिया । पिता को यह जानकर कि जो कार्य वह न कर पाया था वह उसने कर दिखाया है, गुस्सा आ सकता था, इसलिए वह चुपचाप अपना परिचय दिये बगैर ही काम करने लगा । दस-बारह फीट का बड़ा भारी शिखर, शिला, विमान-मूल को एक बगल वाले टीले पर बना दिया । और राजा से उसने प्रार्थना की कि समुद्र की रेत से वह टीला ऊँचा किया जाय । हजारों गाड़ियों में रेत आने लगा । वह बाल-शिल्पी यह देखता रहा कि वह शिला टील पर ही रहे । तीन दिन में टीला पर्वत की तरह, शिखर से भी ऊपर १२४ फीट उठ गया । शिखर, शिला और विमान मूल उसी टीले पर थे । तब उसने मन्दिर और टीले के बीच में खम्भे लगवाये, रस्सों से शिखर, शिला और विमान-मूल को खींचकर उसने मन्दिर की चोटी पर रखवा दिया ।

राजा इस महान् कार्य को रोज देखता, कार्य की सफलता देखकर प्रसन्न होता। जिस दिन शिखर की शिला रख दी गई उस दिन दूर-दूर से उसे लोग देखने आये । उन लोगों में राज-शिल्पी भी था । लोगों को उसके आगमन का भी पता न था । वे समुद्र के पास खड़े मन्दिर को देख रहे थे ।

कार्य की पूर्ति के बाद राजा ने बाल-शिल्पी के गले में माला डाली । अगले दिन देवालय में शुभ मुहूर्त्त के लिए सब ठीक करने के लिए वह वहीं सो गया ।

पिता ने पुत्र को नहीं पहचाना । छुटपन में ही वह चला गया था । अब उसकी मूँछें आ गई थीं । वह अब जवान हो गया था । वह उससे अपमानित होना नहीं चाहता था । रात को अकेले सोते हुए अपने लड़के को उसने छुरे से मार डाला । लड़के के हृदय से खून बहने लगा । उठकर कराहते-कराहते उसने दिये की रोशनी में पिता को पहचाना । "पिता जी,

मुझे छुरा क्यों मारा ? क्या मुझे पहचाना नहीं ? हाय ! जान जा रही है। स्वामी के कार्य के लिए मुझे यह शिखर चढाना पड़ा। पिता जी, सुनते हैं कल सर्वोत्कृष्ट मुहूर्त्त है। हाय, दर्द हो रहा है, इस छुरे को निकाल दो! पिताजी, गुरुदेव, मुझे इसका सन्तोष है कि मैं आपके हाथों मारा गया। यह मेरी आखिरी प्रणाम है।" वह लड़का वहीं मर गया।

पिता ने पुत्र को पहचाना। उसने अपने घोर अपराध को देखा। उसका हृदय टुकड़े-टुकड़े हो गया। वह भी वहीं शर्म के कारण मर गया। अगले दिन शुभ मुहूर्त्त आया, पर मूर्ति की प्रतिष्ठा न हुई, कभी भी न हुई।

यह कहानी सुनकर परमेश्वर मूर्ति की आँखों में आँसू आ गए। नारायणराव ने भी लम्बा निश्वास छोड़ा। कोणार्क, जगन्नाथ, भुवनेश्वर में देवालय के 'श्री विमान' ऊँचे होते हैं। उससे छोटा, मध्य मण्डप, और उससे भी छोटा मुख मण्डप होता है। गोपुर छोटे होते हैं। नींव से लेकर शिखर तक मन्दिर पत्थर से ही बनाया जाता है। जिस प्रकार पत्थर पर शिल्प किया जा सकता है, वैसा किसी और चीज पर नहीं बनाया जा सकता। गांग शिल्पी सभी वे रूप की रचना में तन्मय हो जाते थे। गांग लोग आन्ध्र थे। उत्तर आन्ध्र के शिल्पी ही गांग हैं।

भुवनेश्वर में राजा-रानी, परमेश्वर मार्कण्डेयश्वर, लिंगेश्वर देवालय में, कोणार्क में, साक्षी गोपाल में गांग शिल्पियों का सुन्दर शिल्प प्रत्यक्ष है। सारे मन्दिर में मूर्ति-कला अंकित है, बीच-बीच में मूर्तियाँ रखी गई हैं। दाक्षिणात्य चौल, पाण्ड्य, चालुक्य, देवालयों में मन्दिर को पत्थर या ईंट से बनाया जाता है। गांग देवालय शुरू से अन्त तक गोलाकार में बनाया जाता है।

भुवनेश्वर में दो सौ मन्दिर हैं। हर मन्दिर के पास गहरे तालाब हैं। न जाने कहाँ से पानी लाया गया है। शिल्पियों ने इसको इस तरह बनाया है कि इनका जल कृषि के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकता है। जगन्नाथ पुरी, साक्षी गोपाल आदि देखकर नारायणराव और परमेश्वर मूर्ति कलकत्ता पहुँचे। कलकत्ता में अजायब घर, दक्षिणेश्वर, काली घाट, सर्व-वृक्ष-उद्यान, चिड़ियाघर, विक्टोरिया मेमोरियल, जैन महा मन्दिर, बोस की वृक्ष-आसन-रसायन शाला आदि देखी।

श्री रामकृष्ण की जन्मभूमि, काली का मन्दिर, उस महामना, पवित्र पुरुष के रहने की जगह, देखकर वे पुलकित हो उठे।

नागराजन ने दक्षिणेश्वर को बताया कि उस महापुरुष ने यह निश्चित किया कि सर्व धर्मों की जननी हिन्दू धर्म ही है। आत्मविद्या की शिक्षा इन्होंने अन्य धर्मों को दी है, रामकृष्ण पढ़े-लिखे न थे। परन्तु ईश्वरचन्द्र विद्यासागर-जैसे विद्वानों ने उनका स्वागत किया। केशवचन्द्र-जैसे महानुभावों ने उनकी चरण-सेवा करके आत्म-ज्ञान पाया।

रामकृष्ण परमहंस के लिए स्वामी विवेकानन्द, अर्जुन के समान थे। प्रति धर्म में कुछ नियम और परम्पराएँ चल पड़ी हैं। पर उन नियमों तथा परम्पराओं के पालन करने-मात्र से मोक्ष मिल जायगा, यह सोचना निरी मूर्खता है।

टीका लगाकर, विष्णु के मन्दिर में जाकर विष्णु का दर्शन करने वाला ही वैष्णव है। सिर घुटवाकर, दाढ़ी बढ़ाकर, मोहम्मद ने सिर्फ उन्हीं को शिक्षा दी है। कुरान ही केवल धर्म-ग्रन्थ है, एक ही भगवान् है, दो नहीं है, यह विश्वास करने वाले ही मुसलमान हैं। ईसा, भगवान् का लड़का है, उनके द्वारा ही मोक्ष मिलता है। जो उस पर विश्वास नहीं करता वह नरक में जायगा, यह सोचने वाले ईसाई हैं, इस प्रकार युक्ति करना नादानी है।

"हमारा धर्म यही कहता है कि सब धर्मों का चरम स्थान एक ही है।"

"यह न कहो, क्या मोहम्मद और ईसा ने यह नहीं कहा है? प्रत्येक यथार्थ पुरुष यही कहता है।"

"तू सही तो कह रहा है, धर्म पर चलने वाला, सच बोलने वाला, चाहे वह किसी भी धर्म का हो, मोक्ष पाता है, रामकृष्ण परमहंस का उपदेश ठीक है।"

"हाँ, उन्होंने मुसलमान होकर, अल्लाह की प्रार्थना करके भगवान् का साक्षात्कार किया। ईसाई बनकर यहोवा के पास गये। राधा बनकर कृष्ण का दर्शन किया। हनुमान बनकर राम का सम्पर्क पाया। सब एक ही परमात्मा के अनेक रूप हैं न?"

बेलूर मठ देखकर, चन्द्रा देखकर, कलकत्ता से वे गया गये। फल्गु नदी में स्नान किया। श्री गयाशिर जाकर राम के प्रतिष्ठापित किये हुए

मरकत मणि खचित लिंग के दर्शन किये। बुद्ध गया जाकर, जिस जगह बुद्ध बुद्ध हुए थे, वहाँ बैठकर उस महान् पुरुष के बारे में सोचते हुए उनके मन्दिर की शोभा देखकर सन्तुष्ट हुए। बुद्ध का जब निर्वाण हुआ तो दहन-संस्कार के बाद उनकी अस्थियाँ, स्वर्ण-पिटारियों में रखकर उनके शिष्यों ने देश-विदेश भेज दी थी। जिन-जिन राजाओं के पास ये पिटारियाँ भेजी गईं उन्होंने उन्हें पवित्र स्थान पर रखकर पत्थर और ईंटों से उन पर स्तूप बना दिये। उन पर कारीगरी की गई। ये स्तूप पवित्र हो गए। भक्तों ने उन पर अपनी कला का परिचय दिया। उनके लिए तोरण आदि बनाये गए। राजा-महाराजाओं ने लाखों रुपये खर्च किये। बाद में बुद्ध के लिए मन्दिर बनाये गए। उन मन्दिरों में बुद्ध गया का एक मन्दिर है। कहा जाता है कि स्तूपों के बाद ही मन्दिर बनाये गए। मगर परमेश्वर-मूर्ति का कहना है कि उनसे पहले भी मन्दिर थे।

गया से मुगलसराय होते हुए वे काशी पहुँचे। गंगा में स्नान करके, विश्वेश्वर, बिन्दु माधव, गणेश, अन्नपूर्णा, विशालाक्षी के दर्शन करके केदार घाट में श्री विजयनगर महाराजा के भवन में वे ठहरे। वे दोनों काशी विश्वविद्यालय देखने गये। "एक महानुभाव ने भिक्षुक होकर करोड़ों रुपया इकट्ठा करके इस महोत्कृष्ट विद्यालय को बनाया है। इस विद्यालय की नींव पहले-पहल एनी बिसेंट ने डाली थी। मनुष्य का स्वभाव भी क्या विचित्र है।" परमेश्वर ने कहा।

"यह महातीर्थ कितने हजार वर्षों से मानव-समाज का कल्याण करता आया है। श्री रामचन्द्र ने इस पुण्य क्षेत्र के दर्शन किये थे। अरे, परमेश्वर, हमारे देश के पुण्य क्षेत्र बाद में बने हैं, पर यह सब से पुरातन तीर्थ-क्षेत्र है।" नारायणराव ने कहा।

७ : भारतीय प्राचीन संस्कृति

"प्राचीन परम्परा के पक्षपाती प० मदनमोहन मालवीय ने इस विश्वविद्यालय को लाखों रुपए की लागत से क्यों बनाया ?"

"अरे, नारायण, मगर एक बात है, आजकल जब कि पाश्चात्य शिक्षा ही शिक्षा का ध्येय है, बिना सरकार के कोप-भाजन हुए, राष्ट्रीयता को प्रोत्साहित करने के लिए इस विश्वविद्यालय को उस महानुभाव ने स्थापना की है।"

"तेरा कहना ठीक है। हम पुराने काशी विद्यापीठ, नालन्दा, तक्षशिला, अजन्ता, नागार्जुन, कोण्डा, धान्यकटक, नवद्वीप आदि परिषद्, विश्वविद्यालय आजकल नहीं स्थापित कर सकते। १६२१ में स्थापित किये हुए गुजरात, कलकत्ता, आन्ध्र जातीय विद्यालय अब नाम-मात्र रह गए हैं। शिवप्रसाद गुप्त द्वारा संस्थापित गुजरात विद्यापीठ अब भी है। न जाने कब आदर्श विद्यापीठ के दर्शन होंगे? सुना है आन्ध्र विश्वविद्यालय विजयवाड़ा से उठा दिया जायगा। मगर यह विशाखपट्टन में रखा गया तो रायलसीमा वाले इससे अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर लेंगे। विजयवाड़ा, आन्ध्र देश के मध्य में स्थित मुख्य नगर है। हर तरफ से वहाँ गाड़ियाँ आती हैं। पवित्र कृष्णा नदी वहाँ प्रवाहित होती है।"

"अरे भाई यह सब सोचने वाले अधिक आदमी नहीं हैं। शासन-सभा में यह विधेयक रखा जाने वाला है कि आन्ध्र विश्वविद्यालय, विशाखपट्टन में रखा जाय। विधेयक पास भी हो जायगा, पर मैं यह जानना चाहता हूँ कि इस तरह एक अलग विश्वविद्यालय बनाकर उन्होंने ऐसा कौन-सा काम कर दिया जो मद्रास-विश्वविद्यालय ने नहीं किया है?"

वे काशी से सारनाथ गये। वहाँ पुरातत्त्व-विभाग द्वारा खोदे गए संघाराम के भवन को देखा। महाबोधि सभा परिवर्धित करके गुप्तकाल के प्रसिद्ध इस भवन का पुनः निर्माण कर रहा है। बुद्ध और मंजुश्री तारा की कृतियाँ आश्चर्यजनक हैं। उस स्तूप का निर्माण तब प्रारम्भ हुआ था जब अशोक बुद्धधर्मावलम्बी हो गया था। भक्त होकर, बुद्ध के उपदेशों को सम्पूर्ण विश्व में प्रचलित करने का संकल्प कर चुका था। वहाँ एक

अशोक-स्तम्भ भी है। होते-होते वह सघाराम बढ़ने लगा। वह ही वेणु वन है। बुद्ध ने इसी स्थल पर आश्रय बनाकर सूर्य की तरह संसार में सत्य मार्ग सूचित किया था। उपदेश दिया था।

परमेश्वर उस जगह घूमता रहा। नारायणराव उस स्तूप के पास आँखें बन्द करके पद्मासन लगाकर बुद्ध भगवान् के प्रति सोचने लगा। उनकी अमृत वाणी नारायणराव के कानों में प्रतिध्वनित होने लगी। परमेश्वर ने सोचा कि वह ध्यान-मग्न होकर 'ओ, भिक्षु पद्म हूं' का उपदेश दे रहा था।

काशी से प्रयाग जाकर हमारे मित्रों ने वहाँ त्रिवेणी में स्नान किया। त्रिवेणी में दो ही नदियाँ मिल रही हैं। तीसरी नदी गुप्त समझी जाती है। यमुना नीलगात्री है, गंगा धवल शरीरिणी है। सरस्वती सुवर्ण रंगयुता है। यमुना की अपेक्षा गंगा की गहराई कम है। सरस्वती की गहराई का तो काल ही प्रमाण है। गंगा बहुत तेजी से बहती है। यमुना, गम्भीर धीरे-धीरे बहती है। स्नान करके वे दोनों युवक नगर देखने निकले। पंडित मोतीलाल का घर, विश्वविद्यालय, किला आदि देखे। किले में उन्होंने अशोक-स्तम्भ भी देखा।

उन दोनों ने प्रयाग में बड़े-बड़े कलशों में गंगा-जल भरकर लक्ष्मीपति के नाम राजमहेन्द्रवर को भेज दिया।

इलाहाबाद से लखनऊ, हरिद्वार, ऋषीकेश, देखने गये। आकाश पथ को छोड़कर गंगा ऋषीकेश में आर्यावर्त में उतरती है। वहाँ उन्होंने ऋषियों के आश्रम देखे। वह जगह भी देखी जहाँ स्वामी रामतीर्थ गंगा में मिल गए थे। नारायणराव ने तब कहा, "यह ऋषि दिगम्बर हो, हिमालय में तपस्या किया करता था। विवेकानन्द द्वारा की गई देश-विदेश यात्रा को इसने पूरा करके कार्य सम्पन्न किया। कितने मेधावी थे ये। गणित में एम० ए० पास किया था। बचपन में जब दस प्रश्नों में से आठ प्रश्नों का उत्तर पूछा जाता था तो ये दसों प्रश्नों का आधे समय में उत्तर दे देते थे।"

"सत्यस्वरूप भगवान् जिनको साक्षात् हो गए हों भला ये प्रश्न भी कोई प्रश्न हैं?"

थोड़े दिनों में वे दिल्ली पहुँचे। वहाँ उन्होंने कुतुब मीनार, तीन-

स्तम्भ, जामा मस्जिद आदि देखे। मोहम्मदीय शिल्प-कला को देखा। नई दिल्ली में नये मकानों को देखकर उन्होंने सोचा 'यह निष्प्राण कला इस काल के अनुरूप ही है।' मुगल सम्राटों के बनाये हुए किले व अन्य मकानात उन्होंने दिल्ली के आस-पास देखे। अकबर की बनाई हुई फतहपुर सीकरी भी उन्होंने देखी। फतहपुर सीकरी में वे दो दिन रहे। अकबर के समय का उन्होंने स्मरण किया।

"अरे नारायण, इन मकानों में घूमने वाली अनारकली की कहानी सहसा स्मरण हो आती है। जाने यहाँ विदेश से आई हुई कितनी ही सुन्दरियाँ रही होंगी। उनकी बातें अस्पष्ट रूप से यहाँ प्रतिध्वनित होती लगती हैं।"

"कविता, कविता, नारायण, तू एक सरदार है, तू जब दरबार की ओर जा रहा था तो जनानखाने की खिड़की में से दो मृग-नयनों ने तुझे देखा, तूने सिर उठाकर देखा, नयन हँसे।"

"हाँ तो फिर।"

"तब तेरे लिए कोई खबर आया, खुफिया रास्ते से किले में गया। वे तुझे एक कमरे में ले गए, वह एक सुन्दर पारसी लड़की है, ढाका की साड़ी पहने, सजी-धजी। तू उसके पैरों में पड़ गया, उसने अनार के फूल के समान ओठों को खोलकर पूछा, 'तुम कौन हो? यहाँ क्यों आये हो?'" उसने ताली बजाई।"

"कहानी सुनाने में पिता जी के बाद तू ही है। कहानी मुझ पर है इसलिए सुनने को जी चाह रहा है। फिर क्या हुआ?"

"उसने ताली पीटी ही थी कि कहीं से सैनिक आ गए, लम्बी-लम्बी तलवारें पकड़े। तू डर के मारे काँप गया।"

"अरे, अरे, !"

"इसे ले जाकर, लोहे की कोठरी में, तहखाने में डाल दो, उसने कहा, और उन्होंने तुझे ले जाकर लोहे की कोठरी में डाल दिया।"

"तब भी हमें कैद हो गयी थी?"

"जाने कितने और जन्मों में कैद लिखी है? कोठरी में डाल दिया गया। पानी और रोटी-मात्र दिया जाता था। चौथे दिन वह लड़की, जो

नवाब की चार सौ एक वीं पत्नी होने जा रही थी, कैद का फाटक खोलकर अन्दर आई, और आकर तेरा आलिंगन किया। तू खुशी से फूला न समाया। वह तुझे खूब खिलाती-पिलाती। रात में तेरे पास आती। नहीं तो अपने शयन-कक्ष में ले जाती। यह बात कुछ दिनों बाद नवाब को मालूम हो गई।"

"तो क्या उसने उनके सिर कटवा दिये ?"

"बस क्या इतना ही ? उसने हुक्म दिया कि उन्हें हाथी से कुचलवा दिया जाय। फिर नवाब को खबर मिली कि पंजाब में बलवा शुरू हो गया था। तुम दोनों की बात वह भूल गया। और तुम दोनों सैनिकों को रिश्वत देकर दक्षिण देश भाग गए, और वहां कृष्ण देव राय की नौकरी करने लगे।"

"अच्छी कहानी है।"

दिल्ली से वे मथुरा, वृन्दावन, इन्द्रप्रस्थ, कुरुक्षेत्र, हस्तिनापुर आदि देखने गये। इन पुण्य क्षेत्रों में श्रीकृष्ण घूमा-फिरा करते थे। कौरव और पाण्डवों ने यहां राज्य किया था। उनकी आंखों के सामने महाभारत की कहानी आ गई। कुरुक्षेत्र में अभिमन्यु की कहानी याद करके हमारे यात्रियों की आंखों में नमी आ गई।

वृन्दावन में उन्हें मीरा का स्मरण हुआ।

परमेश्वर ने मीरा की भक्ति से सम्बन्धित एक गीत गाया।

८ : वृन्दावन

दोनों मित्रों को मीराबाई की जीवनी प्रत्यक्ष-सी हो गई। कृष्ण का दर्शन करने वह वृन्दावन आई। उन दिनों वृन्दावन में एक महात्मा आया हुआ था। उसने आज्ञा दी हुई थी कि जब तक वह वहां रहे कोई स्त्री वहां न आये। उसका मत नियमपूर्वक चल रहा था। जब मीराबाई ने वृन्दा-

वन में प्रवेश किया तो उन्हें रोका गया।

"भाई क्यों रोकते हो?"

"माँ तुम स्त्री हो, हमारे गुरु की आज्ञा है कि वृन्दावन में कोई स्त्री प्रवेश न करे।"

"तुम्हारे गुरु कौन हैं?"

"हमारे गुरु श्री रूप गोस्वामी हैं। उन्होंने हिमालय में तपस्या करके बड़ी शक्तियाँ पाई हैं।"

"ऐसी बात है तो आप उनको यह गीत सुनाइये।" उसने तब एक गीत गाया जिसका अर्थ यह है, 'श्री कृष्ण ही एक पुरुष हैं, सब भक्त स्त्री हैं, उस पुरुष में लीन होने के लिए ही ये तपस्या निमित्त हैं।' शिष्यों ने जाकर यह गीत गुरु के सामने सुनाया। गुरु सोचकर रह गया। उसने गीत का अन्तरार्थ समझ लिया। वह भागा-भागा मीरा के पास गया। उसने पैरों पर पड़कर उसने कहा, 'तुम ही मेरे गुरु हो, जिसने मुझे सत्य मार्ग दिखाया, मैं मूर्ख हूँ, क्षमा करो। मैं इस भ्रान्ति में था कि स्त्री मोक्ष के मार्ग में अड़चन है। मैं गलत रास्ते पर था।"

इस कथा को याद करके यमुना के घाट, बाग-बगीचे, कालीदह, गोवर्धन, आदि उन्होंने देखे।

कृष्णा कृष्णा मोर कुमारा,
वृन्दावन सञ्चारा,
मुरली मोहन मुकुन्द नर्तन
मोहन लीला धारा,
सुन्दर नन्द कुमारा,
कृष्णा कृष्णा……

जागे हुए परमेश्वर ने नारायण से कहा—"नारायण, इस चाँदनी में यमुना के किनारे, रासक्रीड़ा में मग्न श्री गोपीजन को देखें।" नारायण ने उसकी बात न सुनी। श्री गोपाल कृष्ण वह दिव्य बालक, उस आनन्द में कूदा-फूदा था, क्या उसने लोगों को सर्वसमर्पण मार्ग दिखाया था? प्रेम का अर्थ क्या पुरुष-स्त्री की परस्पर इच्छा ही है? क्या निरक्षमा की दिव्य प्रतिमा स्त्री के रूप में पूजा की जाए? क्या मूर्खता है? प्रेमियों को

भक्ति प्रेम ही तो है। सच्चा प्रेमी फल की आकांक्षा नहीं करता। इसकी भी परवाह नहीं करता कि स्वामी किसी और को प्रेम कर रहा है। एकसात् होना ही उसका ध्येय है। बचपन में प्रेम ही भक्ति है, भक्ति योग का उपदेशक नन्दलाल, नवनीत-चोर, राधा-हृदय-नाथ, गोपिका-चितचोर, कुरुक्षेत्र में वेद, उपनिषद्, शास्त्र-सार को उद्घोषित करने वाले ने सर्व-धर्म-समन्वय को संकल्प धारण करके बोध कराया था न ?"

"अरे परमेश्वर, सांख्य दर्शन उत्कृष्ट है, पर सांख्य ने क्या कहा है ? प्रति आत्मा पुरुष है। वह ही साक्षीभूत परमात्मा है, व्यक्ति का मान, अहंकार, बुद्धि, इन्द्रिय आदि प्रकृति हैं। बुद्धिहीन व्यक्ति को साक्षीभूत पुरुष नहीं दिखाई देता। वह प्रकृति से आवृत होकर अपने घर-बार, बाल-बच्चे इन्हीं में डूबता-तैरता रहता है, मरता-जीता रहता है। परन्तु ज्ञान के कारण, योग के कारण जब एक व्यक्ति अपने-आपको जान लेता है, पुरुष और प्रकृति को, और उनकी पृथक्-पृथक् स्थिति को पहचान जाता है, तब उसे जन्म-रहित मोक्ष प्राप्त होता है। प्रकृति ही परिवर्तित होती है। पुरुष एक लगड़े पति की तरह है, और प्रकृति अन्धी पत्नी-सी है। पुरुष अगर प्रकृति को रास्ता दिखाता गया, तो प्रकृति उसे ढोती जायगी।

"सांख्य धर्म की क्या कमी है ? और उस कमी को कृष्ण ने कैसे पूरा किया है ? कपिल महर्षि ने इतना ही कहा, उन्होंने अपना कथन पूरा नहीं किया, परन्तु एक-एक आत्मा एक-एक पुरुष है न ? यानी विश्व में करोड़ों पुरुष, विविध-विविध व्यक्तियों में हों, तो उन पुरुषों की क्या शक्ति है ? अगर ये आद्यन्त रहित सर्व ब्रह्माण्ड स्वरूप हों तो इनको चलाने वाला भी कोई होगा। नहीं तो क्या ये करोड़ों आत्माएँ करोड़ों ब्रह्माण्ड हो जायेंगे ? इसलिए कृष्ण उपनिषद् की ओर गया। उपनिषदों ने बताया कि आद्यन्त रहित ही अनिर्वचनीय ब्रह्म है। उस ब्रह्म के बारे में बड़े-बड़े ज्ञानी नहीं पता लगा सकते। उस ब्रह्म से ही मूल प्रकृति पैदा हुई है। उस मूल प्रकृति के कारण यह सृष्टि बनी है। सृष्टि का हर व्यक्ति, हर प्राणी ब्रह्म है। नक्षत्र, आकाश, भूमि, पुरुष, स्त्री, कुत्ते, घोड़े सब ब्रह्म हैं। प्रकृति के कारण इस सृष्टि का अस्तित्व है ? आदि रहित हो जाना ही ब्रह्म में लीन होना होता है।

"श्रीकृष्ण परमात्मा ने क्या कहा ? सब एक ही बात को कह रहे हैं। पर कोई भी सब-कुछ नहीं कह पाया है। सृष्टि क्यों बनी ? इसका कारण न पूछो। वह चिदानन्द है, परन्तु सृष्टि है। सृष्टि में पुरुष और प्रकृति सांख्य में जिस प्रकार बताये गए हैं, उसी प्रकार हैं, परन्तु ये पुरुष और प्रकृति पुरुषोत्तम के स्वरूप ही हैं। सभी एक ही पुरुष के साक्षीभूत रूप हैं। प्रकृति-स्वरूप है, सब पुरुषोत्तम के अवतार हैं। प्रकृति पुरुष में विलीन हो जाती है, और पुरुष पुरुषोत्तम में।"

"नारायण, हमें भगवद्गीता और ध्यान से पढ़नी होगी।"

दोनों यात्री आगरा पहुँचे। प्रियतम के प्रेम का मानो मूर्तिरूप हो, मानो अश्रु घनीभूत हो गए हों, निर्मल हृदय की परछाईं हो, ऐसे ताजमहल को यमुना के किनारे चाँदनी में देखा।

संसार के सात आश्चर्यों में यह एक आश्चर्य है। समस्त रेखाएँ, मोड़, ऊँचाई सब इस प्रकार बनाये गए हैं, जैसे कोई राग हो। यमुना के किनारे ताजमहल सुशोभित है।

ताजमहल के शिखर पर उन्होंने उदयारुणकी किरणें देखीं, मध्यान्ह की निश्चिन्तता में उसे परखा, और तारों के प्रकाश में उसको निहारा। ज्यों-ज्यों वे उसे देखते जाते, त्यों-त्यों और देखने की मर्जी होती। एक प्यास-सी लगती, जो बुझाई नहीं जा सकती थी।

चौथे दिन रात को दोनों मित्र निकले। परमेश्वर ने ताजमहल के १५ चित्र बनाये। उस दिन रात को नारायणराव ने ताजमहल के गीत गाने की ठानी। दोनों यमुना के तट पर गये।

नारायणराव ने वाइलेन बजानी शुरू की। स, सा, रि,

संगमरमर द्रवित हो गया। यमुना का बहना रुक-सा गया। ताज-महल गायक-सा हो गया, और उसकी जगह शाहजहाँ और मुमताज पद्मासन लगाये बैठे दिखने लगे। सब-का-सब सुन्दर मधुर था। परमेश्वर आनन्द में मग्न था।

सत्संगियों के लिए दयालबाग मक्का है। वहाँ उनके सद्गुरु महाराज रहते हैं। वर्तमान गुरु पाँचवें गुरु हैं। चौथे गुरु के समय आश्रम बनना शुरू हुआ। अब यह सर्वतोमुखी उन्नति कर रहा है। सत्संग धर्म मुख्यतः

तीन बातों का उपदेश देता है—धर्म, संघ, और पारिश्रमिक विषय। परमात्मा शब्द रूप में है। वह शब्द राधास्वामी है। यह सम्पूर्ण संसार तीन भागों में विभक्त है—पिण्डाण्ड, ब्रह्माण्ड और शुद्ध चैतन्य। पिण्डाण्ड भौतिक है और ब्रह्माण्ड मानसिक। ये तीनों विभाग प्रति व्यक्ति में है। पिण्डाण्ड भाग सब जानते हैं। ब्रह्माण्ड में पहले ज्ञान चक्र, भौंहों के बीच होता है। उसके ऊपर शुद्ध चैतन्य है। उसके बाद पहले भ्रमर ग्रह, उसके ऊपर सत्यलोक, आगम आदि। सबसे ऊपर राधास्वामी है। षट् शत्रुओं को जीतकर राधास्वामी की कृपा से आसानी से पिण्डाण्ड ब्रह्माण्ड में लीन हो जाता है और शुद्ध चैतन्य को प्राप्त करता है। हम यदि राधास्वामी दयालु की सेवा करते रहे, तो शब्द का जप करते रहे, योग का अभ्यास करते रहे, सन्तों का सत्संग करते रहे, तो इन तीनों भागों के अनेक लोकों को पार कर, सद्गुरु के पास पहुँच जाते हैं। सद्गुरु ही हमें राधास्वामी के पास भेज सकता है। विविध-विविध धामों पर पहुँचने पर, 'दिव्य सन्त' विविध-विविध ध्वनि के साथ, विविध-विविध वर्ण के तेज में आलोकित दीखते हैं। यह दयाल बाग के सद्गुरु के आध्यात्मिक सिद्धान्त हैं।

दूसरा है, समाज-सुधार, या संघ-सुधार, किसी भी धर्म का अवलम्बी सत्संग धर्म का अनुयायी हो सकता है। उनमें जात-पात का भेद नहीं होता। भोजन, विवाह आदि में जाति का भेद नहीं देखा जाता। बाल-विवाह के यह विरुद्ध है। युक्त आयु में ही विवाह होना चाहिए। आजकल के आचारों को छोड़कर स्वच्छता ही आचार माना गया है। जब जाति का भेद नहीं रहेगा तो समाज में असमानता भी नहीं रहेगी। सारे समाज को समाज की वृद्धि के लिए प्रयत्न करना होगा। सम्पत्ति संघ की है, आय भी संघ की है। इसलिए संघ ही व्यक्तियों के परिवार का पालन-पोषण करेगा। इस उद्देश्य को कार्य रूप में परिणत करने के लिए दयाल बाग में कपड़े, चाकू वगैरा, ग्रामोफोन, रंग, शीशे, चमचे, घड़ियाँ, मक्खन, जूते, चप्पल, ट्रन्क, आदि चीजें बनाई जाती हैं, जो विदेशों में बनी हुई चीजों का मुकाबला करती हैं। दयाल बाग यह दिखा रहा है कि एक देश को जो कुछ चाहिए, उसे अपने देश में ही बनाना चाहिए। 'धन्य है दयाल बाग! सद्-

गुरु तुम्हें नमस्कार है । तुम्हें भगवान् सफलता दें' उन लोगों ने कहा । नारायणराव और परमेश्वर वहाँ कुछ दिन उनके अतिथि होकर रहे । पर उनकी नजर में वह धर्म भगवद्गीता के बराबर धर्म न था ।

६ : मित्रों को निमत्रंण

राजेश्वर राव जैसे-तैसे बी० ई० पास करके काम सीख रहा था, पर उसका दिल हमेशा राजमहेन्द्रवर में सुब्बय्या शास्त्री के घर ही लगा रहता । एक बार उसे दक्षिण—तमिलनाड जाना पड़ा, एक बार वह मलाबार भी हो आया था । उसको प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होना चाहिए था, पर वह मुश्किल से पास हो पाया था । सरकारी नौकरी दुर्लभ थी, इसलिए वह हैदराबाद रियासत में नहीं तो जिला-बोर्ड में नौकरी करना चाहता था ।

आल, राजाराव आदि राजेश्वर राव के पास आइ० एम० सी० ए० में आते । आर बी०एल० परीक्षा पास कर चुका था । अप्रेंटिस परीक्षा में पास होकर मद्रास में एडवोकेट बनने के लिए नारायणराव ने उसे अपने यहाँ रख लिया था । वह नारायणराव पर जान देता था । सब उसे ब्राह्मण-मुसलमान कहा करते थे ।

आल जब बी० एल० में पढ़ रहा था तभी उसकी शादी नेल्लूर में हो गई थी । उसके ससुर त्रिचिनापल्ली में ही व्यापार किया करते थे । विवाह में हमारे मित्र हाजिर हुए थे । आन्ध्र और तामिलनाड में हिन्दू-मुस्लिम-समस्या है ही नहीं । हिन्दू-मुसलमान भाई की तरह रहते हैं । मुसलमानों के मन में सरकार ने कई तरह से ईर्ष्या जगाई । पर उन पर कोई असर न हुआ । मुसलमान हिन्दू-मन्दिरों का आदर करते हैं । हिन्दू मस्जिदों के पास बाजे-गाजे नहीं बजाते । आन्ध्र देश में ब्राह्मण भी मुसलमानों को

दुकानो मे शरबत आदि पीते हैं, पान खरीदते हैं। मुसलमान योगियो की समाधि पर हिन्दू भी फूल चढाते हैं।

आल के घर नेल्लूर जाकर, नारायणराव आदि कई दिन ठहरे थे। उसके घर नाश्ता वगैरा किया करते थे, परन्तु भोजन होटल मे कर आते थे।

आल अच्छा पहलवान था। कुश्ती खूब करता था। फुटबाल और हाकी मे बैक खेलता। जब वह पीछे से बॉल मारता तो दूसरी तरफ वालो के गोल तक बॉल जाती, इसीलिए आल को लोग फुटबाल-शेर कहा करते थे। फुटबाल की वजह से ही आल और नारायणराव की मैत्री गहरी हुई थी।

आन्ध्र देश किसी भी खेल के लिए प्रसिद्ध न था। फुटबाल के लिए कलकत्ता मशहूर है, और क्रिकेट के लिए बम्बई, मद्रास तथा लाहौर आदि; हॉकी के लिए पजाब और टैनिस के लिए मद्रास, कलकत्ता, पजाब, इलाहाबाद आदि। आन्ध्र देश में आजकल टैनिस, फुटबाल, हॉकी, क्रिकेट अधिक प्रचलित हो रहे हैं।

परन्तु आन्ध्र मे कई व्यक्तियो ने कई खेलो में कीर्ति पाई है—क्रिकेट में नायडु, सी० एस० नायडु, रामस्वामी, वालय्या आदि ने, टैनिस मे रामस्वामी, नारायण मूर्त्ति, कृष्ण स्वामी आदि ने। कुछ भी हो, आन्ध्र जरा सुस्त है। वे जल्दी किसी खेल मे प्रवीण नही होते। परदेश में जाकर यश नही कमाते।

आल खेलो का बडा शौकीन था। उसे न राजनीति भाती थी, न मजहब मे ही उसका दिल लगता था। आर्थिक बातें भी उसका ध्यान आकर्षित न करती थी। हमेशा खेल-ही-खेल। 'हिन्दू' अखबार में खेलो की खबरे ही पढता, और कुछ न देखता। वह सिनेमा जाना ही छोड देता, पर अगर एम० यू० सी०, एम० सी० सी० या एम० ए० एल० मे कही फुटबाल खेलो जा रही होती, वही चला जाता। इगलैंड से गिलीगान के नायकत्व में क्रिकेट की टीम आई, तो उनके मद्रास आने से पहले ही वह उन्हें बम्बई में देख आता था।

राजे०—"आल, नारायण और परमेश्वर ने तुझे कहाँ से चिट्ठी लिखी थी?"

आल—"मुझे साँची से लिखी थी। उसमें परमेश्वर ने कविता ही लिख दी थी। दोनों ने तुझे दुलारा था। मुझे, नटराजन और राजाराव को अजन्ता में मिलने के लिए कहा था। वहाँ से एलौरा, नासिक, औरंगाबाद, प्रतिष्ठान, कोल कार्लें एलिफिन्स्टन, पूना, वातापि, बीजापुर, पण्डरीपुर, हैदराबाद, वरंगल आदि देखते हुए विजयवाड़ा पहुँचेंगे। इस यात्रा में दो महीने लगेंगे। अगर दो महीने न भी रह सकें, तो हम अजन्ता, एलौरा देखकर वापिस आ सकते हैं।"

नटराजन—'मुझे अर्जेण्ट तार से आज बुलाया है, मैं यह जानने के लिए भागा-भागा आया कि आखिर तार क्यों दिया? अब पता लगा कि बात यह है। राजेश्वर, आओ तो, फिर चलें!"

राजे०—"सच कहूँ तो मुझे घर छोड़े हुए कई दिन हो गए हैं। मेरी माँ और सबने मुझे बुलाया है, तार-पर-तार आ रहे हैं। तुम जाओ!"

राजा०—"क्यों राजी, क्या मैं घर नहीं जाना चाहता? मुझे भी घर वालों को देखे कई दिन हो गए हैं? अलावा इसके अमलापुर में मैं प्रैक्टिस करने की सोच रहा हूँ। लापरवाही नहीं करनी चाहिए। क्या मैं जा सकता हूँ? पर क्या मैं जा नहीं रहा हूँ?"

नटराजन—"मुझे भी फुरसत नहीं है। इन दिनों ही हमारे हॉस्पिटल में दबकर काम रहता है।"

आल—"अगर मुन्शी को घूस दे दी तो?"

राजा०—"कितने ही डॉक्टर हैं, तेरी क्या जरूरत है?"

आल—"किसी को भी कुछ एतराज करने का हक नहीं है। आज से तीन दिन बाद सबको बम्बई-एक्सप्रेस नहीं तो मेल में जाना ही होगा। राजेश्वर राव की बातें कौन नहीं जानता है? राजमहेन्द्रवर के गुलाब की महक उसे यहाँ तक आ रही है।"

राजे०—"मुझे गुस्सा मत दिला!"

आल—"नवाब किसी से नहीं डरते हैं। अगर गुलाब हमारा हो तो राजी, कभी-न-कभी मिलेगा ही।"

राजे०—"अरे आल, खबरदार, तू जरा श्रुति से भटक रहा है।"

आल—"तो ग्रामोफोन-कम्पनी वालों को बुला!"

नट०—"आल हमेशा अपश्रुति ही करता है।"

राजा०—"तुम सब पागल-से लगते हो, दिमाग पर नश्तर लगाना होगा। दिमाग की मरम्मत करके फिर बाकायदा रख दूँगा। क्यों, क्या कहते हो ?"

राजे०—"डॉक्टर फोड़े धोते-धोते, गोलियाँ बनाते-बनाते अब मजाक भी करने लगे हैं ?"

राजा०—"ईंट-पर-ईंट रखने वाले इन्जीनीयर से डॉक्टर ही भला है।"

आल—"दोनों एक-से ही हैं। एक कहता है मेरे हाथ की गोली सीधी वैकुण्ठ ले जायगी, दूसरा कहता है कि मेरा बनाया हुआ पुल सीधे पानी में जा कूदेगा।"

राजे०—"लोगों को बरबाद करने वाली आपकी वकालत ही शायद अच्छी है। झूठी-मूठी बातें करके बेचारे अनजाने लोगों की जड़ें कौन काटते हैं ?"

नट०—"तुम सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हो। तुम सब गरीब किसानों का खून चूसने के लिए पैदा हुए हो। गन्दगी के कीड़े के समान हो।"

राजा०—"नटराजन सचमुच किसान का लड़का है। कैसी अच्छी तरह बातें कर रहा है। किसानों में शक्ति नहीं थी। इसलिए कि देशी आकर उसे चूसने लगे।"

आल—"सब ठीक है। तब सुल्तान के हुक्म पर तुम क्या कहते हो?"

राजे०—"मैं हरगिज नहीं आ सकता।"

आल—"तो मैं एक बात बताता हूँ। सुन, मैं उन्हें चिट्ठी लिख रहा हूँ। जब वे हैदराबाद आयें तो हम सब भी उन्हें हैदराबाद में मिलेंगे। वहाँ देखने लायक चीजें देखकर वरंगल होते हुए विजयवाड़ा पहुँचेंगे। क्यों, क्या कहते हो ?"

राजे०—"मुसलमान मुसलमान ही ठहरा। हम हैदराबाद में उनसे क्यों मिलें। शर्म नहीं है ?"

आल—"हाँ, हाँ, कहाँ सीखो है यह उर्दू ?"

राजा०—"मैं जान गया हूँ, राजेश्वर को कोई आपत्ति नहीं है।

हम नटराजन को ही दिक्कत पहुँचा रहे हैं।"

नट०—"तू चले तो हम भी हाजिर "

राजेश्वर राव मानो मेघ-मार्ग से राजमहेन्द्रवर पहुँचा। जब से वह आया था, उसको देखने की फिक्र में था।

राजेश्वर राव जब पढ़ा करता था तो पुष्पवल्ली से वह अजीब ढंग से खत मँगाया करता था। वह एक दोस्त को लिखा करता और वह उसका खत एक लड़के द्वारा पुष्पवल्ली तक पहुँचा देता। पुष्पवल्ली ने उसे अपनी दो फोटो भेजीं। उन्हें उसने अपने कमरे में सजा रखा था। उसका एक छोटा चित्र उसने अँगूठी में भी रख रखा था। एक हार में लगाकर गले में डाल रखा था। यानी अन्दर-बाहर सभी जगह पुष्पशीला थी। सारा संसार पुष्पशीलामय था।

इन दोनों के सम्बन्ध के बारे में धीरे-धीरे अफवाहें फैल रही थीं।

पुष्पशीला भी राजेश्वर राव पर दीवानी हो रही थी। कहीं ऐसा न हो कि पति व घर में रहने वाली बुढ़िया को मालूम हो जाय। वह बड़ी होशियारी से काम कर रही थी। पति पर प्रेम दिखाने लगी। वह अपने पति से राजेश्वर राव की तुलना करने लगी। उस बूढ़े के लिए अपना जीवन बलिदान कर रही थी। उसे लगा कि भगवान् बड़ा निर्दय था।

'छी-छी इस नीच कार्य के लिए भगवान् का नाम क्यों लिया जाय?' उसने सोचा, 'इसमें पाप क्या है? वास्तविक प्रेम ही विवाह है।' पति के लुके-छुपे लाये हुए उपन्यास में यही तो लिखा था? वह उपन्यास 'स्वतन्त्र प्रेम संघ' के अध्यक्ष द्वारा लिखा गया था।

१० : देश-यात्रा की खबरें

शारदा का मन विष-सा रहा था। पहले तीन दिन तो पति ने उसे मनाया। फिर वह ऐसे रहा जैसे वह कमरे में हो न हो। उसने मन-ही-मन में सोचा, 'चलो पिंड छूटा।' समय बीतने लगा, और शारदा तरह-तरह की बातें सोचने लगी।

पति देश-यात्रा पर निकले हैं, जाने कहाँ-कहाँ घूम रहे हैं, यह सब सोच-कर उसके पिता चिन्तित रहा करते। इसलिए उसको पति पर गुस्सा आ गया। परन्तु खेल-खिलवाड़ में, संगीत के स्वाध्याय में वह पति की बात भूल जाती।

इतने में अक्तूबर महीने के आखिर में चिट्ठी आई कि पति कोतपेट पहुँच गए हैं, और वे कानो-सन्तर्पण की सोच रहे हैं।

मद्रास से आते ही जमींदार ने अपनी पत्नी से पूछा, "राजमहेन्द्रवरं आने पर क्या दामाद अपने घर आया था?"

"नहीं आया, हम तो यह भी नहीं जानते हैं कि वह राजमहेन्द्रवरं आया था कि नहीं?"

"सुना है सवेरे मेल से आकर गंगा-पूजा कर, लक्ष्मीपति के घर भोजन करके दोस्तों के साथ कोतपेट गया था।"

"हमारे घर क्यों नहीं आया?"

"क्यों नहीं आया? उसकी मर्जी नहीं आया।"

"घर छोड़े तीन महीने हो गए हैं, यहाँ आकर भी घर न आया, अचरज की बात है। वह तो ऐसा कभी नहीं करता था।" सुन्दर वर्धनम्मा ने कहा।

शायद नया होने के कारण शरमा गया हो। उसके न आने में कोई-न-कोई वजह रही होगी, यह ही अनुमान किया जा सकता है। क्या वजह रही होगी? वे जानते थे कि उनकी पत्नी दामाद को नहीं चाहती थी। उसके सामने कई बार जमाई की प्रशंसा की। यह भी कहा कि अगर उसने उसका आदर किया तो वह भी करेगा, परन्तु वह हमेशा दामाद के बारे में उदासीनता दिखाती रही। उदार दामाद इन बातों की परवाह न करने वाला था। अगर उसके आने पर, उसकी पत्नी ने या किसी और ने उसका

इतना अनादर किया हो कि वह घर आने में शरमा रहा हो, तो आज से मेरा और उसका एक रास्ता नहीं है, यह सोचकर उसने जमींदारनी की ओर देखकर कहा—"उसका मन बहुत उत्कृष्ट है, वह छोटी-छोटी बातों पर बुरा नहीं मानता। अब तक जब कभी शहर आया है हमारे घर आये बगैर नहीं गया है। तूने कहीं ऐसा कोई काम तो नहीं किया जिससे वह बुरा मान गया हो ?"

"नहीं तो।"

"जिस किसी ने भी उसका अनादर किया हो उसके साथ आज से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है।"

"कैसी अजीब बातें कर रहे हैं आप ? उसका अनादर कौन करेगा ?"

वरदकामेश्वरी अन्दर दिखाई दी। 'कहीं उसने ही तो गलती से कुछ न कह दिया हो।'

काशी-सन्तर्पण के लिए जमींदार अपनी पत्नी और पुत्री को साथ लेकर कोत्तपेट गये।

पत्नी कभी वहाँ न गई थी, इसलिए सुब्बाराय की पत्नी ने उनका खूब आदर-सत्कार किया। शारदा और नारायणराव को वेदिका पर एक साथ बिठाया गया। दोनों ने गंगा-पूजा की। केशवचन्द्र ने जीजा को जरूर के वस्त्र दिये। जानकम्मा ने सूर्यकान्त द्वारा हल्दी, सिन्दूर, साड़ी आदि दिये। आरती उतारी गई। ब्राह्मणों की समाराधना की गई, आये हुए अतिथियों को गंगा-जल के लोटे दिये गए। जानकम्मा, माँ, बहन, यह जानकर फूली नहीं समाती थी कि नारायणराव जिन्दगी-भर के लिए गंगा-जल ले आया था।

भोजन के बाद सुब्बाराय के दूसरे मकान में जमींदार, श्री राममूर्ति, सुब्बाराय, नारायण राव और अन्य मित्र बैठे हुए पान खा रहे थे। जमींदार ने थाल, राजाराव से अपने दामाद की देश-यात्रा के बारे में पूछ-ताछ की। काशी-सन्तर्पण के लिए परमेश्वर अपनी पत्नी को भी विजयवाडा से कोत्तपेट ले आया था। उसने भी विशाखपट्टन में सन्तर्पण करने की सोची।

विशाखपट्टन से परमेश्वर के माँ-बाप, उसके भाई-बहन, राजाराव के माँ-बाप, पत्नी सूरम्मा, बच्चे वगैरा आये।

दिल्ली, फतहपुर सीकरी, आगरा, दयाल बाग आदि के बारे में सुना-कर नारायणराव ने कहा, "वहाँ से हम जबलपुर गये। वहाँ से हम नर्मदा नदी की घाटी देखने गये। संगमरमर की घाटी से नर्मदा के बहने का सौंदर्य गोदावरी के पापी पर्वतों में से बहने के सौन्दर्य के समान है। वहाँ के जंगल, पर्वत, जल-प्रवाह, नीले आकाश आदि ने हमारा मन मोह लिया।

यहाँ से हम भूपाल गये। भूपाल के बाद भेलसा स्टेशन आता है। वहाँ एक स्तूप है, जो भारत के सबसे अधिक सुंदर स्तूपों में से एक है। उस स्तूप के चारों ओर जो महाद्वार हैं और उन पर जो शिल्प है, वह भारत में कहीं और नहीं देखा जाता। धन्यकटक के कारीगरों ने यहाँ से जाकर वहाँ उसे बनवाया था।

साँची से उज्जयिनी गये। कालिदास ने भी उसकी प्रशंसा की है। बढ़िया शहर है। दशकुमार चरित, वासवदत्ता, मेघ-संदेश, कथा सरित्सागर में वर्णित महाकालेश्वर का मन्दिर आदि देखकर हम अहमदाबाद गये। गान्धी जी का साबरमती आश्रम देखा, महात्मा जी के दर्शन किये। एक मीनार भी देखी, जो झूमती है। वैसे दो मीनारें थीं। एक को एक इन्जी-नियर ने जब तोड़कर फिर बनाया तो उसका हिलना बन्द हो गया। दूसरी इधर-उधर हिलाने से हिलती है।

अहमदाबाद से जाकर पोरबन्दर में गान्धी जी का जन्म-स्थान आदि देखे। वहाँ से द्वारिका गये। द्वारिका से अहमदाबाद गये और वहाँ से आबू पर्वत।

आबू स्टेशन से आबू पर्वत तक बस जाती है, बस से चार हजार फीट ऊँचे शहर में गये। वहाँ पर 'दिलावर' जैन-देवालय देखा। उस देवा-लय की कारीगरी आश्चर्यजनक है। बहुत देखा, पर प्यास न बुझी। सब संगमरमर का बना है। कहते हैं उस प्रदेश को एक जैन-भक्त ने रुपये से ढक-कर खरीदा था। करोड़ों रुपये खर्च करके यह मन्दिर बनाया गया है।

दिलावर से अचलेश्वर जाकर वहाँ एक ब्राह्मण के घर ठहरे। वहीं रोटी-दूध आदि चीजें खाईं। अगले दिन दत्तात्रेय चोटी पर गये। यह चोटी पाँच हजार फीट ऊँची है। उस चोटी पर एक मन्दिर है।

आबू शहर से चित्तौड़ गये। महाराजा साँगा, भीमसिंह, लक्ष्मणसिंह

द्वारा परिपालित चित्तौड़ को देखकर हमारी आँखों में तरी आ गई। वहाँ से बड़ौदा आये। बड़ौदा में गायकवाड का महल, बगीचे देखकर वहाँ से बारडोली चले गए। बारडोली के लोगों की वीरता के बारे में पहले ही सुन रखा था। वहाँ के नेताओं से मिले। एक दिन ठहरे। वहाँ से सीधे जलगाँव पहुँचे।

जलगाँव के पास बम्बई से जाने वाली जी० आई० पी० रेल का मुख्य मार्ग है। जलगाँव से हम सीधे मोटर में अजन्ता गये।

अजन्ता को देखकर परमेश्वर मूर्छित हो गया। उसके आनन्द की सीमा न रही। चित्रकारों के लिए वह काशी है।

भगिरा नदी सतपुड़ा पहाड़ों से निकलकर वहाँ दो-तीन मील तक उन पहाड़ों में बही है। उस घाटी में अर्द्धचन्द्राकार में २८ गुफाएँ हैं।

वे गुफाएँ सब एक प्रकार की नहीं हैं। कई चैत्य हैं और कई विहार। चैत्य का मतलब है मन्दिर की गुफा। विहारों में बौद्ध भिक्षु रहा करते थे। कई विहारों में हजार भिक्षु आराम से बैठ सकते थे। हर गुफा में बुद्ध की मूर्त्ति और मन्दिर है। उन गुफाओं के खम्भों पर मिट्टी लगाकर दिव्य चित्र अद्भुत रूप से चित्रित किये गए हैं। अब भी उनके रंग ऐसे हैं जैसे कल के लगाये गए हों। कितनी ही जातक-कथाएँ वहाँ चित्रित हैं। बोधिसत्व की मूर्त्तियाँ, बुद्ध मार की परीक्षा आदि भी चित्रित हैं। यही नहीं, कितने ही वहाँ अलंकार-चित्र हैं। हाथी, पक्षी, हरिण, मनुष्य, फल, कमल आदि सब वहाँ खचित हैं।

अजन्ता में एक सप्ताह रहे। वहाँ से मनमाड होते हुए हम एलौरा पहुँचे। एलौरा की गुफाओं में सबसे अधिक मुख्य १६ वीं गुफा है। उसको राष्ट्रकूट के प्रथम राजा कृष्णराजा ने बनवाया था। एलौरा में जैन, बौद्ध और हिन्दू गुफाएँ भी हैं। सबसे विचित्र हिन्दू गुफा ही है।

कृष्णराजा को कोढ़ हो गया था। बड़े-से-बड़े वैद्य भी उसे ठीक न कर पाए। इस बीच, एक बूढ़े ब्राह्मण ने आकर कहा, "महाराज, एलौरा में शिव की एक प्रिय कन्दरा में एक सोता है, उसका पानी पीकर अगर आप शिव की पूजा करें तो आपका रोग ठीक हो जायगा।" यह कहकर वह ब्राह्मण चला गया।

राजा अपनी राजधानी मान्यकेतुनु को छोड़कर सीधा एलोरा गया और वहाँ रहकर शिव की पूजा करता हुआ वह उन पत्थरों में से बहने वाले पानी को पीने लगा।

उसका कोढ़ रोग जाता रहा। तब उसे उस राजा ने शिव के प्रिय कलाश पर्वत को वहीं बनवाने की सोची। एक प्रसिद्ध कलाकार को नियुक्त करके पहाड़ में कैलाश का मन्दिर खुदवाने के लिए कहा। वह कलाकार कैलाश गया। एक साल में वह वापिस आ गया। कितने ही कलाकारों को इकट्ठा करके उस देवालय को वह बनाने लगा। उस देवालय के बनाने में कई साल लग गए।

करीब १०० फीट पहाड़ को काटकर ही उसीमें मन्दिर, मण्डप, गोपुर, ध्वजा-स्तम्भ, दो हाथी, यात्रियों के लिए धर्मशालाएँ, विहार-मन्दिर आदि बनाये गए हैं। सारा मन्दिर एक ही पत्थर का है।"

११ : आन्ध्र महाराज के चिह्न

नारायणराव अपनी यात्रा के बारे में कह रहा था और जमींदार आदि सम्बन्धी उसकी बातें सुनकर खुश हो रहे थे। इतने में, ग्राम के कुछ लोग, और पुस्तकालय के मन्त्री, जिसको नारायण राव ने स्थापित किया था, वहीं आये; और सबको नमस्कार करके बैठ गए। वे नारायणराव और परमेश्वर से यह निवेदन करने आये थे कि वे अपनी यात्रा के बारे में एक व्याख्यान दें। जमींदार ने दामाद को उनके निवेदन को स्वीकार करने को कहा।

नारायण कह रहा था, "एक ही पत्थर है, बाहर से कोई भी पत्थर नहीं लाया गया, फिर उस पर गढ़े हुए शिल्प का तो कहना ही क्या ?"

वहाँ पर उपस्थित एक व्यक्ति ने कहा, "इस प्रकार गढ़ना कितना

मुश्किल है। एक ही पत्थर है, अन्दर-बाहर गढ़ना हो तो बहुत कठिन है।"

"कुल गुफाएँ मिलकर तीस हैं पहले बौद्ध-गुफाएँ हैं और बाद में हिन्दू-गुफाएँ, फिर जैन-गुफाएँ आती हैं। हिन्दू-गुफाओं में दशावतार गुफाएँ बहुत ही आश्चर्य हैं।"

उस दिन शाम को सभा में परमेश्वर ने व्याख्यान दिया। नारायण-राव की आवाज की अपेक्षा परमेश्वर की आवाज व्याख्यान देने में अधिक गम्भीर थी। वह हजारों व्यक्तियों को अपने धुआँधार भाषण से प्रभावित कर सकता था। नारायणराव की आवाज भी मीठी थी, भाषण में प्रवाह भी था। हर विषय पर आँकड़े देकर श्रोताओं का मन आकर्षित करता था।

परमेश्वर ने उठकर कहा, "यदि मनुष्य अपने हृदय को विशाल बनाना चाहता है तो देश का पर्यटन उसका एक मार्ग है। प्रति विद्यार्थी और प्रति किसान के लड़के को कम-से-कम आन्ध्र का ही भ्रमण करना चाहिए। आन्ध्र देश भी क्या कम है? ऋषिकुल्या नदी से कांचा तक, मुषिक नदी, भीम नदी से परिवेष्टित है आन्ध्र। हमारे देश के राजा आन्ध्र थे। जहाँ तक हमें इतिहास बताता है, आन्ध्रों ने कण्व सम्राट् को मारकर गद्दी पाई। छः सौ वर्षों तक उन्होंने राज्य किया। बाद में विजयवाड़ा में, इक्ष्वाकु, सातवाहन, बृहत्फलायन, पल्लव आदि ने राज्य किया, फिर वेंगि, काञ्ची में, बाद में गंगा, चालुक्य, काकतीय रेड्डि, वेलमा, क्षत्रिय, तेलगा, कम्मा, कोमट्ठलु, और ब्राह्मण आदियों ने राज्य किया।

आन्ध्र महाराज्य के चिन्ह-स्वरूप अमरावती, जग्य्या पेट, भट्टिप्रोल, गोली, घंटसाला, नागार्जुन मुख्य हैं। यहाँ आन्ध्र शिल्प निखरा है। उतना सुन्दर शिल्प न तब था, न अब है, यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है।

आन्ध्र-शिल्प के महान् नमूने अब मद्रास, लंदन, बर्लिन आदि नगरों के अजायब घरों में हैं।

पल्लवों के अवशेष काञ्चीपुर व महाबलिपुर में पाये जाते हैं। विजय-वाड़ा में उनका बनाया हुआ मन्दिर कृष्णा नदी के किनारे ही है।"

उसका व्याख्यान गोदावरी नदी की तरह बहता जाता था।

महाबलिपुर के शिल्प की गम्भीरता अति विचित्र है, अर्जुन की तपस्या बन्दर की जोड़ी, हाथी आदि मूर्तियाँ सौन्दर्य बिखेर रही हैं। वहाँ एक ही

पत्थर से बनाये गए रथ बहुत ही आकर्षक हैं। पाँचो पाण्डवो के अलग-अलग रथ हैं। द्रोपदी का भी रथ है। वह सारा नगर समुद्र मे डूब रहा है।

चालुक्यो की कला देश-भर मे व्यापक है, बादामी में कल्याणी, द्राक्षाराम, राजमहेन्द्रवर, सिंहाचल आदि कई स्थानो पर है। और भी कई जगह कई मन्दिरो में मूर्त्तियो मे चालुक्य-कला का परिचय मिलता है। चालुक्य-मन्दिर दक्षिण के मन्दिरो जितने बडे नही है। काकतीय कला, मोरगल, पालपेट, अम्कोण्ड आदि स्थलो पर दर्शनीय है। काकतीयो ने अपनी कला में नटेश्वर के नाटक को खूब दिखाया है।

विजयनगर साम्राज्य के अवशेष हम्पी, ताडपत्री, पेनुगुण्डा, गुत्ति, मायर्ल, लेपाक्षी मे देखे जा सकते हैं। कौन ऐसा है जिसका हृदय हम्पी के दृश्यों को देखकर द्रवित न होता हो।

यदि हमे अपने हृदय को विशाल और उदार बनाना हो तो आवश्यक है कि कला की साधना करे। इतने लोगो में भद्राचल कितने लोग गये हैं? भद्राचलं जाना ही एक अच्छी यात्रा है। गोदावरी मे सात दिन का किश्ती का रास्ता है, हो सकता है कि बाद में मोटर लोञ्च आये। उन पापी पर्वतो में गुजरना, टीलो पर ठहरना, जगल आदि में सो जाना कितना मनमोहक है।

अजन्ता घाटी में कल-कल करती भगिरा नदी के किनारे, उस नदी के गीत सुनते हुए और सामने अजन्ता की प्राचीन शिल्प-कला को देखते हुए हम इतने तन्मय हो जाते है, मानो हम भी वहाँ बनी हुई मूर्तियो में मे एक हो।

वातापि नगर में, चालुक्य-कला के चिन्ह हैं। कार्लें की गुफाएँ बहुत ही पुरानी आन्ध्र बौद्ध-गुफाएँ हैं। दो हजार दो सौ वर्ष पहले बनाई हुई गुफाएँ व उनके शिल्प अब भी सुरक्षित हैं। नासिक की गुफाओ मे भी आन्ध्र राजाओं ने मूर्त्तियाँ बनवाई थी। औरंगाबाद मे भी अच्छी मूर्त्तियाँ हैं। कई जगह आन्ध्र शातवाहन राजाओं के चिह्न दृष्टिगोचर होते हैं।

बीजापुर का गोल गुम्बद, ससार के बडे गुम्बदो में से एक है। उस गुम्बद पर कोई गला फाडकर भी चिल्लाये तो भी किसी को कुछ नही सुनाई देता। पर अगर दरवाजे पर कोई कान में भी कुछ कहे तो उसकी

प्रतिध्वनि सुनाई पडती है।

दौलताबाद का किला अजेय था। उसका घेरा डालने पर रसद के न होने पर आदमी मर सकते थे, पर उसको बहादुरी से जीतना टेढी खीर था। यह किला पाँच सौ फीट ऊँचे पहाड पर बना है। पहाड के चारो ओर सौ फीट चौडी खाई है। १५० फीट ऊँचा किले का प्राकार है। पहाड की चोटी पर किला है, किले के अन्दर महल है, महल की चोटी पर तोप है।

त्र्यवक से गोदावरी निकलती है, करोडो वर्षों से वहाँ स्थित पहाड चार-पाँच हजार फीट ही ऊँचे है। दो-तीन हजार फीट तक तो जगल है, उसके बाद काला पत्थर है। हम एक ऐसे पहाड पर एक-डेढ हजार फीट चढे भी। उसके ऊपर एक छोटी गुफा है, बावडी है, बावडी की बगल में एक गोमुख मूर्ति है। उस गोमुख से बूँद-बूँद करके गोदावरी गिरती है, वहाँ बहने वाले सभी नदी-नाले, गोदावरी नाम से जाने जाते हैं। वहाँ से २० मील दूर नासिक आते-आते गोदावरी दो सौ फीट चौडी नदी हो गई है। प्रतिष्ठान में चार सौ फीट चौडी हो जाती है। निजामाबाद में छः सौ फीट चौडी, भद्राचल के पास करीब-करीब एक मील, राजमहेन्द्रवर के पास दो मील, धवलेश्वर के पास चार मील, समुद्र के पास तीस मील चौडी है।

उसके बाद परमेश्वर ने पण्डरीपुर, हैदराबाद, गोलकुडा, वरगल आदि नगरो के दर्शनीय स्थलो का स्पष्ट वर्णन किया।

नारायणराव ने दूसरे प्रान्तो के आचार-व्यवहार, पाक-विधि, वेश-भूषा, व्यापार आदि के बारे में व्याख्यान दिया, "उत्तर देश के सिख, काश्मीरी, पजाबी, पठान, सीमाप्रान्त के लोग अधिक बलवान होते है। यू० पी०, मध्य प्रदेश, बिहारी, राजपूत, मराठे, आन्ध्र के लोग बल में दूसरे नम्बर पर आते हैं। इनके बाद, बगदेशीय, तमिल, मलयाली आदि हैं, कन्नड दूसरी और तीसरी श्रेणी के मध्य में हैं।

सौन्दर्य में काश्मीर की स्त्रियाँ सबसे बढकर हैं। मगलोर और मैसूर के वैष्णव उनके बाद आते है, उनके बाद मलयाली और राजपूत स्त्रियाँ है, कोकणी, गुजराती, महाराष्ट्र, आन्ध्र, बग देश की स्त्रियाँ हैं। आखिर में दाक्षिणात्य स्त्रियाँ है।

वेश-भूषा में आन्ध्र स्त्रियों की आधुनिक वेश-भूषा बहुत सुन्दर है। फिर महाराष्ट्र वेश-भूषा, फिर मध्यवर स्त्री का वेश। काठियावाड और राजपूताना की स्त्रियाँ लहँगा पहनती हैं। सिंध और काश्मीर की स्त्रियाँ सलवार पहनती हैं। गुजरात और उत्तर प्रदेश की स्त्रियाँ छोटी-छोटी साड़ियाँ पहनती हैं और ऊपर से चादर ओढ लेती हैं। सबसे खराब वेश उड़ीसा की स्त्रियों का है।

स्वच्छता में मलयाली पहले हैं और आन्ध्र दूसरे। उनके बाद तमिल ब्राह्मण, फिर कन्नड ब्राह्मण। उनके बाद महाराष्ट्र और बंग देश, राजपूताना, पंजाब, काश्मीर चौथे नम्बर पर आते हैं। उड़ीसा के लोग अन्त में हैं।

आन्ध्र और कन्नड भोजन के बाद पान खाते हैं, बाकी सब अनियमित रूप से खाते हैं। तम्बाकू भी इस्तेमाल करते हैं। भोजन में अधिक महँगा गुजराती भोजन है। पंजाबियों का उसके बाद। बंग, महाराष्ट्र, आन्ध्र, कन्नड बाद में आते हैं। उसके बाद तमिलनाड, मलाबार और उड़ीसा सबसे अन्त में हैं। पकवानों में दाक्षिणात्य, गुजराती और कन्नड प्रथम नम्बर पर हैं। उनके बाद बंग और उत्तर प्रदेश के। उनके बाद मलयाली और तेलुगु आते हैं। अन्त में उड़ीसा वाले।

आन्ध्र में आचार-व्यवहार अधिक है। वहाँ उसी दिन का धुला हुआ कपड़ा पहनते हैं। अगर किसी ने एक बार छू लिया तो फिर स्नान करना होता है, कपड़े धुलवाने होते हैं। दूसरे प्रान्तों में कल का धुला कपड़ा आज काम आ सकता है। एक बार स्नान करने पर, किसी के छूने पर भी दुबारा स्नान करने की जरूरत नहीं है।

दाक्षिणात्य मलयाली, आन्ध्र, कन्नड और उत्तरप्रदेशीयों में नजर का दोष है। आन्ध्र, दाक्षिणात्य, मलयाली, महाराष्ट्र, कन्नड व उत्तर प्रदेश के ब्राह्मण मांसादि नहीं खाते। बंग, उड़िया, काश्मीर, सारस्वत ब्राह्मण मछली खाते हैं। मांस भी कभी-कभी खाते हैं।"

उनके व्याख्यान के पूरे होते ही अध्यक्ष ने बताया कि परमेश्वर और नारायणराव के देश का पर्यटन करने से उनका जो उपकार हुआ हो, दूसरों का भी उपकार हुआ। सभी ने सबको हृदय पूर्वक धन्यवाद अर्पित किये।

१२ : नारायणराव के साहसिक कार्य

राजेश्वरराव का सुब्बम्मा शास्त्री की पत्नी के साथ कहीं भाग जाना, और अमलापुर में राजाराव की पत्नी का बीमार होना, ये दोनों खबरें नारायणराव के पास कोत्तपेट में पहुँचीं। मित्र सब चले गए थे, बन्धु भी जा चुके थे। नारायणराव ने मद्रास में गृहस्थी चलाने का निश्चय कर लिया था।

सुब्बाराय लडके की बात नहीं ठुकराते थे। दोनों लडकों का घर में न रहकर बाहर रहना उनको और जानकम्मा को कतई नहीं भाता था। परन्तु उन्होंने लडके की इच्छा के विरुद्ध कुछ भी नहीं कहा। नारायणराव ने बडी मौसी की लडकी को, जो छुटपन में विधवा हो गई थी, मद्रास ले जाने का निश्चय किया। वह उसी गाँव में थी। सूर्यकान्तं ने भी मद्रास आना चाहा।

मालूम नहीं सूर्यकान्त को यह कैसे पता लग गया था कि नारायणराव शारदा का गृहस्थ बसाने से पहले ही बरबाद हो रहा है। क्योंकि नारायणराव को वह बहुत चाहती थी, इसीलिए ही वह शायद जान सकी थी।

शारदा काशी-तर्पण के लिए आई, तो बातों-ही-बातों में उसने भाई के कई साहसिक कार्य बताये। राजमहेन्द्रवर में गोदावरी में दो विद्यार्थी स्नान करने के लिए गए। नारायणराव बडा अच्छा तैराक है। वह कहीं तैर रहा था इतने में एक विद्यार्थी तैर न सका, वह डूबने लगा। वह चिल्लाया, वह दो हाथ मारकर उस लडके के पास गया। उस लडके को उठाकर, देखते-देखते किनारे पर ले आया। लडके का पेट दबाकर उससे पानी की कै करवाई। फिर उसको उठाकर उन्नीस पेट के एक वैद्य के पास ले गया। वह लडका अब भी जीवित है।

एक बार मद्रास में एक लडका बहुत मना करने पर भी रेल की पटरी पर चला जा रहा था। गाडी पीछे से आ रही थी। वह रेल के नीचे गिर पडता। उसी समय नारायणराव चिल्लाता हुआ हनुमान की तरह कूदा और लडके को पटरी पर से उठा लाया। नहीं तो दोनों गाडी के नीचे टुकडे-टुकडे हो जाते।

कोत्तपेट में एक कुएँ में एक गौ गिर गई थी, उसको चाहे जैसे भी

निकालते उसकी पीठ टूट जाती । वह चूँकि मारने वाली गौ थी इसलिए कोई भी कुए में उतरने का साहस नहीं कर सका । नारायणराव नीचे गया। वह नीचे जाकर गौ के चारों पैरों को पीठ से बाँधकर ऊपर रस्सी ले आया। फिर नीचे से गौ को ऊपर धकेलने लगा। गौ ऊपर खींच ली गई।

सूर्यकान्त ने भाई की इस प्रकार की कितनी ही घटनाएँ शारदा को सुनाई।

"भाभी, हमारा भाई पुरानी कहानियों के राजकुमारों की तरह है। जाने कितनों की ही सहायता की है। हमारे पिता जी में बहुत ताकत है, और हमारा भाई भी पिता जी की बराबरी करता है। एक बार गोदावरी में बाढ़ आई, और एक गाँव को बहा ले गई। एक झोपड़े में बेचारी एक बुढ़िया देखी गई। किश्तियाँ थी नहीं और झोपड़ी डूबने वाली थी। पिता जी तैरकर गये, और बुढ़िया को साथ लेकर चार मील दूर किनारे पर लगे।

उस दिन रात को उसने और उसकी छोटी बहन ने कमरा सजाया। नारायणराव के कला-प्रशंसक हृदय ने बहन की तारीफ की।

शारदा का दिल धक्-धक् करने लगा। उसने सूर्यकान्त और उसकी बहन से अपने सिर के बाल ठीक करवाये, बाग से फूल मँगवाये। रात को कमरे में जाने के लिए वह घबराने लगी, परन्तु अन्तरात्मा में उसको कहीं पति के प्रति दया आई। नारायणराव ग्यारह बजे आकर बिस्तरे पर लेट गया। शारदा ने सोफे के सहारे खड़े होकर पति को तिरछी नजर से देखा। सूर्यकान्त के बताये हुए वीरोत्तम, सामने करुणा-मूर्ति हो, पलग पर लेटा देखकर दुःख से शारदा के मन में कँपकँपी पैदा हो गई। उनमें स्त्री-पुरुष का भले ही सम्बन्ध न हो, खुशी-खुशी गप्पें लगाते बैठे रह सकते थे न?

सभा में देश-यात्रा पर भाषण करता सुनकर शारदा को एक विचित्र प्रकार का आनन्द हुआ था। पति के मित्र परमेश्वर ने बहुत ही मोठे और गम्भीर ढंग से भाषण किया था। क्या हमारे देश में इतनी बड़ी चीजें हैं, यह जानकर देश का भ्रमण करना अक्लमन्दी ही है।

व्याख्यान देते समय, शारदा को नारायणराव उस देश के पुरुषोत्तम की तरह दिव्य मूर्ति लगा।

सोफे पर लेटे-लेटे, यह सोचती-सोचती वह सो गई।

अगले दिन शारदा जमींदार, जमींदारनी, जमींदार की बहन राजमहेन्द्रवर चले गए।

नारायणराव, राजा राव की पत्नी के मायके रामचन्द्रपुर चला गया।

राजा राव की दो सन्तानें थीं—एक लड़की और एक लड़का। राजा राव की पत्नी सूरम्मा, अच्छी सुन्दरी थी। वह ससुर-सास का आदर करती थी। पति को खूब जानने-पहचानने वाली, पतिव्रता शिरोमणि थी।

राजा राव अमलापुर से रामचन्द्रपुर गया। नारायणराव रामचन्द्रपुर में ही राजाराव से मिला।

. सूरम्मा को प्रसव के दूसरे दिन के बाद से बुखार आ रहा था। राजा राव ने इन्जैक्शन दिये। बच्चा ठीक था। क्योंकि बुखार १०५ डिग्री का था, इसलिए पेट पर राजाराव ठण्डी पट्टियाँ रखता रहा। सास को ऐसा लगा कि कहीं वात का प्रकोप न हो गया हो।

चौथे दिन बुखार उतरा। दो दिन बाद राजाराव ने पथ्य दिया।

नारायणराव छः दिन अपने मित्र के साथ रहा। किताब पढ़कर समय बिताता रहा। नारायणराव राजा राव को सहारा देता रहा। फिर वह कोत्तपेट चला गया। तब तक परमेश्वर आदि भी चले गए थे।

कोत्तपेट पहुँचने पर हैदराबाद से लिखा हुआ राजेश्वर राव का पत्र मिला :

"नारायण, मैं क्या करूँ ? मेरी अक्ल मारी गई है। मैं सोचा करता था कि संसार में प्रेम नहीं है, स्त्री-पुरुष का एक-दूसरे के देह को चाहना ही मैं प्रेम समझा करता था। अब जब कि मैं अपनी हालत को देखता हूँ तो मुझे अचरज होता है। मैं अब तक कितनी ही सुन्दर स्त्रियों से प्रेम पा चुका हूँ। पर यह क्या है मुझे समझ में नहीं आ रहा है।

"पुष्पवल्ली भी मुझ पर दीवानी है। 'मैं तेरे बगैर एक क्षण भी नहीं रह सकती, मुझे पति नहीं चाहिए।' कह रही है। पहले कहा करती थी कि पति भी चाहिए और मैं भी। पर दोनों अलग-अलग न रह सके। इसलिए हम हैदराबाद चले गए और ऐसी जगह रह रहे हैं, जहाँ हमें कोई

नहीं पकड़ सकता । हम दो सचमुच पति-पत्नी हैं, मैं तेरा स्नेह नहीं छोड़ सकता हूँ, न यह पत्नी को छोड़ सकता हूँ । मुझे तेरी सहानुभूति चाहिए । केवल तुझे ही मैं अपना पता दे रहा हूँ । जरूरत पड़ने पर तुझे कम-से-कम एक हजार रुपये मुझे देने होंगे ।

हमें जो आनन्द मिल रहा है वह किसे क्या मिलेगा ? तू मेरी बात मान ! श्यामसुन्दरी तुझे बहुत चाहती है । जब तू उत्तर भारत में घूम रहा था, तब दोस्तों ने तेरे बारे में कितनी ही पूछ-ताछ करती थी । अब देरी न कर !

पुष्पशीला और मैं एक ऐसे आनन्द-सागर में गोते लगा रहे हैं जिसकी हमने कभी कल्पना भी न की थी । मैं हैदराबाद आते वक्त दस हजार रुपये ले आया था ।

दो तीन वर्ष तक जब तक मैं इस आनन्द-सागर में नहीं तैरता तब तक मैं नहीं समझता कि मुझे सन्तोष होगा । तब तक मैं कुछ और नहीं करना चाहता ।

उस सुब्बय्या शास्त्री को देखकर मुझे दया आती है । वह क्या कर सकता है ? उस सभ को कहो, जिसने उसे पाला है । बिना कुछ जाने हमारे समाज में नहीं शामिल होना चाहिए था । वह बहुत खतरनाक है ।

अब तक सुब्बय्या शास्त्री को पास नहीं आने देती थी, मेरे लिए उस पर ऊपर-ऊपर से प्रेम दिखाती थी । इसके लिए उसने मुझसे क्षमा माँगी ।

नारायणराव, पुष्पशीला फूलों का ढेर है । उसमें पुष्पों का सौन्दर्य है । नारायणराव, तुम्हें मुझे बधाई देनी चाहिए । तुम सबको मुझे देखकर ईर्ष्या होनी चाहिए ।

परमेश्वर का जीवन एक लम्बा इस्तीफा-सा है । उसका हृदय जीवन-सौन्दर्य के लिए तड़प रहा है । भार्या के कारण वह कवि नहीं बन सका । उसकी हरकतों से मालूम होता है कि वह श्यामसुन्दरी की बहन को चाहता है ।

मैं क्यों यह लिख रहा हूँ ? ताकि मेरे साथ तुम सब भी प्रेम-सागर में प्रेम-निर्वाण प्राप्त कर सको ।

तुम्हारा प्रेम दक्ष,
राजी ।"

क्या यह पत्र राजी ने होश में ही लिखा है ? वास्तविक प्रेम-तत्त्व क्या है ? उसका मनुष्य कैसे अनुभव कर सकता है ? उसने कभी शारदा को उपास्य देवी समझा था, परन्तु खट्टे अंगूर की तरह वह उसकी हो गई। संसार उसने लिए झूठा हो गया। क्या उस बालिका की उदासीनता ने ही उसे देश-यात्रा पर जाने के लिए बाधित किया था। वह परम सौन्दर्य-राशि पति के हृदय को यों कब तक तड़पायगी ? अगर वह शारदा कभी भी उसे प्रेम न करे तो वह क्या करे ?

समाज की आगामी स्थिति ऐसी ही है। क्या विवाह सचमुच लोहे की जंजीर है। एक बार विवाह होने पर क्या वह रद्द नहीं किया जा सकता? पुष्पशीला क्या करे ? क्या हमारे देश में होने वाले सब विवाह पुष्पशीला के विवाह की तरह ही हैं ?

१३ : मद्रास

नारायणराव ने मद्रास में रहना शुरू किया। मैलापुर में एक अच्छा घर किराये पर लिया। दो हजार रुपये लगाकर कानून की किताबें खरीदीं। परमेश्वर की मदद से सारा घर अलंकृत किया। उसने अपने ससुर को सूचित कर दिया था कि वह उनके घर नहीं रहेगा। सूर्यकान्त और बड़ी मौसी की लड़की वरदाम्मा भी साथ आई थी। एडवोकेट नारायणराव ने अपनी वकालत प्रारम्भ कर दी। घर के सामने के कमरे में उसका कार्यालय था। चार आलमारियों में कानून की पुस्तकें थीं। खद्दर के मेजपोश मेजों पर बिछे हुए थे। सारा घर नीले परदों से सुशोभित था।

बगल में मुन्शी का कमरा था। पीछे कौनफिडेन्शियल सलाह-मशविरे के लिए कमरा था। उसके बाद स्त्रियों का कमरा था, और उसके बाद रसोई। रसोई में जाने के लिए ढका रास्ता था। नारायण-

काम करने के तौर-तरीके व अनुभव करने के लिए एक अनुभवी वकील के पास काम करने लगा। वह वकील जानता था कि नारायणराव वकालत की परीक्षा व अन्य परीक्षाओं में सर्वप्रथम उत्तीर्ण हुआ है। जब दो-तीन मुकदमों में जयरामय्यर ने काम करने को दिया तो नारायणराव ने अपने परिश्रम और बुद्धिमत्ता से उनको प्रभावित किया था। एक अपील में तो उसने एक ऐसी बात ढूंढ निकाली, जो वे स्वयं भी नहीं जान पाए थे। उन्होंने सोचा कि यह उत्तम वकील होकर, किसी दिन जज भी बनेगा।

भाई श्री रामसूर्ति की भेजी हुई दो अपीलों को उसने स्वयं तैयार करके अदालत में दाखिल किया। जयरामय्यर ने भी उसको एक छोटी अपील में स्वयं काम करने के लिए कहा। नारायण अपील चलाने के लिए तैयार था।

वे यह देखना चाहते थे कि नारायणराव बिना किसी की मदद के कैसे काम करता है। दस मिनट में ही अपील का विषय स्पष्ट कर और विषय की परिपुष्टि के लिए कानून को उद्धृत करके उस केस से सम्बन्धित केसों का जिक्र कर, वह बैठ गया। न्यायाधिकारी उसके बात करने के ढंग और बुद्धिमत्ता को देखकर प्रभावित हुआ। जिस अपील पर और वकील कम-से-कम आध घंटा लगाते, उसने सिर्फ दस मिनट ही लिये। विपक्ष के वकील को पांचेक मिनट लगे। उसकी पैरवी हल्की लगी। नारायणराव का गला तो अच्छा था ही, साथ-साथ देखने में वह खूबसूरत भी था। बड़ी-बड़ी बातों को वह बारीकी से समझता था। दूसरे वकीलों की युक्तियों का पांच मिनट में उत्तर देकर, नारायणराव बैठ गया।

उसी समय न्यायाधिकारी ने नारायणराव के पक्ष में फैसला दे दिया। गुरु-तुल्य जयरामय्यर व अन्य वकीलों ने उसको बधाई दी।

यद्यपि न्याय-शास्त्र में उसका अच्छा प्रवेश था, वह वकालत भी करना चाहता था, पर उसका काम में मन नहीं लगता था, इसलिए यह दिखाने के लिए कि वह काम में बहुत दिलचस्पी ले रहा है, वह जयरामय्यर के घर खूब मेहनत करता, घर में इधर-उधर के विचारों में उलझा रहना, सपने देखना।

सपने, सपने। जो कोई भी सपना देखता उसमें शारदा को प्रत्यक्ष पाता।

पहले लेटते ही नारायणराव आ जाता था, पर अब घंटा-दो घंटा सपनों में विचरता। शारदा प्रेम करेगी कि नहीं? अगर न करेगी तो वह क्या करे? कहीं पत्नी किसी और से तो प्रेम नहीं करती है? वास्तविक कर्मयोगी को एक पवित्र समय में एक पवित्र पुत्र और पुत्री को जन्म देना चाहिए। पत्नी का भी मांस मुंह पर देखना नहीं चाहिए, वह महादोष है। जब वह उस तरह न रह सके तो दोष ही है। अब उसकी पत्नी यह इच्छा करे तो क्या वह बैठा देखता रहे?

क्या छुटपन में विवाह करना दोष है? वैद्य-शास्त्र के अनुसार १६ वर्ष की आयु में लड़की का विवाह करना उचित है। हो सकता है, बुद्धि या हृदय तब तक विकसित न हो पाता हो। खैर, यदि भार्या पर-पुरुष को चाहे तो उसे क्या करना चाहिए? उसकी अन्तरात्मा में उसको वह दोष ही लगेगा। अगर कोई गलत रास्ते पर चल रहा हो और कोई उसे बचा सकता हो तो बचाये बगैर नहीं रहना चाहिए। एक का दूसरे के मोक्ष का कारण होना गुरु के लिए ही सम्भव है। क्या वह शारदा का गुरु है? अवश्य, धर्म-शास्त्रों ने पति को गुरु का स्थान दिया है। पर क्या वह शारदा के लिए इस योग्य है?

ज्ञान व अज्ञान धर्म-चिन्तन एक तरफ, भार्या के प्रति उसका पूर्ण प्रेम एक तरफ। मेरे साथ रहने में उसको कष्ट है, दुस्सह है। अगर वह मेरे घर में रहे और मेरे मन में प्रेम उमड़ता रहे तो उसको बिना छुए असिधारा-व्रत का पालन करना कठिन है। कुछ भी हो, शारदा का घर न आना उत्तम है। यह हो तो उस लड़की की रक्षा करने का कर्तव्य वह कैसे पूरा करे? अगर वह मेरे साथ रहे तो क्या धीरे-धीरे उसको मुझसे प्रेम न होगा।

अगर वह स्त्री पति से प्रेम करे और पति पत्नी से, तो क्यों आजीवन उसे वैसा ही रहना चाहिए? उस हालत में पर-पुरुषानुरक्त शारदा का प्रेम हटाकर उसे अपने पर कैसे अनुरक्त किया जाय? हो सकता है उसे मुझ पर प्रेम न हो, यह भी सम्भव है कि उसे किसी और से भी प्रेम न हो। ऐसी हालत में उससे जुदा करना अच्छा है, उसको उसके रास्ते पर छोड़ दिया तो उसकी हानि है, और मेरी भी, इसलिए उसका यहां से आना ही अच्छा है।

इसी उधेड़-बुन में उसे नींद न आई। बिजली जलाकर पुस्तक हाथ में लेकर बैठ गया। परमेश्वर के बनाये हुए चित्र पर उसकी नज़र गई। अन्यमनस्क भाई के पास आकर सूर्यकान्त ने कहा, "भैया, क्या सोच रहे हो? मुझे अकेला कुछ नहीं सूझ रहा है? सैर भैया क्या जल्दी भाभी को नहीं लाओगे? हम दोनों बहुत हिल-मिलकर रहेंगी भैया।"

उसकी ये मीठी-मीठी बातें सुनकर नारायणराव ने उसको पास बुलाकर कहा, "सूरी, तेरे मन में प्रेम-ही-प्रेम है, रामचन्द्र राव सौभाग्यशाली है।" सूर्यकान्त हँसती-हँसती बगल में खड़ी हो गई। उसका मुँह लम्बा-सा हो गया, आँखें छल-छला आईं।

"क्यों, रामचन्द्र राव आजकल चिट्ठियाँ लिख रहा है कि नहीं? हम सबमें अधिक पढ़ा-लिखा है, काम-काजी है," बस पाँच-छः महीने में वह वापिस आ ही जायगा।" उसने अपनी लाडली बहन को आश्वासन दिया।

नारायणराव उसको हमेशा रामचन्द्र राव की खबरें सुनाया करता। उससे रामचन्द्र राव को चिट्ठी लिखवाता। उसको दिलासा दिलाता। नारायणराव के कहने पर रामचन्द्र राव, हर बार महीने बाद अपनी फोटो भेजा करता। सूर्यकान्त की फोटो भी उसे वह हमेशा भेजा करता।

पाश्चात्य विद्या-प्रवीण वह, हो सकता है स्त्री को पसन्द न करे, इसलिए कौतपेट में बहन की शिक्षा के लिए, एक मास्टर नियुक्त किया था। जब कभी वह वहाँ जाता, उसको अंग्रेजी सिखाता। वह कोई भी पुस्तक सरासर पढ़ सकती थी। नारायणराव इस प्रयत्न में था कि रामचन्द्र-राव के आने के पहले वह स्कूल-फाइनल परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाय।

सूरी शारदा से एक साल छोटी थी। रामचन्द्र राव, नारायणराव से छोटा था। और जब से सूरी सयानी हुई थी, तब से काफी हट्टी-कट्टी हो गई थी। उसका मुँह राजपूत कन्या की तरह था। उसकी आँखें काली-काली थीं। गम्भीर मुँह था। उसके मुँह की रेखाओं के कारण उसका सौन्दर्य निखर आया था। सूर्य शक्ल-सूरत से रानी-सी लगती थी। रुद्रम देवी, अहल्या, झाँसी लक्ष्मी बाई, चाँद बीबी के चेहरों की उसकी मुखाकृति पर परछाईं-सी लगती। फिर भी उसका हृदय प्रेम और करुणा के कारण नवनीत की तरह स्निग्ध था।

जब से शादी हुई थी, वह रामचन्द्र राव के जीवन को अपना आदर्श समझती। उसमें अनुदारता न थी। बचपन में उसके पिता ने जो कहानियाँ सुनाई थीं, वे उसके मन में चिपकी हुई-सी थीं। उसने श्रीमती भंडारी प्रच-माम्बा द्वारा लिखित 'अबला सच्चरित्र रत्नमाला' पढ़ी थी। वह 'भारती', 'शारदा' वगैरा मासिक पत्रिकाएँ मँगाती थी। उसके मन में भी भाई की तरह देश-भक्ति अंकुरित हो रही थी। भारत माता के नाम से वह पुलकित हो उठती थी। हर सभा में पिता की अनुमति पाकर माँ के साथ उपस्थित होती।

घर का काम मिनटों में करके, वह पुस्तक पढ़ना पसन्द करती थी। मेहनत से वीणा बजाना सीख गई थी। त्यागराज की कीर्तन ध्वनियाँ, हिन्दी-गीत, तड़ूरि सुब्बाराव के गीत, देवलपल्लि कृष्ण शास्त्री की कविताएँ, अभिनवान्ध्र साहित्य के पिता, गुरजाडा अप्पाराव के लिखे गीत, विश्वनाथ सत्यनारायण महाकवि के गीत सीख गई थी। उसका गला मीठा था। जब गाती तो शहद बरसाती-सी लगती।

उसका उद्देश्य, पति का सब प्रकार से खुश करना, और उनकी इच्छा-नुसार अपने को बदलना था। परमेश्वर से उसने चित्र बनाना सीखा था, गुजराती-मराठी स्त्रियों की तरह वह कपड़े पहनना भी सीख गई थी।

वह भाई से पियानो सिखाने के लिए कह रही थी। वह शायद सोच रही थी कि यदि पति के घर आने पर उसने अंग्रेजी गीत सुनाये, तो वह बहुत खुश होगा।

१४ : रामचन्द्र की विद्या

हार्वर्ड-विश्वविद्यालय में भारतीय विद्यार्थियों ने अपना एक अलग छात्रालय बना लिया था। उसमें रामचन्द्र राव दाखिल हो गया। अम-

रईस या गरीब, भारत का रईस है। अमरीका में पढ़ने के लिए काफी रईस होने की जरूरत है, इसलिए भारतीय विद्यार्थी संन्यासियों की तरह संयमित जीवन व्यतीत करते थे। उनमें रामचन्द्र राव ही अधिक धन खर्च किया करता था।

अमरीका में कई ऐसे भी हैं, जो भारतीयों को हीन दृष्टि से देखा करते हैं, जैसे कोई विचित्र जन्तु हों। कई ऐसे भी उत्तम पुरुष हैं जो आध्यात्मिक दृष्टि से भारतीयों को अग्रस्थान देते हैं।

रामचन्द्र राव छुट्टियों के दिनों में, अमरीका देखने चला जाता था। वहाँ के पार्क, जल-प्रपात आदि देखता। लोहे के कारखाने व अन्य कारखाने देखा करता।

अंग्रेजी में यद्यपि रामचन्द्र राव उत्तीर्ण न हुआ था, तो भी वह गणित में विश्वविद्यालय की एफ० ए० में सर्वप्रथम था। अमरीका आने के बाद हार्वर्ड-विश्वविद्यालय वालों ने उसकी बुद्धिमत्ता की तारीफ की, और उसको अंग्रेजी में अलग परीक्षा में बैठने की अनुमति दी। अंग्रेजी में पास होने के के लिए छः महीने लगे। इस बीच में रामचन्द्र राव को बी० एस-सी० की श्रेणी में पढ़ने के लिए विशेष अनुमति दे दी गई। गणित व रसायन शास्त्र में उस श्रेणी में उसकी बराबरी करने वाला अमरीका-भर में भी कोई न था।

रामचन्द्र को अमरीका गए हुए दो साल चार महीने हो गए थे। दो वर्षों में उसने गणित में असाधारण प्रतिभा दिखाई थी। कई ऐसे प्रश्न थे जो सिवाय उसके कम ही लोग जानते थे। उसने कई प्रश्नों को प्रकाशित करके उत्तर माँगे, पर कोई दे नहीं पाया। गणित के अध्यापक उसका आदर करते, प्रेम करते। उसको एम० एस-सी० करने में अभी छः महीने बाकी थे।

इन दो सालों में रोनाल्डसन-परिवार को देखने के लिए लियोनारा के साथ वह जाया करता। क्योंकि ये दोनों हार्वर्ड-विश्वविद्यालय में ही पढ़ा करते थे, इसलिए सप्ताह में कम-से-कम एक बार तो जरूर मिल ही लेते थे। उन दोनों का स्नेह दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाता था।

लियोनारा धीरे-धीरे रामचन्द्र राव को भाई से भी अधिक मानने

लगी थी। वह यह न जान सका कि वह कहीं रामचन्द्र को पुरुष-बान्धव में तो नहीं चाहती थी। रामचन्द्र उससे जितनी ही बातें किया करता, भारत-देश की प्रशंसा किया करता, भारतीय दर्शन के बारे में बताता। वह अपने मित्रों को लाकर रामचन्द्र का परिचय दिया करती। रामचन्द्र-राव को नृत्य सिखाकर उससे अपना प्रेम दिखाती।

"राम, तुम अमरीकन लड़कों की तरह भारतीय खेल क्यों नहीं खेलते?"

"तारा, तुम पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हो, कदम-कदम पर तुम्हें तिरस्कृत होने की जरूरत नहीं। जितनी स्वतन्त्रता और तरक्की तुम्हें प्राप्त है, उतनी क्या किसी और देश को प्राप्त है? अगर अमरीका स्वतन्त्र न होता तो क्या होता? जमीन-आसमान का फर्क होता। आज जिस देश को कनाडा की तरह होना चाहिए था, वह सब देशों से आगे बढ़कर, दुनिया का सेठ बनकर युद्ध के शस्त्रों के निर्माण में अग्रणी हो, बड़े-बड़े कल-कारखानों के लिए सबसे अग्रगण्य देश है। इसलिए जितना सन्तोष तुम्हारे देश में है, हमारे देश में नहीं है। दूसरी बात यह, हमारे देश के प्रचलित सनातन रूढ़िवाद ने हमारी विचित्र स्थिति बना रखी है। न हम पुराने जमाने के हैं, न इस जमाने के हो।"

"ये बातें तेरे अधैर्य को सूचित करती है, मेरा यह खयाल है कि अंग्रेजों का तुम्हारे देश पर अधिकार जमाये रखना अच्छा ही है।"

"यह ठीक ही है, मगर किसी सम्राट् के नीचे सारा देश एक हुआ भी तो उसके गुजर जाने के बाद वह फिर टुकड़ों-टुकड़ों में विभक्त हो जायगा। कहने का मतलब यह कि देश में संगठन की भावना से अधिक प्रबल, विभाजन की भावना थी, पर बलवान अंग्रेजों के हमारे देश पर आक्रमण करने पर सब जातियाँ उपजातियाँ एक हो गईं। उनको और निकट आना होगा, तब तक अंग्रेज हमारा देश छोड़कर न जायेंगे।"

"हाँ, भाई तुम ठीक कहते हो। देखो, पहले अमरीका में छोटे-छोटे राज्य थे, फ्रेन्च और अंग्रेज आपस में बहुत दिनों तक लड़ते रहे, परन्तु जब अमरीका ने इंगलैण्ड के विरुद्ध विद्रोह किया तो सब एक हो गए। कनाडा अंग्रेजों के आधिपत्य में एक हो गया, फ्रेन्च और अंग्रेज मिल गए। उसी तरह दक्षिण अफ्रीका में भी डच और अंग्रेज एक हो गए।

भ्रातृ-प्रेम के कारण लियोनारा ने रामचन्द्र राव का चुम्बन किया। पहले तो रामचन्द्र राव शरमाया, फिर उसको चुम्बन की आदत-सी हो गई। जब तक उसके साथ लियोनारा रहती, तब तक वह बड़ा खुश रहता। उसकी बातें उसके मन को विकसित करती-सी लगतीं। वे दुनिया-भर की बातें करते। कभी-कभी उसका पिता भी बातचीत में शामिल होता।

रामचन्द्र राव अमरीका आने के बाद कुछ महीनों तक लियोनारा और उसके माँ-बाप को यह बताने से हिचकता रहा कि उसका विवाह हो गया है। फिर कुछ दिनों बाद उसने कहा कि तीन साल पहले उसकी शादी हो गई थी। उसने नारायण द्वारा भेजी हुई अपनी पत्नी की फोटो भी दिखाई। उन सबको यह सुनकर आश्चर्य हुआ।

फोटो में सूर्यकान्त का सौन्दर्य निखरा हुआ था। क्योंकि अच्छे फोटोग्राफर ने वह फोटो लिया था। रोनाल्डसन ने रामचन्द्र को देखकर कहा, "रामचन्द्र, जैसे मिस मेयो ने कहा है, आप लोगों में बाल-विवाह प्रचलित है?"

राम०—"हाँ है! मेयो की और भी कई बातें सच हैं।"

जब कोई भारत की निन्दा या अवहेलना करता, रामचन्द्र को गुस्सा आता और दुःख भी होता। परदेश में था, इसलिए उन दोनों को रोके रखना। वह अपने विचारों में ही उलझा-सा लगता।

रोनाल्डसन—"क्या यह सच है कि तुम्हारे देश में तीन महीने के बच्चे की शादी हो जाती है?"

राम०—"हाँ-हाँ, कहीं-कहीं ऐसा भी होता है, पर बहुत कम।"

रोना०—"यह बहुत शोचनीय है न?"

राम०—"क्या आपके देश में इससे भी अधिक शोचनीय बातें नहीं हो रही हैं?"

रोना०—"हाँ, पर हमारा सवाल है कि भारत ने संसार को सभ्यता सिखाई है। उस देश को इतना अवनत देखकर आज हमें दुःख होता है।"

राम०—"हाँ, हाँ, अधोगति में मनुष्य को जाने क्या-क्या दुर्बुद्धियाँ सूझती रहती हैं। परन्तु अभी तक यह निर्धारित न हो सका कि आपके विवाह

अच्छे हैं या हमारे । जज लिण्डसे के लेख तो आपने पढ़े ही होंगे ।"

रोना०—"वह भी मेयो जैसा ही है ।"

राम०—"गान्धी जी के कथन के अनुसार दोनों ही पाखाना-इन्स्पेक्टर हैं । परन्तु लिण्डसे की जानकारी ठीक है । पर उसके निष्कर्ष गलत हो सकते हैं । मेयो की लिखी हुई बातों में दो-तीन को छोड़कर सब सरासर झूठ हैं । गन्दी बातों से भरी उसकी किताब हमारे देश के विरोधियों ने उससे लिखवाई है ।"

लियोनारा उनकी बातचीत नहीं सुन रही थी, परन्तु रामचन्द्र को केन्द्र मानकर उसने जो हवाई किले बनाये थे वह कुछ हद तक ढह गए । यह क्यों हो गया था ? शायद वह स्वयं ही न जानती थी कि इस हिन्दू लड़के से मेरा क्या सम्बन्ध है ? उसने और उसके परिवार ने उससे परिचय प्राप्त किया है । सद्गुण सम्पन्न है, अच्छे भारतीय घराने का है, इसीलिए तो ?

तब उस लड़की को यह सन्देह होने लगा कि वह कहीं उस ब्राह्मण से प्रेम तो नहीं कर रही है । अन्दर दबी हुई बातें ऊपर प्रत्यक्ष हो गईं । उसके मन-चक्षु को दीखने लगीं । अगर उस युवक का विवाह न हो गया होता तो उसने सोचा था कि वह उसके साथ भारत जायगी, उस दिव्य भूमि में रहेगी और उस परम पवित्र भारत के रहस्यों को जानेगी । वह लड़की उस देश की सुन्दरी थी, जवानी में थी । कुछ भी हो, रामचन्द्र राव मेरा है । उसका प्रेम कैसा होगा ? लोग कहा करते थे कि भारतीयों का प्रेम अति विचित्र है । उसके पीछे परवानों की तरह मरने वाले अमरीकनों का प्रेम एक था और रामचन्द्र राव, जो उसके प्रति प्रेम दिखा रहा था, वह कुछ और । वे सब नृत्य-संगीत के बारे में अधिक बातें करते, और शास्त्र आदि के बारे में कम । वे परदोषान्वेषक थे, कविता, चित्र-कला के बारे में उनकी जानकारी कम थी और दिलचस्पी भी कम । रामचन्द्र चाहे मामूली विषयों पर बातें करे, पर उसकी बातों में एक प्रकार की गहराई होती थी । वह किसी विशेष दृष्टिकोण से बातें करता, क्या यह सब प्रेम का प्रभाव था, या भारतीयों का यह सहज गुण ? लियोनारा, अपने सतीत्व की रक्षा करती हुई उस लड़के को चाहती थी और यह भी चाहती थी कि वह भी चाहे । रामचन्द्र को देखती हुई वह यह सब सोचती जाती थी ।

रौला० की पत्नी —"रामचन्द्र, हमारे देश के सभी हिन्दू देश के नाम से पुलकित हो जाते हैं। हम यह सोचते हैं कि आप लोग अंग्रेजों के हाथ से क्यों नहीं निकल जाते ? कई सोचते हैं कि हिन्दू देश की हानि होगी, कई सोचते हैं अंग्रेजों की हानि होगी। अमरीकनों का यह खयाल है कि हिन्दू देश को आजादी मिलनी ही चाहिए और गान्धी जी का आन्दोलन ईसाई धर्म के सिद्धान्तों के अनुकूल है। अंग्रेज कभी-न-कभी अपनी गलती स्वीकार करेंगे और अंग्रेजी साम्राज्य में ही कई लोग हैं जो भारतीयों से स्नेह करना चाहते हैं। गान्धीजी के उपदेश ही इस परिवर्तन का कारण हैं।"

रौला०—"कितनी साफ बात कही है। हम सबका भी यही उद्देश्य है। रामचन्द्र, गांधी जी का मार्ग ही उत्तम है। वे ही लोग भाग में सफल होंगे जो अंग्रेजों को भी आत्मीय समझेंगे और किसी प्रकार उनका दिल न दुखायेंगे।"

१५ : गुरु ढूँढ़ता आता है

नारायणराव और श्यामसुन्दरी का स्नेह दिन-प्रतिदिन गहरा होता जाता था। जब कभी मौका मिलता, वह उस लड़की के घर जाता। उसका संगीत सुनता, अपना सुनाता। और वह जब श्यामसुन्दरी से बातें करने लगता, तो दोनों बहनें वहाँ से चली जातीं।

"बहन, संगीत में कितने ही स्वर बनाये जा सकते हैं, परन्तु पाश्चात्यों ने और हमने भी केवल बारह स्वर ही लिये हैं। इन बारह स्वरों के बाद दोनों में कितने ही भेद हैं, पर सभी स्वर इन बारह स्वरों में समा जाते हैं। बाकी सब सूक्ष्म है।"

"क्यों भाई जी, एक-एक स्वर की तीन-चार श्रुतियाँ होती हैं न ?"

"हाँ, परन्तु श्रुति की ध्वनि अति सूक्ष्म है, शास्त्रीय विधान पर रचित

यन्त्रो की सहायता से हम वे श्रुतियाँ सुन सकते है। यानी दो-तीन श्रुतियाँ मिलकर एक स्वर की मृदु ध्वनि पैदा करती हैं।"

"तो भाई जो, हमारे सगीत और पाश्चात्य सगीत में क्या भेद है ?"

"क्या कहूँ ? काकलि, निषाद, प्रतिमध्यम, चतुश्रुति, धैवत, अपश्रुति है। परन्तु पाश्चात्य दोनो ही उपयोग करते हैं। हमारे लोग किसी एक राग का ही उपयोग करते हैं। मतलब यह कि पाश्चात्य परम्परा में, श्रुति में अपश्रुति पैदा करके और अपश्रुति और श्रुति का समभेद लाकर स्वर के मध्य में दोनों श्रुतियों को मिलाते हैं, स्वर कल्पना में भाव निर्धारित करने के लिए कहते हैं।"

"वैज्ञानिक ढग से आपने स्वर-स्वरूप, और श्रुति-स्वरूप का खूब अध्ययन किया है। स्वर-से-स्वर झट निकलता है, या धीरे-धीरे प्रवाहित होता है ?"

"बहुत, पेचीदा प्रश्न ही पूछा है। अब तक बडे-बडे सगीतज्ञ भी इस सन्देह को दूर नही कर पाए हैं। सर, सु रि, ग म को हम स्वर बोलते हैं। स और रि का क्या सम्बन्ध है ? क्या स से रि निकलता है ? ऐसे कई प्रश्न हैं। परन्तु शास्त्रोक्त रीति से यदि गाया जाय, तो स से रि तक कोई छलाँग मारना-सा नही लगता है। फिर भी मेरा खयाल है कि एक स्वर का दूसरे स्वर से कोई भेद नही है। यद्यपि फिल्म में चित्र भिन्न-भिन्न होते हैं, एक के बाद एक चित्र आते हैं, पहला चित्र अभी खत्म नही होता कि नया चित्र आ जाता है। यद्यपि हमारा मन एक चित्र से दूसरे चित्र पर उछलता जाता है, फिर भी सारा एक चित्र ही लगता है।

और स्वर में एक और बात है, हम जब एक स्वर से दूसरे स्वर पर जाते हैं, इन दोनों स्वरो के बीच में कितने ही अव्यक्त स्वर है, इन्द्र-धनुष की तरह, गहरा नीला, आसमानी, हरा, पीला, जामनी, लाल। वस्तुत रग तीन ही हैं। पर क्या लाल से नीला पैदा होता है ? परन्तु लाल से नीले रग तक आते-आते गहरा नीला, आसमानी नीला बीच में पडते हैं, नीले से पीले तक जाने के लिए बीच में हरा है।"

"परन्तु कहते हैं, एक सफेद रग मे सब रग निकलते हैं। एक महा-स्वर से सब स्वर निकलते हैं। क्यो भाई ?"

"यह ठीक है, पर यह बताओ स्मृति रहस्य है।

"स्मृति बहुत विचित्र है" श्यामसुन्दरी कहा करता था कि स्मृति में ही विस्मृति छिपी हुई है, यह क्या है?

"मेरा मतलब यह था कि इस सृष्टि में मनुष्य अनिर्वचनीय वस्तु के अतिरिक्त, सभी द्वन्द्व रूप में हैं न? सुख या और दुःख या बुरा आदि। स्मृति और विस्मृति भी इसी प्रकार द्वन्द्व हैं। स्मृति में हमेशा विस्मृति छिपी रहती है। स्मृति पर पर्दा पड़ जाने से जहाँ दुख आने पर विस्मृति हो जाती है। वास्तविक पाने का यही उपाय है यह ... भी अधिक करता है। यह विस्मृति कहाँ से आता है? स्मृति से ही तो उसी तरह सुख से दुःख।"

श्यामसुन्दरी इस प्रकार नारायणराव से घंटों बातें किया करती।

श्यामसुन्दरी ने अभी तक किसी से प्रेम नहीं किया था, वह सुगुणों की खान थी। प्रति राष्ट्रीय आन्दोलन में हिस्सा लिया करती थी। वह श्रीमती कमला चट्टोपाध्याय की मित्र थी। राष्ट्र-नेताओं और कांग्रेसवादियों के घर जाकर सेवा करती। स्वदेशी वस्तुएँ धारण करती। वह श्रीमती सरोजिनी देवी के साथ मेल-जोल किया करती। लोगों को स्वराज कैसे दे? कहती, जब तक हिन्दू-मुसलिम एक नहीं होंगे तब तक स्वराज नहीं मिलेगा।

श्यामसुन्दरी तेलुगु अपनी तरह बोल लेती थी, ऐसी बोलती जैसे तेलुगु उसकी मातृभाषा हो। वह भारतीय भाषाओं में तेलुगु को ही उत्तम समझती थी।

श्यामसुन्दरी का हृदय पवित्र था। वह कई पुरुषों को जानती थी, पर उसके मन में लेश-मात्र भी विकार न था।

ऐसी श्यामसुन्दरी, नारायणराव से प्रेम करने लगी। क्योंकि उनका हृदय पवित्र था, इसलिए उसका नारायणराव के प्रति भ्रातृ-प्रेम [redacted]। वह कभी सोचा करती कि इसका क्या कारण है। उसने निश्चय कर लिया था कि वह उसका भाई है।

[redacted] तक किसी युवक के उसके साथ बोलने में लाज न की थी। परन्तु नारायण युवक से घंटों बातें, उसने जीवन में कभी न की थीं।

श्यामसुन्दरी के बारे में लोगों में कानाफूसी होती, 'कितने ही विद्यार्थी हैं, पर यह अजीब बात कहीं भी नहीं देखी है। उसमें हो न हो, परन्तु इसकी इच्छा है।'' इस प्रकार जितने मुँह उतनी बातें। श्यामसुन्दरी भी जानती थी कि लोग क्या सोच रहे हैं। चाहे जो कुछ भी कहें, वह जानती कि वह निर्दोष है। उसने निश्चय कर रखा था कि उसकी देश-सेवा में किसी प्रकार की कोई भी बाधा नहीं पहुँचना चाहिए।

और श्यामसुन्दरी को आज नारायणराव का नाम सुनते ही रोमांच हो जाता था। उसकी मधुर आवाज सुनकर वह घंटों स्वप्न रहती। उसका मुँह देखकर वह गम्भीर-सी हो जाती। नारायणराव के साथ जब परमेश्वर आता तो उसके साथ बातचीत करने के लिए वह अपनी बहन और भाई को भेज देती। नारायणराव को कुशल अपने कमरे में ले जाती और घंटों उनसे बातें करती रहती। जब कभी नारायणराव सोफे पर बैठता तो वह भी उसके पास बैठ जाती। वह अगर नारायणराव को छूती भी तो उसमें कोई विकार पैदा न होता, यह सोचकर कि वह भ्रातृ-प्रेम दिखा रही थी। वह सन्तुष्ट होता।

एक दिन नारायणराव ने उससे कहा, "बहन, तुम मुझे अपनी महत्त्वाकांक्षाओं और जीवनी के बारे में बताओ!"

"क्या बताऊँ भाई? बचपन से ही मुझे एक बड़ी गायिका होने की इच्छा थी, कवयित्री होने की मर्जी थी। देश के लिए सर्वस्व देना भी चाहती थी, यही सपने देखा करती। मेरे बार-बार मुझे 'स्वप्न बाला' कहा करते।"

"जब बचपन में पिता जी की बदली हुआ करती तो रास्ते में पेड़, आकाश सब देखकर मैं आनन्द में मग्न हो जाती। न मैंने कभी खिलौने माँगे, न खेलने के लिए शोर ही किया। मैं दूसरे बच्चों के साथ खेलने नहीं जाती थी। हमेशा पेड़-पत्ते देखा करती और आसमान के सितारे गिना करती। [illegible] का 'चक्रालिंगना' मुझे बचपन से ही अच्छा लगता था।"

नारा०—"बहन यह कृति मुझे भी पागल बना देती है। 'न नु [illegible] उज्ज्वलता'—इन्हें सुनकर मैं भी मग्न हो जाता हूँ। बहन, मालूम नहीं कि हम पहले से भाई-बहन थे कि नहीं। हम इतने दिन क्यों दोनों के

१६ : जगन्मोहन का विवाह

करनूल के निवासी श्री रामराजू मुव्वारामय्या, जगन्मोहन से अपनी लड़की के विवाह की बातचीत करने के लिए जमींदार के पास गए। मुव्वारामय्या लखपति थे। वे चाहते थे कि उनकी लड़की का विवाह किसी जमींदार से हो। वे जमींदार की तलाश कर रहे थे कि लड़की रजस्वला हो गई। इस बीच में उनको जगन्मोहन का खयाल आया। लड़की मद्रास के किसी मिशनरी स्कूल में चौथे फार्म में पढ़ रही थी। वह सुन्दर थी। नये विचारों की थी।

जगन्मोहन राव ने उसको देखकर उससे बातचीत की। दोनों एक-दूसरे को पसन्द आये।

सम्बन्ध तय हो गया। उसी वर्ष माघ मास में विवाह निश्चित हो गया। मुहूर्त समीप आ रहा था।

"वीरेश लिंग पन्तुलु जी ने आन्ध्र के नेता के रूप में प्रसिद्ध पाई है। उन्होंने प्रसिद्ध कार्य किये हैं। पर अब क्या हो रहा है, जिन-जिन बुरी प्रथाओं पर उन्होंने कुठाराघात किया था, वे अब फिर सिर उठा रही हैं। जो उन्होंने शुरू किया था, उन्हींके साथ नष्ट हो गया। दहेज की प्रथा को नष्ट करने वाला है कोई नेता ?"

"राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन, दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, विद्यासागर-जैसे सुधारक और आज गांधी जी भी, इस प्रथा का विरोध करते आए हैं। पर एक ही दो उनकी सलाह पर चलते हैं, मैं और हमारे जमींदार ब्रह्म समाजी हैं। मैं विधवा-विवाह करूँगा। कल तक वह रहा था कि दहेज नहीं लूँगा और आज ? अब शादी करने के लिए मान गया हूँ तो दहेज किसलिए ? बातें बनाई जा सकती हैं पर कोई बातों पर काम करे न ?"

"अरे, दीवारों के भी कान होते हैं। जोर से मत बोल। श्राद्ध छोड़ दिया है, विधि-संस्कार भी छोड़ दिए हैं, यज्ञोपवीत भी छोड़ दिया है, बस, इतना ही, लेकिन देखना इस शादी पर कितना रुपया खर्च होता है, अगर ब्रह्मसमाजी है तो किसी विधवा से शादी करनी चाहिए, दहेज नहीं लेनी

चाहिए, एक ही दिन में शादी हो जानी चाहिए, क्यों क्या कहते हो ?"

विशाखपट्टन के थाने में जमींदार साहब के दो थानेदार बैठे हुए आपस में बातें कर रहे थे।

जमींदार के नौकर-चाकर काम में व्यस्त थे। कोई रुपया जमा कर रहा था, कोई प्रबन्ध करवा रहा था, कोई निमन्त्रण-पत्र भेज रहा था। कितने ही काम थे।

जगन्मोहन ने ३० हजार रुपये जहाँ-तहाँ से कर्ज पर लिये थे। दस गाँवों में दो गाँवों को गिरवी रखा था। भेंट-उपहार के रूप में किसानों से भी २० हजार रुपये ऐंठे थे। कर्नूल जाने के लिए एक स्पेशल गाड़ी का इन्तजाम किया गया। बन्धु, मित्र और बड़े-बड़े घरानों के लोग ही बुलाये गए थे। विदेशी बैण्ड का प्रबन्ध था। गणोत्सव की जरूरत न थी, एक ही दिन का विवाह था। विशाखपट्टन और मद्रास में रहने वाले उनके यूरोपियन मित्र निमन्त्रित किये गए थे। उनके लिए तम्बुओं का इन्तजाम था। एक बड़े सिनेमा-हाल में उनके भोजन और नृत्य की व्यवस्था की गई थी।

शारदा और उसकी माँ भी विवाह के लिए गईं। बल्लारी से शकुन्तला देवी भी आईं। बड़े दामाद को निमन्त्रण-पत्र दिया था, पर नारायणराव के पास कोई भी खबर नहीं भेजी गई थी।

विवाह की विधि एक मिनट में खत्म हो गई। मन्त्रात्मक संस्कार सब हटा दिए गए थे। सुब्बारायम्मा वर के लिए जगह-जगह भटके थे, इसलिए दामाद ने जो-कुछ कहा वे मान गए।

वधू को जगन्मोहन ने सब पाश्चात्य आभूषण दिये थे।

सुब्बारायम्मा के मद्रास से मँगाये हुए बैण्ड को बरातियों के यहाँ बजाना मना था। वहाँ भी मेज पर भोजन परोसा गया।

वर-वधू के जलूस में आगे यूरोपियन बैण्ड था। बजाने वाले भारतीय ही थे। उसके बाद दो घोड़ों वाली बग्घी थी। उसमें वर-वधू बैठे थे। उसके बाद पन्द्रह घोड़ागाड़ियाँ थीं।

वर ने यूरोपीय पोशाक पहन रखी थी। हाथ में टोपी थी। वर ने वधू से भी वे वस्त्र पहनवाए थे, जो विवाह के अवसर पर यूरोपियन पहनते

है। वे वस्त्र यूरोपियन मित्र लाये थे। उनकी स्त्रियों ने ही वधू का अलङ्कार किया था।

जलूस में १३ गाड़ियों में एक स्त्री और एक पुरुष यूरोपियन बैठे थे। पीछे दो गाड़ियों में वर के बन्धु, जमींदारनी, शारदा, शकुन्तला देवी, और उनके बच्चे वर की माँ के पक्ष वाले, पितृ पक्ष वाले १५ लोग।

जमींदारनी ने जगन्मोहन की सभी बातें पसन्द की।

जगन्मोहन की माँ शिवकाम सुन्दरी देवी जमींदारनी ने कहा, "इसी-लिए तो सभी हमारे लड़के का आदर करते हैं।"

उनके भाई के पत्नी ने कहा, "क्या अच्छा है? कहीं गँवारू विवाह किये जाते हैं?"

परदकामेश्वरी देवी—"शारदा, देखा तेरे विवाह और इस विवाह में कितना भेद है? ये है जमींदारी विवाह।"

शारदा—"बहुत अच्छा है कितना शान्त वातावरण है। अंग्रेजों के विवाह के बराबर है। क्यों बहन, तुम क्या कहती हो?"

शकुन्तला—"हाँ, कई फालतू चीजें नहीं हैं, पर फिर भी मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता।"

शारदा—"मेरा भाई सब अंग्रेजी रीति-रिवाज जानता है।"

शकुन्तला—"तू और वह हमेशा अंग्रेजों की दुम क्यों पकड़े रहते हो?"

शारदा—क्या बहन, तुम भी गांधीवादियों में शामिल हो गई हो?"

शकुन्तला—"क्योंकि तू किस्मत वाली है। तभी तो मुझे नोनकोपरे-शन पति मिला है, अगर तू चाहे तो एक मिनट में शामिल हो सकती है।"

शारदा चुप रही।

परद०—"क्यों शकुन्तला, ये बातें कहाँ सीखी हैं? शारदा का छेड़ना अच्छा नहीं है। उनका मन तो पहले ही दुखी है, क्यों चोट-पर-चोट मारती हो? मान भी जाओ।"

शकुन्तला—"ठहर भी, मुझे तेरा रुख बिलकुल समझ में नहीं आता। मैं भी देख रही हूँ, वहनोई के बारे में तुम शिकायत करती जाती हो।

उनके आचार-विचार, रीति-रिवाज, परिवार, नौकर-चाकर, हम सारा तपस्या करें तब भी न पायेंगे। हमारे घर में जो आते हैं हम उनकी परवाह नहीं करते। हम जब पिछले दिनों उनके घर गये तो उन्होंने बड़ा आदर किया जो बड़े-बड़े लोग भी न करें। उनका हृदय प्रेम से भरा रहता है।"

शिवराम०—"हां, क्यों न करेंगे बहू ?"

शकुन्तला—"हाँ, क्यों करना चाहिए ? आपने उन लोगों का कौन-सा उपकार किया है ? उनके पास आप सरीखे परिवारों के पालन-पोषण के लिए भी काफी सम्पत्ति है। धन है। उनका घर बाल-बच्चों से भरा है। हमारे बगल के घर में दो तीन बच्चे हैं। हमें ऐसा कोई जमींदार-परिवार दिखाओ जिसमें कम-से-कम दस आदमी हों।"

शारदा—(गुस्से से)—"क्या तुम अपने घर में गोबर के पानी से स्नान करती हो ?"

शकुन्तला—(नाक-भौं सिकोड़कर)—"गोबर के पानी से धोती हूँ कि नहीं, यह तुझे आगे पता लग जायगा ? क्योंकि वे गोबर के पानी से धोते हैं इसीलिए तू ससुराल नहीं जा रही है ?"

वरद०—"क्या है शकुन्तला ? शारदा तू चुप रह ! क्यों यह गड़-बड़ी मचा रही है शकुन्तला ?"

शकुन्तला—"पूछती हो क्यों ? सवेरे से नारायणराव को बुरा-भला कहती आ रही है। जब कभी वह घर आता है, इसी तरह भली-बुरी सुनाती रहती है। सुनते-सुनते बहरी हो गई हूँ। लाख कोशिश करने पर भी नारायणराव-सा दामाद नहीं मिल सकता। पिता जी उसे क्यों खोजकर लाये थे ? इस सम्बन्ध को मानने के लिए शारदा के ससुर के पास बड़े-बड़े लोग अर्जी पेश कर रहे थे। अगर तू नहीं चाहती है तो पिता से साफ कह दे। इस तरह बेवकूफी करने से क्या नतीजा होता है, मैं जानती हूँ। मुझे सब मालूम हो गया है। बाद में सोचोगे।"

सब हैरान थे। वरदकामेश्वरी ने भी बराबर शारदा की ओर देखा। शारदा वहाँ न थी।

शारदा गुस्से में बहनियों के लिए निश्चित घर से अपने कमरे में चली गई। एक पलंग पर लेट गई। आँसू बहने लगे। उधर रोना उधर

से जाते हुए जगन्मोहन को सुनाई दिया। वह कमरे में गया। शारदा का आलिंगन करते काँपती आवाज में उसने पूछा, "शारदा, क्यों रो रही हो?"

शारदा कुछ न बोली। उसके बाहु-पाश से दूर हटकर दीवार की ओर हटकर कहा, "कुछ नहीं भाई!" वह रो रही थी, पर शायद रोने के कारण उसका मुँह और भी सुन्दर हो गया था। जगन्मोहन ने उसके दिव्य शरीर को पास खींचा? उसके गाल, कंठ, और कान पर चुम्बन दिया। उसको अपनी तरफ खींचकर, वह ओठों पर चुम्बन करने को ही था कि शारदा ने कहा, "कुछ नहीं है!" इतने में बहन को खोजती हुई शकुन्तला कमरे में आई।

१७ : बच्चों पर प्रेम

श्यामसुन्दरी के पिता का नाम गोमती गणपतकृष्णय्या था। वे मैसूर के रहने वाले थे। तेलुगु ब्राह्मण थे। प्रसिद्ध ब्रह्म समाजी थे। जब वे दक्षिण में एक जिले के हस्पताल में काम करते थे, मैसूर प्रान्त की एक वैष्णव विधवा से ब्रह्मसमाज की रीति के अनुसार उन्होंने विवाह कर लिया था। वह नौकरी छोड़कर पत्नी के बंगले में मैसूर में रहने लगे। उनके चार लड़कियाँ और चार लड़के थे। लड़कों में तीन बड़े लड़के विदेश चले गए थे। बड़ा लड़का इन्जीनियरिंग की उच्च शिक्षा पाकर काशी-विश्वविद्यालय में आचार्य था, दूसरा लड़का वैद्य विद्या का इंगलैंड में अभ्यास करके आजकल दक्षिण के अर्काट जिले में वैद्य था।

तीसरा लड़का जर्मनी में कल-कारखानों का अध्ययन कर रहा था। चौथा लड़का मद्रास में ही पढ़ रहा था।

पुराने जमाने में आन्ध्र दूर-दूर देशों में गये थे। विदेश में उन्होंने नौकाओं द्वारा व्यापार किया था। देशों को जीता था। ईसा के बाद चौथी व पाँचवीं शताब्दी में कुछ आन्ध्र ब्राह्मण मलयाल देश जाकर वहाँ नम्बूदरी

बन गए थे। उस तट पर मद्रास वालों का आधिपत्य था, आन्ध्र ब्राह्मण, नायर और रम्भा, दक्षिण में गये। हैदराबाद में कई बम्बई की ओर गये, वहाँ उन्होंने खूब तरक्की की। वे मराठी कहलाये जाने लगे और जो [illegible] नागपुर [illegible] [illegible], काशी, प्रयाग में बस [illegible]। [illegible] में तेलुगु [illegible] हैं और वह है [illegible] उस [illegible] था।

इसी तरह किसी ज़माने में या [illegible] से पूर्वज मैसूर गये थे। [illegible] को पत्नी यद्यपि [illegible] थीं पर वह तेलुगु अच्छी तरह जानती थी। [illegible] उसने अपनी [illegible] को तेलुगु सिखाई था। इसी से श्यामसुन्दरी ने [illegible] कन्नड़, तेलुगु, तमिल, मराठी आदि भाषाएँ खूब आती थीं। हिन्दू देश में कहा जाता है, [illegible] में मैसूर के [illegible] दूसरे हैं। [illegible] रंग, [illegible], सौन्दर्य को अगर ध्यान में रखा जाय तो वे सबसे अच्छे हैं। उसकी माँ और तेलुगु पिता की श्यामसुन्दरी आदि सन्तान बड़ी सुन्दर थी।

आन्ध्र देश भी बंगाल और पंजाब की तरह एक दिन गुज़ारने के लिए मशहूर था।

एक दिन परमेश्वर मूर्ति, डा. रामाराव और उनका तमिल मित्र, नटराजन श्यामसुन्दरी के घर गये। [illegible] नहीं [illegible] था। उस दिन उसके ससुर आ रहे थे। इसलिए वह मित्रों से कहकर कि बाद में वह उनसे मिलेगा, अपनी कार में [illegible] चला गया था।

कई दिनों तक बातचीत चलती रही, फिर श्यामसुन्दरी ने अपने पिता के बारे में यों कहा—

"परमेश्वर मूर्ति जी, मेरे पिता जी वीरेशलिंगम पन्तुलु के शिष्य थे। हमारी माँ बचपन में ही विधवा हो गई थी। माँ-बाप को बिना बताये वीरेशलिंगम पन्तुलु द्वारा चलाये, विधवा-विवाह-गृह में दाखिल हो गई, वहाँ पढ़ती रहीं। प्रत्येक परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुई। हमारी माँ अन्नपूर्णा देवी की बुद्धिमत्ता और सौन्दर्य को देखकर हमारे पिता ने उनसे विवाह कर लिया।"

इस बीच रोहिणी देवी ने अतिथियों को चाय-पानी दिया।

श्यामसुन्दरी का सौन्दर्य यद्यपि दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाता था, पर पढ़ाई अधिक करनी पड़ती थी, कमज़ोर भी हो रही थी। रोहिणी पूरे यौवन में थी। सरला सयानी हो रही थी। नलिना बड़ी हो रही थी। उसकी आँखें, मन्दहास, मीठी-मीठी बातें सबको मोहित कर रही थीं।

सरला मामूली तौर पर किसी से बात न करती थी। मिलनसार राजाराव और वह वैद्य-वृत्ति तथा वेदान्त के बारे में बातें किया करते। राजाराव वृत्ति के लिए अमलापुर चला गया था। आज वह तार पाकर कि परमेश्वर मूर्ति की पत्नी को गर्भ-स्राव हो रहा है, वह मद्रास आया था। राजाराव ने जब से डाक्टरी का पेशा शुरू किया था वह पहली बार इन लड़कियों से मिल रहा था।

"नमस्कार राजाराव जी, कब आये?" उन तीनों ने एक ही साथ पूछा।

"दो दिन हो गए हैं।"

"और अब आप दिखाई दे रहे हैं, डाक्टर साहब!" श्यामसुन्दरी देवी ने पूछा।

राजा०—"परमेश्वर मूर्त्ति की पत्नी बीमार हो गई थीं। वे घबरा गए। नारायण राव और उसने मुझे तार दिया, कल सवेरे आया था। कल शाम तक उनकी तबियत कुछ ठीक होने लगी।"

श्याम०—"बीमार हो गई थीं, ? न मुझे नारायणराव जी ने बताया, न परमेश्वर मूर्त्ति ने ही, जाने दीजिये!"

परम०—"माफ कीजिये देवी जी, मैंने और नारायणराव ने कल तीन बार कालेज फोन किया। आप तब तक हास्पिटल से नहीं आई थीं बाद में हमने घर कार भेजी, आप बाहर गई हुई थीं। कल राजाराव आया और हम उस गड़बड़ी में लग रहे।"

श्यामा०—"क्या है रोग?"

राजा०—"गर्भ-पात होने को था, तीन बार यह हो चुका है, कहीं फिर न हो, इसलिए, 'वैद्यनं', 'ब्लाक' आदि दे रहा हूँ। आप यहीं हैं, देखती रहेंगी, इसलिए कोई डर नहीं है।"

उस साल श्यामसुन्दरी एम० बी० बी० एम० की पाँचवीं कक्षा में पढ़ रही थीं।

"उनको विश्राम करने के लिए कहा है। दवा दी गई है, तो कोई फिक्र नहीं, आप क्या कहती हैं ?" राजाराव ने पूछा।

श्यामा०—"हाँ, हाँ जरूर देखती रहूँगी। परमेश्वर मूर्ति जी ने पहले नहीं बताया।"

राजा०—"घबरा गया होगा।"

श्यामा०—"शायद।"

रोहिणी परमेश्वर मूर्ति की ओर एकटक देख रही थीं। दर्दभरी आवाज में उसने कहा, "सुना है, भाई साहब के बहुत-से बच्चे गुजर गए हैं, अफसोस!"

राजा०—"पहले तीन लड़के गुजर चुके हैं। यह बच्चों पर जान देता है। नारायणराव और ये बच्चों को नहीं छोड़ते हैं। ये बच्चों में बच्चे हो जाते हैं।"

रोहिणी०—"हम जानते हैं कि उनका हृदय मक्खन-सा है।"

परम०—"नारायणराव का हृदय गुलाब-जल है।"

राजा०—"पर जरूरत पड़ने पर वह 'वज्रादपि कठोराणि' हो जाता है। वह और तू एक ही-जैसा है।"

परम०—"क्या तूने यही मालूम किया है ?"

नट०—"वह पूछिये, डाक्टर क्या कहते हैं ? जरूरत पड़ने पर बहुत सख्त हो जाते हैं, सही न ? क्यों परमेश्वर मूर्ति यही तो कहते हो ?"

परम०—"हाँ-हाँ, तुम ठीक कहते हो।"

नलिनी देवी—"यह दिखाइये कि उनका हृदय पत्थर-जैसा है।"

राजा०—"परम नारायणराव के लिए 'बॉसवेल'-सा है।"

परम०—"हम-लोग इसी तरह मशहूर हो जायेंगे। क्यों डाक्टर ?"

राजा०—"हाँ-हाँ, जरूर!"

नलिनी०—"कहिये, कवि जी!"

सरला०—"बीच-बीच में चित्र-रंजन के बारे में भी कहिये।"

नट०—"वाह, वाह!"

परम०—"हम जब पिछले दिनों बम्बई गये तो नारायण ने बम्बई के एक सरकारी कर्मचारी को रेल के नीचे पिसने से बचाया था।"

नलिनी—"क्या !"

परम०—"सुनो भी, हाँ कहो, घबराम्रो मत ! भले ही मैं नारायण-राव जितना बड़ा कथा-नायक नहीं हूँ, मैं कथाएँ लिख तो लेता हूँ।"

नलिनी—"ऊँह !"

नट०—"अच्छा !"

परम०—"मनमाड स्टेशन पर उस दिन बम्बई-मेल की इन्तजार में सैंकड़ों लोग खड़े थे।"

नलिनी—"ए ऊँह !"

परम०—(मुस्कराकर) "शरारती लड़की, हम नासिक जा रहे थे। इतने में गाड़ी आ गई। वह पूरी तरह ठहरी भी न थी, चल रही थी। बम्बई के महानुभाव ने छलाँग मारकर गाड़ी पकड़नी चाही, पर वे पकड़ न सके। गाड़ी और प्लेटफार्म के बीच में गिर गए।"

नलिनी—"बाप रे बाप, फिर—!"

परम०—"थोड़ी देर और हो जाती तो टुकड़े-टुकड़े हो जाते। नारायण-राव झुककर चिल्लाया, 'दीवार के साथ लगे रहो, हिलो मत !' वह व्यक्ति न सुन सका और रेल के नीचे चला गया, एक पैर पर पहिया निकल गया, पाँव चूर-चूर हो गया। रेल चली गई। वह आदमी बेहोश हो गया। सैंकड़ों ने उसको घेर लिया। पर कोई भी मदद करने के लिए तैयार न हुआ।"

नलिनी—"अरे !"

परम०—"नारायणराव युवा, छः फुट लम्बे विशालकाय आदमी को झट प्लेटफार्म पर उठा लाया। उसको जल्दी-जल्दी द्वितीय श्रेणी के प्रतीक्षालय में ले गया। उसने रक्त का प्रवाह रोकने के लिए पैर जोर से पकड़ लिया। इतने में पीछे से लेजोल की शीशी, पानी, रुई और पट्टी लेकर मैं भागा। वे हमारे पास थे ही।"

नलिनी—(मुस्कराकर) "बीच-बीच में आपने अपने-आपको वीर बना लिया है!"

परम०—(मुस्कराकर) "क्या किया जाय? उसने लेजोल और पानी से सारा घाव धोया। जेब में से चाकू निकालकर उसके जूते काट दिए।

वह डिब्बर ब्राइडेन लगा रहा था कि इस बीच डाक्टर आ गए।"

१८ : आन्धों का आडम्बर

नलिनी—"आपने हमारी बहन से भी अच्छी फर्स्ट-एड की। बहुत गुणी है। बाद में ..."

परम०—"बाद में क्या होना था? हम अपना पता देकर चले गए। उस बम्बई के धर्मचारी ने कल ही चिट्ठी लिखी है।"

राजा०—"तुम्हारे नारायणराव के और कौन-से बहादुरी के कारनामे हैं—बताओ भी।"

श्याम०—"डाक्टर भाई साहब, सुनते हैं कि नारायणराव को खूब तैरना आता है?"

राजा०—"परमेश्वर ही जानता है।"

परम०—"नारायणराव अच्छा तैराक है। एक दिन राजोल के पास घाट पार करके नाव आ रही थी, खूब हवा चल रही थी, गोदावरी में बड़ी-बड़ी तरंगें उठ रही थीं, मैं और नारायणराव स्टीमर में नरसापुर से आकर घाट पर उतर रहे थे, एकाएक शोर हुआ। इधर-उधर देखा। देखते क्या हैं कि वह नाव डूब रही है। नारायणराव झट कूदा, दो-तीन आदमियों को एक साथ पीछे आई हुई नाव में बिठाया गया। दो बेहोश हो गए थे। उनको किनारे पर ले जाकर, उनका पेट दबाकर, उनको होश में लाया। इतने में डाक्टर आ गए।"

राजा०—"तभी सरकार ने उसे इनाम दिया था न?"

परम०—"दिया तो था, पर उसने उसे नाव वाले को भेज दिया। उसके और भी कई बहादुरी के काम हैं।"

परम०—"हम कलकत्ता से आ रहे थे कि एक गार्ड ट्रेन पर आता हुआ

गोरा सार्जेण्ट, नारायणराव से टकराकर गिर गया, 'अरे पागल, तेरा सिर फोड़ दूंगा', कहता हुआ वह उठा। नारायणराव मुस्कराता हुआ खड़ा रहा। जब उसने हाथ उठाया तो नारायणराव ने उसका हाथ मरोड़कर रख दिया, 'क्या तू हाथ न उठाओगे, गलती तुम्हारी है और दूसरों पर रोब गांठते हो।' उसने उसे एक तरफ धकेल दिया। पहाड़-सा आदमी भीगी बिल्ली बन गया। चुपचाप गाड़ी पर चढ़कर चला गया। यह देखकर आस-पास के लोगों ने नारायण को चारों ओर से घेर लिया।"

राजा०—'यह तो नारायणराव आ ही गया, तेरी उम्र हजार बरस की है।"

नारा०—(अन्दर आते हुए) देरी हो गई। माफ कीजिये, नलिनी, सरला, अगर तुममें से किसी एक ने एक घूंट भी पानी मुझे पीने को दिया तो मेहरबानी होगी।"

राजा०—"मेरे गुरु जी ने क्या कहा है ?"

नारा०—"ठहर भी, पहले प्यास तो बुझा लेने दे।"

नलिनी देवी ने अन्दर जाकर पानी लाकर दिया। नारायणराव पानी पीकर बैठ गया। सत्यपति राव ने नारायणराव को देखकर कहा, "अब हमारे भाई आ रहे हैं, क्यों भाई ? हमारा दूसरा भाई।"

परम० और नारा०—"हमें बड़ी खुशी है।"

राजा०—"नाट्य-विद्या में ये हमारे द्वितीय उपाध्याय थे।"

श्याम०—(नारायणराव को देखकर) भाई जी, नटराजन कह रहा है कि आपके आन्ध्र लोग बहुत ही डींग मारते हैं। मैं बड़ी होने पर मद्रास चली आई, इसलिए मैं आन्ध्र लोगों का इतिहास नहीं जानती। बचपन में हम लोग तेलुगु देश में थे ?"

नारा०—"अगर आप एक बार हमारे प्रान्त आ सकें, तो मैं समझता हूँ कि अच्छा होगा। हमारे घर, बाकायदा अतिथि होकर आइये ! देश-देश के तौर-तरीके, रीति-रिवाज, सभी कुछ आप आसानी से जान सकेंगी।"

नलिनी—"कल-परसों नटराजन ने आन्ध्रों की मिट्टी पलीद कर दी थी। आप उसका जवाब क्यों नहीं देते ?"

परम०—"हम आन्ध्रों में अधिक उत्साह है। मौका आ गया तो जोश

में हजारों दल टूटे हो जाते हैं, जोश जरा ठंडा हुआ कि कहीं के दूर तक कोई नहीं दिखाई देता।"

राजा०—"वह जोश भी ज्यादा दिन तक नहीं रहता।"

परम०—"किसी ने कहा कि सारे देश में पुस्तकालय होने चाहिएँ। देखते-देखते जहाँ देखा वहीं पुस्तकालय बन गए। कृष्णदेव राय के नाम पर ग्रन्थालय, वसुराय, गोखले, राममोहन, शारदाश्रम, तिलक आदि के नाम पर पुस्तकालय स्थापित हुए। अब उनमें से मुश्किल से चार-पाँच पुस्तकालय ठीक तरह काम कर रहे हैं। कई नाम-मात्र रह गए हैं, कई लड़ाई-झगड़ों के कारण खत्म हो गए हैं।"

नारा०—"रोज दो पत्रिकाएँ निकलती हैं और चार बन्द होती हैं। किसी ज़माने में बीमा-कम्पनी भी इसी तरह चलीं और खत्म हो गईं।"

परम०—"बन्दर में मीठे की मिल, राजमहेन्द्रवरम् में कागज का कारखाना, एलौर में जूट का कारखाना, कितनी ही कम्पनियाँ खोली गईं। उनमें कई गायब हो गई हैं और कई हो रही हैं।"

राजा०—"१९२० में जगह-जगह जातीय विद्यालय खोले गए, अब सबका-जीता केवल 'शारदा-निकेतन' रह गया है। क्यों नारायणराव, बन्दर का जातीय कालेज जैसे-तैसे दिन काट रहा है न?"

नारा०—"आश्रमों में पल्लेपाडु-आश्रम का क्या हुआ? उसके संस्थापक दिगुमर्ती हनुमन्तराव क्या गुजरे कि वह आश्रम भी गुजर गया।"

श्यामा०—"यह क्या भाई जी, आप भी हमारे प्रान्त की निन्दा कर रहे हैं।"

नारा०—"निन्दा पूरी तरह होनी चाहिए, कहे जा, परम!"

परम०—"तू ही क्यों नहीं निन्दा पूरी कर देता? अच्छा, तो एकाएक देश में कई कोआपरेटिव बैंक खुले, कई खत्म हो गए। कई ने दिवाला निकाल दिया। तब भी क्या मारवाड़ियों के पास से उन्होंने तीन रुपये सैकड़ा सूद पर कर्ज लेना छोड़ दिया? यह भी नहीं किया।"

श्याम०—"इसका क्या कारण है?"

नलिनी—"आप सब तो उन बर्रों की तरह हैं जो डंक एक से मारते हैं और बराबर दूसरे को करते हैं और भाग जाते हैं।"

नारा०—"हृदय की कमजोरी, रीढ़ में बल नहीं, परिश्रम नहीं, विश्वास नहीं। अभिमान बहुत अधिक। एक नेता नहीं, सब कोई नेता है, बड़ों का कोई आदर नहीं करता।"

परम०—"इसलिए ज्योतिष में हमारे प्रान्त का ग्रहाधिपति बुध है, जब तक हमारे लोग दूसरे प्रान्त में नहीं जाते, तब तक वे मशहूर नहीं होते। बंगाली, मराठे, पंजाबी, उत्तर हिन्दुस्तान वाले अपने-अपने प्रान्तों में ही प्रसिद्ध हो जाते हैं।"

नारा०—"एक और बड़ा कारण है, पहले महाराजाओं का पेट्रनेज अधिक होता था। आन्ध्र प्रान्त में कई जमीदार हैं, उनमें कई बहुत बड़े हैं, कई ऐसे हैं जो वंश-परम्परा का खयाल नहीं करते और पैसा कई तरह खर्च करना चाहते हैं। कई ऐसे भी हैं जो अच्छे कार्यों के लिए पैसे देते हैं। बाकी सब ऐसे हैं जो अन्तःपुर में ही बैठे रहते हैं। आन्ध्र कागज मिल में अगर एक जमींदार पैसा लगाता तो अब तक जाने उससे कितना फायदा होता। यही बात बन्दर के शुगर-मिल की है। जहाँ जमींदारी नहीं है वहाँ रैयतदारी है। सब-के-सब छोटे-मोटे किसान हैं। वे जितना कमाते हैं उससे अधिक खर्चते हैं। इसलिए वे मारवाड़ी साहूकार के पास से कर्ज लेकर प्रान्त का भला कर रहे हैं।"

परम०—"देख बहन, कल १५ दिसम्बर को मद्रास में आन्ध्र में यह वाङ्मय सभा होने जा रही है, तब देखना आन्ध्र का उत्साह और शौर्य।"

सरला०—"एक सप्ताह ही तो बाकी है।"

रोहिणी—"हमारा गणपति अंग्रेजी में कविता लिखता है, क्या वह आ सकता है?"

परम०—"जरूर आ सकता है।"

श्यामा०—"यह कवियों की सभा क्या है?"

परम०—"फिलहाल भाषा के बारे में तेलुगु में दो आन्दोलन चल रहे हैं—एक प्रान्त्यिक भाषा, पारम्परिक कविता और दूसरा व्यावहारिक भाषा, नई कविता। इसीको 'भाव कवित्व' भी कहते हैं।"

नट०—"मेरे बदले परमेश्वर मूर्ति ने अच्छी युक्तियाँ दी हैं।"

परम०— ठहर भी, तमिलों के बारे में बाद में बताऊँगा; खुश न हो!

तुम बातें-ही-बातें बनाते हो। हम अपनी निन्दा आप कर रहे थे और भट-राजन खुश हो रहा था।"

रोहिणी—"भाषा के बारे में क्या विवाद है?"

परम०—"और क्या है? ग्रान्थिक वाद और व्यावहारिक वाद। अब देश में क्या हालत है, बताता हूँ, प्राचीन ग्रंथ सब पद्य में हैं, भारत, भागवत। और प्रबन्ध क्या है, यह बाद में बताऊँगा। उनमें पद्यों के साथ गद्य भी है। भारत का तेलुगु-अनुवादक नन्नय भट्ट कवियों में प्रथम है। वागनुशासन नाम से प्रसिद्ध है। उन्होंने संस्कृत के आधार पर तेलुगु भाषा का व्याकरण लिखा है। अप्पकवि आदियों ने बाद में और कई व्याकरण लिखे। कुछ इधर-उधर के परिवर्तन के साथ पहला व्याकरण ही चलता रहा। १८५० तक तेलुगु में कोई अच्छा गद्य-ग्रन्थ नहीं निकला। चिन्नय सूरी गद्य में प्रथम कहलाया, उसने बाल व्याकरण लिखा। पंचतन्त्र का अनुवाद करते हुए अपनी 'नीति चन्द्रिका' में यही भाषा उसने प्रयुक्त की, जो प्राचीन ग्रन्थों में प्रयुक्त हुई थी। वीरेश लिंगम कवि, चिलकमूर्ति लक्ष्मी नरसिंह मूर्ति ने इसी भाषा का उपयोग किया। इसे ग्रान्थिक भाषा, यही तो व्याकरणयुक्त भाषा कहते हैं।"

राजा०—"अरे तू तो एक ही सांस में व्याख्यान झाड़ गया।"

परम०—"परन्तु १९१४ के करीब एक आन्दोलन चला। गुरजाड अप्पाराव, राहि लक्ष्मी नरसिंह कवि उस आन्दोलन के अग्रणी थे। गिडुगु राममूर्ति इस आन्दोलन के अर्जुन थे। वे क्या कहते हैं? पद्य की बात छोड़िये। गद्य के लिए जिस भाषा में प्राचीन काल से उत्तम पंडित लिखते आए हैं, वही भाषा आदर्श है। अंग्रेजी का गद्य हमेशा बदलता रहा है, उत्तम कुल वालों की भाषा अपनानी चाहिए। नहीं तो भाषा की प्रगति रुक जायगी। प्रगति रुक गई तो वह मर जायगी। भाषा को तो चलता चला जाना चाहिए। भाषा एक व्यक्ति है, आत्मा है, उसे युग-युग तक जीना है। कई युग पूर्व संस्कृत मरी थी, इसलिए आज हमारे लिए वह निधि-तुल्य है। वेदों की भाषा अलग है, पुराणों की भाषा अलग है। नाटकों की भाषा अलग है। हमारी व्यावहारिक भाषा भी इसी तरह बदल रही है। इसलिए हमारा गद्य इसी भाषा में लिखा जाना चाहिए।"

राजा०—"हाँ, तो दूसरा व्याख्यान हो गया, तो और !"

परम०—"प्राचीन काल में, राजा-रानी को नायक-नायिका बनाकर ग्रन्थ लिखे जाते थे। काल-क्रम के अनुसार शृंगार-रस को मुख्य माना गया। उनने लिखे हुए पुराण, महाग्रन्थ—पवन्ध सब अच्छे हैं। पर अगर उसीका अनुकरण किया गया तो नई चीज क्या बनी। इसलिए युवकों ने नया रास्ता चुना। इस सम्बन्ध में अंग्रेजी से भी काफी प्रेरणा मिली। इस नई कविता के पथ-प्रदर्शक गुरजाडा अप्पाराव थे। बोब्बिली गीत आदि देखिये, कितने मीठे हैं वे! इसलिए कहा गया कि नये-नये रास्ते निकाले जायें। अपने प्रेम और भावों के बारे में लिखने वाले, पुरातन आन्ध्र इतिहास को आधार मानकर लिखने वाले, कितने ही तरह के लेखक और कवि हैं आजकल।"

१६ : आन्ध्र-नव-कवि-समिति

'आन्ध्र के आधुनिक कवियों का सम्मेलन' बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा एक इश्तहार पच्चयप्पा कालेज के बड़े दरवाजे पर लटकाया गया था। बड़े हाल में एक बड़ी वेदिका सजाई गई थी। सजाने की सारी जिम्मेवारी नारायणराव पर थी। वरदराजस्वामी अध्यक्ष थे। स्वागतकारिणी-समिति के अध्यक्ष आजनेय कवि थे। मन्त्री, नारायणराव था। परमेश्वर मूर्ति, रोहिणी देवी आदि स्वागतकारिणी के सदस्य थे। कई विद्यार्थियों को जमा करके नारायणराव सोत्साह कार्यक्रम चलाने लगा।

सम्मेलन तीन दिन के लिए था। खर्च के लिए नारायणराव ने तीन सौ रुपया चन्दा दिया था। जमींदार ने सौ रुपये दिये थे ? नागेश्वर राव जी ने सौ रुपये, अल्लादि कृष्ण स्वामी ने सौ। वकील और सेठों ने भी चन्दा दिया। लगभग दो हजार रुपये इकट्ठे करके स्वागतकारिणी-

समिति को नारायणराव ने दिये। सरला और नवीन कवि रामलिंगा राव को, जो 'भारती' में लिखा करते थे, कोषाधिकारी बनाया।

इस अवसर पर चित्र-प्रदर्शनी, कवियों के फोटो, नवीन कवियों की मुद्रित व अमुद्रित पुस्तकों के प्रदर्शन का प्रबन्ध किया गया। चित्र-प्रदर्शनी की अध्यक्षता के लिए कला-विशेषज्ञ कजिन्स को निमन्त्रित किया गया था।

धनाभाव के कारण जो कवि नहीं आ सकते थे, उनको उसने लिखा कि वह उनके आने व जाने का खर्च स्वयं उठायगा।

निमन्त्रण-पत्र मुद्रित किये गए। कार्यक्रम भी प्रकाशित किया गया। कहीं पैसा अधिक खर्च न हो जाय, इसलिए उसने परिचित मित्रों से कहकर एक नाटक का भी आयोजन किया था।

चित्र-प्रदर्शनी के लिए देश के प्रसिद्ध चित्रकारों के पास निमन्त्रण-पत्र भेजे गए। शान्तिनिकेतन से नन्दलाल, कलकत्ता से अवनीन्द्रनाथ, लखनऊ से असितकुमार हाल्दार, पंजाब से अब्दुलरहमान चुगताई, बड़ौदा से प्रमोद कुमार चट्टोपाध्याय, मैसूर से वेंकटप्पा, बम्बई से सलोमान, अहमदाबाद से कनु देसाई, मणिभूषण गुप्ता, मजूमदार, सुधांशु चौधरी, देवीप्रसाद रायचौधरी आदि, आन्ध्र देश में राजमहेन्द्रवर से वेंकटरत्नं जी, श्रीमती दिग्मूर्ति, वुच्चि कृष्णम्मा, चामकूर भाष्यकारुलु, भीमवरम से अक्कल सुब्बाराय, ग्रन्थि शेष राव जी, तगेलुमुड़ि वेंकट सुब्बाराय जी, गुण्टूर से गुर मल्लय्या, अनिशेट्टि सुब्बाराव, मद्रास से काउला राममोहन शास्त्री, केशवराव, गुजरात से पाउला आनन्दमोहन शास्त्री, विशाखपट्टन से तलशेट्टि रामाराव, काकिनाडा से चामकूर सत्यनारायण, नरसापुर से वेम्पा शेषगिरि राव, ऐलूर से चण्डूपटल आदिराजू, रामाराव, पेनग से वेंकटराव और कई तरुण चित्रकारों ने अपने-अपने चित्र भेजे।

निमन्त्रण स्वीकार करके आन्ध्र के विविध-विविध भागों से रायप्रोलु, विश्वनाथ देवलु पल्लि, वेदलु, नडूरी, काटूरी, माधवपेद्दि, दुव्वूरी, पिंगली, मुनिमाणिक्य, कविराज, मोक्कपाटी, नोरि, नागेन्द्र रायलु, चिन्ता, पचागनुलु करण, गोलवेन्नु, मल्ल पल्लि, तुम्मल, भावराजु, कवि कोण्डल, मल्लादि, त्रिपुरारि भट्ल और कितने ही कवि सम्मेलन में उपस्थित थे।

पञ्चपदा पावन में कवि-सम्मेलन हुआ। सुप्रसिद्ध कवियों ने अपनी-अपनी नई-नई रचनाएँ मनोहर ढंग से पढ़कर सुनाईं। शाम को गोष्ठी-हाल में उनके भाषण हुए। गवैयों ने अपना संगीत सुनाया। एक दिन कूचिपूडि नाना का भागवत-प्रदर्शन, एक दिन जम कथा, देशी नाटक आदि मनोरंजन का कार्यक्रम रहा। ललित और भारावती ने कला के बारे में व्याख्यान दिए। एक दिन श्यामसुन्दरी देवी ने, बहनों के साथ गाकर श्रोताओं का मनोरंजन किया। नारायणराव ने भी वायलिन बजाया। परमेश्वर ने भजन गान गाकर सुनाये। हिन्दू-मुसलमान-समाज के मकान में प्रतियोगिता का पद्द्यमान नाटक खेला जाता था।

सम्बश ने मधुर गम्भीर व्याख्यान दिया। उनका कहना था कि कविता का जीवन से सम्बन्ध होना चाहिए। उसको ऊपर के अलंकार नहीं चाहिएँ। वह कवि के जीवन का अंग होनी चाहिए। इस तरह गंगा के प्रवाह की तरह समुद्र की लहरों की तरह धुआँधार भाषण दिया।

कई ने कहा कि 'भाव कविता' बकार की चीज है। बिना भाव के कविता कहाँ है? कई ने कहा कि भाव का अर्थ अर्थ नहीं है। रस स्वरूप भाव ही वास्तविक भाव है। भाव का अर्थ, हृदय है, मन है,। भावना का ढंग समझना चाहिए। वह कविता ही भाव-कविता है, जो कवि के हृदय का प्रतिबिम्बित करती हो। सबने कहा कि भाव-कविता जरूरी तौर पर व्यक्तिगत—अन्तर्वर्तित कविता है।

का ने कहा कि न तो भागवत और न भारत ही पूर्ण रूप से कविता है, क्योंकि कोई चीज, संस्कृत से तलुगु के अनूदित करने-मात्र से कविता नहीं हो जाती।

पर इन दोनों का खण्डन करते हुए सबने कहा, "हम भले ही अपने-आप अपनी प्रशंसा करें, पर भारत और भागवत को हमें पूजा करनी चाहिए।"

यह तय हुआ कि गीत लिखे जा सकते हैं और गीत भी कविता हैं।

फिर प्रश्न उठा कि कैसी भाषा का उपयोग होना चाहिए। कई ने दलील पेश की कि पद्य के लिए व्याकरणानुग पारम्परिक भाषा का ही उपयोग होना चाहिए। पर गद्य के लिए व्यावहारिक भाषा का इस्तेमाल होना चाहिए

परमेश्वर ने भी कहा, "भाषा प्रगति करती है, भाषा भी एक व्यक्ति है। वह भी जन्म, वृद्धि, मृत्यु तीन स्थितियों में से गुजरती है। संसार में कितनी ही भाषाएँ पैदा हुईं, प्रचलित हुईं, और नष्ट हो गईं। जैसे शिल्प आदि में कई लुप्त धातुएँ हमें अब भी मिलती हैं, उसी तरह कई मृत भाषाएँ भी किसी-न-किसी रूप में अब भी प्राप्य हैं। संस्कृत को ही देखिये, वह हजारों वर्ष जीवित रही, और आज वह एक महा निधि है। उसी तरह लैटिन, ग्रीक, हिब्रू आदि भाषाएँ हैं। आप जब एक भाषा का व्याकरण बना देते हैं तब वह प्रगति करना बन्द कर देती है। इसलिए संस्कृत में प्राकृत आई। उसको व्याकरण में जकड़ देने से पालि पैदा हुई, उसको नियमित कर देने से बंगाली, बिहारी, उड़िया, हिन्दी आदि भाषाएँ उत्पन्न हुईं। इसलिए तेलुगु को मत जकड़िये। ग्रान्थिक और व्यावहारिक भाषाएँ अभी से तैयार हो गई हैं। इन दोनों में फासला बढ़ रहा है। अब जैसे-जैसे हमने पुल बाँध दिया है। पर जहाँ पुल नहीं पहुँचता है, वहाँ दूसरी भाषा बन रही है। कई कहना चाहते होंगे कि यह भाषा भी संस्कृत की तरह निधि बन जायगी। पर संस्कृत चूँकि दिव्य भाषा थी, इसलिए उसका इतना भाग्य था। हर भाषा इतनी भाग्यशालिनी नहीं होती।"

कुछ ने कहा कि व्यावहारिक भाषा काव्य-भाषा है। कई ने कहा कि गद्य-काव्य व्यावहारिक भाषा में ही होने चाहिएँ। परन्तु काव्यों के लक्षणों का पालन होना चाहिए। भाषा चाहे कुछ भी हो, वह काव्य के अनुरूप होनी चाहिए।—यह प्रस्ताव पास किया गया। चित्र-प्रदर्शनी में नारायण-राव चित्र-कला के बारे में बोला—

"कला आनन्द का रूप है। एक व्यक्ति का आनन्द कला में व्यक्त होता है। उस व्यक्त कला को मनुष्य के आनन्द को आंशिक रूप से व्यक्त नहीं करना चाहिए। पर उसको उसका सम्पूर्ण प्रतिबिम्बित्व करना चाहिए। आनन्द कैसे पैदा होता है? जब सृष्टि श्रुति के रूप में हमारी दृष्टि में आती है तब हमें आनन्द होता है। वह दिव्य परब्रह्म स्वरूप है। वह 'श्रुति' प्रकृति में अनेक रूपों में है। रंग से रंग मिलकर स्वर से स्वर, वस्तु से वस्तु, हृदय से हृदय, जीवन से जीवन एकसार होकर श्रुति उत्पन्न करते हैं।

"संसार में व्यक्तियों के जीवन भिन्न-भिन्न सतह पर होते हैं। हरेक

को अपने-अपने स्वभाव के अनुसार आनन्द प्राप्त होता है।

"उस आनन्द को व्यक्त करने की शक्ति पूर्व जन्म के फलस्वरूप मिलती है। और जो व्यक्त नहीं करता वह दूसरों की अभिव्यंजना पर आनन्दित होता है।

"व्यक्त करने वाला सृष्टा है, उस सृष्टि को देखकर आनन्दित होने वाला कला-कोविद है।

"सगीत में शौक रखने वाला एक जल-प्रपात में सगीत सुनता है। उसके हृदय में आनन्द उमड आता है। प्रपात की ध्वनि में वह अपना सगीत रचता है। हम उसे सुनकर आनन्दित होते हैं।

"एक पहाड, पहाड के पास महानदी, नील आकाश, गेंदे के रंग वाले सायकालीन मेघ, मानिये, एक चित्रकार देखता है। वह आनन्दित होता है। उस आनन्द से, एक पहाड, महानदी, मेघ का चित्र बनाकर वह व्यक्त करता है। अगर वहीं, प्रकृति में कुछ 'अपश्रुति' हो तो उसको हटाकर, वह अपने चित्र में परिपूर्णता लाने का प्रयत्न करता है, यह देखकर हम आनन्दित होते हैं।

"कवि भी यही करता है।

"आप यह न सोचें कि हम प्रकृति का अनुकरण कर रहे हैं। नहीं। प्राकृतिक दृश्य को देखकर, हम आनन्दित होते हैं। वह हमारे 'श्रुति'–स्वभाव का एक अंग हो जाता है। उसमें कई तद्भव और तत्सम चीजें मिलती हैं, और इस तरह एक चित्र तैयार होता है।

"कला का विषय क्या प्रकृति ही है? इस विषय में भी भ्रान्ति सम्भव है। मानिये, मैं कुत्ते की तरह भौंकता हूँ, आप उसे सुनकर खुश होते हैं, पर आपका वह आनन्द बहुत हीन है। कुत्ते की आवाज में से 'अपश्रुति' निकालकर उसे सगीत बना सकते हैं।"

नारायणराव ने इस प्रकार अपना महत्त्वपूर्ण भाषण दिया। उसने कहा कि आनन्द चार प्रकार का है। भौतिक, मानसिक, हार्दिक और पारलौकिक। सर्वांग सुन्दरी के चित्रण से शारीरिक आनन्द होता है। लता, फल, पुष्प के चित्रण से मन सन्तुष्ट होता है। सब कल्पनाएँ इस प्रकार की हैं। करुणा, भयकर दु:ख आदि का चित्रण हृदय को आकर्षित

करता है। भगवान्, महात्मा, अवतार-पुरुष, उत्तम जीवनियाँ, कथाएँ, कर्मयोग, भक्तियोग आदि पारलौकिक हैं। आत्मा को आनन्द देते हैं।

२० : क्लिष्ट समस्या

सम्मेलन समाप्त हो गया। कार्यक्रम सन्तोषजनक रूप से सम्पन्न हुआ। चित्र-प्रदर्शनी, कवि-सम्मेलन, कोव्विरी-कथा, भागवतम्, नाटक आदि की 'आन्ध्र', 'हिन्दू', 'स्वराज्य', 'भारती' में अच्छी टिप्पणी हुई।

चित्रों में एक उत्तम चित्र, पौराणिक चित्रों में से एक, मानव-जीवन के आधार पर बनाए गए चित्रों में से एक के लिए तीन पुरस्कार दिये गए। पहले के लिए दो सौ, बाकी के लिए सौ-सौ रुपये दिये गए। आन्ध्र-चित्रकारों में से एक-एक को सौ रुपये, आन्ध्र चित्रकारों को दो सौ रुपये पारितोषिक दिये गए।

उस वर्ष प्रकाशित पुस्तकों में से उत्तम पुस्तक के लिए पाँच सौ रुपया इनाम दिया गया।

उत्तम उपन्यास के लिए दो सौ, उत्तम पद्य-काव्य के लिए दो सौ, उत्तम गीत-ग्रन्थ के लिए दो सौ रुपये दिये गए। दूसरी श्रेणी के पुरस्कारों में चाँदी की थालियाँ, पदक, पात्र वगैरा दिये गए।

नवीन कवियों के चित्र, उनकी एक-एक रचना के साथ, नारायणराव ने पुस्तकाकार में प्रकाशित करने की व्यवस्था की।

नाटक से १६०० रुपये मिले। भोजन आदि के लिए छः सौ खर्च हो गए। किराये के लिए तीन सौ, मुद्रण के लिए १५० रुपये, हार, फोटो, वगैरा के लिए १५० रुपये, हरि-कथा, पाठक, 'कोव्विली' गायकों के आने-जाने के लिए चार सौ रुपये खर्च हुए। सम्मेलन में कुल छः हजार व्यय

हुए। कुछ कवियों के आने-जाने के लिए नारायणराव ने अपनी जेब से तीन सौ रुपये दिये। प्रदर्शनी से २२५ रुपए का लाभ हुआ। परन्तु कुछ भी रुपया न बचा। लोगों की यह राय थी कि इतना उत्तम सम्मेलन कहीं भी कभी भी न हुआ था।

नारायणराव कोई-न-कोई काम निकालकर अपने हृदय की व्यथा को भूलने की कोशिश किया करता। पिछले दिनों उसके ससुर ने आकर बताया कि सुब्बाराय जी ने शारदा को क्रिसमस की छुट्टियों में कोत्तपेट भेजने के लिए लिखा था, और उन्होंने मान लिया था। शारदा को कोत्तपेट से उसे मद्रास लाने के लिए कहा गया। क्योंकि वह परीक्षा में बैठने जा रही थी, इसलिए उसको उसे पढ़ाने के लिए कहा गया। वह मद्रास में रहेगी, और १६२६ में होने वाली परीक्षा में राजमहेन्द्रवर से बैठेगी। उसके पिताजी ही उसे राजमहेन्द्रवर ले जायेंगे।

वह उसके साथ कैसे रहे ? उसको कैसे पढ़ाये ? क्या वह हम सबके लिए मानेगी ? शायद पिता की बात वह न ठुकरा सकी हो ? हो सकता है कि माँ से कहकर उसने स्वयं यह प्रबन्ध किया हो ? इतना सौभाग्य ? शायद यह ससुर जी का खयाल हो ? कहीं वे दोनों का रुख जानकर तो ऐसा नहीं कर रहे हैं ? ससुर जी क्यों मुझे इतना चाहते हैं ? वे अमृत-मूर्ति हैं।

उस सुन्दरी ने ऐसा क्यों किया ? कहीं उसका मन बिगड़ तो नहीं गया है ? छी ? मैं कितना खराब हूँ ? पवित्र भारत की नारी पर सन्देह करना मुझ तुच्छ पुरुष को शोभा नहीं देता। मेरी अन्तरात्मा उसके पवित्र चारित्र्य के बारे में गीत गाया करती थी। जाने दो, मेरे प्रेम-मन्दिर की अधिष्ठात्री देवी क्या मुझे फिर प्यार न करेगी ?

क्या मैं उसका हृदय दुखाये बगैर रह सकूँगा। क्या हम दोनों इस समुद्र के किनारे इसी तरह रह सकेंगे ?

"अगर तेरी मेरी जोड़ी ठीक हो जाये,
तो मल्ली फूल की तमेड़ बाँधकर
हम तैर जायेंगे, आ, आ"

—एक तेलुगू कविता का भावानुवाद।

क्या हम अपने प्रेम में समेट बाँधकर बह सकेंगे ? सोचते-सोचते उसकी आँखों में आँसू छलक आए। प्रेम-विहीन मनुष्य, पशु से भी निकृष्ट है', क्या विवेकानन्द ने यह नहीं कहा है ? पवित्र प्रेम का अनुभवी ही कभी भक्त बन सकता है', विवेकानन्द महर्षि ने कहा था।

'इसलिए कामपूर्ण प्रेम भी उपयुक्त ही है, आखिर वही प्रेम ईश्वर-भक्ति में परिणत हो जाता है।' नारायणराव ने सोचा।

कुछ भी हो, पत्नी मेरे साथ नहीं रहना चाहती ? मौका पाकर क्यों न मैं ऋषिकेश, या हिमालय जाकर गुरु के पास ज्ञान प्राप्त करके तपस्या करूँ ? कभी-न-कभी, किसी-न-किसी जन्म में उस मार्ग पर चलना ही होगा। क्षणिक, अनित्य, नीच जीवन को तो छोड़ नहीं सकते ? पत्थर को वायु में हल्का बनाकर उड़ाना जिस प्रकार है, उसी प्रकार इस जन्म को धारण करना है। क्या मैं इतना सौभाग्यशाली हूँ ? मेरे अभागे जीवन में मुझे प्रकाश का मार्ग दिखाई दे रहा है, पर उस मार्ग पर चलने का मुझमें साहस नहीं है। रामचन्द्र, भक्त-परायण, अब तेरा ही सहारा है।'

इतने में परमेश्वर मूर्ति वहाँ आया। उसकी पत्नी रुक्मिणी ससुराल थी। कुछ भी हो जब तक वह पूर्णतः स्वस्थ न हो जाय, तब तक नारायण-राव ने दोनों को अपने घर भोजन करने के लिए कहा।

"परम, मैं जनवरी में शारदा को यहाँ ले आऊँगा !"

"अच्छा है, अच्छा है, मुझे बड़ा सन्तोष है।"

नारायणराव जितना शारदा को चाहता है उतना वह उसको नहीं चाह रही थी और वह इस कारण बहुत कष्ट सह रहा था, परमेश्वर मूर्ति यह जान गया था। क्या रुक्मिणी जितना मुझे चाहती है मैं उसे उतना चाहता हूँ ? परमेश्वर ने यह कभी न कहा कि वह निर्मल था। अगर कभी कोई अच्छी स्त्री दिखाई देती तो परमेश्वर के मन में विकार पैदा हो जाते।

रुक्मिणी बदसूरत न थी, खास खूबसूरत भी न थी। पति को थोड़ा-सा गुस्सा भी न आने देती। गृहस्थी भी बचपन से अच्छी तरह चलाती, कंजूसी भी न करती, पति की आमदनी में से ही अच्छा भोजन बनाती, घर का काम-काज करती, पति को हर महीने दस या पन्द्रह रुपये उनके निजी खर्च के लिए देती। दस-पन्द्रह रुपये सेविंग बैंक में जमा करती।

पत्नी सामने होती तो वह ही परमेश्वर मूर्ति को सुन्दर लगती।

रुक्मिणी और सूर्यकान्त में गाढ़ी दोस्ती हो गई थी।

"भाभी, जब तुम्हारे बच्चा पैदा होगा, क्या तुम मुझे उसे उठाने दोगी? मैं ही नहलाऊँगा, बहन के बच्चों को मैं ही खिलाता था, परमेश्वर भाई और तुम्हारे छोटे भाई बच्चों को क्यों इतना पसन्द करते हैं?"

रुक्मिणी यह सुनकर फूली न समाती। खुश होकर वह सूर्यकान्त को गले लगा लेती।

पत्नी को पता लगा कि परमेश्वर मूर्ति अपने सम्बन्धियों में से दो युवतियों से सन्देहास्पद रूप से हिला-मिला करता है, तब रुक्मिणी का मन बहुत दुखा। परमेश्वर यह जान गया। पत्नी के पैरों पर पड़कर उसने उन्हें आँसुओं से भिगोया।

सचमुच, दो-तीन बार, वह एक स्त्री के साथ आवेश में आ गया था। उसका पति गँवार था। वह अपने पति से नफरत करती थी। भाग्य की कोठरी उसके साथ रहा करती थी। वह बचपन से ही परमेश्वर मूर्ति को चाहती थी। वह सुन्दर थी। उसीके कारण परमेश्वर मूर्ति बिगड़ा था।

परमेश्वर को अधिक बिगड़ने से रोकने वाली उसके हृदय की सौन्दर्य-पिपासा ही थी। अगर स्त्री सुन्दर न हो तो उसके मन में विकार न होता। उस सुन्दर स्त्री की सभी चीजें सुन्दर होनी चाहिएँ, कहीं कोई खराबी नहीं होनी चाहिए, इसीलिए वह एक स्त्री से ही भौतिक आनन्द प्राप्त कर सकता था। कहीं वह आनन्द-मग्न न हो जाय, इसलिए उसने पर-नारी-सुख छोड़ दिया।

रोहिणी देवी से जब उसे प्रेम करने का मौका मिला तो वह अपना दिल दे बैठा। रोहिणी भी परमेश्वर के हृदय में घुल-मिल गई थी। उसकी बातें सुनकर वह पुलकित होती। वह उसकी अभिरुचियाँ जान गई। वह घबराई। वह उसमें तन्मय होने लगी। इतने बड़े व्यक्ति ने उसको अपने प्रेम का पात्र बना लिया था, यह सोचकर वह मन-ही-मन खुश होती।

मौका मिलता तो वह उससे एकान्त में मिलती। जब उसको बहुत

कॉलेज या हॉस्पिटल जाती तो नारायण को छोड़कर, वह अकेला वहाँ चला जाता।

परन्तु रोहिणी धर्मभीरु थी। वह विवाहित था। पत्नी के साथ सुख से रह रहा था। वह अविवाहिता थी। इसलिए उसने निश्चय कर लिया था कि वह परमेश्वर मूर्ति को लकीर के इस तरफ न आने देगी। निर्मल हृदय से उससे प्रेम करती आई थी। उसे यह भय न लगता था कि अगर वह प्रेम बढ़ता गया तो दोनों को लकीर फाँदनी पड़ेगी।

परमेश्वर भी उसका मनोभाव समझकर बहुत सावधानी से रहता।

२१ : गप-शप

समुद्र के किनारे नारायणराव, परमेश्वर मूर्ति श्यामसुन्दरी देवी और रोहिणी देवी कवि-सम्मेलन के बारे में बातचीत कर रहे थे।

आधुनिक तरुण कवियों में कई ऐसे भी हैं जो और स्वतन्त्रता दिखाते हैं। आन्ध्र देश की वर्तमान कविता प्रेम-पूरित है, नीरस है, इस प्रकार एक आलोचक ने 'भारती' में प्रकाशित चार लेखों में बताया था। जिस प्रकार रंगमंच पर स्त्रीत्व दिखाई देता है, उसी प्रकार कविता में भी स्त्रीत्व दृष्टिगोचर होता है। उनका कहना था कि कल जैसा कवि-सम्मेलन हुआ था वैसा होना चाहिए। उन्होंने कहा कि जब कविता के लिए हजारों विषय हैं, इन कवियों का केवल स्त्री पर लिखना उनके अज्ञान का द्योतक है।

नारायणराव उस आलोचक से सहमत न था।

परमेश्वर ने उनकी युक्ति का खंडन किया, "प्रेम उत्कृष्ट विषय है, जो प्रेम तुम अपनी प्रेयसी के लिए दिखा रहे हो, वही कई जन्मों के बाद भगवद्-भक्ति में बदल जाता है। चिन्तामणि के प्रेम के कारण लीला

दास महाभक्त हो गया।

नारायणराव ने श्याममुन्दरी को देखकर मुस्कराते हुए कहा, "बहन, सारी सृष्टि भगवान् का रूप है न ? ऐसी हालत में करुणा आदि रस से मानव-जीवन को निर्मल बनाने की अपेक्षा प्रेम पर फालतू गीत लिखना क्या हृदय का दौर्बल्य सूचित करना नहीं है। अगर तेरा प्रेम उदात्त है, तो लिख दो-चार महाकाव्य, भूखे, नंगे, गरीब गुलामों में भी बदतर चमार, चाण्डालों के बारे में हृदय-द्रावक कविता लिखो। मनुष्य को अगर कोई चीज भगवान् की ओर प्रेरित करती है तो वह है कविता।"

श्याममुन्दरी ने उन दोनों के मन में समझौता-सा कर दिया, "प्रेम संसार में अति उत्तम विषय है। जैसे वह संसार के लिए उत्तम है, वैसे काव्य के लिए भी उत्तम है। स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध जीवन के बाद में आता है।"

"क्या काव्य भी ऐसा है चाहे कुछ भी लिखो, वह सुन्दर काव्य होना चाहिए, क्यों भाई, ? क्यों परमेश्वर ?" कहकर वह हँसी।

नारायणराव का मन जब कभी द्विविधा में पड़ता तो श्याममुन्दरी से बात करके सब बातें चर्चा में विवाद कर लेता।

उसने परमेश्वर से हँसते हुए कहा, "स्त्री-पुरुष में स्नेह होना स्वाभाविक है। उसे हम अपने जीवन से स्वाभाविक बना रहे है, इसलिए आजकल स्त्री-पुरुष में स्वाभाविक प्रेम होना अस्वाभाविक है।"

रूस के बारे में चर्चा चल पड़ी। "वास्तविक प्रजातन्त्र वस्तुतः बोल-शेविज्म ही है। सबको समान सम्पत्ति मिलनी चाहिए। यानी सम्पत्ति सारी सरकार की है। जनता को अपना-अपना पेशा करना चाहिए। उनके मन के अनुसार वेतन टिकट के रूप में दिया जाना चाहिए। उस टिकट पर जरूरी चीजें ली जा सकती है। मान लिया जाय कि खाद्य-सामग्री काफी नहीं है, हर एक का भोजन इत्यादि नियमित किया जा सकता है।" नारायणराव ने कहा।

परम०—"हम अपने-आप जोश से तो काम नहीं कर सकते, क्योंकि हमें केवल भोजन-मात्र ही मिलेगा। तो बड़े-बड़े कार्यों के करने के लिए प्रेरणा कैसे मिलेगी ?"

नारा०—"क्यों नहीं मिलेगी ? क्यों बहन ? तुम बताओ ? तुमने

तो आजकल बोल्शेविज़्म के बारे में बहुत-सी किताबें पढ़ी हैं।"

श्यामा—"उत्कृष्ट कार्य करने वालों को अधिक हिस्से दिये जायेंगे। इंग्लैण्ड-जैसे धनिक देशों में भी क्या बड़े-बड़े साम्राज्य धन के लिए ही सब कार्य करते हैं? उनका उत्साह स्वाभाविक है। यश की इच्छा भी रहती है। क्या रूस देश में सभी कार्य धर्म है?"

नारा०—"खूब कहा!"

परम०—"पर यहाँ, यह बात गलत! किसी-न-किसी दिन बोल्शे-विज़्म खत्म होगा। स्वार्थ, मनुष्य का स्वभाव है, इसलिए मुट्ठी-मुट्ठी रुपया जमा करेंगे। अब तक रूस में कितने ही भेद पकड़े गए हैं।"

श्यामा—"अगर यह स्वाभाविक हो तो देश की सम्पत्ति का विभाजन अच्छा है।"

नारा०—"उत्कृष्ट परिवार की तरह।"

परम०—"अरे, वाह साहब, क्या संसार को उत्कृष्ट परिवार बनाओगे? ये बोल्शेविज़्म एक-दो देशों में ही अच्छा। क्या सारा संसार एक ही राज्य होना चाहिए?"

श्यामा—"लेनिन, ट्रॉट्स्की, बुखारिन आदि यही तो कहते हैं कि सारा संसार एक ही होना चाहिए। सारी सम्पत्ति को जमा करके जनसंख्या के अनुसार बाँट देना, जिस देश में जितनी पैदावार होती है, उसका हिसाब लगाना, जितनी जरूरत हो, उतना ही पैदा करना, और उसको सब देशों में बाँटना। हर फसल इसी तरह बाँटी जायगी, इसी तरह धातुओं का भी विभाजन होगा, इसी तरह सर्व ज्ञान-विज्ञान पर हर देश का अधिकार होगा।"

नारा०—"नहीं, भगवान् को जानने के लिए सबको समान सुविधाएँ दी जानी चाहिएँ।"

परम०—"तुम दोनों का स्वप्न बड़ा अच्छा है, तो क्या गोरा आदमी काले आदमी को आगे बढ़ाने देगा? चीन और जापान में युद्ध नहीं होगा?"

श्यामा—"भाई, आप तो क्या कह रहे हैं, संसार में बोल्शेविज़्म के प्रचार के लिए कई युग लग जायेंगे। जब तक देशों के पास धन है वे अपना आधिपत्य नहीं छोड़ेंगे। पर संसार में किसकी अधिक जरूरत है?"

कुली-मजदूरों की ही न ? अगर गरीब एक हो गए तो ये सेठ-साहूकार क्या करेंगे ?"

रोहिणी—"बन्दूक के सामने हमारे देश के तैंतीस करोड़ आदमी क्या कर रहे हैं ?"

श्यामा—"संसार में बन्दूक पकड़ने वाले सब गरीब हैं। रूस में जब वे चौंके, तो सेठ और जमींदारों का राज्य धराशायी हो गया।"

परम०—"धन की क्या-क्या अच्छाई है, बताता हूँ, सुनो! रईस पैसा कमाने के लिए देश के लिए भी कई काम करता है। उसके कारण संसार की सब चीजें तैयार होती हैं। अमरीका, इंगलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस में यही हो रहा है। लोहे के चक्रवर्ती, मिट्टी के तेल के राजा, बिस्किट सम्राट्, राजाधिराज वगैरा होने से उन देशों को वे चीजें मिल रही हैं।"

श्यामा—"भाई तेरी युक्ति एकदम गलत है।"

तारा०—"१६११ में यूरोप का महायुद्ध समाप्त हुआ। ऐसा लगता था कि सारे संसार में विद्रोह भड़क उठेगा। परन्तु अमरीकनों ने यूरोप में सोना लेकर बिखेर दिया। इस कारण युद्ध से थके-माँदे लोग सोचने लगे, 'हमारी स्थिति अच्छी है।' पर उस अच्छी स्थिति का आधार क्या था ? अमरीका ने उधार देना बन्द कर दिया। करोड़पतियों के करोड़ हवा हो गए, व्यापार ठप पड़ गया। अब लगता है कि सब व्यापारी दिवाला निकालने वाले हैं। खैर कुली-मजदूरों ने आगे बढ़कर शासन-सूत्र अपने हाथों में लेना चाहा। इटली, जर्मनी, इंगलैण्ड आदि देशों में। परन्तु अभी कुलियों को सफलता नहीं मिली। कुली और साधारण जनता को उठता देखकर रईस घबराये। करोड़पति, और जिनके पास कुछ सम्पत्ति थी, सब एक होने लगे। फासिज्म के सिद्धान्त पर सर्व अधिकार से युक्त शासन-प्रणाली चलाई। अब से सब देश ऐसे ही होंगे।

वस्तुतः संसार में क्या कमी है ? इस पर गौर करो! आवश्यक सामग्री पैदा हो रही है। अगर ठीक तरह उसका विभाजन किया गया तो सब आसानी से अपना पेट भर सकते हैं। परन्तु कितने करोड़ आदमी दाने-दाने के लिए तरस रहे हैं। कमी यही है कि उत्पत्ति का उचित विभाजन नहीं है। पूँजीपति यह काम कभी ठीक तरह नहीं कर पायेंगे।"

श्यामा—"बेकार मजदूर कितने ही करोड़ हैं, इन सबको भोजन कैसे दिया जाय ?"

रोहिणी०—"हमारे आन्ध्र में जमीदार-रैयत-सम्बन्ध भी तो महा-अन्यायपूर्ण है।

परम०—"हाँ, बहन, क्या सभी जमीदार वैसे हैं ? क्या कुछ जमीदार दयालु नहीं है ?"

नारा०—"१६०८ में पहले किसानों पर जोर-जबरदस्ती करके बढ़ा-चढ़ाकर लिखवा लिये थे। मैं कई ऐसी जगह भी जानता हूँ जहाँ तीस-तीस रुपये का कर है, हजारों किसानों ने दिवाला निकाला। मेरी सास का भतीजा एक जमीदार है, उनकी जमीदारी जितनी खराब हो सकती है, उतनी खराब है। कितने ही किसान कर न चुकाने के कारण जेलों में सड़ रहे हैं। कई की भूमि बेच दी गई है। रैयतवारी ग्रामों की स्थिति इससे कुछ अच्छी नहीं। इन जमीदारों के पूर्वजों के समय में हालत इतनी बुरी न थी।"

परम०—"जमींदारियाँ, इनाम और मुखासदार ग्रामों में जब फसलें न फलती हों, पैसे की दिक्कत हो तब कर क्यों नहीं कम करते ? जमींदार प्रजा के लिए पिता के समान है, पर उसने अपने पितृत्व को पैशाचिकत्व बना रखा है।"

रोहिणी०—"कई ऐसे जमीदार भी हैं जो किसानों पर जान देते हैं, उनके कल्याण में ही वे अपना कल्याण समझते हैं। हमारे पिता जी के एक ऐसे मित्र हैं।"

परम०—"और नारायणराव जी के ससुर जी ? उनकी जमीदारी देखकर भी दिल खुश होता है। उन्होंने आन्ध्र विश्वविद्यालय के लिए ५० हजार रुपये दिये हैं। गरीब किसानों को नहीं सताया जाता। सर्वे किया गया है। सरकारी किसानों की तरह उनको भी कभी पट्टे दिये जाते हैं। जमीदारी नौकर घूँस न लें, इसका भी खयाल नारायणराव के ससुर करते हैं। कोई ऐसा किसान नहीं जो उनको हाथ जोड़कर नमस्कार न करता हो ?"

श्यामा—"हाँ, सुनो भाई नारायण, क्या तुम भाभी नहीं दिखा-

ग्रोगे ? भाई कहते हैं कि वह बहुत सुन्दर है।"

परम०—"क्रिसमस के बाद वे यहाँ रहने आयेंगी।"

रोहिणी०—"क्यों भाई, तुमने पहले नहीं बताया ?"

नारा०—"बताने की सोच रहा था कि इतने में परम ने बता दिया।"

इस बीच गणपति वहाँ आया। गणपति नारायणराव को देखकर मुस्कराकर एक तरफ चला गया।

गणपति राव कहा करता था, 'गान्धी जी का सत्याग्रह औरतों का आन्दोलन है। हम शक्तिहीन उस अहिंसा-मार्ग में पड़कर और भी नि:शक्त हो जायेंगे।

यह उस लड़के की दलील थी। कितने अक्लमन्द लड़के हैं। 'सही रास्ता दिखाइये, बम तैयार करेंगे। रिवाल्वर चलायेंगे। युद्ध करके राज्य जीतेंगे।' वे कहा करते।

"सही रास्ते के अभाव में ये लड़के गलत रास्ते पर जा रहे हैं। आप षड्यन्त्र का केस सुन ही रहे हैं। बहन, महात्मा जी के विचार से कैसे जानेंगे ? इसका मन धीरे-धीरे बदलना होगा। नहीं तो एक दिन रात को कहीं चला जायगा, जब वह फौजों पर चढ़ने के लिए तैयार हो जायगा, तब हम कुछ न कर सकेंगे", नारायणराव ने कहा।

उसने घर आकर, अपने मित्रों में से एक बोलशिजिस्ट चित्रकार का एक चित्र निकालकर देखा।

हजारों पुरुष-स्त्री, राक्षसी नृत्य कर रहे थे। स्त्री, बच्चे, कुचले जा रहे थे। महाशक्ति की तरह यन्त्र चारों ओर व्याप्त हैं। इस प्रचार-चित्र को भी चित्रकार ने कितने चातुर्य से बनाया था।

वर्ण, रेखाएँ, परिमाण, सब उत्कृष्ट श्रुति में लीन-से हो गए थे।

कलाकार सौभाग्यशाली है, एक रेखा में, एक रंग में, कितने ही समुदायों को चित्रित करता है। उस गहराई को व्यक्त करता है, जहाँ बुद्धिमान भी नहीं पहुँच पाते।

उसने उस चित्र को एकाग्र दृष्टि से देखा। देखता-देखता, वह वहीं खड़ा रहा।

चतुर्थ भाग

१ : पति ही गुरु है

क्रिसमस की छुट्टियों में नारायणराव अपनी पत्नी के साथ मद्रास आया।

उसने मैलापुर का अपना मकान छोड़ दिया, और सौ रुपये किराये पर एक बड़ा मकान ले लिया। उसके चारों ओर बाग था।

परमेश्वर की पत्नी के प्रसव के लिए उसने मद्रास में ही प्रबन्ध कर दिया। मद्रास में वह जब से रहने लगा था गुण्टूर से एक नियोगी ब्राह्मणी रसोई करने वाली को भी बुलवा लिया था। वह पूर्व गोदावरी ज़िले में किसी सरकारी कर्मचारी के घर काम कर चुकी थी। अच्छे दिन काटती थी। नारायणराव महीने में उसको १५ रुपये वेतन और साल में चार साड़ी देता था।

क्रिसमस की छुट्टियों में अच्छा दिन देखकर सूर्यकान्तं और सुब्बाराय जी, शारदा को घर विदा से लाने के लिए गये। जमींदार ने उनको कीमती साड़ियाँ, हल्दी, सिन्दूर, जेवर, जवाहरात, चाँदी, बड़े-छोटे पात्र, सोने-चाँदी वगैरा, चाँदी के खिलौने, मेज़-कुर्सी, सोफ़ा-पलंग, झूला आदि और कई सामान दिये। मद्रास भेजने के लिए, कई चीजें राजमहेन्द्रवर में ही रख ली थीं।

लॉन्च और मोटरकार से वे कोत्तपेट पहुँचे। पत्नी के आने पर नारायणराव का दिल तेज़ी से चलने लगा। रात को जब वह कमरे में आई। उसने बड़े मीठे प्रेम से, पत्नी की ओर देखा। परन्तु पत्नी चुप ही रही।

नारायणराव मन मसोसकर, होंठ भींचकर और अपनी पीठ करके पलंग पर चुपचाप सो गया।

और जब से वह मद्रास आई थी वह यही सोचा करता कि उससे कैसे बातें करे, कैसे उसको पढ़ाये।

एक सप्ताह बीत गया, खुद पढ़ाना तो दूर उसने शारदा और सूर्य-कान्त को पढ़ाने के लिए हिन्दू उच्च पाठशाला से अवकाश प्राप्त, भास्कर मूर्ति शास्त्री, बी० एल० टी० को नियुक्त किया। वह चाहता था कि शारदा अपनी परीक्षा में सफल हो, और बहन भी प्रवेश परीक्षा में उत्तीर्ण हो।

श्यामसुन्दरी देवी, और उसकी बहन नारायणराव का घर देखने आये। व बेर, अंगूर, अनार, अंजीर आदि फल, काजू, पिस्ता, बादाम आदि मेवे, मिश्री, हल्दी, सिन्दूर, रेशमी साड़ी जाकेट साथ लाए।

सूर्यकान्त पहले ही श्यामसुन्दरी के घर आ-जा चुकी थी। उसकी उनसे मैत्री थी। वह कभी उसे 'श्यामा बहन' कहकर पुकारती, तो कभी 'डाक्टर बहन' कहती। वहा करती, "हम सब मिलकर आठ बहन-भाई हैं" श्यामसुन्दरी की माँ को वह मौसी कहकर सम्बोधित करती।

वह नारायणराव की चारो बहनों के जन्म-दिन, या कुछ और बहाना करके, खिलौने, साड़ियाँ, कपड़े, चाँदी की चीजें हमेशा उपहार में दिया करती।

शारदा को पता न लगा कि उनका उनसे क्या रिश्ता था, उसने उन्हें देखकर नाक-भौं सिकोड़ ली। श्यामसुन्दरी ने यह सोचकर कि वह शरमा रही है उससे हिल-मिलकर बात करनी चाहिए, उन्होंने 'शारदा भाभी' 'छोटी भाभी', तरह-तरह से उसे पुकारा।

"क्यों भाभी, हमारी सास तो ठीक हैं, ?" नलिनी ने पूछा।

शारदा ने जवाब दिया। "हाँ, है।"

वे सब उससे स्नेहपूर्वक बातचीत करके चली गईं।

शारदा को मद्रास में पति का जीवन विचित्र-सा लगा। वह सवेरे-सवेरे दण्ड-बैठक करता, 'मुगदर' भी चलाता। व्यायाम के एक घंटे बाद वह ठंडे पानी से नहाता, दो इमली खाकर, दूध पीकर, सिगरेट सुलगाकर खद्दर के कपड़े पहनकर अध्ययन-कक्ष में जाता, और वहाँ अपीलों की तैयारी करता। ससुर जी ने कुछ सेठों के काम दिलवा दिये थे। भाई, श्री निवास-राव, और पिता भी अक्सर अपील भेजते। नारायणराव को हमेशा खूब काम रहता। अपील के लिए आये हुए मुवक्किलों से बातें करता, फिर बार में अपने सीनियर वकील के यहाँ जाता। दस बजे घर आता,

खाना खाकर, निश्चित वस्त्र पहनकर भावा अदालत चला जाता।

कुछ महीनों में नारायणराव को निश्चित व्यक्तियों से ही २०० रुपयों की आमदनी हो जाती थी। मोनियर वकील भी उसको बड़े-बड़े मुकदमों में काम देते, और सौ-डेढ़ सौ रुपये, काम के अनुसार देते।

अदालत के काम के बाद, वह घर आता। सूर्यकान्त को एक घंटा पढ़ाता। बाद में नहा-धोकर कपड़े पहनता ता कोई-न-कोई मित्र आ जाता। उनके साथ नहीं तो अकेला कार में हवा खाने निकल जाता। जब कभी परमेश्वर मूर्ति आता वह भी उसके साथ जाता। कई बार सूर्यकान्त और शारदा को कार में जाने के लिए कह, स्वयं समुद्र-तट पर पैदल टहलने चला जाता। जब कभी पैदल चलता तो घर जाकर तीसरी बार नहाता।

शारदा को मद्रास आये हुए दस दिन हुए थे कि जमींदार अपनी लड़की को देखने आये। शारदा जब ससुराल गई थी तो उन्होंने उसे यह कहकर भेजा था कि उसका पति अच्छे अक्लमन्दों में भी अधिक अक्लमन्द है और वह स्वयं उसको पढ़ायेगा। इसलिए जमींदार ने दामाद से पूछा, "अध्यापक का क्या रखा है,? तुम पढ़ाते तो अच्छा होता।"

"मुझे फुरसत नहीं मिलती, जब मिलती है तो पढ़ा देता हूँ।" उसने यह कह तो दिया, पर उसका दिल दुखने लगा।

एक दिन नारायणराव ने सूर्यकान्त से कहा, "तू अपनी भाभी को भी पढ़ने के लिए बुला!" सूर्यकान्त शारदा को बुला लाई।

शारदा ससुराल नहीं जाना चाहती थी। उसे जाते समय बड़ा दुःख हुआ। कभी उसने पिता की बात नहीं ठुकराई थी। उसके भाई केशवचन्द्र ने जब कहा, "जा, कम-से-कम तू जाकर तो बुला ला!" न जाने वह क्या सोचने लगी कि उसकी आँखें डबडबा आई। माँ की आँखों में भी तरी आ गई। बुआ का दिल भी भारी हो गया। जमींदार ने पास बुलाकर कहा, "बेटी, जब स्त्रियाँ जन्म लेती हैं, तभी से वे पति के घर की हो जाती हैं। तू पढ़ी-लिखी है, क्यों, क्या तुझे दूसरों के कहने का जरूरत है। जा बेटा, तू मद्रास में रहना! मैंने तुम्हारे ससुर से कह दिया है। मैं हमेशा आता ही रहूँगा। तू मार्च में घर आयगी। वहाँ उनकी सूर्यकान्त है ही। आनन्द राव और उसकी पत्नी तथा बाल-बच्चे भी वहाँ

है। बहन को भी लिख रहा हूँ कि वह तुझे देख आया करेगी।"

वह भी जानती था कि किसी-न-किसी दिन उसे ससुराल जाना ही होगा। उसने ऐसा कभी भी नहीं सोचा था कि पति के साथ रहना कैसे टलेगा। वह सोचती थी कि यह काफी है यदि पति उसके पास न आये। मगर वह पति के पास गई और वह प्रेम करने लगे तो वह कैसे जी सकेगी? उसने कलम का एक उपन्यास पढ़ा था। उसमें नायिका ने अपना जीवन प्रेम के लिए अर्पित कर दिया था।—तो क्या वह किसी से इस तरह प्रेम कर रही थी? जगन्मोहन राव से वह प्रेम नहीं करती थी? यह साफ है कि जगन्मोहन ने कभी उसने खूब प्रेम किया था। प्रेम का मतलब क्या है, पुरुष को देखने पर या उसके बारे में सोचने पर, उसके साथ एकात्म होना ही ना। क्या किसी से उसने इस तरह प्रेम किया है? जगन्मोहन राव के साथ उसका अच्छा परिचय था। वह घंटों उससे बातचीत कर सकती थी। वह भी उसे भरसक प्रसन्न करने की कोशिश करता। क्या माँ-बाप और भाई के प्रति उसका वह भाव नहीं है? मतलब यह कि वह किसी पुरुष को नहीं चाहती थी।

पति पढ़ा-लिखा है। कोई गँवार नहीं है। वह आवश्यक रूप से किसी दूसरे के कार्य में हस्तक्षेप भी नहीं करता। दयालु है। जो कोई उसे देखता है उसकी प्रशंसा करता है, इसलिए क्या वह उससे वह प्रेम माँगेगा, जो वह देना नहीं चाहती थी।

बचपन से पाला हुआ बाग और गोदावरी की हवा, अब दूर हो जायगी। उसका भाई भी विचित्र-विचित्र प्रश्न न पूछेगा। नौकर-चाकर, बन्धु-बान्धव पीछे ही रह जायेंगे। क्या है? क्या पढ़े-लिखे व्यक्ति भी इस तरह सोचते हैं?

शारदा ससुराल में दस दिन ही रही। फिर उसे मद्रास जाना पड़ा। पति के साथ फर्स्ट क्लास कूपे में वह मद्रास आई। सब लोग उससे प्रेम करते हैं। सफर में उसको हर सुविधा थी। किसी बात पर और किसी भी कारण उन्होंने उसको कोई तकलीफ नहीं होने दी।

जब सूर्यकान्त ने आकर उससे कहा कि पति बुला रहे हैं, उसका कलेजा थोड़ी देर के लिए थम-सा गया। उसको आश्चर्य हुआ। वह नारायण-

राव के पास जाकर, दुमंजिले के एक कमरे में सूर्यकान्त के पास एक कुर्सी पर बैठ गई। अपनी गम्भीर आवाज में नारायणराव शारदा को पढ़ाने लगा।

न मालूम एक घटा कैसे बीत गया। शारदा तन्मय हो गई। जब अपने मधुर कठ से नारायणराव ने उसे सुधा-पान कराया तो वह अपने को भी भूल बैठी। पढ़ाने के बाद, नारायणराव ने शारदा से प्रश्न पूछे। पहले प्रश्न का तो भय के कारण वह उत्तर न दे सकी। जब भय कम हुआ तो उसने सब प्रश्नों का उत्तर दिया।

"अब जा सकती हो!" कहकर नारायणराव नीचे चला गया। शारदा ने ऐसा अध्ययन का अनुभव कभी नहीं किया था। उसने पाठ को खूब समझा। नारायणराव ने समझाकर पढ़ाया था। पहले कभी किसी ने भी इतनी अच्छी तरह नहीं पढ़ाया था।

"देखा भाभी, हमारा भाई कितनी अच्छी तरह पढ़ाता है! मैं जरूर अपनी परीक्षा में पास हो जाऊंगी, मेरी और तुम्हारी परीक्षाएँ एक ही समय में हैं।"

"सूरी, अब पाठ खूब समझ में आया है।"

उस दिन शारदा का मन सन्तोष से भर गया। वह व्याकुल हो गई। यह पता नहीं लगाना चाहिए कि नारायणराव अपनी पत्नी से प्रेम कर रहा है। सब मामूली तौर पर चलता रहना चाहिए, वह कैसे कहे कि उसका जीवन, हृदय-सर्वस्व उस बालिका के लिए ही था। कहने की जरूरत भी न थी।

इस प्रेम-निर्झरी को देखकर वह बालिका भयभीत हो गई है क्या? उसमें क्या है, जो उसे वह इस तरह आकर्षित कर रहा है? सौन्दर्य हो सकता है। श्यामसुन्दरी का सौन्दर्य शारदा के सौन्दर्य से कम नहीं है। शारदा से अच्छा हृदय है, गम्भीर मन है। अच्छी पढ़ी-लिखी है। मगर वह किसी से प्रेम करना चाहे तो बिना डूबे कौन रह सकता है, परन्तु वह उसमें इस प्रकार का प्रेम नहीं पैदा कर सकी। इस शारदा में क्या है?

शारदा जब से मद्रास आई थी श्यामसुन्दरी का कुतूहल अधिक हो गया था। "उन दोनों से मेरा क्या सम्बन्ध है? शारदा पत्नी क्यों है?

किसी सौभाग्य से वह पली हुई थी, और वह भिन्न ही रह गई थी।

श्यामसुन्दरी कालेज से आकर, एक आराम-कुर्सी पर बैठी थी, उसकी परीक्षाएँ पास आ रही थीं, रात-दिन खाना-पीना छोड़कर वह पढ़ने में लगी थी। पढ़ती-पढ़ती सो जाती, और सोती-सोती वह हमेशा नारायणराव को देखती।

नारायणराव से इतनी मैत्री कैसे हो गई थी, यह वह समझ न पाती थी। कहीं वह नारायणराव से प्रेम तो नहीं कर रही है। कर रही हो तब भी क्या? उस महापुरुष से—पूर्ण व्यक्ति से प्रेम करने से अधिक इस संसार में है ही क्या? वह पराधीन है, उसकी अन्तरात्मा से प्रेम करके आनन्दित होने का मौका ही नहीं है। वह यही सोचती रहती।

श्यामसुन्दरी बचपन से ही गम्भीर हृदय की थी। भक्त-सी थी। मानव-सेवा करने के लिए वह कालेज में पढ़ती हुई थी, वह भी सरोजिनी देवी, कस्तूरी बाई की तरह अपना जीवन देश के लिए अर्पित कर देना चाहती थी। जब कभी समय मिलता तो स्वयं चरखे पर कातती, और बहनों से भी कतवाती।

वह आँखें बन्द करके हृदय पर दायाँ हाथ रखकर, सोचती-सोचती आराम-कुर्सी पर बैठी रही।

शारदा के लिए पति ही गुरु बन गया। उनके पढ़ाने के तरीके को याद करके पुलकित-सी हो आँखें मींचकर वह अपने शयन-कक्ष में लेट गई। मधुर-मधुर तरंगें मन को जाने किस स्वप्न-लोक में लिये जा रही थीं।

२ : बावली

रुक्मिणी का प्रसव-समय आया। जब नारायणराव और परमेश्वर-मूर्ति को पता चला कि महीने पूरे हो गए हैं, तो उन्होंने राजाराव को बुल-

वाया। राजाराव ने एक परिचित, कुशल यूरेशियन नर्स को नियुक्त किया। सब-कुछ ठीक करके श्यामसुन्दरी से आवश्यक मदद देने के लिए कहकर वह चला गया।

रुक्मिणी ने एक लड़की को जन्म दिया। परमेश्वर मूर्ति का मन आनन्द से प्रफुल्लित हो गया। कम-से-कम यह लड़की जीवित रही तो उसका जीवन धन्य हो उठेगा। जितना वह बच्चों को चाहता था उतना ही भगवान् उसे बच्चे न देकर सताता आया था :

मेरी रक्षा करने क्या तुम पैदल आये हो।
मेरी माँ, उषा शिशु !
कनकनयना ! हिमगिरि तनया, जननी !
नील शरीर की ज्योति सम्पूर्ण विश्व-
में प्रकाशित हो रही है।

उसने गाया। लड़की बड़ी मोटी-ताजी थी।

"परमेश्वर, तेरी लड़की मलय मारुत राग का आलाप कर रही है। लगता है अच्छी गायिका बनेगी, ठीक तेरे-जैसी है, जन्म-समय अच्छा है। कोई खराबी नहीं है।" नारायणराव ने कहा।

शारदा लड़की को देखकर खुश हुई, "रुक्मिणी जी, भगवान् ने आपकी लड़की को क्या गाल दिये हैं?"

"मेरी भानजी के गाल भटूरे-से हैं," सूरी ने कहा।

"अरे भाई, इसका क्या नाम रखोगी, बड़ी शरारती लगती है," नारायणराव को देखकर उसकी बड़ी मौसी की लड़की वरारम्भा ने कहा।

"वीर तल्लो—आवलो माँ, नाम रखिये," रुक्मिणी ने अँगड़ाई लेते हुए कहा।

दस दिन बाद रुक्मिणी को नहलाया गया। लड़की दिन-प्रतिदिन बढ़ती जाती थी। रोहिणी, उसके लिए छोटी-छोटी जाकेट सिलवाकर लाई। चाँदी की चम्मच और लोटा भेंट में दे गई थी।

जब कभी रोहिणी आती, रुक्मिणी के दिल में गड़बड़ी-सी पैदा हो जाती। उसके मन में यह सन्देह प्रतिध्वनित होता-सा लगता कि कहीं पति उससे प्रेम तो नहीं कर रहा है। रोहिणी देवी उससे अधिक सुन्दरी थी। कानों-

कान उसे भी पता लग गया था कि वह और उसका पति आपस में बातचीत किया करते हैं। उसने यह भी सुन रखा था कि श्यामसुन्दरी और नारायन-राव भी मित्र हैं। परन्तु उसने उनके बारे में तनिक भी सन्देह नहीं किया था। वह जानती थी कि पति उसके लिए अपना जीवन भी न्योछावर कर देगा। उसका हृदय प्रेम-पूरित था, और किसी पर भी वह दया किया करता था।

उसे मालूम था कि वह इतनी सुन्दर न थी कि पति का सारा प्रेम अपने ऊपर समो ले। वह यह भी जानती थी कि उसका पति एक-दो बार भटक चुका है। पर उसने किसी से कुछ न कहा। अन्दर-ही-अन्दर वो दुःखी जलती रही। परमेश्वर ने यह देखा। अग्निदेवता के सम्मुख किये गए प्रमाण के विरुद्ध कार्य करके वह पछताया भी था। उसको सब-कुछ अन्धकारमय लगा था। इसीलिए उसने पत्नी के चरण पकड़कर आँसू बहाये थे।

फिर भी वह दो हफ्ते कष्ट झेलती रही। परमेश्वर मूर्ति का परिताप उसके भोजन, निद्रा आदि में पत्नी को प्रत्यक्ष दीखने लगा। आखिर पति-प्रेम के कारण उसका दुःख जाता रहा। तब एक दिन पति के पास जाकर पत्नी ने कहा, "प्रतिज्ञा कीजिये कि फिर कभी ऐसा काम न करेंगे।" पर-मेश्वर ने भगवान् को प्रमाण करके प्रतिज्ञा की।

"रुक्कू, सच है कि मेरे हृदय में विकार आ गया था। परन्तु मैं कम-जोर हूँ। कुछ भी हो, इस प्रकार की गलती मैंने दो बार ही की है। मैं यह नहीं कहता कि मुझे माफ कर दो। तू अच्छे स्वभाव की है। उस विधि को ही दोष देना चाहिए, जिसने हमें तुम्हें पति-पत्नी बनाया है, क्या करूँ? मुझ-जैसे तुच्छ व्यक्ति पैदा होकर आस-पास की स्वच्छता को भी गन्दा कर देते हैं, तेरे शुभ्र जीवन में मैं काला धब्बा हूँ।" उसकी आँखें आँसुओं से भर आईं।

रुक्मिणी पति का दुःख न सह सकी। बाढ़ आई हुई नदी की तरह उसकी करुणा प्रवाहित होने लगी। पति को उठाकर उसने गले से लगा लिया। तब से वे दो बच्चों की तरह प्रेम से रहते आए थे।

यह सब बातें रुक्मिणी की आँखों के सामने सिनेमा की कथा की तरह चक्कर काट गईं। वह सँभलती, निश्वास छोड़कर रोहिणी, सरला, नलिनी

द्वारा लड़कों के बारे में पूछे गए प्रश्नों का मुस्कराते-मुस्कराते उसने जवाब दिया। सूर्यकान्ता उस लड़के को हमेशा गोदी में लिये रहती। 'भाभी, इसे मेरे पैरों पर लिटा न, लड़का मैं पोसूँगी देखो यह हँस रही है।' कहकर वह आनन्दमग्न हो जाती।

रुक्मिणी—"जाने क्या भाग्य पायगा भाभी यह सोच रही है, यह जानकर वह हँस पड़ी।'

पूरी—"हमारी बहू बड़ी चलती-पुरजी है और माँ-जैसी है।'

रुक्मिणी—"तोड़ दिया बाण !

सब हँसे। शारदा यह सुनकर रुक गई। उसका हृदय थम-सा गया। पूरी को अपने पति पर कितना प्रेम है। हमेशा पति की प्रतीक्षा किया करती है। उनके सदा चिट्ठियाँ लिखती रहती है। पूरी ने भी कमरे में पति के फोटो और उनकी चिट्ठियों को चन्दन की पिटारी में सुरक्षित रख रखा था। शारदा उसको, उनको बार-बार निकालकर पढ़ते देखा करती थी।

उसने अपने ही घर में परमेश्वर मूर्ति और उसकी पत्नी को सुखी-सुखी जिन्दगी बिताते देखा। वह शारदा, जो पहले सोचा करती थी कि जमींदार पति-पत्नियों में ही प्रेम होता है, उनको देखकर जान गई थी दूसरे परिवारों में भी प्रेम होता है, जमींदारों में होता ही नहीं है।

शारदा के मद्रास आने के एक दिन बाद आनन्द राव और उनकी पत्नी प्रमिला देवी, उसका हाल-चाल जानने शहर में आये। शारदा की आव-भगत हुई। प्रमिला देवी ने उसका आलिंगन करके आँसू बहाये। शारदा को गम्भीर बनाकर कहा, "बेटी, पिता जी ने जो गलती की है, उसे तुम्हें भुगतना ही होगा।"

शारदा के मन में झट 'क्या भुगत रही हूँ ?' प्रश्न उठा। उसने मुस्कराते हुए कहा, "क्या भुगतना ?"

नारायणराव का विवाह हुए दो वर्ष हो गए थे पर वह एक बार भी आनन्दराव के घर भोजन करने नहीं गया था। तेलुगु वकीलों में जो सबसे अधिक कमाते थे, आनन्दराव उनमें प्रधान थे। परन्तु उन्होंने नारायणराव को न कचहरी में बुलाया था, न घर ही। नारायण राव जान गया कि वे घमंडी हैं। जब कभी ससुर विशाखा आते तो आनन्दराव भी उनके साथ

नारायणराव से मिलते। वे अपने मामा को भोजन के लिए निमन्त्रित करते और नारायणराव को बुलाते तक न थे।

जमींदार यही सोचा करते कि आनन्दराव उनके दामाद को बुलाया करते हैं। नारायणराव और आनन्दराव की आपसी बातें जमींदार तक नहीं पहुँची थीं।

नारायण राव जब मद्रास आया तब भी आनन्दराव उसे देखने न आये। हाईकोर्ट में जब वह और वकीलों से मिलता, उनसे न मिलता। तमिल, कन्नड, मलयालम वकील भी यह जानकर कि वह लक्ष्मी सुन्दरप्रसाद का दामाद है, बी० एल० में अव्वल नम्बर पर पास हुआ है, धनी है, समझदार है, 'भारती' आदि पत्र-पत्रिकाओं में लिखता है, गाना जानता है, चित्र भी बनाता है, उससे मैत्री करना चाहते। न्यायवादी सभा में अगर वह होता तो जब कभी कोई सन्देह होता उससे पूछकर वे सन्देह का निवारण करते। उसकी बुद्धि का सिक्का वकीलों में चलने लगा।

यह सब आनन्दराव देख रहे थे। उनके आश्चर्य की सीमा न थी, चाहे कोई बड़ा वकील हो, और अगर वह किला बनाकर रहे तो कौन उसके पास आयगा, इसलिए नारायणराव की ओर वकीलों में आदर पाता देखकर उन्हें आश्चर्य होता।

आनन्दराव को आज अनुभव हुआ कि नारायणराव के घर जाना है। मामा की लड़की को उसके पति के घर देखना है।

३ : प्रकृति-पुरुष

१९२६ में रामचन्द्र राव, हार्वर्ड-विश्वविद्यालय में डी० एस-सी० की श्रेणी में प्रविष्ट हुआ। बी० एस-सी० का कोर्स तीन वर्ष का था। वह परीक्षा में दूसरे नम्बर पर उत्तीर्ण हुआ था। आनर्स में पास होने के

छः महीने बाद विश्वविद्यालय एम० एस-सी० की डिग्री दिया करता था। उनके लिए एक परीक्षा होती थी। उसमें निबन्ध लिखवाये जाते थे। रामचन्द्र राव ने १६२५ से वह निबन्ध ध्यानपूर्वक लिखना प्रारम्भ किया था।

इस बीच, उन तीनों सालों में वह हार्वर्ड और 'मसोचेट्स' में राष्ट्र द्वारा परिचालित विद्युच्छक्ति के विद्यालयों में भी पढ़ता रहा। इस तरह के विद्यालय अमरीका में कई थे। विद्युत्-शक्ति के क्षेत्र में उस विद्यालय को परीक्षा का बहुत मान होता था। जियोनेरिया भी वहीं पढ़ा करती थी। उस विद्यालय की स्थापना एडिसन ने की थी।

रामचन्द्र राव की बुद्धिमत्ता को देखकर उस विद्यालय वालों ने उसको हर सुविधा दी थी। उस विद्या में पारंगत होने के लिए पाँच वर्ष पढ़ना आवश्यक था। जिन्होंने बी० ए० में गणित लिया होता था या जो रसायन-शास्त्र के विद्यार्थी थे उनको तीसरे वर्ष में भरती कर लिया जाता था। जो परीक्षा में उत्तीर्ण होते थे उनको बी० ए० ई० की डिग्री दी जाती थी। रामचन्द्र राव दो वर्ष की परीक्षाओं में प्रथम उत्तीर्ण हुआ था।

जियोनारा के लिए यह प्रथम वर्ष की परीक्षा थी।

परदेश में जब कोई अपने देश के व्यक्ति से मिलता है तो एक प्रकार की आत्मीयता पैदा हो जाती है। भले ही कोई आन्ध्र बंगाली से मिले, दोनों आपस में उनसे भी अधिक चाहने लगते हैं जो एक साथ बड़े होते हैं। जर्मनी या आस्ट्रेलिया में या और कहीं दो भारतीय जब मिलते हैं तो सहसा मित्र हो जाते हैं।

रामचन्द्र राव की तरह कई अन्य भारतीय हार्वर्ड, बर्कले, न्यूयार्क, केलिफोर्निया विश्वविद्यालय में पढ़ रहे थे। गुजराती व्यापारी भी वहाँ थे। कई लोग राजनैतिक कार्यों पर भी वहाँ आये हुए थे। इनमें से जब कोई एक-दूसरे से मिलता तो उनके मिलने में एक आत्मीयता देखी जाती।

रामचन्द्र राव का ऐसे कई विद्यार्थियों से परिचय था, जो राजनैतिक कार्य पर आये हुए थे। वे अमरीका और भारत में गाढ़ मैत्री स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील थे। उनमें कई का क्या उद्देश्य था, कोई न जानता था। उनमें शहीदसिंह और प्राणलाल बोस नाम के दो विद्यार्थी थे।

वे दोनों अध्ययन पूरा करके, कुछ दिन वहाँ ठहरकर फरवरी में भारत

आये। उनके भारत आते ही, उन पर भारत-सरकार ने कई अभियोग लगाये। उनको तीन साल की सजा भी दी गई।

मार्च के प्रथम सप्ताह में रामचन्द्र राव की लिखी हुई चिट्ठी, नारायण-राव को मिली—

हार्वर्ड-विश्वविद्यालय,
. फरवरी १६२६

तेरा लिखा पत्र मिला, तेरा कितना निर्मल हृदय है। इन तीन वर्षों में तूने ही मुझे ढाढस बँधाया था। हर सप्ताह तेरे पत्र की प्रतीक्षा करना मेरे लिए एक भोजन की तरह हो गया था। मैं ही तुझे देरी से जवाब भेजा करता। जब कभी पैसे की जरूरत होती तभी तू भेजता। अगर करोड़पतियों के देश अमरीका में मैं अमरीकन की तरह रह पाया तो इसका तू ही कारण है। एम० एस-सी० की डिग्री जरूर मिलेगी। डी० ई० ई० की भी। तब भी बहुत-कुछ सीखना बाकी है। मेरा विश्वास है कि ये डिग्रियाँ किसी भी विश्वविद्यालय में मुझे नौकरी दिलवा सकती हैं। आन्ध्र विश्वविद्यालय की तो अभी स्थापना हुई है। मेरा विश्वास है कि उसमें आचार्य का पद प्राप्त कर सकूँगा। मेरे विश्वास का तुम विरोध न करो। मैं यह पद इसलिए थोड़े ही चाहता हूँ कि मुझे रुपये कमाने हैं, या मेरे पास खाने को नहीं है। किसी एक विश्वविद्यालय में भरती होकर मैं विद्युच्छक्ति के बारे में और भी अनुसन्धान करना चाहता हूँ। किसी विश्वविद्यालय में जगह न मिले तो मैं चाहता हूँ कि तुम कोशिश करके, बैंगलौर-विज्ञान-परिशोधनशाला में कम-से-कम जगह दिलवा दो।

यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि सूरी को पढ़ा-लिखाकर तुम प्रवेश-परीक्षा में भेज रहे हो। यदि परीक्षा में वह पास हो गई तो कहना कि अमरीका से एक अच्छा उपहार लाऊँगा। मैं उसको पत्र लिख रहा हूँ। मैंने अभी शारदा नहीं देखी है। यह जानकर बड़ा सन्तोष हुआ कि वे दोनों साथ पढ़ रही हैं। जब मैंने यह पढ़ा कि सूरी भारतीय सगीत और पाश्चात्य संगीत सीख रही है तो मेरी खुशी का ठिकाना न रहा।

मैं जुलाई में इग्लैंड होता हुआ भारत के लिए रवाना होऊँगा। बम्बई से कोलम्बो जाकर वहाँ से रेलगाड़ी में घर पहुँचूँगा। घर पहुँचते-पहुँचते

शायद दो महीने लग जायेंगे । इस बीच इंगलैंड, फ्रांस, जर्मनी, ग्रास्ट्रिया, स्विटजरलैंड और इटली भी देख लूंगा । अगर किसी चीज की जरूरत हो तो तार देना ।

तुम्हारा प्रिय,
रामचन्द्र राव ।

विद्युच्छक्ति-विद्यालय की परीक्षाएँ खत्म हो गईं । रामचन्द्र राव सफल हुआ । विद्यालय से डिग्री भारत के पते पर भेजने के लिए कहकर वह फिर अमरीका के दर्शनीय स्थल देखने निकल गया । वह 'नियाग्रा प्रपात' देखने भी गया।

रामचन्द्र को अमरीका छोड़कर जाना देखकर लियोनारा दुखी होने लगी । इतने दिन वह रामचन्द्र से दूर नहीं रही थी । उसे वह लड़की अपनी कार में 'नियाग्रा' ले गई ।

रास्ते में एक निर्जन प्रदेश में प्राकृतिक सौन्दर्य देखने के लिए उन्होंने कार रोकी ।

"रामचन्द्र, हम फिर कब मिलेंगे ? तुम फिर अमरीका आओगे, या मैं भारत जाऊँगी, नहीं तो मैं तुम्हें भूल ही बैठूंगी ।"

"यह क्या नारा, क्यों इतनी दुखी हो ! तुम-जैसी धैर्यशालिनी स्त्रियाँ हमारे देश में प्रायः देखने में नहीं आतीं । उनके बारे में सिर्फ कहानियों में सुनते हैं ।"

"तुम मेरे जीवन-नाटक में एक पात्र क्यों बने ?"

"यह एक ही अच्छी बात है न ? यह मेरा सौभाग्य है ।"

"तुम यहाँ तीन साल रहे और इन तीन सालों में मेरे व्यक्तित्व के विकास के लिए तुमने जो-कुछ किया वह आनन्ददायक है ।"

"ली, तुम यों क्यों काँप रही हो ?"

"राम, मेरे मित्र, तेरे इस कथन ने कि महात्मा जी के नेतृत्व में भारत संसार को एक नया सन्देश दे सकेगा, मुझमें एक नवीनता ला दी है । जितना सोचती हूँ उतना ही पाती हूँ कि संसार का कल्याण इसीमें है कि भारत और अमरीका और भी अधिक समीप आयें । भारत देश पुरुष है, और हमारा देश स्त्री है । इन दोनों का सम्पूर्ण सम्मिलन होना चाहिए, तभी संसार

में चेतना आयगी।"

"मेरी प्राण-प्यारी लियोन, तुम आज मुझे भगवान् के पास से आई हुई अप्सरा-सी लगती हो। तेरे मुँह पर एक दिव्य तेज है, तेरे सिर के पीछे प्रकाश की परिधि-सी दीखती है।"

लियोनारा हँसती-हँसती रामचन्द्र की गोद में आ बैठी। उसकी आँखों में उसे पारलौकिक हास्य दिखाई देता था। उसने रामचन्द्र राव को गले लगा लिया। उन रोमाञ्च हुआ।

"हम क्रिश्चियनों में कई ऐसे हैं, जो उनके उपदेशों को समझ नहीं पाए हैं। जैसे 'होम्स' ने कहा है महात्मा सचमुच, ईसा के अवतार हैं। जो 'भगवद्गीता' का सन्देश है, वही पहाड़ पर दिया गया ईसा का उपदेश है।"

"मेरी लियो, मैंने अभी तक अपने देश के ग्रन्थ-रत्नों को नहीं पढ़ा है। जिस दिन मैं पहली बार जहाज पर तुमसे मिला था तभी से मेरे मन में आया था कि भारत और अमरीका एक होकर, संसार का पथ-प्रदर्शन कर सकते हैं, इतने सालों से इंग्लैंड, भारत का शासन करता आया है, पर अभी तक वह भारत का सन्देश ग्रहण नहीं कर पाया है। अंग्रेजों का शासन हमारे लिए लाभप्रद ही रहा—भगवान् ने उनके आक्रमण द्वारा हम सबको एक कर दिया है।"

"मेरे प्रियतम रामचन्द्र, सर्व-दोष-रहित, जीवन-यापन करना ही सत्य है। इस सत्य का पालन करने से भगवान् से साक्षात्कार नहीं होगा। इस सत्य व्रत के पालन के लिए प्रेम मुख्य साधन है। मुझसे तुमने राधाकृष्णन् के ग्रन्थ, विवेकानन्द के व्याख्यान, गान्धी जी का जीवन चरित पढ़वाये। मुझे यह लगा कि मानव-सेवा परम पवित्र है मोक्षदायक है।"

उसका गला रुँध गया। उसकी आँखों में तरी आ गई। उसके मुँह पर मानो प्रेम चमकने लगा। तब अमरीका के प्रसिद्ध वैद्य की उस लड़की ने रामचन्द्र के हृदय से हृदय लगाकर कहा—

"तू मेरा गुरु है, मैं अब तक ब्रह्मचारिणी रहकर ही मानव-सेवा करना चाहती थी। यह प्रेम, जो मुझे जला रहा है, मुझे छोड़ना होगा। प्रियतम एक बार मुझे देखो! आदि और अन्त का मुझे आनन्द हो, मुझे एक बार अपनी पत्नी बना लो, मुझे अब अपने में एक हो जाने दो!" उसकी अस्पष्ट

बातें सन्ध्या के वातावरण में मिल गई।

रामचन्द्र निश्चल-सा हो गया। उसका चेहरा चमचमाने लगा। लियोनारा पर डाले हुए हाथ उसने ढीले कर दिए।

"प्रभु, क्या तुम मेरी इच्छा पूरी न करोगे?"

उसका चेहरा, मानो दुःख के कारण जल रहा था। उसकी आँखों से आँसू झरने लगे।

"असन्तुष्ट वाञ्छा के कारण क्या मेरे हृदय को दहकते ही रहना पड़ेगा? क्या तुम मुझे सेवा की अनुमति नहीं दोगे? प्रियतम, क्या तुम मेरे इस सुन्दर जीवन को विषादान्त कर दोगे? तुम मेरे जीवन में एक भाग हो गए हो!"

रामचन्द्र का दिल पिघल गया। क्या इसे इतना प्रेम है? क्या यह पाप नहीं कर रहा है?

लियोनारा ने और भी जोर से उसका आलिंगन किया। मुँह उठाकर हृदय से हृदय मिलाकर उसने उसका मुँह चूम लिया।

दोनों पुलकित हो गए।

उस सन्ध्या की अरुणिमा में, पक्षियों की चहचहाहट में, जब तारे निकल रहे थे, उस जगह जहाँ प्रकृति सुन्दर नृत्य करती-सी लगती थी, एक विचित्र प्रेम की घटना घटी।

४ : स्नेह की पवित्रता

जमींदार आकर शारदा को परीक्षा के लिए राजमहेन्द्रवर ले गए।

शारदा ने, जब तक वह मद्रास में रही, सिवाय पढ़ने के समय के पति से कभी बात न की थी। नारायणराव ने भी शारदा से बात न की। वह उसको उसी तरह पढ़ाया करता, जिस तरह अध्यापक विद्यार्थियों को

पढ़ाते हैं ।

शारदा और उसने यदि प्रेम की नाव को उस आनन्द-प्रवाह में छोड़ दिया होता तो न मालूम किस अनन्त तीर पर वे लगे होते ।

शारदा ने यह देख लिया था कि नारायण को सब प्रेम और आदर की दृष्टि से देखते थे । उसने यह भी देखा कि नारायणराव खूबसूरत था और बड़ी पढ़ी-लिखी युवतियाँ उसके चारों ओर मँडराया करती थीं । वह कभी-कभी आश्चर्य करती कि उसने उस पुरुष-प्रवर से प्रेम क्यों नहीं किया । प्रतिदिन नये-नये पाठों की प्रतीक्षा करती । उसके कंठ के मधुर स्वर में वह बह-सी जाती ।

जब कभी मौका मिलता नारायणराव सूर्यकान्त और शारदा को संसार-सम्बन्धी विषयों पर भी अच्छे ढंग से जानकारी देता ।

फरवरी के अन्त तक उनको सब पाठ आ गए । उसने उन्हें यह भी बताया कि परीक्षाओं में प्रश्नों का उत्तर कैसे देना चाहिए, उसने उनसे सैकड़ों उत्तर लिखवाए ।

एक दिन वह शारदा को पाठ पढ़ा रहा था । सूर्यकान्त अपना पाठ याद करने के लिए एक और कमरे में चली गई । नारायणराव ने अपनी सुन्दर आवाज़ में अंग्रेज़ी में यों कहा, "शेक्सपीयर ने बड़े-बड़े नाटक रचे हैं । जो उत्तम दशा में नहीं हैं, उनको वे सांसारिक गुण विषाद में डाल देते हैं । इस उत्कृष्ट विषय पर उसने लिखा है, गुण दो प्रकार के हैं—उत्तम और नीच । नीच गुणों वाला नष्ट हो जाता है । उस सर्व साधारण बात का वह हमें परिचय कराता है । परिश्रम-हीन अच्छाई हमारा भला नहीं करती, यह उसने महाविषादान्त नाटक 'हैमलेट' में निरूपित किया है । हैमलेट सज्जन है, किंतु यह अच्छी तरह जाने कि उसके चाचा ने उसके पिता को मारा है, वह कैसे उसको दण्ड दे । उसको यह सन्देह हुआ, और उस सन्देह ने ही उसको निठल्ला कर दिया । आथेलो सबका विश्वास करता था । वही विश्वास जब पत्नी के प्रति अविश्वास हो गया तब कनासियों पर ईर्ष्या और पत्नी पर गुस्सा आ गया । आखिर उसे और उसकी पत्नी को मरना पड़ा । चाहे कोई सद्गुणी हो, अगर उसे अहंकार हो जाय तो उसका नाश हो जाता है । इतने प्रसिद्ध नाटककार के नाटक भी पूर्ण न थे । महान्

रही हो। श्यामसुन्दरी मुस्कराकर, उठकर हाथ फैलाकर उसके पास आकर उस पर झुकी। उसके श्वास निश्वास में सुगन्धियाँ सी आ गईं। उसका मन मग्न हो गया। मानो वह मूर्च्छित-सा हुआ। उसने सोचा कि उसके ओठ उसके ओठों पर लगे हुए थे। इतने में उसे ऐसा लगा, जैसे वह उसका सब से लगा रहा हो।

इसी आवेश में वह शयन-कक्ष में चला गया।

उसे ऐसा अनुभव हुआ जैसे वह कोई विक्षिप्त हो, जिसके पंख कट गए हों। निढाल होकर वह पलंग पर लेट गया। उसकी आँखें लाल हो गईं। वह खोया-खोया हो गया।

यह क्या? क्या कल्पना में भी इस नारी का अनुचित चिन्तन किया जा सकता है? यह पाप है, निन्दनीय है।

सामने जब पत्नी बैठी थी तो मेरा मन दूसरी स्त्री पर क्यों गया? क्या मुझे अपनी पत्नी से प्रेम नहीं करना चाहिए? क्या मेरी इन्द्रिय-शक्ति ने ही मुझे इतना चंचल बना दिया है?

उसका श्यामसुन्दरी समझने का कारण मेरे मन का कम्पन ही है।

श्यामसुन्दरी का चारित्र्य अच्छा था। इसलिए ही उसने उससे स्नेह किया था। व्यक्ति के लिए क्या स्नेह पाप है? निन्दनीय है? पुरुष को स्त्री से कैसे स्नेह नहीं करना चाहिए। जब पुरुष पुरुष का स्नेह पवित्र है तब पुरुष और स्त्री का स्नेह क्यों पवित्र नहीं होना चाहिए? पुरुषों का परस्पर स्नेह भी अगर धन आदि के लाभ के लिए हो तो वह दोष है। स्त्री-पुरुष का स्नेह इससे भी अधिक दोष होने के कारण है। स्नेह पवित्र समझा जाता है। बिना स्नेह के पुरुष मूर्ख है, [illegible] के समान है। जो स्त्रियों में अपने को भूल जाता है, वह मूढ़ है।

तो पुरुष और स्त्री में स्नेह क्यों नहीं होना चाहिए? चाहे कितना ही अच्छा हो और स्त्री भी निर्मल हृदय की हो तो भी कलंक लगा होता है। वे तिरछी नज़रों से देखे जाते हैं।

समान स्त्री-पुरुषों के लिए पवित्र स्नेह क्यों सम्भव नहीं है? क्या मेरा श्यामसुन्दरी के प्रति स्नेह पवित्र है? कहीं कोई ऐसी चीज़ गुप्त है, जो पवित्रता से दूर हो?

५ विचित्र मोह

पिछले छः महीनों में राजेश्वर और पुष्पशीला दीवानों की तरह फिरते रहे। राजमहेन्द्रवर से हैदराबाद, हैदराबाद से दिल्ली, दिल्ली से कलकत्ता, कलकत्ता से बम्बई। सेकेण्ड क्लास में ही सफर करते, और ऐसा डब्बा लेते जिसमें दो के लिए ही जगह हो। इसके लिए स्टेशन-मास्टर को दो रुपये और गार्ड को दो रुपये घूस देते।

वे अजन्ता भी देखने गये। सब जगह वे डाक-बँगले में रहते। वह चाहता कि हमेशा पुष्पशीला उसके सामने ही रहे। वे हमेशा प्रेम में मग्न रहते। पुष्पशीला के लिए ये छः महीने एक स्वप्न की तरह बीत गए। राजेश्वर राव उसको जी-जान से परवाह करता, महारानी की तरह देखता-भालता। जो-कुछ उसने चाहा, उसने दिया। छः महीने घूम-घाम-कर वे फिर हैदराबाद पहुँचे। वहाँ वह नौकरी के लिए कोशिश करने लगा।

राजेश्वर का एक दूर का सम्बन्धी वहाँ इन्जीनियर था। उन्होंने राजेश्वर को १५० रुपये मासिक वेतन पर 'निजाम सागर' में सहायक इन्जीनियर नियुक्त करवा दिया। उसका ग्रेड २५० रुपये तक जाता था। हर साल वेतन में दस रुपये की वृद्धि की व्यवस्था थी।

पुष्पशीला मांस आदि न खाती थी, इसलिए उसने भी मांस आदि खाना छोड़ दिया। खान-पान में वह भी पत्नी की तरह रहने लगा। वह सोचा करती कि वह भी, 'कापु' 'नायडु' लड़की हो गई है। वे दोनों इन्जीनियरों के लिए निश्चित घर में रहने लगे।

सुब्बय्या शास्त्री तो पागल-सा हो गया। स्वतन्त्र-प्रेम-पथ को उसने जी भरकर गाली दी। वह गुस्से में आग हो गया। संसार को निगल जाना चाहा उसने। राजेश्वर राव के घर जाकर उसने उसकी बूढ़ी माँ को गाली दी, उनके नौकर ने उसे घर से बाहर धकेल दिया। घर आकर पत्नी को

चीज़ें देखकर रोने लगा। मसार में किसका विश्वास किया जाय? छी, छी, पुरुष को शादी नहीं करनी चाहिए। दूसरों की स्त्रियों की उपेक्षा करना कितना बुरा है? और वह जो अब तक स्वयं करता आया था? वे सब नारकालिक थे। यह भी क्या जबरदस्त अन्याय है। इस चाण्डाल पर मुकदमा चलाकर इस पिशाच को सबक सिखाना अच्छा है।

पर यदि दावा किया गया तो उसकी हालत जो पहले ही खराब थी और भी खराब हो जाती। स्त्रियों के कारण दुनिया बिगड़ रही है न?

उसे लगता कि गली में चलने-फिरने वाले मानो उसका मखौल कर रहे हों? अगर दावा कर दिया तो वे सब अंगुली दिखा-दिखाकर और भी हँसेंगे। तब जीना और भी मुश्किल हो जायगा।

वह जानता था कि राजेश्वर राव जमींदार के दामाद नारायणराव का मित्र था। मद्रास जाकर उनकी मदद माँगना क्या अच्छा होगा?

जब उसको यह ख्याल आया उसी रात को वह मद्रास के लिए रवाना हो गया। सीधा वह नारायणराव के घर गया। वहाँ उसको न पा, होटल में सामान रखकर, नहा-धोकर, खा-पीकर वह फिर नारायणराव के घर गया। तभी नारायणराव घर आकर भोजन कर रहा था।

नारायणराव भोजन करके बाहर गया तो सुब्बय्या शास्त्री ने उठकर उसको नमस्कार किया। नारायणराव सुब्बय्या शास्त्री को जानता था। वह यह भी जानता था कि वह किसी कार्य से आया है।

"सुब्बय्या शास्त्री जी, नमस्कार, आइये, पधारिये!" उसने कहा।

सुब्बय्या शास्त्री की आँखों में तरी आ गई। नारायणराव भी हैरान था।

"शास्त्री जी, यह क्या, आप जिस काम पर आये हैं, वह साफ जाहिर है ही। सुना है वे फिर हैदराबाद वापिस आये हैं। वहाँ कोई नौकरी भी मिल गई है। अगर आप चाहें कि मैं जाकर कुछ कोशिश करूँ, तो मैं आज ही हैदराबाद जाने के लिए तैयार हूँ। मैं पहले भी जाने को सोच रहा था, पर वह कहीं इधर-उधर घूम-फिर रहा था। आप भी आकर हैदराबाद में रहिये, भगवान् हमारा प्रयत्न सफल करेंगे।"

"अच्छा, मैं तो बरबाद ही हो गया हूँ। जो मुसीबतें मैंने इन चार महीनों

में होती है वे मेरे दुश्मन भी न होते। इज्जत-आबरू के साथ जिया हूँ। अब लोग मेरी मजाक उड़ाते हैं। कई बार सोचा कि गोदावरी में डूब मरूँ, या जहर निगल जाऊँ।"

"है? ऐसी बात है?"

'प्रशंसा की आशा से अच्छा करना, निन्दा के कारण बुरा करना अच्छा नहीं है। क्या लोग ही हमारे शील को रक्षा करते हैं? हरिश्चन्द्र आदि नाटकों में इस प्रकार के भाव व्यक्त करके ये नाटककार क्या हानि कर रहे हैं? हम अच्छा करते हैं तो अच्छा करने के लिए ही करते हैं, न कि लोगों के लिए? भारत माता, हम तुम पर क्या कलंक लगा रहे हैं, हमारे अच्छे-बुरे कार्य समाज के निर्णय पर आधारित हैं न? अच्छा है इसलिए नहीं करते, बुरा है इसलिए करना नहीं छोड़ते, हरिश्चन्द्र अगर सत्य पर अटल रहा तो क्या इसलिए कि लोग उसकी प्रशंसा करें? क्या इसलिए ही उसने प्रण लिया था?' नारायणराव सोच रहा था।

उस दिन रात को बेजवाड़ा होते हुए वे हैदराबाद गये।

हैदराबाद में निजाम सागर गये। कुछ दूरी पर डाक-बंगले के पास सुब्बय्या शास्त्री रुक गए। नारायणराव राजेश्वर राव से मिलने चला गया।

राजेश्वर राव को नौकरी पर लगे १५ दिन ही गए थे। वह सबके साथ—अफसरों के साथ, साथ के कर्मचारियों के साथ, नौकर-चाकरों के साथ, अच्छा बर्ताव कर रहा था। उन पन्द्रह दिनों में ही सब उसका मान करने लगे थे। राजेश्वर राव का एक मुस्लिम सहकर्मचारी था। वह एक नवाब का लड़का था। नवाब की निजाम की सरकार में काफी प्रतिष्ठा थी। उस युवक ने हैदराबाद में ही इन्जीनियरिंग पढ़ी थी। अपने प्रभाव से ही उन्होंने उसे नौकरी दिलवाई थी।

उस युवक की राजेश्वर राव से गाढ़ी मैत्री हो गई।

स्वतन्त्र-प्रेम-पथ का राजेश्वर राव वस्तुतः सदस्य था। वह स्वार्थ के लिए उसका सदस्य न हुआ था। उसने किसी ऐसी स्त्री के साथ जोर-जबरदस्ती न की थी, जो उसे न चाहती हो।

अगर वह किसी युवती को चाहता और महीने-भर में भी वह उसकी ओर न झुकती, तो वह उसे छोड़ देता। उसे कोई भी तकलीफ न होती। अगर

उसकी ब्याही हुई स्त्री किसी और को चाहे तो उसकी इच्छा को पूरी करने का निश्चय उसने कर रखा था।

पुष्पशीला के साथ वह जब हैदराबाद आया था तभी उसने सुब्बय्या शास्त्री को यह पत्र लिखकर डाक में भेजा था—

"महोदय, हम एक विचित्र संघ के सदस्य हैं। उस संघ के नियमों के पालन करने की आपने शपथ ली है, संघ के उद्देश्य ये हैं—

१ क्योंकि युग-युग से स्त्री गुलाम रही है, इसलिए उसको वे सब अधिकार मिलने चाहिएँ जो पुरुषों ने स्वयं हस्तगत कर रखे हैं।

२ विवाह की परम्परा व्यक्तित्व का ह्रास करके मनुष्य को समाज का गुलाम बनाती है, इसलिए विवाह की संस्था, पुरुष द्वारा स्त्री को गुलाम बनाने के लिए ही चलाई गई है। इसलिए इस विवाह-परम्परा का नामो-निशान मिटाना होगा।

३ इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हमारे गुरु तिरुपति राव जी ने हमारी दिनचर्या के कुछ नियम निश्चित किये हैं—(अ)—जब-जब जो-जो दिखाई दे उसको हमारे संघ का सदस्य बनाना,—(आ)—विवाह के बाद पुरुष और स्त्री को परस्पर प्रेम-पूर्वक रहना चाहिए,—(ई)—विवाहित पुरुषों को अपनी स्त्रियों को इच्छानुसार रहने की अनुमति और सुविधा देनी चाहिए।

इन तीन मुख्य उद्देश्यों के बारे में आप सोचें, यह मेरी प्रार्थना है।

मैंने आपकी पत्नी पुष्पशीला से प्रेम किया है। उसने मुझसे प्रेम किया है। इसलिए इस प्रेम को सफल बनाने के लिए हम देश-पर्यटन कर रहे हैं। आप अपनी शपथ याद कीजिए, जिस दिन पुष्पशीला मुझे प्रेम करना छोड़ देगी, उस दिन वह आपके घर वापिस आ जायगी। पुष्पशीला भी इन्हीं उद्देश्यों का समर्थन करती है, इसलिए वह भी इस पत्र पर हस्ताक्षर कर रही है।

आपका मित्र—

राजेश्वर राव,

यह पत्र मेरी इच्छानुसार लिखा गया है। आपकी—पुष्पशीला।"

सुब्बय्या शास्त्री ने जब यह पत्र पाया तो वह अपना सिर पीटने लगा। उस पत्र की बात याद करके, सुब्बय्या शास्त्री निश्वास छोड़ रहा था कि

नारायणराव यह मालूम करके आ गया कि राजेश्वर राव घर में नहीं है, और काम पर गया हुआ है। नौकर-चाकरों से पूछता-ताछता वह वहां गया जहां राजेश्वर राव काम कर रहा था।

नारायणराव को देखकर राजेश्वर राव को अचरज हुआ। वह पसीना-पसीना हो गया। एक छलांग में वह नारायणराव के पास आया। उसको गले लगा लिया। "नारायण, अरे तू क्यों आया है ? क्या बात है ? क्यों आये ? कैसे आये ? था, आ, हमारे घर गये थे ? कौन था वहां ?"

"गया था, वहां एक बना-ठना मुस्लिम युवक था। वह और एक सुन्दर लड़की, शायद पुष्पशीला एक सोफे पर बैठे हुए थे। मुस्कराते हुए उसने आकर बताया कि तू यहां आया हुआ है। आ अरे नाई, पगले से यह जगह ठीक दो मील है।"

६ : रोग की दवा है आयु की नहीं

महृदया मूरम्मा बड़ी बीमार पड़ी। प्रसव के समय जो उसे रोग हुआ था, वह ठीक न हुआ। सूखकर वह काँटा हो गई। भोजन भी न रचता। हमेशा सिर-दर्द, और हल्का बुखार बना रहता।

यह जानकर कि पत्नी मायके में बीमार है, राजाराव उसकी चिकित्सा करने के लिए वहां गया। उसको टॉनिक वगैरा दी। कहीं ऐसा न हो कि उसे क्षय ही गया हो, उसने बड़ी नाराजगी से उसके शरीर की परीक्षा की। पर रोग बढ़ता गया।

यह सोचा गया कि कहीं उसे मलेरिया न हो, उसने पत्नी को कुनैन वगैरा दी। रोज बुखार १०० से १०३ तक जाता। उसको मंडे, द्राक्षा, बार्ली का पानी आदि दिया करता, ताकि उसमें कुछ ताकत आए। सम्बन्धी वगैरा आने लगे, पर बीमारी बढ़ती गई। राजाराव ने अपने दो मशहूर

डाक्टर मित्रों को तार देकर बुलाया। उन्होंने होशियारी से दवा दी। तीनों क्रिनाते पढ़-पढ़कर दवा देते। आखिर यह तय हुआ कि उसे टाइ-फाइड नहीं है। रक्त, मल, मूत्र आदि की भी जाँच की गई।

फेफड़ों में कुछ खराबी थी। उचित दवा दी गई। कुछ फायदा हुआ। पर हृदय बहुत धीरे-धीरे चलने लगा। कपड़े भिगोकर पेट पर रखे गए।

और जो बीमारियाँ बीच में पैदा हुई थीं, वे तो ठीक हो गईं, पर बुखार न गया।

राजाराव के बन्धुओं में एक आयुर्वेद का वैद्य भी था, उसने उसकी पत्नी का हाथ देखकर अचम्भे में राजाराव से पूछा, "क्यों बेटा, क्या करने जा रहे हो ?"

राजाराव ने कहा—"क्या कहूँ, आज और कल की बात है। बीमारी की दवा है, पर उम्र की नहीं है, मुझे अब पता लग रहा है!" कहते हुए उसने एक लम्बा निश्वास छोड़ा।

राजाराव, बच्चों व अन्य बन्धु-बान्धवों को छोड़कर सूरम्मा देवी दिवंगत हो गईं।

राजाराव को जब मालूम हुआ कि पत्नी के बचने की कोई उम्मीद नहीं है, तो उसने नारायणराव को तार दे दिया। नारायणराव अभी हैदराबाद से वापिस नहीं आया था। परमेश्वर ने तुरन्त हैदराबाद तार भेजा, और स्वयं भी अमलापुर गया। परमेश्वर के जाने के चार घंटे बाद सूरम्मा का शरीर ठंडा हो गया।

उसके माँ-बाप, भाई-बहन, और राजाराव के माँ-बाप आये। सारा घर सम्बन्धियों से भरा हुआ था। राजाराव स्तब्ध था।

कोत्तपेट से सुब्बाराव और जानकम्मा आये। श्री रामपूर्ति तो हमेशा वहीं रहता था।

मरने से पहले, पति को पास बुलाकर सूरम्मा ने कहा—"बच्चे रहने की जरूरत नहीं, फिर विवाह कर लीजिये" उसने आँखें मूँद लीं। फिर खोलीं। तब उसके मुँह पर पारलौकिक कान्ति चमकी। उसने मुस्कराते हुये बगल में 'भगवद्गीता' पढ़ते हुए ससुर जी को देखा। उनको नमस्कार

करके 'कृष्णा, कृष्ण' कहते-कहते उसने प्राण छोड़ दिए।

उसके माँ-बाप लाश पर गिरकर रोने लगे।

"माँ तू भी देवी है. हमेशा तू हमारी सेवा-सुश्रूषा करती। हम तुम्हारे सहारे मुक्ति पाना चाहते थे। तू तो हर किसी के मुख में जोभ की तरह थी।"

"हम-जैसे अभागों के लिए तुम-जैसी बहू कहाँ मिलेगी ?" राजाराव की माँ ने छाती पीटकर कहा।

राजाराव के दो लड़कियाँ थी। छः वर्ष की थी, एक लड़की। दूसरी अभी पैदा हुई थी। इन लड़कियों के बीच एक लड़का पैदा होकर मर गई थी।

राजाराव अपना दुःख निगल-सा गया।

इस बीच, दूसरे दिन नारायणराव आ पहुँचा।

राजाराव से वह आकर मिला। वहाँ नारायणराव, राजाराव, परमेश्वर-मूर्ति ही थे। राजाराव के डाक्टर मित्र जा चुके थे।

राजाराव की आँखों से आँसू झरते जाते थे। नारायण ने उसे ढाढस बँधाया।

"मेरे जीवन का उत्कृष्ट भाग समाप्त हो गया है नारायण !"

"क्या पागल हो ? यहाँ समाप्त हो गया है ? देह छोड़कर चली गई है, यही न ? क्योंकि वह उत्तम स्त्री थी, अगर पैदा भी होगी तो मुक्ति पाने के लिए ही।"

"बहुत समझाता हूँ, पर मन नहीं मानता है।"

"हूँ, दुःख भी हो। है तो हम मनुष्य ही ! इस मानव-जन्म में ही हम कितना सह-सुन पा रहे हैं। इसी जन्म से ही हमें पार लगना है, इतनी बीमारी हुई कैसे ? कहते हैं, डॉक्टर आजनेयुलु और डॉ नागराज भी आये थे। अरे ऐसी भी कोई बीमारी है जो तुम न जान सको। खैर, हमारा दुर्भाग्य है। नहीं तो यह अजीब रोग ही नहीं आता। यह क्या परम, आँसू पोंछ लो ! तू और राजाराव एकदम कमजोर दिल वाले हो ! तुम्हें रोता देखकर दूसरे भी गंगा में यमुना मिला रहे हैं।"

"रोओ मत, ऐसा लगता है जैसे कल ही देखा हो। तब तुमने उसे जिला दिया था, तब तूने धन्वन्तरि के समान कार्य किया। उस प्रकार की सीधी-

सादी, भोली-भाली स्त्रियाँ विरली ही होती हैं।

"नारायण, देख वह नौकरानी, जो दरवाजे के पास बैठी है उनमें दूसरी, वह एक दिन हमारी लड़की का खाने का बिल्ला चुराकर ले जा रही थी कि हमारे नौकर ने पकड़ लिया। तब मैंने उसे पुलिस को सौंपना चाहा, पर मेरी पत्नी ने कहा—

"क्या आप गान्धी जी के उपदेश भूल गए हैं? जाने दीजिये, उसे छोड़ दीजिये! उसे डाटिये-डपटिये, पर उसे पुलिस के पास न भेजिये!' उसने मुझे ही समझाया। मैंने एक लड़की की बीमारी ठीक की थी, उसका पति यहाँ पुलिसमैन है, चोरी की बात सुनकर वह हमारे घर भागा-भागा आया। उसने उस स्त्री के बारे में दावा करने के लिए मेरी अनुमति माँगी। पर मेरी पत्नी न मानी। उस दिन से वह नौकरानी जाने कैसे ईमानदार हो गई, कभी उसने चोरी नहीं की।"

"सूरम्मा के विषय में तुम क्या कहते हो? क्या मैं उसे नहीं जानता हूँ? वह मेरी बहन से अधिक मेरी माँ से अधिक मेरी परवाह करती थी।"

राजाराव अपने मन की बातों को मित्रों को सुनाने लगा—

"मैं दर्शन पढ़ता-पढ़ता अपने को भूल जाता, डाक्टरी में मग्न रहता। घर में क्या है, क्या नहीं है, इस बारे में मुझे फिक्र न थी। कितने ही रिश्तेदार आते। सूरम्मा महान् सुशीला थी, मेरे हृदय को जानती थी। पत्नी मुझे कितना ही चाहती थी, पर मैं एक दिन भी उससे दिल खोलकर बात न कर सका।

"मैंने उसका अपने बच्चों के लिए, माँ बनाने के लिए ही उपयोग किया। पर कभी दिल देकर उनसे बातचीत नहीं। और तो और, अड़ोस-पड़ोस की औरतों को वह हमेशा पति-भक्ति के बारे में कहती। भागवत उसे कण्ठस्थ था, उसका अन्तरार्थ मुझे नहीं मालूम। मैं यह भी न जानता था कि वह सुन्दर कंठ से गाया करती थी।" राजाराव ने मुँह नीचा करके कहा।

बातें करते-करते वे दर्शन के बारे में बातें करने लगे। प्राणी और परमात्मा का सम्बन्ध, अवतार, परमात्मा अवतार, प्राणी और परमात्मा, शास्त्र सधान, सांख्य दर्शन, योग, कर्म-मार्ग, ज्ञान-मार्ग, पुरुष, प्रकृति, गीता, गीता का संसार में महोत्कृष्ट ग्रन्थ होना, कृष्ण किस प्रकार सम्पूर्ण अवतार

है, आदि विषयों पर बातचीत हुई ।

वेद में दो पुरुष हैं, सांख्य में अनन्त, एक प्रकृति है, उपनिषदों में एक ब्रह्म-मात्र है, गीता में श्रीकृष्ण ने इनका समन्वय करके दिखाया है ।

तीन तरह के लोग हैं, वे जो नास्तिक हैं, वे जो अनेकेश्वरवादी हैं, और वे जो एकेश्वरवादी हैं, कृष्ण ने इन तीनों विचारों का समन्वय करके दिखाया । सांख्य द्वैतवाद से भी आगे बढ़ गया है। सांख्य विश्व का कारण किसे बताता है ? विश्व को दो चीजों—पुरुष और प्रकृति ने आवृत किया हुआ है—पुरुष साक्षी है, और प्रकृति शक्ति है ।

सांख्य के बाद योग पर चर्चा चली । गीता में पतंजलि का बताया हुआ योग नहीं है । गीता के कई वर्षों के बाद पतंजलि आया । योग के बारे में जो विचार परम्परागत रूप से प्रचलित थे, उनको पतंजलि ने सूत्र-बद्ध किया । गीता में बताया गया योग, सैंकड़ों वर्ष पूर्व के ऋषियों का योग था ।

उसके बाद उपनिषदों के बारे में बातचीत हुई । 'भगवद्गीता' में इन सबका कैसे समन्वय हुआ था, इस पर भी बात चली ।

सांख्यवादियों ने पुरुष, प्रकृति, त्रिगुण-जनित, २४ तत्त्व, इनसे शुरू करके, उपनिषदों में बताये गए क्षर और अक्षर ब्रह्म बतलाकर फिर इनका समन्वय करके पुरुषोत्तम परब्रह्म के बाद को सिद्धान्त माना । क्षर ब्रह्म प्रकृति है, अक्षर ब्रह्म साक्षी है । क्षर ब्रह्म अक्षर का ही स्वरूप है । अक्षर पुरुष, बिना प्रकृति में लय हुए प्रकृति स्वरूप अक्षर ब्रह्म का साक्षी है, अक्षर ब्रह्म के ऊपर परब्रह्म पुरुषोत्तम है । क्षर और अक्षर ब्रह्म और परब्रह्म के स्वरूप ही है । परब्रह्म ही अपनी प्रकृति के अनुसार जीवात्मा होता है । यह प्रकृति ही मूल प्रकृति है, उस मूल प्रकृति से ही साधारण प्रकृति पैदा होती है ।

७ : प्रेम का उद्देश्य

सूर्यकान्त ने परीक्षा में परचे अच्छे लिखे थे। नारायणराव का खयाल था कि वह जरूर सफल होगा। राजा राव के यहाँ से नारायणराव और परमेस्वर मद्रास चले आए। शारदा के परचे भी अच्छे गये थे, इसकी सूचना जमींदार ने अपने दामाद को दे दी थी।

रास्ते में नारायणराव ने परमेस्वर को राजेश्वर की सारी बात सुनाई।

"राजेश्वर राव से दिन-भर धर्म के बारे में बहस करता रहा, उसकी दृष्टि से देखा जाय तो उसने जो किया है वह ठीक ही जँचता है। वह कहता है 'मुझे तुम्हारी विवाह-पद्धति में विश्वास नहीं है। पुष्पशीला ने मुझसे प्रेम किया है, मैं उसे प्रेम करता हूँ। जब वह मुझे चाहना छोड़ देगी, तब वह जहाँ चाहे वहाँ जा सकती है। मुझे कोई आपत्ति नहीं। तेरा धर्म मुझे नहीं चाहिए। तेरा धर्म, तेरी अहिंसा, तेरा सत्य मार्ग, मुझे नहीं भाता। मैं जानता भी नहीं हूँ। तू जाकर पुष्पशीला को उपदेश दे। उसका मन शायद बदले! फिर ले जाकर उसको उसके पति के यहाँ छोड़ आना! पर मैं यह साफ-साफ कहूँगा कि पुष्पशीला मुझे प्यार करती है। मैं यह नहीं कहता कि वह हमेशा मुझे प्रेम करती रहेगी, प्रेम तुम्हारे ब्रह्म की तरह हमारे लिए नित्य नहीं है।' उसने मुझसे कहा। मैंने उस औरत से भी इस विषय में बातचीत की। सब-कुछ सुनने के बाद उसने हँसते हुए कहा, 'नारायणराव जी, शायद लोग आपके बारे में बहुत-कुछ कहते हैं, पर आज बूढ़ों की बातें क्या कह रहे हैं?' मैं यह सुनकर अचरज में पड़ गया।"

"तूने राजेश्वर से क्या कहा था?"

"क्या कहा? तुम्हारी वृत्ति में सर्व सृष्टि को परब्रह्म में लय कर देना ही महात्माओं की दृष्टि में उत्तम उद्देश्य है। इसलिए यदि सबको एक साथ मोक्ष मिले तो भी कोई आपत्ति नहीं है। हम जो काम करते हैं उनसे

बारे में हमें तो सोचना चाहिए—यानि निवृत्ति के लिए, या प्रवृत्ति के लिए—अर्थात् मोक्ष मार्ग पर चलते हुए आनन्द प्राप्त करना—तेरा काम किस श्रेणी में आता है ?"

"मैं अब आनन्द प्राप्त कर रहा हूँ न ?" उसने कहा।

"क्या तुम्हें इस प्रकार सोचना चाहिए ? हमें हर काम के बारे में सोचना चाहिए, चाहे हम कुछ भी करें, इसका परिणाम हम जिन्दगी-भर देखते हैं। कैसे उपकार होना है, कैसे अपकार, यह सब देखना होता है," मैंने कहा।

"अब तुम और ये औरत ही हैं, मान लो कि उसका पति मुकदमा चलाना है, तब तुम्हें दो-तीन साल जेल जाना होगा न ?"

"तू अपनी अहिंसा का पालन करते हुए जेल गया, फिर अगर मैं अपने उद्देश्य के लिए जेल जाऊँ, तो इसमें क्या गलती है ?"

"हम जो करते हैं वह पूर्णतः दोष-रहित होता है, यह मैं नहीं कहता। पर कम-से-कम हमारी कोशिश तो यही रहनी चाहिए कि वे दोष-रहित हों। इस तरह जो-कुछ भी तू करे, देखना चाहिए कि उससे कम-से-कम दूसरों का नुकसान न हो।"

"हाँ, पर समाज जिसे दोष कहता है, जब हम उसे हटाने की कोशिश करते हैं तब कई और उपकार हो जाते हैं। तेरे अहिंसा व्रत के कारण कितनों की ही हानि हो सकती है, क्या तुम इसलिए अहिंसा छोड़ दोगे ?" उसने मुझसे पूछा।

"जब इतनी दूर आये हो, तो मेरे प्रश्नों का जवाब दो, संसार में उत्कृष्ट उद्देश्य क्या है ?" उसने कहा "सन्तोष।"

सम्पूर्ण सन्तोष क्या किसी भी पुरुष-सम्बन्ध में अब प्राप्य है ? मेरे इस प्रश्न का उसने यों उत्तर दिया—"अभी तो नहीं, पर भविष्य में हमारी पद्धति के अवलम्बन से प्राप्य हो सकेगा।"

"लिण्डसे, या हेवलाक इलिमस के ग्रन्थ पढ़े हैं कि नहीं ?" मैंने पूछा।

"यह सब पढ़ने के बाद क्या तुम यह कह सकते हो कि यहाँ स्त्री-पुरुष को उससे अधिक आनन्द नहीं मिल रहा है ? अमरीका में चाहे कितनी भी खराबियाँ हों, पर लिण्डसे ने उन खराबियों को हटाने का जो

उपाय सुझाया है वह ठीक नहीं है।" उसने कहा।

रौनी आदि तेरी पद्धति का अवलम्बन कर हलाक होकर मर गए। प्रकृति-वास्तव, अनुसन्धान करते-करते परब्रह्म के मार्ग को दिखाते-दिखाते रह गए। जो उपकरण प्रकृति के सम्बन्ध का पता लगा सकते हैं वे परब्रह्म का पता नहीं लगा सकते। प्राकृतिक मार्ग से पारलौकिक मार्ग नहीं दीखता", मैंने कहा।

वह सिर नीचा करके सुनता गया। वह औरत भी पास थी, उसने कहा, "मैं इन्हीं दिनों स्त्री की तरह जिई हूँ। चाहे आप कुछ भी कहें कुछ फायदा नहीं।" "अच्छा, आप अच्छी तरह सोच लीजिए", कहकर मैं जाने के लिए तैयार हुआ। राजेश्वर को बताया कि उस औरत का पति भी आया हुआ है। उसने कहा "अच्छा, तो उससे भी कहना कि चाहे तो वह भी पत्नी का दिल बदल ले।" मुझे हँसी आ गई। इतने में तेरा भेजा हुआ भयंकर टेलीग्राम मिला।

मद्रास पहुँचते ही उनके घर में सूर्य, श्यामसुन्दरी और उनकी बहनें बैठी हुई थीं। उसने उनको बताया कि राजाराव की पत्नी गुजर गई है। उसने उसके गुणों का भी वर्णन किया। श्यामसुन्दरी सहमा विवर्ण-सी हो गई।

"भाई, अच्छे लोग अधिक नहीं जीते।"

"हाँ, कहने का मतलब यह कि दुनिया की खराबी, अच्छाई को भगा देती है। मामूली तौर पर यही नजर आता है, मगर खराबी बेहद नहीं हुई है तो अच्छाई की वजह से ही। अगर खराबी बढ़ती जाती तो अब तक प्रलय आ जाता। हमें प्रकृति ही यह सब सिखाती है। राक्षस शक्ति मिट्टी के तेल में है, अग्नि में है। विद्युच्छक्ति में है। मगर वे सब अपनी सीमा को पार कर गई तो नाश का कारण बन सकती हैं। इसी तरह अगर मनुष्य राक्षस-शक्ति को काबू में रखता है तो उसकी अच्छाई के कारण ही। इसलिए हम कैसे कह सकते हैं कि खराबी अच्छाई को खदेड़ देती है।"

"हाँ, ठीक है भाई।"

परम—"अरे नारायण, एक बात सोच! यह अच्छाई-बुराई एक ही प्रकृति से मिलती है न? दो बहनें-जैसी? क्यों एक हमारे लिए एक

मोक्ष का कारण है और दूसरी क्यों नहीं है ?"

नारा०—"क्या तुम नहीं जानते जो मुझसे पूछ रहे हो ? पुरुष प्रकृति की माया के कारण देहात्मा के भ्रम में पड़ता है, अहंकार के कारण अपने को अक्षर समझता है, और वास्तविक अक्षर पुरुषोत्तम को नहीं समझ पाता। वह पुरुष, वह प्रकृति परब्रह्म का ही तो स्वरूप है। इसीलिए प्राकृतिक गुणों से उद्भूत, अच्छाई-बुराई में से, पुरुष का अपने को ही अक्षर समझने का कारण बना।"

रुक्मिणी और उसकी छोटी बच्ची, ससुराल थे। परमेश्वर अपनी बच्ची को बहुत प्रेम करता था। उस पर उसने कितने ही गीत लिखे थे। रोहिणी ने उन्हें बार-बार सुनाने के लिए कहा।

"अरे, नारायण पुरुष के उद्देश्य से अनुरूप स्त्री और स्त्री के उद्देश्य से अनुरूप पुरुष होने चाहिएं। वे परस्पर एक-दूसरे को प्रोत्साहित करते रहते हैं। जैसी डण्टे के लिए बीट्रिस थी, या कीट्स के लिए फान्ना थी, नैपोलियन के लिए जोसेफाइन थी, अवतार-पुरुष के लिए राधा, पाण्डवों के लिए द्रौपदी, राम के लिए सीता, विवेकानन्द के लिए निवेदिता, कालिदास और उसकी पत्नी, लीला शरन के लिए चिन्तामणि-जैसे [illegible]।" एक दिन परमेश्वर ने कहा।

"जो तूने कहा है वह काफी ठीक है, पर यह क्यों कह रहा है ?"

"जब से मेरी और रोहिणी की मैत्री हुई है मैंने कितने ही गीत लिखे हैं, चित्र भी बनाए। मालूम नहीं, मुझमें इतनी शक्ति कहाँ से आ गई है ?"

"हाँ, मैं भी अचरज में था। इसलिए ही क्या रोहिणी और तुम हमेशा आपस में बातचीत करते रहते हो ?"

"मैं रोहिणी को चित्र बनाना सिखा रहा हूँ, मैंने उन्हें दिखाने के लिए कहा तो कहती है कि जब सारा चित्र स्वयं बनायेगी तभी मुझे दिखायेगी। यानी जिसमें मुझे काम न करना पड़े, वैसे चित्र। चार चित्र बनाये हैं; पहले तीन चित्रों पर रंग चलाना पड़ा। उसमें मेरा काम ही अधिक है, अब जो उसने बनाया है, उसमें उसका ही अधिक काम है। मैंने सिर्फ एक लकीर खींची है, बाकी सब उसने ही बनाया है। लगता है वह चित्र बनाने में हम सबसे आगे बढ़ जायगी।"

"अरे दुष्ट, तूने मुझसे यह बात इतने दिन छुपाये रखी ?"

"क्या मैंने तुमसे नहीं कहा था कि मैं उन्हें चित्र बनाना सिखा रहा हूँ।"

"अगर तू यह बताता कि वह इतनी अच्छी तरह चित्र बनाती है तो मैं भी देखकर सत्कार करता। चल, आज शाम को उनके घर देख आयें। श्यामसुन्दरी शायद चित्र नहीं बना पाती।"

"चित्र नहीं बनाती, पर श्यामसुन्दरी तेलुगु में कविता लिखने लगी है। यद्यपि वह तेलुगु पढ़ना-लिखना अधिक नहीं जानती, पर मालूम नहीं कहाँ से और कैसे उसमें कविता फूट पड़ी है। कितनी मीठी तेलुगु लिखती है वह। मैंने उसे गीतों का गुच्छ बना दिया है। सरहद भी काफी माँग ली है। तुझे गज आज या कल सुनाने की सोचती है।"

८ : अगाध

नारायणराव का आन्तरिक प्रेम शीघ्र समाप्त होता जाता था। कहते हैं विद्युच्छक्ति दो प्रकार की है, और वह परस्पर विपरीत हैं। दोनों के मिलने पर विद्युच्छक्ति बनती है। इसी प्रकार मनुष्य का प्रेम है। अगर प्रेम को प्रेम न मिले तो वह भस्म हो जाता है। कभी-कभी वह मनुष्य को झकझोर देता है।

वह सोच रहा था आगे कब शारदा में प्रेम जगेगा। अंग्रेजी कहानी की 'स्लीपिंग ब्यूटी'—(सोती सुन्दरी), चुम्बन से जाग गई थी। क्या वह चुम्बन उसके जीवन में नहीं है? क्या वह राजकुमार नहीं है? वह सोचता। कई बार वह अपना निश्चय भूलकर उस लड़की को एकत्र कर लेना चाहता। परन्तु वह लड़की निष्प्राण-सी पड़ी रहती।

श्यामसुन्दरी बहुत बुद्धिमान थी, वह मर्मभाषिणी। वह बैंच-बनि से

रोगी नारायणराव की सेवा करना चाहती। वह चाहती थी कि जो-कुछ वैद्य-वृत्ति से मिले वह देश-सेवा के लिए दे दे। वह परमेश्वर से गीत लिखना सीख रही थी। उसका हृदय नवनीत-सा था। प्रेममय था। वह वैद्य-वृत्ति से कैसे आजीविका चला सकेगी, एक बार यह पूछे जाने पर कि 'क्या तुम शल्य-चिकित्सा कर सकती हो ?"

"वज्रादपि कठोराणि, मृदूनि कुसुमादपि" उसने कहा। इस प्रकार की उत्तम स्त्रियाँ देश माता के लिए अलंकार हैं न ?

यह सोचते-सोचते वह और परमेश्वर कार में एक दिन रात को श्याम-सुन्दरी देवी के घर गये। तब वह परीक्षा के लिए मेहनत कर रही थी। इनको आता देखकर वह खुश होकर कुर्सियाँ ठीक करने लगी। उनके साथ-साथ वह भी बैठ गई। परमेश्वर रोहिणी को खोजता-खोजता अन्दर गया।

पन्द्रह मिनट तक वे चुपचाप बैठे रहे। मानो उसकी भक्ति ने उसे भी घेर लिया हो। पता नहीं, वे नीचे मुँह किये क्या सोच रहे थे ? समुद्र की हवा मन्द-मन्द बह रही थी। तारे अपनी कान्ति के साथ ओस बरसा रहे थे।

झट नारायणराव ने सिर उठाकर कहा, "बहन, परमेश्वर कह रहा था कि तुमने गीत लिखना सीख लिया है, क्या एक गीत गाकर सुनाओगी ?"

"यह क्या कह रहे हो भाई ? परमेश्वर भाई शरारती हैं। मेरे गीत क्या हैं भला ?"

"गाओ भी, मेरे सामने क्यों शरमाती हो ?"

"गाऊँगी, पर तुम कुछ कहना नहीं, तुम-जैसे के सामने गीत गाने के लिए बहुत साहस चाहिए।"

"मैं मारूँगा थोड़े ही ?"

"कौन जाने क्या कर बैठो ?"

"गाओ, तुम्हारी आवाज में ही संगीत है।"

"भाभी की आवाज में जो मिठास है वह किसे मिला है ?"

"क्या फायदा ?"

"यह क्या कहते हो ?"

"कुछ नहीं, कुछ नहीं, श्यामा, श्राश्रो भी !" उसकी आवाज़ सहसा बदल गई।

झट श्यामसुन्दरी ने उठकर कहा, "भाई तुम्हारी आत्मा परम पवित्र है।" यह सोचती बैठी रही। शारदा और नारायणराव का शायद मेल नहीं बैठा है। यह युवक गम्भीर हृदय और स्थिर मन से आगे बढ़ता जा रहा है। क्या शारदा इन्हें प्रेम नहीं करती है? हाँ, हाँ, उसे ऐसा लगा, जैसे बादलों में से चाँदनी दीख गई हो। शारदा का मामला एकाएक समझ गई। यह नारायन राव को प्रेम नहीं कर रही थी।

"क्यों नहीं प्रेम कर रही है? शारदा भी क्या मूर्ख है? कभी भी यह अपने मन की बात किसी को जानने नहीं दे रही है। शारदा, तुम कितनी अभागिन हो। क्या तुम इतनी कठोर हो? क्या तेरा सौन्दर्यमूर्ति के सौन्दर्य-सा है। क्या तेरे मन में प्रेम नहीं है? क्या तू मरुभूमि है? यह क्या विषाद है? यह क्या विचित्र नाटक है?" उसके मन में ये प्रश्न उमड़ने आते थे। उसे दया आने लगी। उसकी आँखें डबडबा आई। वह अपने-आपको भूल गई और नारायणराव के पास गई।

उसने उसके सिर को अपने हृदय से लगा लिया।

एक साथ दोनों के शरीर कम्पित-से हो गए। उन दोनों के रक्त में गरमी आ गई। अनजान ही नारायणराव ने श्यामसुन्दरी का आलिंगन कर लिया। श्यामसुन्दरी ने नारायणराव का माथा अपनी ओर खींचा और चूम लिया। नारायणराव भी अपने को भूल गया।

उसे ऐसा लगा, जैसे वह शारदा का आलिंगन कर रहा हो?

उसने तत्क्षण आलिंगन ढीला कर दिया। मानो सोकर उठा हो। अँगड़ाई लेते हुए उसने कहा "अरे, बाप रे बाप", और जल्दी-जल्दी वह नीचे उतर गया। वह यह न जान सका कि वह कहाँ जा रहा था। पसीना पोंछकर वह सीधा समुद्र के किनारे गया।

अनायास ही उसके मुख से "हाय हाय," निकला, सिर पकड़कर वह रेती पर लेट गया।

'यह क्या? मैंने यह क्या पाप किया है? इसका क्या कारण है? क्या वह उससे प्रेम कर रहा है? हाँ, उसे अपनी बहन की तरह देख रहा

हूँ, यह मेरी पाँचवी बहन है। बस निर्मल प्रेम को यदि रक्त-सम्बन्ध न मिले, तो उसके काम-कलंकित होने की सम्भावना है।'

जब उसका विवाह न हुआ था तो दो-तीन लड़कियों को देखकर उसने उनके साथ जाना चाहा था। पर वह इच्छा क्षणिक थी। उसके बाद वह तुच्छ इच्छा फिर नहीं आई।

'क्या इस प्रकार की इच्छा तुच्छ है? अगर है तो ऋषियों की सन्तान कैसे हुई? क्या इस इच्छा का होना पाप है? अगर पाप है, तो पत्नी के लिए भी ऐसी इच्छा नहीं होनी चाहिए। पर ये भी क्या विचार हैं? वह नहीं जानता था कि श्यामसुन्दरी उससे प्रेम करती है। पाश्चात्य परम्परा के अनुसार बहनें भी तो चुम्बन करती हैं। भले ही इस देश में यह परम्परा न हो! परन्तु उसके चुम्बन में खास प्रभाव था। नहीं तो मुझमें क्यों गरमी पैदा हुई? नहीं तो उसके आवेश का क्या कारण है? राजेश्वर का धर्म ठीक तो नहीं है? छीः! यह कैसे?'

'उसका धर्म ऐन्द्रिय है। इसलिए उसका धर्म कलंकित है। पुरुषों में यह दोष क्या प्रच्छन्न है? जिस प्रकार लड़की में आग है, कभी-न-कभी यह मनुष्य के जीवन में भी प्रकट हो जाती है। कहते हैं पवित्र प्रेम आनन्द-दायक है। नहीं तो क्या वह भी दुःखान्त है।'

वह अन्दर-ही-अन्दर जलता जाता था। वह समुद्र की ओर देख रहा था, पर उसे लहरें नहीं दिखाई दे रही थीं। 'भले ही वह प्रेम करे, पर पत्नी प्रेम नहीं करती, यह एक ऐसी लड़की है जो प्रेम करने के लिए तैयार है, पर उससे प्रेम नहीं करना चाहिए। मनुष्य के जीवन में प्रेम का इतना महत्त्व क्यों है?' वह सोचने लगा।

'उसका मुँह कैसे देखूँ? अगर नहीं देखूँ तो क्या कायर नहीं हूँ? क्या यह कायरता नहीं है? क्या किया जाय?' वह बौराता-सा लगता था। धमनियों में रक्त भी तेजी से बहता जाता था। उसका हृदय-रुदन समुद्र के गर्जन में मिल गया था। समुद्र के किनारे वह युवक छटपटाता पड़ा था। मानो उसके लिए संसार का अस्तित्व ही न हो।

नारायणराव जब बड़बड़ाता हुआ उठकर चला गया था, उसी समय श्यामसुन्दरी की दुनिया उल्टी हो गई थी। वह भी काँप उठी। वह यह

मोचती हुई भी टरती थी। अनायास उसकी आँखों में आँसुओं की झड़ी लग गई। उसने ऐसा क्यों किया, जिससे उसका हृदय दुखा। उसने कभी इसकी कल्पना भी न की थी। 'वह क्यों इतनी अबला है? वह क्यों घबरा गया? उसने क्या गलती की थी। करुण वेश में उसने उसको आश्वासन देना चाहा था। क्या उससे इसके शील पर कोई धब्बा लगा है। उसका आलिंगन करने पर उसको रोमांच-सा हो गया था। उसने उसका चुम्बन किया था, वह कैसे? क्या भारतीय स्त्रियाँ ऐसा करती हैं? बच्चे का चुम्बन क्या मधुर नहीं होता? उसका चुम्बन भी उसी प्रकार का था। कितना गाढ़ आलिंगन था उसका? ठीक वैसा ही, जैसा एक व्यक्ति भय में करता है।'

बहुत सोचा, पर उसे पता न लगा कि उसने क्या अपराध किया है? 'क्या मैंने एक पुरुष के साथ वही व्यवहार किया है जो एक स्त्री करती है? मुझमें स्त्रीत्व ही नहीं है, जब मेडिकल कालेज में भरती हुई थी, तभी वह स्त्रीत्व छोड़ दिया था। अभी तक किसी पुरुष ने मुझ पर यह प्रभाव न किया था। नारायणराव का हृदय पवित्र है। मैं भी उससे पवित्र प्रेम करती हूँ। इसमें क्या गलती है? हो सकता है कि इस प्रेम में शारीरिक आनन्द हो, परन्तु वह कलंकित हृदय से प्रेम नहीं कर रही है, जाने उसके हृदय में क्या है, पर उसके आलिंगन में असाधारण माधुर्य था। मालूम नहीं मेरे प्रेम में भी क्या था? उस क्षण में मुझे क्या हो गया था?'

'अगर यह उत्तम पुरुष मेरी देह चाहे तो क्या मुझे आगे-पीछे देखना चाहिए? क्या इससे मुझ पर कलंक लगेगा? वह कैसे। अगर कोई महर्षि सुस्वादु वस्तु चाहे तो उससे उसकी पवित्रता कैसे नष्ट हो जाती है?'

'जाने क्या है? क्या है?'

'क्या मैंने उसकी पवित्रता खराब कर दी है? नहीं। प्रेम के लिए वह तड़प रहा था। मुझे दया आ गई। दया के कारण मुझमें स्त्री-सुलभ प्रेम पैदा हो गया। दोनों एक क्षण किसी अवर्णनीय आनन्द में गोते लगाते रहे। सिर्फ इतने से कोई खराबी नहीं होती।'

६ : धर्म

नारायण राव ने उसके पास आने से पहले ही राजेश्वरराव को सन्देह होने लगा था कि कहीं पुष्पशीला का दिल तो नहीं बदल गया है। उसके साथ का इञ्जीनियर मुस्लिम युवक, राजेश्वर राव के घर बार-बार आने लगा था। राजेश्वर ने पुष्पशीला को पूरी आजादी दे रखी थी, वह उसे न रोकता, न टोकता। उसने अपने संघ के उद्देश्य व मार्ग के बारे में पुष्पशीला को बता दिया था। उसने कहा था कि 'वह जिसे चाहे उससे प्रेम कर सकती है, तू जब तक मुझे चाहती है, तब तक मेरे पास रह ! अगर तू किसी और को चाहती है, तो निस्सन्देह उसके पास तू जा सकती है !'

पुष्पशीला चंचल चित्ता थी। तितली-सी। राजेश्वर राव के लिए उसका प्रेम कम होने लगा था। इस बीच में यह मुस्लिम युवक राजेश्वर राव के घर आने लगा था। राजेश्वर राव ने पुष्पशीला का उस मुस्लिम युवक से परिचय कराया।

पुष्पशीला अंग्रेजी में बातचीत कर सकती थी। मुस्लिम युवक उससे उसी भाषा में बातें करता। वह राजेश्वर राव की अनुपस्थिति में उसके घर आता। एक दिन उसने उस युवती का हाथ पकड़ लिया। पुष्पशीला ने कुछ न कहा। वह मुस्कराई। दो-तीन दिन बाद उस युवक ने उसका पीछे से आलिंगन कर लिया। पुष्पशीला उसके बाहु-पाश में पुलकित हो उठी। वे अन्दर एक कमरे में चले गए।

राजेश्वर राव को उन दोनों का सम्बन्ध तभी मालूम हो गया था। तब से राजेश्वर के मन में ईर्ष्या पैदा होने लगी। पहले तो राजेश्वर राव ने उसको ईर्ष्या न माना। उसे वह कोई कष्ट-सा लगा।

तभी नारायण राव आया। नारायण राव ने आकर बहुत-कुछ कहा। गान्धी जी के उपदेशों के बारे में बताया। "आर्यों के जमाने में स्त्रियों को लोग सन्तानार्थ देते थे। क्या वह गलत था ? नहीं, समय भी तो बदलता जाता है।"

"दूसरों की स्त्रियों और धन की इच्छा करना दूसरों पर हिंसा करने के बराबर ही तो है। इसलिए वह गलत है।" नारायण राव ने कहा,

"उसे अहिंसा के आधार पर अपना जीवन बिताना चाहिए। समाज ने कई मुक्ति-मार्गों का पता लगाया है, पर कोई भी मार्ग अहिंसा और सत्य के विरुद्ध नहीं होना चाहिए। इसलिए रईसों को अपना धन समान रूप से बाँट देना चाहिए। अगर उनमें यह उद्देश्य नहीं है तो उनमें से पाँच-दस को मार देना अच्छा नहीं है। पाप है। तुम्हें सच्चे कर्मयोगी होकर अपने प्रेम से सुधार करना चाहिए। यही स्त्री के बारे में कहा जा सकता है। स्त्री का पुरुष को सीमा से अधिक चाहना और पुरुष का स्त्री को चाहना मोक्ष मार्ग से दूर है। वह इन्द्रिय-लोलुपता में फँसा देगा। इसीलिए ही विवाह की परम्परा चलाई गई है। इसका मतलब यह नहीं कि बिना प्रेम के विवाह किया जाय? अगर उसमें कोई दोष हो तो उसे हटाओ। पर अपनी इच्छानुसार चाल न चलो! मनुष्य की अच्छाई के लिए स्वतन्त्रता है, न कि उसकी बुराई के लिए।"

इस तरह नारायण राय ने उसे समझाया। क्या वह सच है? आध्यात्मिक चीज भी कोई है, उसको विश्वास न था। इस जन्म के समाप्त होने पर आत्मा क्या फिर जन्म लेगी? उसका खयाल था कि आत्मा को आदि-अन्तहीन बताया जाना कोरी कल्पना है।

कितनों ने कितनी ही तरह उससे बहस की, पर खयाल नहीं बदला। पर आज उसे सन्देह होने लगा था। 'मेरे भाव और गुरु के उद्देश्य शायद गलत होंगे? पहले भी गुरु के मत की तरह चार्वाक मत प्रचलित था। रोम और ग्रीक में अब पतन के दिनों में भी ऐसे मत प्रचलित थे। नारायण-राज ने बताया था। क्या वह सच है या यह?'

यह सोचता-सोचता राजेश्वर एक दिन अपने घर आया। नौकर ने बताया कि वह मुस्लिम युवक अन्दर पुष्पशीला के साथ है। वह अन्दर न जा सका। क्रोध में वह वहीं निकल गया। उसे भी न मालूम था कि उसके पैर कहाँ जा रहे हैं?

यह साफ था कि उसके मन में ईर्ष्या पैदा हो गई थी। उसकी आँखें खुली। पुष्पशीला उससे यह निरूपित कर रही थी कि स्त्रियाँ चंचल चित्त होती हैं।

उसका हृदय जलने लगा। जब पहले-पहल स्वतन्त्र-प्रेम संघ में शामिल

हुआ था और दूसरी स्त्रियों के पास जाता था, और जब वे किसी और के पास चली जाती थीं, तो उसमें इस प्रकार की भावना नहीं पैदा हुई थी। आज उसमें ईर्ष्या क्यों पैदा हो रही थी ?

राजेश्वर राव एक दिन पुष्पशीला के पास गया।

"पुष्पा, क्या मुझसे प्रेम हट गया है ?"

"छी, छी, राजा ! यह क्या कह रहे हो ? तू मेरा प्रियतम है, तेरे सिवाय मैं किसी और को सोचती भी नहीं हूँ, मैं तेरी दासी हूँ।"

"बातें जोश में आ रही हैं या दिल से ? पुष्पशीला, अगर तेरा मन बदल गया है तो बदल सकता है। यह गलत है। इसलिए यह प्रश्न मैं नहीं पूछ रहा हूँ। सच बताओ, क्यों इधर-उधर की बातें करती हो ? हम दोनों का सम्बन्ध निश्चित हो जायगा। इसीलिए बस, परन्तु तुम पर जाने क्यों रत्ती-भर भी मेरा प्रेम कम नहीं हुआ।"

"पहले आपका प्रेम भी तो हमेशा बदलता रहता था।"

"अब तक मेरे प्रेम के लायक मुझे स्त्री नहीं मिली थी ?"

"उसी तरह, तुम क्यों नहीं सोचते ! मुझे अभी तक अपने प्रेम के अनुरूप पुरुष नहीं मिला है।"

"हाँ, इसीलिए तो मैं पूछ रहा हूँ कि क्या तेरा हृदय बदल गया है ?"

"यह मैं कैसे बता सकती हूँ ?"

"यह क्या पुष्पा, क्या तुम नहीं बता सकती ? अब तुम आदर-सूचक शब्द भी बरतने लगी हो ? लगता है, तुम्हारा दिल बदल गया है।"

"क्या मुझे आदर-सूचक शब्द उपयोग नहीं करने चाहिएं ? आप मेरे पति-समान जो हैं।"

"वाह, तुम मुझे पति के बराबर बताती हो तो क्या मैं तुम्हें भी 'आप' कहकर पुकारूँ ?"

"क्यों, आप मुझे प्रेम नहीं करते हैं ?"

पुष्पशीला ने झट आकर राजेश्वर राव को गले लगा लिया। "तुम्हें यों ही शक है, इधर-उधर का शक न करो !" उसने उनके कान में कहा। वह भी उससे प्रेम से बातें करने लगा।

चार दिन बाद राजेश्वर राव बाग में क्यारियाँ बना रहा था। उस दिन गुरुवार था। छुट्टी थी। अँधेरा हो गया था। सर्वत्र निस्तब्धता थी। बगले के चारों ओर पक्षी चहचहा रहे थे।

पुष्पशीला को याद न रहा कि राजेश्वर राव बाग में काम कर रहा है। उसने सोचा कि टहलने के लिए वह तालाब के किनारे गये हैं। वह सुन्दर मुस्लिम नवयुवक राजेश्वर के घर आया और पुष्पशीला से बातें करने लगा। पुष्पशीला भी सब-कुछ भूल-भालकर उनसे मोफे पर प्रेम करने लगी। उसी समय पिछवाड़े के दरवाजे से राजेश्वर राव बाग से आया।

सामने का दृश्य देखकर वह निष्प्राण-सा खड़ा रह गया। पुष्पशीला और मुस्लिम युवक झट खड़े हो गए। राजेश्वर राव आग हो रहा था। उसने मुस्लिम युवक की कनपटी पर जोर से थप्पड़ मारा। चोट के कारण वह युवक कुर्सी पर गिर गया। खड़े होकर, आस्तीन चढ़ाकर, घूँसा मारने को तैयार हुआ। राजेश्वर राव ने उसे रोका। खून का घूँट पीकर उसने कहा, "माफ कीजिये, मैंने जल्दबाजी की। जल्दबाजी का क्या कारण था, यह आप स्वयं देख सकते हैं। अब आप अपने घर जाइये!"

पुष्पशीला को काटो तो खून नहीं। वह निश्चेष्ट-सी वहीं खड़ी रही।

उस मुस्लिम युवक ने अपने बाँये गाल को बाँयें हाथ से दबाकर कहा, "अगर मैं यहाँ से चला गया तो कहीं आप इसको मार न दें!"

"हूँ, अगर तुझे यह डर है तो इस लड़की को साथ ले जा!"

पुष्प०—"आप जाइये साहब!"

उस युवक ने एक नजर से पुष्पशीला को देखा और दूसरी नजर से राजेश्वर राव को। उसने कहा, "यह तेरी तो है नहीं, मुझे दे-दे, मैं ले जाऊँगा, मैं इससे निकाह कर लूँगा।"

राजे०—"क्यों पुष्पा, तुम्हारी भी यही मर्जी है?" उसने गम्भीर स्वर से पूछा।

"होगी तो होगी!" उसने कहा।

राजे०—"अगर यह बात है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

पुष्प०—"मैं नहीं जाऊँगी, जाइये साहब!"

वह युवक पीछे मुड़कर चला गया।

राजेश्वर ने उस स्त्री को देखकर कहा, "पुष्पा, आज तूने मेरी आँखे खोली हैं, कृतज्ञ हूँ!" कहकर वह अँधेरे में कहीं चला गया। पुष्पशीला कुर्सी पर बेहोश-सी गिर पड़ी।

वे उद्देश्य, जो उसको उदात्त नजर आते थे अब सन्देहास्पद हो गए थे। वह अब किस उद्देश्य के लिए समाज से लड़े, जमाने से, स्त्री अपनी स्वाभाविक कमी के कारण एक पुरुष को नाथ बनाकर रहती आई है, परन्तु वह पुरुष के सामने गुलाम नहीं बनी है," यह नारायण राव ने कहा था, शायद यह ठीक है।

राजेश्वर राव विचारों में उलझता गया। वह किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गया। उसकी हालत यह थी कि मानो काँटों पर फेंक दिया गया हो। उसके स्थिर विचार बतई अस्थिर हो गए थे। उसका निर्मल हृदय मेघाकृत-सा हो गया।

स्त्री की स्वतन्त्रता, पुरुष में ईर्ष्या आदि का न होना, वगैरा विचार काफूर-से हो गए। जो-कुछ उसने पुष्पशीला के प्रति को लिखा था वह सब ढोंग-सा लगती थी। 'मुझमें और पुष्पशीला के पति में भेद क्या है? मैंने पशु की तरह उस मुस्लिम को क्यों पीटा?'

'भगवान् कैसे? भगवान् में तो मुझे विश्वास नहीं है, वह मुझे क्यों याद आया? नारायण राव ने मुझे क्यों उपदेश दिये, सब के उद्देश्य क्या सब भ्रान्तिपूर्ण हैं?'

'मुझमें ईर्ष्या पैदा हो गई। हाय, मुझे कोई रास्ता नहीं दिखाई दे रहा है। अगर पुष्पशीला मेरे पास से चली गई तो क्या मैं रह सकूँगा? मेरी पुष्पशीला, मैंने तुझे कितना प्यार किया था, मैंने उस मुस्लिम नौजवान को मार देने की सोची थी। जैसे नारायण ने भी कहा है, क्या मैंने ही पुष्पशीला का जीवन बरबाद कर दिया है।'

"हे पुष्पशीला, हे पुष्पशीला, क्या तेरे कष्टों का मैं ही कारण हूँ? क्या मेरे कारण तुम्हारी अधोगति हुई है? नहीं-नहीं, जो-कुछ मैंने किया है, ठीक किया है।'

उसके मन में कोई बात निश्चित-सी हो गई। शरीर सिकुड़-सा गया।

हाय, उसने उस बात को दूर हटा दिया, कहीं जल्दबाजी तो नहीं कर रहा। और कोई रास्ता नहीं है, यही यही है। 'तेरा जन्म व्यर्थ है, व्यर्थ है।' नारायण राव, परमेश्वर, राजा राव देव-तुल्य हैं।

'क्या नारायण राव के पास जाऊँ शाम को ?' आधी रात को उसने कई पत्र लिखे।

सवेरे तीन बज रहे थे।

धीमे-धीमे कदम रखता हुआ वह उस कमरे में गया जहाँ पुष्पशीला सो रही थी, वह मुरझाये हुए पुष्प की तरह पलंग पर पड़ी थी।

उसने पुष्पशीला का आलिंगन किया। उसने भी उसका नींद में आलिंगन किया।

उसकी आँखें डबडबा आईं। उसको छोड़कर 'स्त्रियों के दुखों के कारण पुरुष ही हैं' यह गनगुनाता हुआ वह अपने कमरे में गया। माँफे पर लेट-कर एक पोटली मुख में डाल ली। फिर वह पानी पी रहा था कि हाथ से गिलास छूटकर गिर गया। उसका हाथ काँप रहा था।

१० : शल्य-चिकित्सा

कोत्तपट,

१० घ० २०-४-२६

सत्यवर्ती नारायण,

एडवोकेट, हाई कोर्ट, मद्रास

तुम्हारे पिताजी,—अण—कल—सवेरे—मेल, ला रहे हैं,—शल्य चिकित्सा,—रंगा चारी, प्रबन्ध, स्टेशन, मोटर, भय नहीं है।

राजा राव।

यह तार नारायण राव को हाई कोर्ट में मिला। नारायण राव का

सिर चकरा गया । यह व्रण क्या है ? इसके कारण कोई भय नहीं है, यह तार में लिखा हुआ है । वह तत्क्षण डॉ० रंगाचारी के घर गया । उनसे बातचीत की । उन्होंने तार देखकर कहा "आप सीधे, उनको हमारी वैद्यशाला में ले आइए । सब तैयार करके रखूँगा । कई व्रण खतरनाक होते हैं । कई नहीं ।" जब नारायण राव ने पूछा कि कोई खतरा तो नहीं है तो डॉ० रंगाचारी ने उसको आश्वासन देकर भेज दिया । अगर शल्य-चिकित्सा के बाद दो तीन दिन वैद्यशाला में ही रहना पड़ेगा तो सुब्बाराय जी को वहाँ छोड़कर नारायण राव घर जा सकता है, डॉ० रंगाचारी ने कहा ।

अगले दिन सवेरे सूर्यकान्त और नारायण राव कार में सेण्ट्रल स्टेशन पहुँचे । दो-तीन टैक्सियाँ भी निश्चित कर ली थीं । मेल आई । सेकण्ड क्लास का एक डिब्बा पूरा रिजर्व कर लिया था । श्री राममूर्ति, राजा राव, लक्ष्मीपति, यज्ञनारायण शास्त्री, वेंकायम्मा, रमणम्मा, जानकम्मा, लक्ष्मीपति की माँ, शेषम्मा, लक्ष्मी नरसम्मा, सुब्बाराय जी के साथ आये ।

सुब्बाराय जी के बाँयें हाथ पर पट्टी बँधी हुई थी । उनकी मुख-मुद्रा से लगता था जैसे अपनी तकलीफ को छुपा रहे हों । श्री राममूर्ति के कन्धे पर हाथ रख, छोटे लड़के को देखकर कष्ट-भरी मुस्कराहट के साथ गाड़ी से उतरे । नारायण राव ने सँभालते हुए पूछा, "पिताजी, क्या हाल है ?"

"दर्द है, कोई बात नहीं है । यह लो मूर्दा भी आ गई, कुछ नहीं बेटी ! कोई छोटा-सा फोड़ा निकल आया है ।" सुब्बाराय जी ने कहा ।

परीक्षा करके डॉ० रंगाचारी ने कहा कि शल्य-चिकित्सा करनी होगी । छोटी अंगुली पर एक तिल था, उस तिल पर एक छोटी-सी फुन्सी निकली । दस दिन पहले वह फुन्सी बढ़ने लगी और दर्द करने लगी । हाथ सूज गया । सुब्बाराय जी ने कहा कि उन्हें भोजन नहीं रुचता था । सुब्बाराय ने बड़े लड़के के पास खबर भिजवाई । श्री राममूर्ति राजाराव को बुला लाया । राजाराव ने परीक्षा करके कहा, "मूत्र वगैरा में कोई खराबी नहीं है, यह कोई खतरनाक व्रण है । यह व्रण फैलता जाता है, फैलता-फैलता सारे शरीर पर फैल जाता है । रक्त विषमय हो जाता है, रक्त कहीं-कहीं जम भी जाता है । और इस तरह जान पर खतरा आ जाता है ।

इसलिए शायद अँगुली काटनी पड़ जाय। मद्रास में डॉ० रंगाचारी के पास जाना अच्छा है।" राजाराव ने यों रामर्मूर्ति को सलाह दी। उसने कोई दवा लगाई और खाने को भी कुछ दिया। और उसी दिन मेल से वे मद्रास के लिए रवाना हो गए। नारायण राव को तार भेजा।

राजाराव को तरह रंगाचारी ने छोटी अँगुली काट देने का निश्चय किया। सुब्बाराय जी ने कहा कि क्लोरोफार्म की जरूरत नहीं है। डॉ० रंगाचारी कुशल वैद्य थे। उन्होंने अँगुली को निष्प्राण करने के लिए कई दवाइयाँ दीं, और अँगुली काट दी गई। व्रण को फैलने से रोक दिया गया। और क्लॉट लगा दिये गए, ताकि रक्त-प्रवाह रुक जाय।

सुब्बाराय दिन-भर वहाँ रहे। अगले दिन शाम को मोटर में नारायण-राव के घर गये।

रंगाचारी हर रोज आकर मरहम-पट्टी कर जाते थे। चार दिन बाद उनका एक सहायक वैद्य मरहम पट्टी करने लगा। डॉ० रंगाचारी खाने की दवा दे रहे थे। रंगाचारी ने कहा कि १५ दिन बाद सुब्बाराय अपने ग्राम जा सकते हैं।

सुब्बाराय को देखने के लिए जमींदार और शारदा आये। सुब्बाराय और वे हँसते-मुस्कराते मिले।

जमी०—"सुना है मेरु पर्वत पर बिजली पड़ी है।"

सुब्बा०—"क्या ! एक छोटी-सी अँगुली कटकर से गया।"

जमी०—"अमृत को लेकर गरुड़ उड़ा जा रहा था, उसको रोकने के लिए इन्द्र ने वज्र फेंका, गरुड़ का एक पंख टूट गया। आप तो कहीं कोई अमृत नहीं ले जा रहे थे?"

सुब्बा०—"कुछ भी हो, आपको इन्द्र ही दिखाई दिया। आप सब पुराण जो जानते हैं?"

जमी०—"क्यों ? यह क्या चोट मार रहे हैं ? कहीं यह ताना तो नहीं है कि मुझे पुराण नहीं आते हैं ?"

सुब्बा०—"जमींदार हैं, शासन-सभा के सदस्य हैं, पुराण पढ़ने के लिए शायद फुरसत हो या न हो, यही मैंने कहा है।

जमी०—"आप-जैसे बड़ों ने सदस्य होने के लिए कहा और हम हो

गए। मैं बादशाह का प्रतिनिधि हो गया हूँ। हम जमींदार हैं, और आप जमींदारों के भी जमींदार हैं।

गुप्ता०—"कुछ भी हो, आप तो शान में बड़े हैं।"

जमी०—"नहीं, आप हैं।"

गुप्ता०—"पर आप अपनी उमर में मुझसे तो कम ही हैं।"

जमी०—"ऐसा लगता है जैसे आपकी उमर ७५ वर्ष की हो। आप अपने बड़े लड़के से बड़े भाई-से लगते हैं और मुझसे २० वर्ष छोटे नजर आते हैं।"

गुप्ता०—"सुनते हैं, डाकोरवाले जल्दी बूढ़े हो जाते हैं।"

जमी०—"जैसे योगियों का यौवन आ जाता है।"

दोनों साहबों में आपस में काफी बातचीत हुई।

राजा राव ने धवलपुर आना चाहा। नारायण राव ने उन्हें रोका। उस दिन परमेश्वर, लक्ष्मीपति, राजाराव, श्याम, रामचंद्रराव—एक क्षत्रिय मित्र, समुद्र के तट पर टहलने गये। रामचंद्रराव ने श्याम से कहा, "शासन तो हमारे पूर्वजों के थे, हम भी क्या हैं? नारायण राव के पिता को देखो, उन्होंने किस बहादुरी से पेंशनी कटवा दी। क्या तुम और हम ऐसा कर सकते हैं? क्या हममें वह शक्ति है? वह हिम्मत है?"

श्याम०—"क्यों भाई? तुम बड़े क्षत्रिय हो, तलवार नहीं है, कलम पकड़ते हो।"

परम०—"जब नवाब बर्खास्त हो सकते हैं तो क्षत्रिय अगर कलम पकड़ते हैं तो इसमें क्या गलती है?"

श्याम०—"सुभानअल्लाह-सुभानअल्लाह, यह कवि भी हैं, अगर मैं नवाब होता तो भरे दरबार में इन्हें मोती लुटवाता।"

परम०—"हम नवाबों के दरबारों में क्यों जायेंगे? क्या हमारे राजा नहीं हैं? श्रीमान् महाराजाधिराज राजेश्वर रामचंद्रराव जी के दरबार में जायेंगे।"

राम०—"इस आदर के लिए धन्यवाद। ओ नारायण राव मन्त्री, हमारे खजाने में से दस पैसे इस कवि को दान कर दो!"

लाल०—"अरे, राजाराव वजीर, इस कवि का गये पर अनूम निकालो—निकालो 'थ्री केमल्स' !"

नारा०—"हुक्का गुड़गुड़ाने की कोई जरूरत नहीं । यह लें मेरे पास 'स्टेट एक्सप्रेस' है ।'

राघ०—"अरे, नारायनराव, क्या अहिंसावादी सिगरेट पी सकते है, तू और तेरी अहिंसा वकील का और अहिंसा सिगरेट का अच्छा मेल है ।

परम०—"गवैया है तुमें यह मालूम होगा, हम क्या जानते हैं । कहीं धुआँ न लग जाय, इसलिए, स, रि, ग, म ।"

लक्ष्मी०—"यह क्या ?'

लाल०—"यह शायद कविता कर रहा है !"

सब रेते पर बैठ हुए थे । राजा राव सिर नीचा किये चुप अलग बैठा हुआ था । कुछ सोच रहा था। लाल ने राजाराव के पास आकर कहा, राजा मेरे मित्रों के दिल तेरे लिए तड़प रहे हैं । तुझे दुखी होता देखकर पत्थर-दिल भी पिघल जाते हैं । हम सबने कठिन दिल है तेरा !"

राजाराव की आँखों में आँसुओं की झड़ी लग गई ।

११ : परिवर्तन

नारायण राव के पिता की जब शल्य-चिकित्सा की गई थी, तब श्याम-सुन्दरी भी वहाँ थी । बाद में उसने नारायण राव के पास आकर कहा, "भाई, तुम्हारे पिता जी भीष्म के समान हैं, क्या बल है, और क्या साहस ? वह शरीर भी क्या है ? तुम दोनों जुड़वाँ बच्चे-से लगते हो, उनका शरीर तुम्हारे शरीर से भी अधिक कसरती शरीर है । परन्तु उनके मुँह से ऐसा लगता था जैसे दर्द ही न हो रहा हो । बड़ा आश्चर्य हुआ । उनकी चरण-सेवा करने से मेरा जन्म सफल हो जायगा । भाई वे मेरे पिता भी हैं,

उनको तकलीफ देखकर क्या तुझे तो दुःख नहीं हुआ था ?"

उसकी आँखों में आँसू भर आए।

नारायण राव ने उसको कृतज्ञता पूर्वक नमस्कार करके कहा, "तू कितनी प्रेममयी है।" उसको अपनी कार में बिठाकर भेज दिया।

श्यामसुन्दरी जब परीक्षाओं के लिए तैयारी किया करती थी तो राजाराव उसकी खूब मदद किया करता।

कालेज छोड़कर एक साल तक वह विविध चिकित्सालयों में अभ्यास करता रहा। फिर अमलापुर में प्रैक्टिस करने लगा। जो कुछ वह छूता, सोना हो जाता। राजाराव रोगी की दशा, रोग, तुरंत जान जाता। वैद्यक के साथ-साथ राजाराव शुरू में ही उत्तम ग्रन्थ पढ़ा करता था। उसके विचार भी उत्तम थे। जन्म-जन्म के सुकृत्यों के फल स्वरूप या ब्रह्म विद्या के कारण, राजाराव में 'अतीन्द्रिय शक्ति' इन्टयूशन, आ गई थी। इसलिए वह रोग को तुरत मालूम कर लेता था। ठीक दवाई देता। अमलापुर में या अमलापुर के आस-पास सब लोग यही कहते, "अगर आयु हो तो जरूर उनके हाथ में बीमार ठीक होकर रहेगा। क्या वैद्य है, उसके हाथ में जादू है।"

राजाराव ने पिता की मदद से और नारायण राव की सहायता से तीन हजार की पूँजी लगाकर वैद्यक शुरू की। अमलापुर में उसने एक बड़ा घर किराये पर लिया। उसको ठीक करवाया। औषधियों के लिए एक कमरा, एक में गोडाउन, एक में रोगियों की परीक्षा करना, आराम के लिए एक कमरा, मित्रों से बातचीत करने के लिए एक कमरा। औषधियों पर परीक्षण करने के लिए एक कमरा, शल्य-चिकित्सा के लिए एक कमरा।

नारायण राव देश-यात्रा समाप्त करके अमलापुर गया, तब उसने उसकी वैद्यशाला को और भी ठीक करवाया। उन कमरों में जहाँ रोगियों की परीक्षा की जाती थी, दवा दी जाती थी, अच्छे-अच्छे स्वस्थ पुरुष-स्त्रियों के चित्र, स्वास्थ्य-सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं से कटवाकर फ्रेम लगाकर लटकाये गए थे।

नारायण राव ने कई भारतीय चित्र लगाकर राजा राव के कमरे को

अलङ्कृत किया।

वैद्यशाला में कहीं-कहीं, उपनिषद्, योगसूत्र, भगवद्गीता में उद्धरण लेकर उनको चौखटों में मढ़कर राजा राव ने टँगवा दिया था।

जहाँ रोगी साधारणतः बैठा करते थे, वहाँ उसने साधारण रोगों के बारे में आवश्यक जानकारी पट्टिकाओं में लिखवा दी थी, मैसूर से चन्दन, या किसी और चीज से बने कृष्ण की विविध मुद्राओं में बनी मूर्तियाँ, नारायण को उसने मद्रास से भेजने के लिए लिखा। नारायण के भेजने पर, उसने उन्हें वैद्यशाला में सजाकर रखा था। मैं 'देह वैद्य, हृदय वैद्य, आत्मा वैद्य' हो सकूँ, इसलिए मैंने इन्हें रखवाया है। दूसरी और तीसरी तो काम मेरे लिए ही है।" वह अक्सर मित्रों से कहा करता।

वैद्यक के लिए उसने सब आवश्यक दवाइयाँ मँगवाकर रखी थीं, भले ही वे कीमती हों। उसको जल्दी में मद्रास से दवाइयाँ तार देकर मँगाना न आता था।

"राजाराव के हास्पिटल में वे दवाइयाँ हैं, जो काकिनाडा हास्पिटल में भी नहीं मिलती।" लोग गाँवों में अक्सर कहा करते।

ग्रामों में घूमने के लिए उसने एक मोटर-साईकल भी खरीद ली थी। जहाँ-तहाँ जाने के लिए उसके साथ हमेशा दो सन्दूक, और चमड़े का एक थैला रहता। थैला बहुत छोटा था। आठ अंगुली बड़ा। उसमें दो खाने थे। एक में स्टेथॉस्कोप, आयुर्वेद की गोलियाँ, एक हाथी-दाँत की पिटारी, जिसे परमेश्वर मूर्ति ने उसे उपहार में दिया था, दूसरे खाने में सिरेन्ज वगैरा थीं।

बड़े सन्दूक में एक छोटा-मोटा हास्पिटल ही था। खास दवाइयाँ, शल्य-चिकित्सा के कुछ उपकरण, दूसरे में कई चूर्ण आदि दवाइयाँ थीं।

पहले महीने में, राजा राव को दो सौ रुपये की आमदनी हुई थी। दूसरे महीने चार सौ रुपये, तीसरे महीने से पाँच सौ रुपये की आमदनी होने लगी। उसने नारायण राव से जो एक हजार रुपये उधार लिये थे। वापिस कर दिए।

उस प्रान्त में उसका नाम मशहूर होने लगा। उसे लोग इधर-उधर चिकित्सा के लिए ले जाने लगे।

इतने में जाने कहाँ से मृत्यु आई। दो बच्चे, मातृ-हीन हो गए।

पत्नी उसके घर तब आई जब वह ठीक तरह प्रेम करना भी न जानता था। कितनी ही बार विवेकानन्द के पढ़ने से क्या? ज्ञानानन्द के सुनने से क्या फायदा? पर उनका दर्शन उसके मन पर न उतरा था।

राम मोहन राय के उपदेश वीरेन्द्र मित्र के पाठों में क्या सामाजिक धर्म का अर्थ है? क्या पत्नी का स्वास्थ्य इसलिए ही खराब हो गया था क्योंकि वह बचपन में ही गृहस्थी के लिए आ गई थी।

पत्नी तो माता-सी थी। प्रेम जोड़ो। क्या वह उसे जानता था? केवल इतना ही जानता था कि वह उसके बच्चों की माँ थी। 'परमेश्वर मेरा क्या कसूर है? क्या यह परीक्षा है, क्या तू मुझे परखना चाहता है? मेरा जीवन बचपन में ही बिगड़ा हुआ था। इसलिए मैं अपनी पत्नी को न दिया सका। मैंने अपने बच्चों को मातृ-हीन कर दिया है,' दिन-रात राजाराम यह सोचा करता।

बन्धुओं ने उसका दुबारा विवाह करना चाहा। राजा राम ने उनसे कहा, "आप यह प्रयत्न न कीजिये।"

ऊपर से तो वह पहले-जैसा ही रहने लगा, पर अब उसे नाटक न भाते थे, संगीत के नाम पर पेट में दर्द होता था, कविता के नाम पर कान दुखते थे, कला से दूर भागता था।

जब कोई कहता कि कितना कष्ट है? वह पूछा करता, "कष्ट किसको है? आत्मा को?"

परमेश्वर राजा राम का मजाक उड़ाता कि वह निरा बावला है। जब कभी सिनेमा जाता तो मित्रों के साथ जाता, संगीत-सम्मेलन में भी जाता तो मित्रों के लिए ही।

वही राजाराम आज कभी रोता तो वह भी रोने लगता। पुराण पढ़ता-पढ़ता तन्मय हो जाता। कोई स्वयं फीस देते तो ले लेता, नहीं तो नहीं।

वह आत्म-निरीक्षण करने लगा। आज उसको अपनी बैठक में रखी कृष्ण की मूर्तियों की लीला का अर्थ मालूम हो गया था। भगवद्-गीता के 'पुरुषोत्तम' का अर्थ वह जानने लगा था।

'कृपा, कृपा, भक्तिहीन हृदय को तू नमित दे रहा है,'—मेरी पत्नी ने खड़े होकर उद्वेगपूर्ण स्वर निकालकर, आँखें मूँदकर, उसको नमस्कार किया।

१२ : आत्म-हत्या

"मेरा दिल रामनाथ राव ने कैसे हर लिया है?" सत्यसुन्दरी के मन में यह प्रश्न उठता जाता था। रामनाथ राव के प्रति उसका प्रेम कैसा था, यह वह जान नहीं सकी। वह प्रेम काम-प्रेरित न था। काम-वासना उसके मन में एक बार ही पैदा हुई थी। अगर वह भाव काम-वासना से प्रेरित होकर आते तो वो उसे मन मर्यादाहीन हो जाता होगा। उस दिन उसका सारा शरीर पुलकित हो उठा था। पर आज उसकी याद करने पर भी उसके मन में कोई विकार पैदा न होता था।

उस समय की वह मनःस्थिति उसके जीवन के मार्ग में दिव्य प्रकाश-सी दिख रही थी। वह उसका सहारा था। सब से मधुर संस्कार उसी भाव से पैदा हुआ था। 'मैं तुमको प्रेम करती हूँ, मुझे तुम प्रेम कर रहे हो, मैं प्रेम-मूर्ति हूँ। प्रेम के कारण तुम सुन्दर हो!' यह दिव्य वाणी उसके मन में हमेशा प्रतिध्वनित होती रहती है। उस दिन से वह सबके प्रति प्रेम किया करती थी।

इस बीच में रामनाथ सुब्बाराव जी की बीमारी के समाचार उस तक आए। रामनाथ की पत्नी क्या मर गई है? क्या संसार-सागर को पार करने की उनकी शक्ति कुण्ठित नहीं है? उनके साथ दाम्पत्य-सुख विलसकर चलने वाली जीवन-संगिनी क्या चली गई है? सुना है उनके दो बच्चे हैं, उनकी देख-भाल कौन करेगा?

रामनाथ ने दूसरी शादी क्यों नहीं करनी चाहिए? हाँ, यह भी क्या विचार

है। नारायण राव ने उससे एक दिन कहा था कि वह सांकेतिक था, और उसका हृदय कठोर हो गया था, क्या वह विवाह करेगा ? उसके उन बच्चों के भाग्य में क्या है ? नारायण राव ने यह भी बताया था कि सूरम्माम्बा पवित्र चरित्र की थी। नारायण राव भी उसकी याद करके आँसू बहा बैठा था। यह सुनकर मुझे भी बिलख-बिलखकर रोई थी। वह सूरम्माम्बा कितनी पतिव्रता थी।

इसी उधेड़-बुन में श्यामसुन्दरी अपनी परीक्षा के लिए तैयारियाँ कर रही थी।

इसी बीच रोहिणी ने खबर दी कि राजेश्वर विष खाकर मर गया।

"यह क्या ? वह तो हमेशा मजे में रहा करता था, ऐसे व्यक्ति का विष खाकर मरना भी क्या है ?"

सभी नारायण राव, राजा राव, लक्ष्मी, परमेश्वर मूर्ति वहीं आये।

नारा०—"राजेश्वर राव विष खाकर मर गया है, अभी-अभी मेरे पास टेलिग्राम आया है, तेरी पढ़ाई बरबाद कर रहा हूँ, मेरे पास दो चिट्ठियाँ आई हैं। हैदराबाद, पुलिस वालों ने तार दिया है। चिट्ठियाँ राजेश्वर राव ने विष लेने से पहले लिखी थीं। उनमें से एक तेरे लिए है। उसे अभी मैंने नहीं खोला है, मेरे नाम उसने कुछ लिखा है, देख !"

श्यामसुन्दरी ने काँपते हाथों से उस चिट्ठी को लेकर मेज पर रख दिया। और यों कहने लगी, "मेरे मित्र मेरे भाइयों के समान हैं, मैं आपसे कह रही हूँ।"

"तीन साल पहले राजेश्वर राव हमारे घर में मित्र के रूप में आया। उसका एक और मित्र ने परिचय कराया था। वह हमेशा संगीत और चित्र-कला का परिहास करता। हमारे घर आया करता। एक दिन उसने अचानक प्रेम पर व्याख्यान देना शुरू किया। फिर उसने कहा 'मैं तुम्हें बहुत प्रेम करता हूँ, अगर तुम्हें भी प्रेम हो तो मुझे ग्रहण करो !' मैं कुछ कह न सकी। मैं बेहोश हो गई। मैंने झट उठकर कहा, 'जा, समुद्र में डूब मर राक्षस !' मैं चिल्लाने लगी। फिर उसे मैंने कभी न देखा। तुम्हारी बातचीत में मैंने अभी-अभी सुना कि वह तुम्हारा मित्र है। बस, यह पत्र तुम ही सबको पढ़कर सुनाओ !"

यह शेरनी की तरह गुस्से में थी। उसने नाक-भौं सिकोड़ ली। कोप के कारण उसका सौन्दर्य और भी निखर आया।

नारायण राव लिफाफा फाड़कर पत्र यों पढ़ने लगा—

"श्यामसुन्दरी देवी जी,

नमस्कार! इस पापी को तू शायद अब तक भूल गई होगी। उस दिन जब तू मुझ पर प्रलय की तरह गरजी थी, मैं भय के कारण उठकर भाग गया था, मैं इस खयाल में था कि मेरे उद्देश्य सच्चे थे, मैंने तुमको उनके बारे में बताया भी। फिर मैंने अपने मन की बात कह दी। मैंने किसी भी स्त्री को कभी भी हीन दृष्टि से नहीं देखा। अब मेरा विचार यह है, अगर कोई भगवान् है तो उसका अवतार स्त्रियाँ ही हैं। और अगर शैतान है तो मर्द ही उसके अवतार हैं।

मेरी उस दिन की बातों को सुनकर आप बहुत नाराज हुईं, यह मेरे मित्रों ने कहा। तभी मैंने आपको चिट्ठी लिखनी चाही, मेरे उद्देश्य में असत्यता न थी मैं तुच्छ हूँ। मैं मन में एक, और बाहर एक बात कहने वाला नहीं हूँ। इसलिए जब मुझमें प्रेम जगा तो मैंने साफ-साफ कह दिया। तब से मैंने आपसे क्षमा माँगनी चाही, पर माँगने का मौका न मिला। आज मैं इस दुविधा में हूँ कि सोच रहा हूँ कि मेरे विचार ठीक हैं कि नहीं। मैं जिन कारणों से यह संसार छोड़ रहा हूँ, मैंने उनके बारे में नारायण राव के पत्र में लिख दिया है। यदि आप क्षमा कर दें तो मेरी आत्मा को, अगर ऐसी कोई चीज है, सन्तोष होगा। नमस्कार।

राजेश्वर।"

सब सुनकर हैरान थे। नारायण राव ने श्यामसुन्दरी की ओर मुड़कर कहा, "मैं उसकी आत्मा की तरफ से प्रार्थना करता हूँ कि उसे क्षमा कर दो!" श्यामसुन्दरी की आँखें छलछला आईं; "भाई क्योंकि उसने मेरे मन में अनुचित अभिप्राय पैदा किये थे इसलिए उसकी आत्मा को क्षमा माँगनी पड़ी। उसकी आत्मा को शान्ति प्राप्त हो।"

चुपचाप सब मित्र चले आए। रोहिणी देवी ने उसके पास आकर पूछा, "नारायण राव भाई, क्या राजेश्वर राव विष खाकर मर गया है?"

"हाँ।"

"क्या कारण है ?"

"यह पत्र पढ़ो, बाद में बताऊँगा !"

रोहिणी पत्र लेकर पढ़ने लगी।

"मेरे प्रिय भाई, भले ही नीच कृत्य हो, मैं विदा हो रहा हूँ। मुझे बहुत दूर जाना है, या यहीं रुकना होगा, मुझे नहीं मालूम है। पर अब तक मजे में जिया हूँ। युद्ध में अभिमन्यु की तरह इस जन्म को छोड़ रहा हूँ, छोड़ क्या रहा हूँ, खत्म कर रहा हूँ। क्यों ? जो-कुछ भी हो, कोई परवाह नहीं।

पुष्पशीला प्रति भ्रमर को अपना मकरन्द लुटा रही है। अच्छा, काम रसा है, पर वह क्या कर सकती है ? पर पर मैंने उसके जीवन के लगर को तोड़ दिया है।

उसको भ्रमरों के लिए पुष्प-सा देखकर मुझे ईर्ष्या होने लगी। मैंने अपने को बहुत समझाया कि मुझे ईर्ष्या नहीं करनी चाहिए। पर कोई फायदा नहीं हुआ। मेरे विचार हमारे सब के विचारों से विपरीत हो गए। मेरे उद्देश्य सब निरर्थक हो गए।

खैर, जो-कुछ तूने कहा था मैंने उस पर सोचा, पर मैं कुछ समाधान न देख सका। किन्तु यह सन्देह होने लगा कि शायद तुम ठीक कहते हो। सन्देह को दूर करना चाहा, पर न कर सका।

ईर्ष्या अधिक हो गई और पुष्पशीला किसी और के साथ चली गई और अगर ईर्ष्या मुझे सताती रही तो ?

मैं पुष्पशीला को प्रेम करना भी तो नहीं छोड़ सकता। बहुत कोशिश की। अगर वह मुझे छोड़कर चली गई तो मैं कैसे रहूँगा ? उसका मन मेरे प्रति ठंडा पड़ गया था। वह मेरे हाथ से खिसक गई। मान लो कि मैं उसे छोड़कर रहूँगा, फिर भी इस जन्म का क्या अर्थ है ? एक और जन्म है। अच्छा ! फिर पैदा होऊँगा। कम-से-कम तब मेरे मन का यह तूफान, यह तपन, यह ज्वालामुखी, शायद शान्त हो, और मुझे सत्य के दर्शन हों।

नहीं, 'अगर यह जीवन अब खत्म हो गया तो जो जिन्दगी मैंने इतने आराम से काटी है कि उसके लिए क्यों दुखी होऊँ ?

तुमने, परमेश्वर, राजा, माल, सत्य, राघव ने मुझे खूब प्रेम से देखा।

मैं तुमसे विदा ले रहा हूँ। मैं धैर्य के साथ, निर्भय होकर अपना जीवन समाप्त कर रहा हूँ।

यह पत्र सबको दिखाना, मैं तुमको गले लगाता हूँ। नमस्ते!

राजेश्वर।

पुनश्च:—"मेरी माँ को जाकर आश्वासन देना। बूढ़ी है। राजे०।"

चुपचाप रोहिणी ने पत्र पढ़ा।

"कायर है" परमेश्वर ने कहा?

नारा०—"कायर क्या, उसको ठौर रास्ता नहीं मिला। मेरी बातें भी उसकी मृत्यु का कारण हुईं, यह सोचकर मुझे दुःख हो रहा है। क्या दिल था उसका?"

राजा०—"क्यों नारायण, क्यों इस तरह की बातें कर रहे हो?"

परम—०—"क्या कहूँ, जाने मनुष्य का हृदय कब किस तरफ जाये?"

१३ : वेदान्त बोध

धीरे-धीरे शारदा ससुराल में और मद्रास में पति के घर हिल-मिलकर रहने लगी। सूर्य अपनी भाभी से बड़े प्रेम से बात किया करती, हमेशा 'भाभी' कहकर पुकारती। शारदा यदि अकेली कहीं बैठती तो सूर्यकान्त उससे बातें करने चली जाती।

शारदा जब पहले ससुराल गई थी तब वह किसी से अधिक न बोली थी, सिर्फ सूर्यकान्तं से ही बातचीत की थी। जब वे दोनों मद्रास आ गए थे, तो उनकी मैत्री और भी गाढ़ी हो गई थी।

अब शारदा सास से बात किया करती, पति की बहनों से बात करती। ससुर अगर किसी चीज की जरूरत पड़ने पर सूर्यकान्त को बुलाते तो शारदा जाकर पूछती, "क्या चाहिए?" सुब्बाराय जी कहते, "तुम क्यों तकलीफ

करती हो ?" वह तुरत जाकर सूर्यकान्त को बुला लाती।

उसमें यह परिवर्तन कैसे आ गया था, वह क्यों सास-ससुर से बातें करने लगी, उसे मालूम ही नहीं था, दो-चार बार उसने सोचा भी कि उनसे बातें न करे, पर वह अनायास उनसे बात कर ही बैठती। वह प्रेम करने वाले स्वभाव की थी। पिता का प्रभाव था। जब ससुराल में कुछ परिचय हो गया तो उसका स्वभाव भी काम करने लगा।

सूर्य से दाल बनाना सीख गई थी। बच्चों को खिलाना भी जान गई थी।

इतने में यह जानकर कि बहन अपने पति के पास आई है, और पति पेट के इलाज के लिए मद्रास आये हैं, शकुन्तला अपने बच्चों को लेकर अनन्तपुर से मद्रास आई। मद्रास में अपनी बूआ के लड़के के घर गई।

जब से नारायण राव का वह आदर करने लगी थी तब से उसमें पति के प्रति भी आदर भाव पैदा हो गया था।

जगन्मोहन के विवाह के बाद जब वह पति के पास गई तो पति के गुस्सा करने पर भी वह कुछ न बोलती। उस दिन से वह स्वयं पति की सेवा-शुश्रूषा करने लगी। स्नान के लिए पानी रखती, पहनने को कपड़े देती, नौकरों को भी काम न करने देती। विश्वेश्वर राव भी पत्नी को परिवर्तित देखकर बड़े चकित हुए। घर की हर बात पर वह ध्यान देने लगी। पति के लिए ठीक बिस्तर न था। रायल सीमा में अच्छी कपास मिलती थी। उस कपास से उसने एक गद्दा बनवाया। रंग-बिरंगे खद्दर के दुपट्टे खरीदे। पति के पलंग पर बढ़ी मसहरी लगवाई। स्वयं पान-सुपारी देती। यह देखकर विश्वेश्वर राव ने आश्चर्य से पूछा, "यह क्या, इतनी भक्ति कब से आ गई है? क्यों, किसी अपने मतलब के लिए कर रही हो क्या?" वह शकुन्तला जो उनकी ईंट का जवाब पत्थर से देती थी, बिना कुछ कहे चली गई। वह फिर गर्भिणी थी।

आनन्द राव की बार में शकुन्तला अपने बच्चों के साथ नारायण-राव के घर आई। शारदा खुश हुई। जब जानकम्मा को मालूम हुआ कि वह सुब्बाराय जी को देखने आई है तो वह भी बहुत प्रसन्न हुई। वह तुरंत बहन के साथ सुब्बाराय जी के कमरे में गई। उसने पूछा, "आपका क्या

हाल-चाल है ?" सुब्बाराय जी ने शकुन्तला को पहचानकर कहा, "बेटो, बैठो ! शारदा, बैठो !" शारदा और शकुन्तला वहीं सोफे पर बैठ गईं ।

"पिता जी ने चिट्ठी लिखी थी कि आप बीमार हैं, और इलाज के लिए यहाँ आये हैं । बहन ने भी यहाँ से लिखा था कि आपका आपरेशन हो गया है और तबियत सुधर रही है । पत्र पाते ही उनसे कहकर आई हूँ । अब घाव तो भर गया होगा ।"

"बेटी, अँगुली काट दी गई ।"

"क्यों ?"

"अँगुली पर कोई फोड़ा निकल आया था । वह करीब-करीब सड़ गई थी । इसलिए काट दी गई ।"

"कौन-सी अँगुली ?"

"सबसे छोटी, बाएँ हाथ की । बाल-बच्चे और वे सब ठीक हैं न ? ये दोनों क्या तुम्हारे बच्चे हैं ?" सुब्बाराय ने उन बच्चों को हँसते हुए पास बुलाया । बड़ा लड़का ही सुब्बाराय जी के पास गया । सुब्बाराय जी ने उसका सिर सँवारकर कहा, "जाओ, बेटा खेलो !"

भोजन के बाद औरतें एक साथ बैठी थीं । वेंकायम्मा तब नानी भी हो चुकी थीं । वह हमेशा बातें करती रहती, उसके लिए कोई नया न था । बन्धुओं से बात करके उनसे दोस्ती करना उसे बहुत भाता था ।

यज्ञनारायण शास्त्री विवाह, उपनयन आदि संस्कार करा लेते थे । थोड़े-बहुत वेद भी सीखे थे । उनका सारा ग्राम पद्धति नियोगी था । यज्ञनारायण शास्त्री का गृहस्थ जरा बड़ा था । उनकी अस्सी एकड़ उपजाऊ जमीन थी, उनके घर में रसोइया न था । इसलिए बहुओं को ही चौका करना पड़ता । माइके में कभी काम न किया था, पर ससुराल में वेंकायम्मा, को देखकर लोग अचरज करते थे, "क्या काम करती है ।"

शारदा को पास बुलाकर पूछा, "क्यों अपनी बहन को अच्छी तरह से देख-भाल तो कर रही हो ?"

शकु०—"यह क्या भाभी, अगर हमारी लड़की ही हमारी परवाह करे तो इसमें कौन-सी बड़ी बात है ?"

वेंका०—"यहाँ, ब्रह्मास्त्र भेजा है, जब हमारे घर की यह है तो

आपके घर की लड़की कैसे हुई ? हमारी है या आपकी जानना ही होगा ।"

मकु०—"कुछ भी हो नटखटी बातों का जवाब देना मुश्किल है। आपका बड़ा भाई वकील है, छोटा भाई वकील है, इसलिए सचमुच आप भी वकील हैं। हम आपकी दलील का जवाब नहीं दे सकती।"

ज्ञानाम्बा—"यह क्या बहू, तुम्हारा पति कलक्टर है, वकीलों को जाकर उन्हींके सामने तो दलीलें देनी पड़ती हैं। अगर पति कलक्टर है तो पत्नी क्या नहीं है ? वकील चाहे कितनी ही बकवास करें, व उनकी दलीलें ठुकरा सकते हैं।"

शकु०—"आप तो हाईकोर्ट की वकील हैं, आप और भाभी मिल जावें तो कलक्टर भी कुछ नहीं कर सकता।"

सब-के-सब ज़ोर से हँसीं। इतने में चौके का काम पूरा करके लक्ष्मी-नरसम्मा भी वहाँ आकर बैठ गईं। "हमारी बहू क्या कहती है ? मेरी बहन हाईकोर्ट की वकील है ? हमारे भाई तो गवर्नर की कार्यकारिणी के सदस्य हैं, यानी गवर्नर हैं, यानी शकुन्तला भी गवर्नर है, गवर्नर के सामने वकील क्या बातें करेंगे ?"

शकुन्तला और ज़ोर से हँसी। "यहाँ हमारी तरफ़ वाले कोई नहीं हैं, इसलिए हम ही हार गए।" शारदा मुस्कराती हुई सूर्यकान्त के साथ गई और सारा आदि के लिए पान बनाने लगी।

इतने में रोहिणी, सरला, मालिनी अपनी माँ के साथ अन्दर आईं।

श्यामसुन्दरी की परीक्षाएँ थीं।

लक्ष्मी नरसम्मा को बह्म समाज की उन लड़कियों का घर में आना पसन्द न था। जब उसको मालूम हुआ कि बिना विवाह किये वे लड़कियाँ पढ़ रही थीं, और उनकी माँ दो बार विधवा हो चुकी थी, तो वह सोचने लगी कि जाने यह संसार कहाँ जा रहा है। नारायण राव भी उनकी नज़र में उनसे मैत्री करके अपनी जाति खो रहा था। शहरों में रहना ही वाहियात है।

बड़ी बोली की बात जानकर वेंकटरत्नम्मा ने उनसे कहा—"दो पद तो सुनाओ!"

लक्ष्मी तत्क्षण मान गई और मधुर स्वर में पद्य गाने लगी; जिसका तात्पर्य यों था—

"गुरु शिष्य को देखकर कह रहा है, अन्न का सूक्ष्म भाग मन है, पानी का सूक्ष्म भाग प्राण है। इन दोनों के मिलने पर चेतना पैदा होती है, और वह न मिले तो चेतना नहीं है।"

केशव०—"अन्न मन कैसे हो सकता है?"

लक्ष्मी०—"पचा हुआ अन्न आठ दिन में रस, और धीमे-धीमे रक्त, मांस, बुद्धि, अस्थि, मज्जा बन जाता है, उनके मिलने से लिंग बनता है, उस लिंग में मन घुसता है, प्राण प्रवेश करता है। अन्न में आठवाँ हिस्सा आकाश और आठवाँ हिस्सा वायु दोनों के मिलने से मन बनता है।"

"और प्राण आठवाँ हिस्सा है, वायु आठवाँ हिस्सा है। हम जो जल पीते हैं, उसमें भी वायु है।"

"कैसे? त्रिगुण से मूल प्रकृति, उसमें से तीन गुण पैदा हुए। उनसे महा महत्तत्त्व, महत्तत्त्व से अहंकार, अहंकार से शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध आदि पंचभूत, उन पंचभूतों के परस्पर सम्मिलन से समस्त संसार बना।"

१४ : ओपेरा

लक्ष्मीपति और नारायन राव उस दिन रात को सूर्यकान्त और शारदा को लेकर एलफिन्स्टन में एक अंग्रेजी नृत्य देखने गये। परमेश्वर, मात, रामचन्द्र, राजा राव नाटक-हॉल के पास मिले। नारायन राव ने पहले ही दस रुपये के टिकट खरीद रखे थे। गद्देदार कुर्सियों पर पहले लक्ष्मीपति, फिर सूर्यकान्त और शारदा बैठे। मित्र इस तरह बैठ गए कि नारायन-राव के लिए शारदा को बगल में खाली कुर्सी छोड़ दी।

नारायन राव और शारदा दोनों खुश हुए। शारदा का प्रफुल्लित

चेहरा अन्धेरे में कौन देख सकता था ?

नृत्य शुरू हुआ। वह नृत्य एक नाटक की तरह था। नायक और नायिका ने नृत्य शुरू किया। नायिका के साथ दस कलाकार, नायक के साथ २० कलाकार युवतियाँ नाचने आईं।

विचित्र-विचित्र पोशाकें थीं। "ये मनुष्य कितने विचित्र मालूम होते हैं," लक्ष्मीपति ने कहा।

सबकी एक ही पोशाक है, एक ही मुद्राएँ। कथानायक आकर पहले नृत्य करता है, दूसरे अनुकरण करते हैं, वह आगे आकर गाता है।

शुरू से लेकर अन्त तक नृत्य और संगीत चलता गया।

कलाकार अद्भुत थे, पोशाक भी निरुपमेय-सी थी। उन कलाकारों का सौन्दर्य ऐसा कि दर्शकों के दिल में खलबली मचे।

कहानी कम थी। नृत्य अधिक था। जो पुरुष गा रहे थे, उनकी आवाज में रौद्र समुद्र की गम्भीरता थी, वे कितनी ही ऊँचे जा सकते थे, स्त्रियों के कण्ठ अमृत-सदृश थे।

जब नाटक चल रहा था, अनजाने शारदा ने अपना हाथ पति के हाथ पर रखा। वह जानती थी कि वह पति का हाथ है। स्पर्श-सुख का अनुभव करते वह फिर हाथ न हटा सकी। यह सोचकर कि पति को मालूम नहीं है उसने अपना हाथ वहीं रखा। मधुर प्रवाह में वह बहने लगी। प्रेम के आवेश में वह काँप-सी गई। लज्जा के कारण अपना हाथ धीरे से हटा लिया।

विश्रान्ति के समय नारायण राव आदि बाहर जाकर सिगरेट पीकर आये। नारायण राव कीमती चाकलेट लाया। उन्हें सूर्य को देने के लिए वह शारदा पर झुका, फिर झट सँभल गया।

पत्नी और पति के शरीर में बिजली सञ्चरित-सी हो गई। शेष नृत्य में शारदा को ऐसा लगा जैसे वह स्वयं नृत्य कर रही हो। वह उस आनन्द में तन्मय हो गई। प्रेक्षक के समस्त दृश्य—सब-कुछ भूल गई। कटाक्ष से पति को देखा। उस अन्धकार में पति उसको दिव्य पुरुष-सा लगा। उससे उसका मन उत्तेजित हुआ। सारा संसार उसे संगीत में डूबता नजर आया।

नृत्य कथा—ओपेरा, खत्म होते ही सब बाहर आकर अपने-अपने

घर को चले गए। अगले दिन शाम को वे सब नारायण राव के घर मिले। राघवराजू और राजा राव के जाने का दिन आ गया था। इसलिए सब मित्रों को, रोहिणी, सरला, नलिनी देवी को दावत के लिए निमन्त्रित किया। पिता की बीमारी ठीक करने वाले, डॉ० रंगाचारी और उनके सहायकों को वे टी-पार्टी दे रहे थे, और शाम को सबके लिए भोजन था। आनन्दराव जो, नारायण राव के मोनियर, नटराज आदि, सब उपस्थित हुए। हाईकोर्ट के सब वकील भी वहाँ थे।

श्यामसुन्दरी न आ सकी, क्योंकि उसकी परीक्षाएँ थीं। खाने की चीजें और चाय वगैरा सब कोमल विलास वालों ने मुहय्या की थीं। उनके ब्राह्मण परोसने वाले गान्धी टोपी और सफेद कपड़े पहनकर परोसने के लिए नियुक्त थे। हाईकोर्ट के जज मद्रास के नागेश्वर राव-जैसे आन्ध्र प्रमुखों को नारायण राव ने दावत के लिए बुलाया। बड़े-बड़े सेठों को बुलाया। नारायण राव, राजा राव, परमेश्वर, लक्ष्मीपति आदि ने सब प्रबन्ध करवाए।

नारायण राव के घर के लॉन पर दावत दी गई थी। नारायण राव ने, जिसे दोस्तों ने 'माली' का खिताब दे रखा था, लॉन को, गुलाबी रजनी, क्रोटन आदि तरह-तरह के पौधों से सजाया था। पेड़ों पर, पौधों पर रंग-बिरंगे बिजली के लट्टू लगा रखे थे। नारायण राव ने क्योंकि पिछले दिन ही अपने ससुर को तार दिया था, इसलिए वे भी सवेरे आ गए थे।

टी-पार्टी बिना किसी कमी के खत्म हुई। संगीत के प्रारम्भ होने से पूर्व नारायण राव ने उठकर कहा—

"देखियो, सज्जनो, और भाइयो, मेरे पिता बहुत बीमार हो गए थे। शल्य-चिकित्सा की जरूरत थी। डॉ० रंगाचारी जी ने अपने सामर्थ्य व चातुर्य से यह कार्य किया। रंगाचारी जी के प्रेम और उपकार के लिए मैं और मेरे पिता जी, हमारे बन्धु-बान्धव सब आभारी हैं। हम उनका ऋण नहीं चुका सकते। मैं उनके सहायकों, और मित्र राजाराव की पर्याप्त प्रशंसा नहीं कर सकता। मैं भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि वह उन्हें और और आप सबको आरोग्य और ऐश्वर्य प्रदान करे।"

रंगाचारी ने झट उठकर कहा, "नारायण राव ने अपने पिता को

स्वास्थ्य की पुनः प्राप्ति के सन्तोष में मेरी प्रशंसा की है। मुझमें क्या है, कोई भी वैद्य यह कर सकता है। हमें हमारी मजदूरी दीजिये, हम भरसक सहायता करेंगे। बाद में भगवान् का काम है। इसलिए मैं उनकी प्रशंसा का पात्र नहीं हूँ।"—(तालियाँ)।

संगीत-सम्मेलन हुआ। श्री रामय्या का संगीत इस उच्चकोटि का था कि सब कहने लगे कि "क्या आन्ध्र में भी इतने महान् संगीतज्ञ हैं ?"

नलिनी देवी ने अपने आंग्ल भाषा-पाण्डित्य से सबको प्रभावित किया। उसको गर्व था कि उसे पाश्चात्य शिक्षा दी गई थी? वह हमेशा अंग्रेजी में ही बोला करती थी। वह अपने व्यवहार-सम्भाषण से सबको चकित कर देती थी।

टी-पार्टी में सबके बीच में से जल्दी जाकर उसने नारायण राव से पूछा, "किसने गाया है? नाम लिखा है श्री रामय्या जी का, क्या ये बड़े अच्छे गायक हैं?" नारायण राव ने मुस्कराते हुए बराबर भेज दिया।

सरला मितभाषी और लज्जाशीला थी। रोहिणी खास शर्मीली न थी। वह किसी भी तरह के आदमी को आकर्षित कर सकती थी। अगर पाँच-दस उसकी तारीफ करते तो वह खुश होती। नलिनी 'प्रेम' ही नहीं जानती थी। वह लड़की थी, जो अपने हाव-भाव से यह बतावी-सी लगती कि मैं सुन्दर हूँ। वे तीनों टी-पार्टी में स्त्रियों के पास बैठे थे।

नारायण राव ने उनका खूब आदर-सत्कार किया। परमेश्वर जब-जब मौका मिलता, रोहिणी से बातें करता। उनके साथ कई और स्त्रियों को भी निमन्त्रित किया गया था। यह भी उन्हींके पास बैठ गए।

टी-पार्टी के बाद नलिनी, सरला, रोहिणी भोजन के लिए नारायण के घर ठहर गए।

श्री राममूर्ति को उन्हें देखकर आश्चर्य हो रहा था। क्योंकि राजमहेन्द्र-वर में पढ़ते हुए उसने वीरेश लिंग पन्तुलु के उपदेश सुने थे, इसलिए उसने अपने-आपको सँभाल लिया था। वह उनसे बातें करने लगा।

श्रीराम०—"आपकी बहन की परीक्षाएँ चल रही हैं न ?"

नलिनी—"यह क्या बड़े भाई साहब, क्या आपको भी हमें 'आप' कहकर आदर देने की जरूरत है ?"

रोहिणी—"हमारी बड़ी भाभी को क्यों नहीं बुलाकर लाये ?"

श्रीराम०—"जरा परिवार बड़ा है, अगर घर में कोई न हो तो कैसे ? इस बीच में मैं कोत्तपेट दो बार हो आया हूँ, अमलापुर में दो मुकदमे थे, वह भी देख आया हूँ, जो !"

नलिनी—"यह आपने 'जो, जो' क्या लगा रखा है। अगर आपने इसी तरह बातें कीं तो हम आपसे नहीं बोलेंगे।"

श्रीराम०—"माफ कीजिये, नहीं-नहीं, माफ करो! तुमने परीक्षा में कैसा लिखा ?"

नलिनी—"उम्मीद है कि जरूर पास हो जाऊँगी। अमलापुर में क्या लड़कियों के लिए हाई स्कूल है ?"

श्रीराम—"नहीं है, वहाँ कौन पढ़ेगी ?"

नलिनी—"कोई नहीं है, आश्चर्य है।"

रोहिणी—"वाह नलिनी, मद्रास में ही कितनी पढ़ने वाली हैं ?"

इतने में परमेश्वर ने आकर रोहिणी से पूछा, "तुमने क्या 'एलफिन्स्टन' में अंग्रेजी नाटक देखा था ?"

रोहिणी—"नहीं तो! क्या अच्छा था ? सुना है कल तुम गये थे ? शारदा भाभी ने बताया है।"

परम—"हाँ गये थे। मैंने कुछ ऐसी नृत्य-कथाओं की फिल्में देखी थीं। पर यह फिल्म से अच्छा है।"

नलिनी—"हमारे वेश्याओं के नृत्य से अधिक अच्छा था ?"

राजाराव, नारायण राव, यज्ञनारायण शास्त्री वहाँ आये। लक्ष्मीपति पिछवाड़े में कुर्सियाँ आदि लारियों में भेज रहा था। लाँन खानों पर रहा था। जमींदार भी भोज के लिए वहीं थे। वह भी उसी 'हॉल' में आकर बैठ गए।

परम—"तुम क्या वेश्याओं का नृत्य मखौल समझती हो ?"

रंगाचारी जी और उनके सहायक, मित्रों के लिए सहभोज दिया नारायण राव ने। सहभोज के बाद वेदवल्ली के नृत्य का प्रबन्ध था।

नलिनी—"और क्या, दाक्षिणात्य वेश्याओं के वेश भी क्या हैं ? कल जो कवि-सम्मेलन में भागवत सुना था वह भी बड़ा अजीब था। क्या

मैंने देखा नहीं देखा है ? क्या मैंने उनका नृत्य नहीं देखा है ?"—वह ठहाका मारकर हँसने लगी।

परम०—"यह क्या नलिनी ! आपका मतलब है कि तुम नलिन कला नहीं जानती हो ?"

नारा०—"अब तू बता पहले मैंने इन्हें क्या व्याख्यान दिया था, नलिनी ने केवल सिर हिला दिया था। श्यामा और रोहिणी ने समझ लिया था।"

जमी०—"बचपन से प्रोफेसर्तिम पन्तुलु की मेहरबानी से भागवत और नृत्य आदि से मुझे नफरत-सी है। क्यों परमेश्वर मूर्ति इस विषय में तुम्हारी क्या राय है ?"

इतने में गुन्नाराव जी वहाँ आये। उनके बैठने के लिए कुर्सी पर मसनद आदि लगा दी गई।

गुन्ना०—"क्या आप नृत्य के बारे में बातें कर रहे थे ?"—उन्होंने जमींदार से पूछा।

जमी० (हँसकर)—"मैं परमेश्वर मूर्ति से नृत्य के सौन्दर्य आदि के बारे में बताने के लिए कह रहा था।"

गुन्ना०—"हमारे बचपन में हमें भरत-शास्त्र के बारे में भी बताया जाता था। अगर हम नृत्य में बैठते तो गणिका घबरा उठती थी। हमारे पिताजी को समस्त कलाएँ आती थीं। हमारा छोटा लड़का ठीक मेरे पिता जी के-जैसा ही है। हम अपने पिता से बहुत डरते थे। जब वे गाते तो सारा नगर काँप उठता। ६५ वर्ष की उम्र में वे जमीन जाते, नहाते धोते, भोजन करते, रात को दूसरे पहर जब त्यागराज की कृतियाँ गाया करते, तो गाँव वाले उनके पास ही रहते। वे त्यागराज को जानते थे, वे उनके प्रिय शिष्य थे। यह परम्परा ठीक है कि नहीं, यह मैं भी जानता हूँ। अब नारायण राव गाता है तो ठीक उन्हीं की तरह गाता है। पर उसमें अभी वह गाम्भीर्य पूरी तरह नहीं आया है।"

नारा०—"पिताजी यह अंग्रेजी शिक्षा का प्रभाव है।"

परम०—"नृत्य के बारे में अगर नाऊ जी दो-चार शब्द कहें तो अच्छा होगा।

जमी०—"जी हाँ!"

सुब्बा०—"क्या है, नाटक दो प्रकार का है, नृत्य और नृत्त। नृत्य भाव-प्रधान है, नृत्त अलंकार-प्रधान है। नृत्य भी दो प्रकार का है, उद्धत भाव-प्रधान ताण्डव, और कंपित भावयुत लास्य।

१५ · दो मार्ग

जमी०—"हमें और समझाकर बताइये!"

सुब्बा०—"बताता हूँ, भक्ति की तन्मयता, कोप, रौद्र, शौर्य, आवेश को जो निरूपित करता है वह ताण्डव है। शिव का ताण्डव, काली देवी का संहार ताण्डव, कृष्ण का चक्र लेकर भीष्म को मारने के लिए उछल-कूद वाला ताण्डव, युद्ध में जाने से पहले रावण का किया हुआ रौद्र ताण्डव, चतन्य, निवर्ति आदि देवताओं का तन्मयता का ताण्डव, सब इसी श्रेणी में आते हैं।"

"दूसरा मैंने लास्य कहा है, राधा, सत्यभामा कृष्ण आदि के प्रेम व कोमल भावों को निरूपित करने वाला लास्य है।"

"यह विद्या महा उत्तम है। कविता के लिए भाषा साधन है। चित्र-लेखन के लिए रंग, शिल्प के लिए शिला, संगीत के लिए ध्वनि, उसी प्रकार नृत्य के लिए मुख्य साधन मनुष्य की देह है। मनुष्य ही मुख्य वस्तु है।—मनुष्य की सर्व शक्तियाँ। इसीलिए नृत्य विद्या को तपस्या करके सीखने वाला सर्वोत्तम कहा गया है।"

जमी०—"जी!"

सुब्बा०—"भाव के व्यक्तीकरण को अभिनय कहते हैं। कलाकार उसको अंगाभिनय से, वाच्याभिनय से, आहार्याभिनय, सात्विकाभिनय से दिखाता है।"

जमी०—"नृत्य में अभिनय प्रधान है या नृत्य?"

मुख्या०—"अगर भाव न हो तो वह कला ही नहीं है। इसलिए भरत का अर्थ ही है भाव, राग, ताल। यह भरत-शास्त्र में कहा गया है।"

उमी—"जी।"

मुख्या०—"अभिनय, संगीत के साथ होना चाहिए, यानी राग और तालयुक्त होना चाहिए। ताल पाद की गति से और राग संगीत से दिखाया जाता है। नृत्य करते हुए एक पद गाकर एक भाव को व्यक्त करने को 'करण' कहते हैं। मुख्य भावों को लेकर इन 'करणों' का नामकरण किया गया है। भरत ने इस प्रकार के १०८ करण बताये हैं। कुछ करणों के मिलने पर 'अंगहार' बनता है।"

उमी०—"और साफ करके बताना होगा।"

मुख्या०—"त्यागराज की कृति को लीजिये। कृति एक सम्पूर्ण काव्य है। इसमें एक 'पल्लवि' चरण होता है, अनुपल्लवि एक और चरण, इन सबके मिलने पर वह 'अंगहार' कहलाता है। कई कृतियों के मिलने पर एक महाकाव्य बनता है। प्रति अष्टपदी को एक अंगहार समझिये। सब अष्टपदियों के मिलने पर सारी एक महाकाव्य होता है। इस प्रकार से एक काव्य को नृत्य द्वारा प्रदर्शित करना नाट्य समझा जाता है।"

उमी०—"जी।"

नलिनी—"आऊ जी, अभिनय चार प्रकार का बताया गया है, क्या ये हाथ-पैर हिलाना ही है क्या ?"

मुख्या०—"हाँ, बेटी, अंगाभिनय में सारा शरीर साधन है। उसमें मुख्यांग, प्रत्यंग, उपांग आदि हैं। हाथ, सिर, आँख, वक्ष, पार्श्व, कमर, पैर मुख्य अंग हैं। हाथ, कोहनी प्रत्यंग हैं। अंगुलियाँ उपांग हैं। आँखों के लिए पलक, प्रत्यंग है। बरौनियाँ, पुतलियाँ उपांग हैं, इसी तरह सभी अंगों की। इनके संचालन से भाव का व्यक्तीकरण, अंगाभिनय कहा जाता है, भरत और नन्दिकेश्वर इनके प्रणेता हैं। काल-क्रम में इनमें आवश्यक परिवर्तन हुए हैं।"

परम०—"नहीं तो विविध-विविध प्रान्तों में विविध परम्पराएँ क्यों चलतीं ?"

प्रज०—"क्या हैं वे परम्पराएँ ?"

परम०—"केरल में कथकली, उत्तर देश में कथक, मणिपुर की मणिपुरी, कूचपुडी, तजौर परम्पराएँ आदि।"

मुग्धा०—"मैंने उनका नृत्य तो नहीं देखा है। पहले एक विदुषी, सुन्दर कलाकार तेलुगु देश में हुआ करती थी। उनका नृत्य बड़ा मनोरंजक और कलापूर्ण होता था। उनके नृत्य मैंने देखे हैं।"

जमी०—"अब यह विद्या या तो समाप्त हो गई है, नहीं तो बड़ी क्षीण अवस्था में है।"

मुग्धा०—"जी, उस विद्या को पुनर्जीवित करना, बहुत आवश्यक है। इसीलिए नारायण से कहकर आज मैंने वेदवल्ली का नृत्य करवाया है।"

नारायण ने उस दिन जो भोजन बनवाया वह षड्रसोपेत ही न था, अपितु बहुरसोपेत भी था। भोजन के बाद हाल में सब उचित आसनों पर आसीन हुए। वेदवल्ली नृत्योचित वेश-भूषा पहनकर अतिथियों के समक्ष खड़ी हो गई। उसके पीछे तबलची, वाइलन, बजाने वाला, गाने वाले आदि थे।

वेदवल्ली सुन्दर थी। दाक्षिणात्य वेश्याओं में वह उत्तम थी। ऐसे घराने में पैदा हुई थी, जो नृत्य के लिए प्रसिद्ध था। उसके नृत्य की दक्षिण में सर्वत्र प्रशंसा हुई थी। रेशमी पाजामे पर उसने रेशमी साड़ी लाँग निकालकर पहन रखी थी, फिर पीछे से आगे निकालकर मोड़ रखी थी। मोटी किनारी वाली, जरी की साड़ी थी। कीमती जाकेट थी। रत्न-खचित मेखला थी। उसने बहुत-से आभूषणों से अपने को अलंकृत किया हुआ था। लम्बी वेणी थी, और उसमें फूल गूँथे हुए थे। पैरों में नूपुर बाँध रखे थे।

सबको नमस्कार करके, भगवान् और अभ्यागतों की प्रार्थना करके उसने 'अलर्लारिप्प' शुरू किया। तिलाना नृत्य किया। भैरवी प्रारम्भ की।

मलय मारुत-सा चला। झरनों की तरह कूदी, नदी की तरह बही, भँवरें लहरें खाती बहती गई।

एक घंटे में उसने वह नृत्य समाप्त किया। उसके बाद यो नारायण तीर्थ आदि ताल में 'तरंग' गाने लगे। उसका मुँह गोपिका का-सा हो गया। मानो कृष्ण का ध्यान कर रही हो। उसीने बाल कृष्ण बनकर,

उसने बाल-क्रीडा दिखाई।

उसके पांवों के नूपुरों की ध्वनि सुन्दर स्वर-पूरित हो वेणु-ध्वनि से सम्मिलित हो, चतुर्दिक् में व्याप्त हुई। मानो मेघों को छेदकर विद्युत् कौंधी हो। तारे चमके। चाँदनी सर्वत्र फैल गई।

उसके बाद उसने क्षेत्रय्या के पद का अभिनय किया। वह भैरवी-बन्ध, मिश्र जाति त्रिपुट तालयुक्त थी—

"मंचि दिनमु नेडे,
महाराज रारम्मनिये।"

(आज ही अच्छा दिन है, महाराजा को बुलाओ।)

विरहिणी राधा ने, दिव्य लीला विनोद, परम दक्षिण नायक, नील गोपाल को बुलाने के लिए सहेली से कहा। कहा कि उसकी गलतियाँ ठीक कर देगी, उसकी दूसरी प्रेयसियों के बारे में सोचेगी भी नहीं।

परमेश्वर उसकी भाव-भंगिमा, नृत्य, अभिनय देखकर तन्मय-सा हो गया। भले ही उस बालिका का उच्चारण ठीक न हो, भले ही उसमें भावों का वाच्याभिनय न हो, पर क्या सुन्दर था उसका नृत्य।

उस बालिका के अवयव अभिनय के कारण और भी सौन्दर्य दे रहे थे। संचलन में यद्यपि थोड़ा-बहुत दाक्षिणात्य प्रभाव था, कर्कशता थी, पर उस नृत्य के सौन्दर्य में वह भी शोभा देती-सी लगती थी।

अतिथि, मित्र अपने-अपने घर चले गए।

सुब्बाराव भी पूर्णतः स्वस्थ हो गए थे। सब कोतपेट के लिए रवाना हुए। नारायण ने भी जाने का निश्चय किया।

राजाराव थोड़े दिन ठहरकर कमलापुर चला गया था।

श्यामसुन्दरी की परीक्षाएँ हो गईं। उसको पास होने का पूरा भरोसा था। हाईकोर्ट की छुट्टियाँ थीं। इसलिए नारायण राव पत्नी और बन्धु-बान्धवों को लेकर पिता के साथ चला गया।

शकुन्तला मद्रास में चार दिन रहकर वापिस चली आई थी। जब तक वह मद्रास में रही, नारायण राव से हर विषय पर बातचीत करती। बहन से उसकी सेवा-शुश्रूषा करवाता। प्रेम से देखता। उसे समझ में न आता था कि शारदा क्यों उसको तरसा रही थी। शारदा या कभी नारायण राव से

बातचीत करना या खेल-खिलवाड़ करना उसने न देखा। उन दोनों के दिल में क्या था, वह अच्छी तरह न जान सकी।

एक दिन नारायण राव को उसने अपने कमरे में रहने के लिए कहा। अपनी बहन शारदा को वहीं ले गई। दोनों एक-दूसरे को देखकर हैरान थे।

"मैं बहन से आपके बाल ठीक करवाना चाहती हूँ।" शकुन्तला ने कहा।

नारायण राव ने मुस्कराते हुए कहा, "मुझे कुछ काम है।"

शकु०—"जाने दीजिए, आप अपना काम! यह थोड़ा-सा काम मेरे लिए भी कर दीजिए।"

नारा०—"आपकी इच्छा।"

शारदा ने भय, सन्तोष, आश्चर्य के कारण काँपते हुए हाथों से उसके बाल बनाये।

कोतपेट आने के थोड़े दिन बाद नारायण राव को पेद्दापुरं से एक तार मिला, "आपकी बहन का आपके जीजा ने मारकर गली में निकाल दिया है, आपकी बहन बेहोश हो गई है।" यह तार में था।

नारायण राव तुरन्त पेद्दापुर गया। क्यों पेद्दापुर जा रहा था, उसने किसी को नहीं बताया।

नारायण राव को पेद्दापुर में हर चीज़ भयंकर लगी। न पति ने, न पत्नी ने, न उनकी लड़की ने ही भोजन किया था। उसकी बहन रह-रहकर बेहोश हो रही थी। नारायण का दिल काँपा, और दुःख से दहल उठा।

क्या मनुष्य इस तरह के व्यवहार कर सकते हैं? क्या अब भी ऐसे लोग हैं जो स्त्रियों को पशु समझते हैं। जाने कब ये मानवता-हीन पुरुष मोक्ष के अधिकारी हो सकेंगे? पशुओं के प्रति, गरीबों के प्रति, स्त्रियों के प्रति, अन्य जातियों के प्रति पशुत्व का व्यवहार करने वाले, जिस युग में करोड़ों हों वह वस्तुतः कलियुग है। वह भगवान् है, वह भगवान् का अवतार है, यह मनुष्य क्यों भूल गया है? मेरी बहन सात्विक है, सर्व-गुण-सम्पन्न है। वह पति को भगवान् का अवतार समझती है। इस तरह की अच्छी स्त्रियों का ही सामर्थ्य हर कष्ट झेलने होते हैं। उन पत्नियों के लिए, जो पति को गुलाम बना लेती है, यह जीवन पुष्पमय मार्ग पर चलना है न?

नारायण राव ने जीजा के पास जाकर कहा, "तेरी अक्ल मारी गई है। मैंने तुझे मनुष्य समझा था। पर तू निरा जानवर है। तुझे इतना गुस्सा क्यों आता है? गुस्से की हद होनी चाहिए। जा, तू एक चाकू लेकर उसे मार क्यों नहीं देता? नहीं तो विष लाकर देता हूँ, तू खुद उसके मुख में वह डाल देना। विष भी ऐसा लाऊँगा जो तड़पा-तड़पाकर मारे। उस तरह मार दे, कम-से-कम तब तो तेरा क्रोध ठंडा पड़ जायगा? पहले गुस्सा करना, फिर पछताना। दोनों एक ही बाट के दो पासे हैं। देख, वह फिर बेहोश हो रही है, अब उसका जीवन बस इसी तरह बीतेगा। जान लो कि मर गई है, अब तो खुश हो।"

"अगर मेरी बहन में कोई दोष है तो बता, अगर वह बड़ा दोष है, तो जो तूने किया है मैं उस पर सन्तोष करूँगा।"

नारायण राव के आँसू निकल पड़े। "जीजा, मुझे माफ करो, पहली बार ही मेरे आँखों में आँसू आये हैं। गुस्से में जाने क्या-क्या कह गया। पर क्रोध को शान्त करके कहता हूँ। जो तूने पाप किया है उसकी निवृत्ति तुमसे ही है। तुम्हारा हृदय द्रवित करने के लिए, और अपना कल्मष दूर करने के लिए मैं यहाँ चार दिन के लिए उपवास-व्रत करना चाहता हूँ।" उसने कहा।

नारायण राव जब से आया था तभी से वीरभद्र राव कुम्हला-सा गया था।

उस दिन वैद्यों को बुलाकर नारायण राव ने बहुत की चिकित्सा करवाई। मानजी को भोजन खिलाने के लिए पड़ोस के घर वाले ले गए। नारायण राव को भी कई ने भोजन के लिए बुलाया। पर वह न गया। शाम को तीन बजे सत्यवती फिर होश में आई।

होश में आते ही नारायण राव को सामने पाकर सत्यवती को ऐसा लगा, जैसे कोई सपना देख रही हो। उसकी आँखों में तरी आ गई।

दो साल तक जीजा ने कुछ न किया। जब उसकी बहन दो साल पहले गर्भिणी हुई थी, क्योंकि उसको बहुत तंग किया गया था, बच्चा एक महीने पहले पैदा हुआ था। सत्यवती मुश्किल से बची, और बच्चा मर गया।

वह सब वीरभद्र राव जानता था। तब से वह पत्नी की पूजा-सी करता आया था। अब फिर सत्यवती का पाँचवाँ महीना था। उसका सुन्दर मुँह मुरझा गया था। उसकी बड़ी आँखें और भी भयंकर मालूम होती थीं। वह इतनी बलहीन हो गई थी कि लगता था, मानो क्षय पीड़ित हो।

नारायण राव तब बहन के बिस्तर पर बैठा हुआ था। सत्यवती यद्यपि बहुत कमजोर थी, तो भी धीरे से उठकर सरक कर, उसकी गोद में सिर रखकर उसने कहा, "भैया!" नारायण के दिल के टुकड़े हो गए। कभी दुःख न जाना था। आँखों में आँसू भी न आये थे। मन्दर-मन्दर घुटा जा रहा था। "बहन उसको बदलने के दो तरीके हैं। एक पैरों में, बम्बई में गान्धी जी ने जिस प्रकार उपवास किया था, उस प्रकार तुम्हारे घर में मैं उपवास करूँ। दूसरा यह कि तुम्हें अपने साथ घर ले जाऊँ, और जब तक जीजा तुम्हारे पैरों पर न पड़े तब तक वापिस न भेजूँ। पर ये दोनों तुम्हें पसन्द न होंगे। जो तुम्हें पसन्द है, वही करूँगा। मैं महीने-भर तक उपवास कर सकता हूँ। मगर तुम्हारी मर्जी के बगैर करूँ तो मेरे हृदय में पर्याप्त पवित्रता न आयगी। और अगर तुम्हें अधिक दुःख हुआ और जान चली गई तब मैं क्या करूँगा? इसलिए तुम्हारी अनुमति के बिना मैं कुछ न करूँगा।"

"भैया, तुम उपवास न करो, मुझे ले भी मत जाओ, मैं उनकी सेना-शुश्रूषा करती रहूँगी। चली गई तो चली जाऊँगी, नहीं तो उन्हें छोड़कर अब मैं कहाँ जाऊँ?"

'माँ हो, क्या पतिव्रता हो, शाबाश, फिर अरुन्धती-जैसी स्त्रियाँ पैदा हो गई हैं। मुझे गुस्सा न आये यही प्रार्थना करता हूँ।' उसने मन-ही-मन सोचा।

बहन को जबरदस्ती नारंगी का रस देकर, राजा राव को तार देकर, नारायण राव जब बाजार से आ रहा था तो उसे वीरभद्र राव होटल में भोजन करके बाहर आता हुआ दिखाई दिया। उसके मुँह पर करणाई मन्द हास उल्का की तरह चमका।

१६ . अंकुर

दूसरे दिन शाम को नारायण राव, सत्यवती, उसकी लड़की नागरत्न, राजा राव के साथ कोत्तपेट पहुँचे । सत्यवती को देखकर जानकम्मा बड़ी दुखी हुई । उसको गले लगाकर कहा "बेटी, इतनी कमजोर हो गई हो, मेरा भाग फूट गया था कि उस राक्षस के मुख में तुझे डाल बैठी । सूरी, वेंकायम्मा, लक्ष्मी नरसम्मा सबकी आँखों में आँसू आ गए ।

राजा०—"चाचो जी, सत्यवती बहन बेहोश हो गई है, बेहोशी नहीं आनी चाहिए। देखिये, हाथ भी ऐंठ-से रहे हैं। नारायण, बहन को अन्दर उठाकर ला ! सूरी, लोटा भर पानी लाओ ! अर्जेण्ट ।"

नारायण राव झट सबसे पहले पानी लाकर बहन के मुँह पर छिड़कने लगा । राजा राव अपनी दवाइयों के सन्दूक से कोई दवा निकाल कर उसकी नाक के सामने रख रहा था । सत्यवती को होश आया, उसे ग्लूकोज का इन्जैक्शन दिया गया ।

सुब्बाराय जी ने वहाँ जाकर उसको छोटे बच्चे की तरह उठाकर अन्दर पलंग पर बिठा दिया । सत्यवती पिता के गले से चिपट गई ।

पेद्दापुर में जो-कुछ हुआ था उस विषय पर नागरत्न ने नानी-नाना से यों कहा—

"दूसरे दिन मामा ने पिता जी को होटल में खाते देखा था, यह मामा ने घर आकर बताया । कचहरी से पिताजी आठ बजे से पहले नहीं आयें । मामा ने पिता जी को बहुत समझाया । पिताजी को कुछ गुस्सा आया और उन्होंने मामा को गरमा-गरम सुनाईं । इतने में मामा को गुस्सा आ गया । उन्होंने पिताजी के गाल पर दो-चार जमा दिये । कुरते की आस्तीनें ऊपर करके कहा, 'देख, तुझे अभी मारे देता हूँ ।' मामा को देखकर मुझमें कँपकँपी पैदा हो गई । एकाएक बड़े से लगने लगे मामा, ठीक वैसे ही जैसे तू लगा था उस दिन जिस दिन तूने बछड़े को पीटने वाले नौकर को मारा था ।"

नारायण राव खिलखिलाकर हँस रहा था । राजाराव भी मुस्कराने लगा ।

मुन्ना०—"क्यों क्या बात है बापू ?"

नारा०—"कुछ नहीं पिताजी, मैंने क्रोध का अभिनय किया था। उसे गुस्सा दिलवाकर, उससे सारी बात कहलाने के लिए यह चाल चली थी। वह चाल में आ गया।"

"जीजा खूब मोटे-ताजे नजर आते हैं, घर में अगर पत्नी-बच्चे भले ही मरा में जा मिलें, हमें अपनी सेहत की फिक्र, होटल जाकर खाना, वाह!" वह बड़ा शर्मिन्दा हुआ।

"पत्नी पर हाथ उठाना जानते हो, बड़ा अच्छे आदमी हो, उम्र हो गई तब भी क्या ? मनुष्य में कुछ दया-दाक्षिण्य होना चाहिए। बीमार, कराहती पत्नी का खयाल न रहा और होटल में जाकर अपना पेट भर आये।" मैंने कहा। उसे सचमुच गुस्सा आ गया।

"तेरा मुँह नहीं देखना चाहिए—जो पति-पत्नी को अलग करे।"

मैंने यह दिखाया जैसे कि मैं डर गया हूँ।

"कुल्टा बहन की दाद देने आये हो।" उसने कहा। मैंने दिखाया कि मुझे बड़ा गुस्सा आ गया है। मैंने कहा, "सँभल, तुझे अभी सबक सिखाता हूँ।" मैंने दो जमा दिये। वास्तव में बिल्लाई, बहन कमरे में सुन रही थी, मैंने उसे अपनी चाल न बताई थी। चिल्लाती हुई हम दोनों के बीच में वह आई। मुझे पीछे हटाकर पति का गले लगाकर कहने लगी, "छी, तू मेरा भाई नहीं है। तू मेरे मंगल-सूत्र पर कलंक लगा रहा है, अगर तुझे गुस्सा आता है तो मुझे मार!" उस दिन बहन को देखना चाहिए था, साक्षात् काली देवी-सी थी, तब मैंने उसके पैरों पर पड़कर कहा, "बहन, मुझे माफ करो, मैं पापी हूँ, मुझे कभी गुस्सा नहीं आता। जीजा ने तेरे बारे में कुछ कहा था, इसलिए मुझे गुस्सा आ गया।"

जीजा काँप रहा था। तब मैंने जीजा का हाथ पकड़कर कहा, "जीजा माफ करो, मैंने जल्दबाजी की। क्योंकि तूने अपनी पत्नी को कुलटा कहा था। मैं अपने को भूल बैठा।"

उसी दिन रात को राजाराव आया। धीरे-धीरे सबका गुस्सा ठंडा हो गया। जीजा ने सोचा कि उसको पीटने से उसकी पत्नी ने बचाया था। जाने क्या हुआ कि रातों-रात वह पत्नी को मनाने लगा। पत्नी के मना करते

पर भी अपने को चपत मारने लगा ।

राजाराव ने बहन की परीक्षा करके बताया कि इनका मन बिगड़ गया है। यह बेहोशी धीरे-धीरे पागलपन में परिणत होगी। अभी हृदय की बीमारी है। क्षय हो जायगा। इसलिए उनका मन ठीक करना होगा। बिना काम किये रहना होगा। अच्छी दवाइयाँ लेनी होंगी।

जोजा वह सब सुन रहा था। उस दिन राजाराव ने जोजा को अलग ले जाकर कहा, "क्यों वीरभद्र राव जी, मैं जानता हूँ, आपको नहीं मालूम। मेरी पत्नी बहुत पतिव्रता थी, हर साल प्रसव होता था, पशु की तरह व्यवहार करके मैं अपनी पत्नी को खो बैठा। उस तरह की दिव्य स्त्री कौन दे सकेगा? पत्नी पतिव्रता है। अगर आपका सलूक यही रहा तो एक वर्ष भी न जियेगी। मैं वैद्य हूँ, इसलिए यह रहा हूँ।"

"आपको पत्नी पर बड़ा गुस्सा आता है, इतना गुस्सा करने से हृदय की बीमारी हो जाती है, दिमाग बिगड़ जाता है और पागलपन हो जाता है। आप-जैसे लोगों को नित हम हस्पतालों में देखते रहते हैं, इसीलिए यह रहा हूँ। सोच लीजिये।"

"साला कहीं न पीटे, पत्नी कहीं पागल न हो जाय, कहीं मर न जाय, या स्वयं उस पर कोई आपत्ति न आ पड़े, इन तीनों के कारण वह घबरा गया। जोजा ने दो महीने छुट्टी लेकर अपने गाँव आने की सोची, तब राजाराव ने उसे भी हमारे घर आकर दवा लेने के लिए कहा। वह मान गया। वह पाँच-दस दिन में आ जायगा।"

× × ×

राजाराव, नारायण राव और लक्ष्मीपति खेतों की तरफ सवेरे टहलने गये।

आन्ध्र देश के लिए कोनसीमा मणि-सी है। दोनों गोदावरी जिलों के मध्यवर्ती देश में रत्न पैदा होते हैं। 'आमुक्त माल्यदा' में कृष्ण राय ने दक्षिण के सौन्दर्य का वर्णन किया है। कोनसीमा के सौन्दर्य पर आन्ध्र में अभी तक एक भी महा ग्रन्थ नहीं लिखा गया है। लेकिन कोनसीमा में सर्व-शास्त्र-पारंगत कितने ही वर्षों से निवास कर रहे हैं न?

कोनसीमा में कटहल, कितने ही तरह के मल्ली फूल, नारंगी, केले,

नारियल, ग्राम, सुपारी, तरह-तरह के फल, पुष्प पैदा होते हैं। यह भूमि शस्य-श्यामला है।

यहाँ सूर्य की गरमी नहीं पहुँचती। लूएँ नहीं चलती। सर्वत्र बाग-बगीचे हैं। कोलसीमा में सोना फलता है।

शरीके ऐसे कि मुख से लार टपके। नील मल्लि के श्रमरूद, कोल-पल्लि का नारियल, सुवर्ण रेखा, जहाँगीर शिपि, गोटक आदि ग्रामों की महक से वह महकता है।

नारियल के बगीचे हजारों हैं। हर बगीचे में हर तरह के नारियल मिलते हैं।

वे सीधे नारायणराव के बगीचे में गये। मुँह धोकर, नहाकर, नौकर द्वारा लाये गए वस्त्रों को पहना। पास ही मजदूर चावल के लिए अंकुर तैयार कर रहे थे। व वहाँ गये।

अंकुर बोने के लिए तालाब में से पानी निकाला जा रहा था, उसमें से एक लड़की गाल फाड़कर गा रही थी। सब सुनने लगे। बाकी भी उसके साथ गा रहे थे—

अंकुरों में डालो पानी,
लछमन भला तुम्हारा हो,
बड़ी-बड़ी मूँछे है काली,
और बड़ी-सी पगड़ी है,
गुन-गुन करता गाता हमेशा
और देह भी तगड़ी है,
अंकुरों में .. ..
चाँदी से भुजदण्ड तुम्हारे,
ऊँची-चौड़ी छाती है,
काला-काला रंग सलोना,
देख हिया भय खाती है,
अंकुरों .. ..
आओ, मिलकर हम दोनों अब
सींचें पानी से बगिया,

तुम तो ऊँचे से पर्वत हो,
मैं हूँ बहती-सी नदिया,
अकुरो में ....

सब हँसे। नारायणराव ने उसके साथ वाले लड़के से कहा, "अरे, उसके मुकाबले में गा, नहीं तो हार जायगा।"

वह लड़का सिर हिलाकर गाने लगा—

दे रस्सी ले पानी खोच,
गायें मीठे-मीठे गीत,
गीतो से जब गीत मिलेंगे,
भर जायेंगी क्यारियाँ,
जल दौड़ेगा उछल-कूदकर,
ढेले जो किलकारियाँ,
दे रस्सी ....

उसने यह गाया। वाह, वाह, भाग्य, शाबाश, बधाई,

मेरी अरज सुनो ओ साथिन,
गोरैया-सी चचल सुन्दर,
बाट जोहती मेरी सुधि में,
जब आया साथिन मैं द्वार
बज उठा अचानक तेरी
ग्रीवा में पीतल का हार,
मेरी अरज सुनो .
सूखे रहे पानी बगैर जो,
यहाँ पियासे ये अकुर,
आते ही मेरे हो जाते,
जल से बिलकुल हो वे तर,
मेरी अरज सुनो .
अकुर काला, साथिन लाल,
पानी और मेरे आने पर,
हरियाना है अकुर काला,
खिल उठती हैं मेरी साथिन,
मेरी अरज सुनो.....

'इनका आनन्द भी देखो। माँड ही तो इनका भोजन है। घास-फूँस पर सोते हैं। झोपड़ा ही उनका महल है। आनन्द कहाँ है? यहाँ, हममें? पारलौकिक आनन्द परमहंसों के लिए है, लौकिक आनन्द ही क्या भू-माता के बच्चों के लिए है? ये कवि हैं, गायक हैं, नर्तक हैं। वे प्रकृति-सौन्दर्य में पैदा होते हैं। प्रकृति-मायुय में जीते हैं, प्रकृत्यानन्द में लीन हो जाते हैं।'

'हमारी सभ्यता, ज्ञान, भला सब क्यों चाहिए। अगर हम अपने जीवन की उनके जीवन से तुलना करें तो वह असत्य-सा जान पड़ेगा।'

यह सोचता हुआ नारायण राव अपने मित्रों के साथ चल रहा था।

लक्ष्मीपति ने सिर उठाकर कहा, "देखो, इनकी कविता कितनी सुन्दर है। पहले कभी न सुना था, एक-एक युग में एक-एक की कविता सतह पर आती है। महाराजाओं पर की गई कविता और उच्च वर्णों की कविता के दिन लद गए। अब लोक-कविता के दिन हैं।" सब अपने ही विचार में मग्न थे।

भोजन का समय आ गया था। दोनों पिछवाड़े के रास्ते से घर जा रहे थे।

सोमय्या की लड़की और उसकी बहन घर के पास आये। वहाँ सोमय्या का लड़का सत्तय्या और बहन का पति सीतय्या खूब आपस में मार-पीट कर रहे थे। औरतें शोर-शराबा करती उनको अलग करने की कोशिश कर रही थीं।

नारायण राव झट जल्दी-जल्दी आगे बढ़ा और उसने दोनों को अलग-अलग धकेल दिया। उसकी आँखें अंगारे-सी हो गईं। वह मेघ की तरह गरजा।

"अरे, अक्ल नहीं है तुम्हें? क्या कुत्ते हो? तुम सबकी मरम्मत करनी होगी।" रौद्र रूप में सिंह की तरह वह गरजा ही था कि दोनों के सिर नीचे झुक गए।

सोमय्या की पत्नी रामानुजम्मा ने रोते हुए कहा, "बाबू, बचाइये आज! ये दोनों मार-मारकर एक-दूसरे का काम-तमाम कर देते, आप

भगवान् की तरह अगर न आते।"

"क्या बात है ?"

"सीतन्ना पत्नी को मार रहा था। सत्यव्या ने आकर बहन को छुड़ाया और जीजा से भिड़ गया।" वहाँ आई हुई पूर्वीय बापू औरत ने कहा।

"अरे, सीतप्पा, इन सबके सामने कह रहा हूँ, क्या तू जानता है कि तू कितना खराब काम कर रहा है ? औरत पर हाथ उठाते हो ? गधा कहीं का ! छी, बिलकुल नीच हो, तू सोमन्ना का दामाद है ? एक तू खुद बदचलन है, दूसरों की स्त्रियों को खराब करता फिरता है, और फिर पत्नी को मारता है। अक्ल है ? ये बुरी हरकतें छोड़ दे, नहीं तो जा बाहर इस गाँव से, तेरे बारे में एक शिकायत आई कि नहीं कि मैं खुद इस गाँव से भेज दूँगा।" सीतप्पा को शरमाता देखकर नारायण राव का गुस्सा ठंडा हो रहा था।

"रे सीतप्पा, ऐसे रहो कि लोग कहें कि यह फलाने के पिछवाड़े में रहता है, मैं अब माफ किये देता हूँ। मेरा दिल नरम है। तुम जानते हो, मैं किसी की बातों में दखल नहीं देता। मगर पिता जी यहाँ होते तो मेरी चमड़ी उखाड़ देते। भैया तुरंत जाने के लिए कह देते। एक बार पहले भी मैंने तुझे पत्नी को पीटते देखा था। और तेरी पत्नी-जितनी खूबसूरत यहाँ कोई है ? उसके साथ मजे में रह। जा !"

सीतन्ना शर्म के कारण मर-सी गई। 'अरे छोटे बाबू को भी पता लग गया है, जो बिच्छू को भी न मारते थे, आज उन्हें इतना गुस्सा आ गया।' वह मन-ही-मन पछताने लगा।

रात को जब पत्नी लेटी हुई थी चारपाई के पास बैठकर उसके पैर छूकर उसने कहा, "माफ कर, अनजाने कर बैठा ! अब ठीक तरह रहूँगा। तेरी कसम ! बिलखती-बिलखती पत्नी ने पैर समेट लिए। उसको पास खींचकर उसने कहा, "अगर चन्द्रमा हो तो तारे की क्या जरूरत ?" पछताते पति को देखकर, निश्वास छोड़, प्रेम भर उसके बाहु-पाश में वह चली गई।

वीरभद्र राव ससुराल में ही रह रहा था। या तो अपनी कार में, नहीं तो सुब्बाराय जी की कार में, मौका मिलने पर सत्यवती को देखने आ

आश्वासन देकर दवा-दारू के बारे में सब-कुछ बताकर, राजाराव चला गया। वीरभद्र राव को भी वह ही दवा मँगाकर दे रहा था?

उस साल बड़ी लू चल रही थी। परन्तु नारायणराव ने सामर्लकोट से खस-खस की टट्टियाँ मँगाकर सारे घर में लगवा दी थीं। इसलिए उसका घर बड़ा ठंडा था। राजमहेन्द्रवर से कोत्तपेट ही अधिक ठंडा था। जमींदार, उनकी पत्नी और लड़का नीलगिरि गये हुए थे। शारदा ससुराल में ही थी।

जब से वह कोत्तपेट आई थी, तब से पति के पैर धोने के लिए पानी वगैरा लाने लगी थी। नागरत्न से जब वह कहती, "नागरत्न, जरा चाबियाँ ला दे मामी!" मूरी मतेन समझकर मुस्करातीं। "छोटे मामा को चाबियाँ दे आ!" नागरत्न झट चली जाती। नारायणराव के कपड़े और चाबी देकर, "छोटी मामी ने देने के लिए कहा है।" कहती।

नारायणराव पैर धोकर घर में घुसता तो नागरत्न रेशमी कपड़े लिये खड़ी रहती।

"नागरत्न, क्या मामी ने अलमारी खोलकर तुझे कपड़े दिये हैं?" नारायणराव ने पूछा।

नागरत्न ने कहा, "हाँ।"

अगले दिन दोपहर को कोत्तपेट में कुछ घरों में आग लग गई। अपने घर में आग बुझाकर लक्ष्मीपति वीरभद्र राव के साथ वह उस तरफ भागा जहाँ आग लग रही थी।

नारायण राव ने कुछ को पानी के घड़े लाने के लिए कहा, कुछ को घरों पर चढ़ाया। मकानों में से सामान निकलवाया। सब नौजवान नारायणराव के कहने पर आग बुझाने लगे।

हवा चल रही थी। सारा गाँव जल जाता। नारायणराव की होशियारी और काम के कारण कुछ घर ही जलकर, बुझ गए।

उनमें बड़े बापू के, ताड़ के पत्तों वाले चार घर थे, वह जरा पैसे वाला था। धन, कपड़े, सन्दूक आदि नारायण राव ने बाहर निकाल दिए थे। इस-लिए वे बच गए थे।

इतने में बड़ा बापू पागल की तरह रोने लगा, "बापू मेरा घर जल

गया है। अलमारी नहीं लाया हूँ, बाबू, मेरे नोट, जमीन के दस्तावेज, सभी उसमें हैं। अब बस, मेरा सर्वनाश हो गया।"

घर जला जा रहा था। ऐसा लगता था कि वहाँ विस्फोट हो गया हो। लपटें उठती जाती थीं। गरमी सही न जाती थी।

नारायणराव ने एक बार धधकती आग को देखा, और फिर निस्सहाय बापू को।

"अलमारी कहाँ है?"

"चौपाल में।"

"दो घड़े पानी लाओ।" नारायणराव चिल्लाया।

"पानी से तर दो कपड़े मेरे सिर पर रखो।" उसने लक्ष्मीपति से कहा।

लक्ष्मीपति और वीरभद्र राव ने दो गीले पानी से तर कपड़े सिर पर डाले और दोनों हाथों में पानी से भरे मटके लेकर नारायणराव अन्दर कूदा।

सब चिल्लाये। कौन जानता था कि वह ऐसा करेगा। "नहीं जाइये!" बड़ा बापू चिल्लाया।

"यह क्या कर रहे हो?" वीरभद्र राव चिल्लाया।

"नारायण राव जी, भगोवत न डाइये।" सब चिल्लाये।

वीरभद्र राव स्तब्ध खड़ा था। लक्ष्मीपति उसके पीछे गया। नारायणराव उसे दरवाजे के पास नहीं दिखाई दिया, लपटों ने उसे दूर कर दिया। सब अचरज करते निश्चल खड़े थे। क्या लपटों ने भी शब्द करना छोड़ दिया था?

दरवाजे के पास शरीर पर एक मटका उँडेलकर उस मटके को दूर फेंक, नारायणराव अलमारी के पास भागा।

उसका साहस देखकर, अग्नि ने अभी उस चौपाल को न निगला था। लपटें बढ़ रही थीं। अलमारी को छू रही थीं। दूसरा घड़ा सिर पर उँडेलकर अलमारी को घसीटकर वह दरवाजे के पास ले आया।

"जाने वह अन्दर क्या कर रहा हो? कहीं वह बेहोश न हो गया हो?" इसीलिए लक्ष्मीपति कई मटकों में पानी मँगवाकर वह दरवाजे के पास डाल रहा था कि इतने में उसको नारायणराव अलमारी खींचकर लाता

हुआ दिखाई दिया।

जोर लगाकर वह दरवाजे तक अलमारी खींच लाया। फिर जोर लगाकर उसने उसे बाहर सरका दिया। खाण्डव-दहन में अर्जुन की तरह, लंका के दहन करने वाले हनुमान की तरह, वह खड़ा था। फिर वह हाँफता-हाँफता गिर गया।

कहीं आग और गरमी के कारण किसी को लू न लग जाय, इसलिए नारायणराव ने अजनेयों में से दो-तीन मटके काफी बनाकर भेजने के लिए कहा था। उस गरम काफी ने कई के प्राण बचाये। लक्ष्मीपति काँपता-काँपता साले की कमर पकड़कर लाया। उसको अपनी गोद में लिटा लिया। उसकी आँखों से पानी बह रहा था, ओठ खोलकर उसने उसके मुख में काफी डाल दी। दस मिनट में नारायणराव फिर ठीक हो गया। जल्दी-जल्दी घर चला गया। न गाड़ी में चढ़ा, न किसी को उसने पकड़ने ही दिया।

सारे गाँव की जबान पर 'नारायण नारायण राव' ही था। आग पूरी तरह बुझाने के लिए, मनुष्यों को लगाने के लिए, बड़े बापू से कहकर नारायणराव चला गया।

वीरभद्र के आश्चर्य की सीमा न थी। "यह है मेरा साला ?" वह कह रहा था। उसके मन में नारायण राव के प्रति प्रेम उमड़ आया। लक्ष्मीपति ने घर पहुँचकर जो-कुछ गुजरा था, साफ-साफ सुना दिया। शारदा का दिल धड़-धड़ करने लगा। "अगर घर गिर जाता तो क्या होता ? तू हमेशा इसी तरह के काम करता रहता है।" पास बैठी जानकम्मा कह रही थी। इतने में बड़े बापू और उनके लड़कों ने आकर सुब्बाराय जी को नमस्कार करके नारायण राव के पैर छुए। सुब्बाराय जी ने बिना किसी के देखे, अपने आँसू पोंछे, सबने सन्तोष की साँस ली।

"मुझे बचाया। क्या साहस है आपका! क्या होशियारी, क्या ताकत है, नारायण राव बाबू जी, सुब्बाराय भाई जी, बाबू ने हम सबको हमारा आदर्श सिखाया है।" बड़े बापू ने कहा।

१८ : परीक्षा-परिणाम

उस दिन रात को नारायण राव पलंग पर पड़ा ऊँघ रहा था । शारदा और नारायण राव अलग-अलग सोया करते थे । उसने बिना किसी के जाने सूर्य से शारदा के लिए अलग खाट रखने के लिए कह दिया था । शारदा उसी खाट पर लेटी हुई थी । दुनिया क्या जाने ? सोचती कि लाज के कारण पति-पत्नी आपस में बातें नहीं करते हैं । नारायण राव उससे पाँव ठीक न करवाता । न पत्नी से कुछ माँगता । शारदा पति के लिए न पानी रखवाती, न साबुन देती, न तौलिया ही । न शारदा चिट्ठी-पत्री करती, न नारायण राव ही । लोग सोचते कि यह कोई विचित्र दाम्पत्य है । सूर्य भी सच पूरी तरह न जान सकी । वर्धुन्नाला जरूर सब-कुछ जानती थी ।

पहले आठ दिन तो नारायण राव दुखी हुआ । उसके प्रेम ने उसे जला-सा दिया था । वह चूँकि धीरोदात्त था, इसलिए पत्नी को भूलकर भी न छुआ ।

शारदा को यह डर लगा कि पति क्या माँग बैठे । इसलिए शुरू में जब वह गृहस्थी करने आई थी, बहुत देर तक न सोती । फिर एकाएक थक-कर हारकर आँखें मूँद लेती । बाद में धीरे-धीरे वह जान गई कि पति सद्गुण-सम्पन्न था । दयालु था । इसलिए निर्भय होकर वह पति के साथ एक कमरे में ही सोया करती ।

यह ख्याल कि वह बड़ी हो रही है, उसे परीक्षा के दिनों में नहीं आया । उन दिनों वह लड़की-सी थी ।

हिन्दू-कुटुम्ब में पति-पत्नी का पुनः सन्धान किया जाता है । तब पत्नी की उम्र चौदह-पन्द्रह साल की होती है । उस समय उसमें प्रेम का होना कम ही पाया जाता है । होते-होते वह पति के प्रति अधिक अनुरक्त हो जाती है ।

मद्रास में पति के संगीत, वायलिन आदि के बारे में उसको कुतूहल हुआ । जब वह वायलिन बजाता या गम्भीर मधुर गीत गाता तो वह नेपथ्य में सुनकर तन्मय हो जाती । दो-तीन बार उसको यह भी भान

हुआ कि वह पति का प्यार कर रही थी। क्यों न प्यार करे? हर कोई कहता है कि पति खूबसूरत है। सचमुच सुन्दर है। फिर कितना बुद्धिमान है।

आज जो कार्य नारायण राव ने किया था, वह कौन कर सकता है? मेरा पति महावीर है। पुस्तकों में जो ग्रीक वीरों में पढ़ा था उनमें क्या यह किसी कदर कम है? स्नान करते समय उसका शरीर कितना सुन्दर जान पड़ता है।

मानो उसके नत्रों के सामने नारायण राव का सौन्दर्य शृंङ्गहीन सौन्दर्य था। काले लम्बे बाल, विशाल वक्षस्थल, बड़ा कद, वह देव-तुल्य-सा लगता था। शारदा उसको देखकर शरमा जाती। वह, उसका बहुत आदर करती थी। पिता के प्रेम का तो कहना ही क्या?

अगर कुछ हो जाता तो। कितनी आफत आ जाती? कुछ भी हो, तो जरा सँभलकर, "यह पिता जी से कहलवाना होगा।" ये कितने परोपकारी हैं?

उसका हृदय भर आया। किवाड़ बन्द करके पति को सोता देखकर वह पुलकित-सी हुई। वह धीरे-धीरे पति के पास गई। उसको गौर से देखकर उसने माथ को सहलाया। उसका हृदय पूर्ण चन्द्रमा के दिन के समुद्र की तरह कल्लोलित होने लगा।

'इनके चरणों के पास क्यों न सोया जाय। मेरे पति हैं। पिता जी ने जाँच-पड़ताल करके ही मुझे इन्हें सौंपा है।' उसने उसको नमस्कार किया। मुस्कराते, निरुद्र ओंठों को देखा। उसको अपने मुलायम ओंठ याद आये। ओह, पर उसे नशा-सा आ गया, आँखें भारी-सी हो गईं।

उस शयन-कक्ष की हल्की रोशनी में उसने निद्रा का अभिनय करते, पति के दिव्य मुँह को देखा। वह उसके चरणों के पास आकर धीरे से लेट गई। उसके चरण छूने से उसके शरीर में एक विचित्र बिजली-सी दौड़ गई।

'यह उत्तम पुरुष, यह सौन्दर्य-निधि, यह वीर सिंह मेरा पति है, प्रेम करके मुझसे विवाह किया है। मेरा व्यवहार कितना मूर्खतापूर्ण रहा? क्या ये मेरा हाथ पकड़ेंगे? क्या मुझसे मीठी-मीठी बातें करेंगे? उन

गम्भीर आँखों से देखेंगे ? क्या वे मेरा आलिंगन करेंगे ? मुझे जो-कुछ भी सजा दी जाय वह थोड़ी है।' वह डरने लगी। 'अगर मैं हजार बार इनके पैरों पड़ूँ तब भी क्या ये मुझे क्षमा करेंगे ?'

नारायण राव यह सब देख रहा था। जब वह पास आई। उसने माथा सहलाया तो वह मचल-सा उठा। उसका हृदय तरंगित-सा हो गया। 'इसका कैसे आलिंगन किया जाय ? इसका सौन्दर्य भी क्या है ? इतने दिनों बाद वह मुझे अपनाने आ रही है। यह सब कोई स्वप्न तो नहीं है ? हम दोनों कब एक-दूसरे के जीवन-उद्देश्यों को समझकर एक-दूसरे में लीन हो सकेंगे ?'

वह जिन्हें इन मधुर स्वप्नों में डूबता-तैरता रहा, और रात बीतती चली गई।

अगले दिन जमींदार ने कुतूर से तार भेजा कि शारदा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हो गई है। सूर्यकान्त ने भी अच्छे मार्क पाए थे।

नारायण राव के पास और भी एक खुशखबरी आई थी। दो दिन पहले ही तार आया था कि रामचन्द्र राव चार दिन में कोलम्बो पहुँचने वाला है।

इससे पहले ही पाँच-पाँच सौ रुपये की कीमत पर दो जोड़ी चूड़ियाँ मद्रास में खरीद ली थीं। वे परीक्षा में पास होने वाली इन युवतियों के लिए ही थीं। उनमें से एक जोड़ा उसने बहन को दिया, और दूसरा शारदा को। वे दोनों फूली न समाईं।

उस दिन सुब्बाराय जी ने अपने नौकर-चाकरों को बहुत-से कपड़े, फल-फूल इनाम में दिये।

हर कोई शारदा और सूर्यकान्त की प्रशंसा करके उनका उत्साह द्विगुणित करता। सूर्यकान्त ने शारदा को गले लगा लिया।

"सुना है कि वे अमरीका से चार दिन में आने वाले हैं ?" शारदा ने पूछा।

"ठहर भी, तूने मखौल क्यों शुरू कर दिया ?"

सोमय्या की पत्नी ने आकर जानकम्मा से लड़के और दामाद के

युद्ध और उसके बदचलन तथा छोटे बाबू के उपकार के बारे में बताया। उस दिन से मीतम्मा बदल गया है। "नारायण राव जो अच्छे मालिक हैं," उसने कहा। यह सुनते ही शारदा के मन में आनन्द नृत्य करने लगा।

इसलिए ही कि क्या उसकी पत्नी मेरा इतना आदर कर रही है? यों ही मेरी तरफ लगातार देखती रहती है? उसकी और वेंकटायम्मा की एक ही उम्र थी। उन्होंने नारायण राव को छुटपन में खिलाया-पिलाया था।

"आपके पति छुटपन में कृष्ण की तरह लगते थे। उनके शरीर पर इतने गहने होते थे कि मालकिन डरा करती कि कहीं उन्हें नजर न लग जाय। सब लोग उन्हें गोदी में लेना चाहते। पर मजाल है कि किसी को उठाने दें? उनमें कितना बल था। एक बार हमारी मोन्नोल नस्ल की एक गौ को कुत्ता काटने आया। इन्होंने उसकी पूँछ मरोड़कर भगा दिया। तब तीन साल की ही उम्र थी। कुत्ता भी छोटे-मोटे भैंसे की तरह था। वह डर के मारे भौंकते-भौंकते भाग गया।"

"वे खूब पढ़े-लिखे हैं, अच्छे समझदार हैं, कितने बड़े हैं!"

छुटपन से ही वे सबको चाहते थे। चमारों को भी सब-कुछ दिया करते थे। गान्धी जी की बात आने से पहले ही घर की चीजें ले जाकर हमें और मछूना को दिया करते, कितनी भक्ति? जब हम भजन करते तो उन सुन्दर आँखों से हमेशा देखते रहते। दया का तो कहना ही क्या? हम सभी सोचा करते थे कि दुनिया में इनसे बढ़कर कोई अक्लमन्द नहीं।

"कैसे पढ़ा-लिखा करते थे?" वह अनायास पूछ बैठी। फिर स्वयं अपने प्रश्न पर अचरज करने लगी।

"उनकी पढ़ाई-लिखाई,? क्या गजब की थी। आपका भाग्य है, आप दोनों की जोड़ी ही जोड़ी है। आपको अब तक नारायण राव-सा मुन्ना पैदा होना चाहिए था। अगले साल जरूर पैदा होगा?"

"क्या जेल गये थे?"

"हाँ, वे छुटपन से ही लैक्चर देने लगे थे। इतने में गान्धी जी आये। फिर क्या था लैक्चर और भी बढ़ गए। उन्हें सरकार तुरन्त पकड़ ले गई। जब वे जेल जा रहे थे तो कितने लोग जमा हो गए थे। आस-पास के सब लोग आये थे। जब तक वे कैद में रहे हमारी जानकम्मा जी न सोईं,

न कुछ खाया-पिया ही। बड़े बाव ने हौसला न छोड़ा। जब वे छूटकर आये तो आपकी सास ने आरती उतारी। पूजा-पाठ करवाया।"

१६ : बन्दी

सप्ताह-भर बाद मदुरै से तार आया कि पुलिस ने रामचन्द्र राव को विप्लववादी समझकर गिरफ्तार कर लिया है। इसलिए नारायण-राव फौरन मेल से मद्रास गया। उसी दिन शाम को मदुरै जाया जा सकता था। उसने अपने सीनियर वकील से सलाह-मशवरा किया। उनके साथ वह प्रान्त की पुलिस के मुख्य अधिकारी से मिलने गया। उसने बताया कि रामचन्द्र राव का मामला पेचीदा है। उसके बारे में सरकार के पास जरूरी कागजात थे। उसीने ही रामचन्द्र राव को गिरफ्तार करने का हुक्म दिया था। उसने यह भी बताया कि उसकी गिरफ्तारी का प्राण-कान्त घोस, गुण्डारसिंह के मुकदमे से गहरा सम्बन्ध है।

इसके बाद वह सीधा नीलगिरि, कुनूर गया। ससुर जी से बातचीत की। ससुर जी को लेकर ऊटी गया। जमींदार मुख्य मन्त्री से मिले। फिर उनको लेकर पुलिस मुख्याधिकारी के पास गये। मन्त्री और जमींदार को रामचन्द्र राव के केस के बारे में आया जानकर कर्मचारी को आश्चर्य हुआ।

"क्या वे आपके सम्बन्धी हैं राजा साहब?" यह पूछकर उसने कहा, "यह देखिये उनके मुकदमे से सम्बन्धित कागजात। हमने उन्हें दस दिन के लिए रिमाण्ड में रखा है। कई ऐसी बातें हैं जिनके कारण हमें उन पर सन्देह करना पड़ रहा है।"

जमींदार साहब ने सब कागजात पढ़े। अमरीका की खुफिया पुलिस ने ये कागजात भेजे थे। अमरीका में तिलक के जन्म-दिवस पर रामचन्द्र-

राव ने व्याख्यान दिया था। व्याख्यान की कटिंग भी थी। और उस व्याख्यान में विप्लववाद का समर्थन किया गया था। 'भारत सन्देश' में भी इसी विषय पर रामचन्द्र राव ने एक लेख लिखा था।—उसकी प्रति भी थी। प्राणकान्त बोस से मिलकर उसने षड्यन्त्र किया था, आदि बातें उन कागजातों में थी। यह सब जानकारी, इस मुकदमे में जो एक व्यक्ति एप्रूवर बन गया था उससे मालूम की गई थी।

इन्सपैक्टर जनरल की अनुमति पर जमीदार एडवोकेट जनरल को बुलाकर लाये।

सबने रामचन्द्र राव के केस के बारे में आपस में परामर्श किया। जमीदार ने एडवोकेट जनरल, मुख्य मन्त्री, और पुलिस के कर्मचारी से कहा कि रामचन्द्र राव बहुत बुद्धिमान् था। युवक था। वह संसार के उन इने-गिने गणितज्ञों में था जिनको अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति मिली थी। उसको आन्ध्र-विश्वविद्यालय में आचार्य का पद दिलवाने की इच्छा थी। उसने एम० एस-सी० डिग्री पाई थी। आन्ध्र में ऐसे कम ही लोग थे जिनको यह डिग्री मिली थी।

एडवोकेट जनरल ने कागजातों की जाँच करके कहा, "इसमें दो गवाहियाँ हैं, एक अमरीका के खुफिया अफसर की, और दूसरी एप्रूवर की। वे क्या कह सकते हैं? एक ने कहा कि रामचन्द्र राव ने पत्रिकाओं में लेख लिखे थे, और व्याख्यान दिये थे। दूसरा कह रहा है कि ये तीनों रात में आपस में मिले थे। पत्रिकाओं को गवाही काम में नहीं आती। रात के समय एक-दूसरे को कैसे पहचाना गया।

प्राणकान्त और गुण्डारा सिंह की बात दूसरी है। उन्होंने स्वदेश आकर बम्ब आदि तैयार किये थे। और भी जाने क्या-क्या उन्होंने किया है। इसलिए यह जाहिर है कि वे सरकार के विरुद्ध षड्यन्त्र कर रहे थे।"

"उस केस से रामचन्द्र राव का कोई ताल्लुक नहीं है।"

मुख्य मन्त्री ने भी कहा रामचन्द्र राव निर्दोष है। पुलिस-कर्मचारी भी क्या करता? उसने केन्द्र-सरकार को लिखा कि रामचन्द्र राव पर कोई अभियोग नहीं लगाया जा सकता। मद्रास-सरकार का भी यही कहना है।

मद्रास-गवर्नर ने भी जो इन्सपैक्टर जनरल ने किया था उसका समर्थन

किया। सरकार ने रामनाड पुलिस-सुपरिण्टेण्डेण्ट को तार दिया कि रामचन्द्र-राव को छोड़ दिया जाय।

जमींदार खुशी-खुशी मुख्य मन्त्री, पुलिस-मुख्याधिकारी, एडवोकेट जनरल से विदा लेकर नारायण राव के पास आये। वे दोनों मिलकर कुन्नूर गये। नारायण राव लक्ष्मी, पत्नी और बुआ को नमस्कार करके केशवचन्द्र को गले लगाकर, ससुर जी से इजाजत ले, मद्रास के लिए रवाना हो गया। उसने अपने बहनोई को तार दे दिया था कि वह आ रहा है और उसको रिहा किया जा रहा है।

इटली में जब से वह 'मायटाली' जहाज पर चढ़ा था तभी से रामचन्द्र-राव अपने देश, घर, बन्धु-बान्धवों के बारे में सोच रहा था।

इन देशों में भले ही सभ्यता कितनी ही उन्नत हुई हो, फिर भी क्या वे स्वदेश के बराबर हैं?

'सुजला सुफला, मलयज शीतला मातरम्, वन्दे मातरम्।'

'अहो, मेरे देश में कितनी ही नदियाँ हैं, कितने ही वन-क्रीड़ा-स्थल हैं। मुझे मेरी भारत माँ पास बुला रही है।

शुभ्र ज्योत्स्ना, पुलकित यामिनी,
फुल्ल कुसुमित द्रुम दल शोभिनी,

अरण्य, पर्वत, नगर, खेत, बाग, बगीचे, नदी, समुद्र और धवल पूर्ण चन्द्रमा की चन्द्रिका की तरह माँ पुलकित हो उठती है। सुन्दर, मनोहर, सुगन्धित विविध वर्णों के पुष्पों से सुशोभित है वह माता। उसका सिर हिमालय है, सुन्दर काश्मीर है, क्या भारत माता का मुँह अप्रफुल्लित है?

हाय, माता, तेरी हालत बहुत खराब है। पर क्या तुझे तेरे पुत्र भूल जायेंगे?

त्रिंशत कोटि कण्ठ कल-कल निनाद कराले।
द्विभिशत कोटि भुजा धृत खर करवाले!

सब भाषाओं में सुना जा सकता है। सुने कितने दिन हो गए हैं?
सुन्दर मधुर तेलुगु सुने बगैर कान बहरे हो गए हैं।

आन्ध्र देश हमारे लिए यह अमर-सा देवता है। माँ तेलुगु माता, मैं तेरे प्रेम में सब तन्मय होऊँगा। गोदावरी! तेरा प्रेम, तेरी गम्भीरता,

क्या कभी मैं भूल सकता हूँ ? कब दूर के पानी पहाड, तेरे द्वीप, जल देखकर अपनी आँखों की क्षुधा मिटा सकूँगा ?'

कृष्णा, पेन्ना, तुम्हारे दर्शन कब होंगे । राजमहेन्द्रवर, काकिनाडा की गलियों में कब चल सकूँगा ।

कोत्तपेट, ससुराल, छोटी पत्नी सूर्यकान्त सब उसके मन में आये ।

'कया समझदार है वह लडकी, कितनी सुन्दर है, अब बडी हो गई होगी। सब भगवान् की माया है । नियोनारा ने अपने-आपको सौंप दिया था । क्या जाति जाति की बात भिन्न-भिन्न होती है ? मेरी सौन्दर्य-निधि, सर्व-कला-शोभित सूर्यकान्त जाने क्या कर रही होगी । उसका पति परीक्षा में सफल होकर आ रहा है । खुश हो रही होगी । क्या वह परीक्षा में पास हो गई होगी ? जरूर पास हो गई होगी । मैं उससे कब मिल सकूँगा ? मुझे देखते ही उसका मुँह किस तरह बदल जायगा ?'

'नारायण राव की गम्भीर आवाज सुने कितने दिन हो गए हैं ?

माँ कितनी रोई होगी ? पत्नी को भी छोडा जा सकता है, पर माँ को नहीं छोड सकते । माँ, यह अभागा विदेश क्यों गया ? काकिनाडा कब पहुँचूँगा ? माँ के चरणों पर सिर नवाऊँगा । पूज्य पिता जी को नमस्कार । जब तक मैं अमरीका में रहा, कैसे प्रेम-भरे पत्र उन्होंने लिखे । व्यापारी मित्रों द्वारा उन्होंने कितनी ही बार खबरें भेजीं । ससुर जी गम्भीर स्वभाव के हैं । उन्हें डर नहीं है । मानव की उत्कृष्टता में उनका विश्वास है । वे मेरु पर्वत की तरह हैं । पता नहीं वे किस युग के वीर हैं ।

सूर्यकान्त मुझसे क्या बात करेगी ? विवाह के दिन के सौन्दर्य में और अब के सौन्दर्य में कितना परिवर्तन आ गया है । उसकी पिछली फोटो को मैं खुद ही न पहचान पाया था । साले ने अदन तार दिया था कि मुहूर्त निश्चित कर दिया है । उसका मुझ पर बहुत प्रेम है । नारायण राव सबके प्रेम का कारण कैसे बन गया ?'

सीलोन आया । कोलम्बो में जहाज रुका । जहाज में भारतीय भोजन का भी प्रबन्ध था । इटली वाले भारतीयों का अधिक आदर करते थे ।

रामचन्द्र राव को जहाज से उतरते समय अपनी पहली जल-यात्रा का स्मरण हो आया ।

'नियंतारा कन्दा कितनी प्रेम-हृदया थी । वह मायकाल इस जन्म में नहीं भूल सकता था । क्या आनन्द दिया था । उसका पवित्र हृदय था, पर उसने घरों आने का इस तरह मौन दिया ? बहुत कोशिश की, पर उसे आखिर उसके सौन्दर्य और प्रेम पर मुग्ध होना ही पड़ा ।'

उसने कहा था, 'मेरे प्रियतम रामचन्द्र, पत्नी के साथ सुख से जीवन बिता । हमें भूल जा ! हमें जो भारत देश के प्रति प्रेम है, वह किसी और देश के प्रति नहीं है ।'

'भारत देश की सहायता हम कैसे करें ? यही तो प्रश्न है । हर देश को स्वप्रयत्न से विजय पानी चाहिए । तूने महाभारत के एक श्लोक को सुनाकर मर्म बताया था । उसी तरह हमारे-जैसे देश सहायता करते हैं ।'

'आपका देश उत्कृष्ट है । ऐसे परम पूज्य देश की स्वतन्त्रता के लिए लड़ने वाली समारोद्धारक परम शक्ति पैदा होगी । क्या ईसा ने जन्म इसलिए न लिया था कि यहूदी अपने देश की आज़ादी के लिए लड़ें । उसी तरह गान्धी, नहीं तो और कोई, संसार का उद्धार करने के लिए आपके देश में ही पैदा होगा ।'

'उसका उत्साह और प्रेम भी क्या था । उसने भारत अवश्य आने के लिए कहा था । मेरे पुत्र सन्तान के महोत्सव के अवसर पर उसने उपहार भेजने के लिए कहा था । उसने उसे पुनःसन्तान मुहूर्त के बारे में तार दिया ।' वह सोचते-सोचते अजेय तमिल, तेलुगु, हिन्दी आदि भाषाएँ उसके कानों में पड़ीं । उसे रोमान्च-सा हुआ । मुश्किल से रोना रोक सका । वह एक अच्छे आग्नेय होटल में गया । उत्तम निरामिष भारतीय भोजन का आर्डर देकर वह अपने कमरे में गया । कपड़े बदलकर और भोजन खाकर वह रेल में पोलनार पहुँचा ।

२० : रामचन्द्र का आगमन

पोलनार से स्टीमर में धनुषकोटि आकर ज्योंही वह उतरा रामचन्द्र को रोमांच-सा हो गया। भारत-भूमि की पवित्र मिट्टी लेकर चूमकर थोड़ा-सा उसने मुख में डाल लिया। वहाँ खड़े एक ग्राम-व्यक्ति ने सोचा, 'इस साहब ने मिट्टी खाई है।' इतने में तीन पुलिस वाले एक इन्स्पैक्टर और दो कान्स्टेबलों ने पूछा, "आपका नाम क्या है?"

"मेरा नाम रामचन्द्र राव है।"

"वंश का नाम।"

"वुद्धवरुपु।"

"आपके लिए ही यह वारण्ट है, हम गिरफ्तार कर रहे हैं।" इन्स्पैक्टर ने उसके कन्धे पर हाथ धरा।

"ऐसी बात है?" रामचन्द्र राव हैरान था। उसे अचरज हो रहा था कि अब क्या होगा? निर्भय होकर मुस्कराते हुए उसने कहा, "यह कोई गलती है, क्या आप बता सकते हैं कि आप मुझे क्यों गिरफ्तार कर रहे हैं?"

"माफ कीजिये! मुझे नहीं मालूम, उच्च कर्मचारी ही जानते हैं।"

"मुझे कहाँ ले जायेंगे?"

"मदुरै। वहाँ जेल में रखेंगे।"

"म अपने माँ-बाप को तार देना चाहता हूँ।"

"मदुरै से दे सकते हैं।"

अगले दिन वे मदुरै पहुँचे। वहाँ से साले को तार दिया। 'मुझे क्यों यों गिरफ्तार कर लिया गया है? मैंने कुछ नहीं किया है? मैं सत्याग्रही भी नहीं हूँ? फिर क्यों? क्रान्तिकारी हूँ क्या? वह भी नहीं हूँ।' उसने सोचा। उसे झट अमरीका में दिया गया भाषण याद आ गया। 'जोश में कुछ कह बैठा। बस, इतना ही। क्या साला जेल नहीं हो आया है? मैं भी गया तो वह भी एक देश-सेवा है। माँ, भारत माता, क्या तेरी भूमि पर पैर रखते ही एक भारतीय गिरफ्तार किया जाना चाहिए? मैं न क्रान्ति का पक्षपाती हूँ, न षड्यन्त्र का ही। मैं इतना ही चाहता हूँ

कि विज्ञान की वृद्धि करके देश के लिए अन्तर्राष्ट्रीय कीर्ति प्राप्त करें। सब भगवान् के आधीन है।"

नारायण राव रामचन्द्र राव की गिरफ्तारी के चौथे दिन मदुरै पहुँच सका। मुनूर से उनके मदुरै पहुँचने से पहले ही तार भेज दिया गया था कि रामचन्द्र को सादर छोड़ दिया जाय और एक खुफिया कर्मचारी के साथ मद्रास भेज दिया जाय। उसको इस शर्त पर रिहा करने का वचन दिया गया था कि वे सरकार के विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही न करेंगे। नारायण राव ने डी० एस० पी० को तार दे दिया था कि वह आ रहा है।

ससुरजी को मन-ही-मन कृतज्ञतापूर्वक नमस्कार करता हुआ नारायण-राव मदुरै स्टेशन पर उतरकर डी० एस० पी० के पास गया। वहाँ एक क्षण नारायण राव यह न जान सका कि कौन कर्मचारी था और कौन उसका बहनोई। वह कर्मचारी अंग्रेज था। कर्मचारी को पहले नमस्कार करके फिर रामचन्द्र राव को नमस्कार कर वह कर्मचारी की दिखाई हुई कुर्सी पर बैठ गया। तीनों में कई विषयों पर बातचीत हुई।

नारायण राव के जाते ही रामचन्द्र राव ने कहा, "इन्होंने जो मेरे प्रति आदर दिखाया वह वस्तुतः अपरिमित है। मैं कभी इन्हें न भूल सकूँगा। मैं भी गणित में आक्सफोर्ड में बी० ए० पास हुए थे। कितनी ही बातें हुईं।"

"हम आपके बहुत कृतज्ञ हैं," कहकर उसने फूलों की मालाएँ और चार चाँदी के कप उन्हें भेंट में दिये।

रास्ते में उन्हें जमींदार का परिवार दिखाई दिया। वे मद्रास पहुँचे। मद्रास में जमींदार के घर ही सब ठहरे। मदुरै से ही काकिनाडा, कोत्तपेट, अमलापुर को रिहाई की खबर भेज दी गई थी।

मद्रास में नारायण राव, रामचन्द्र राव, परमेश्वर मित्रों के घर गये। उन्होंने मजे में समय बिताया।

दोपहर को, भोजन के बाद, वे सब श्यामसुन्दरी के घर गये। उन बहनों ने रामचन्द्र राव का सम्मान किया। यह देखकर उन्हें बड़ा सन्तोष हुआ कि वह सूर्य का पति है।

उसी दिन रात को उन्होंने काकिनाडा जाना चाहा। परन्तु नारायण-

राव को एक बहुत ही आनन्ददायक बात सूझी। इसलिए वे अगले दिन भी मद्रास में रह गए।

राजा राव अच्छा आदमी है। श्यामसुन्दरी भी उत्तम चरित्र की है। क्यों न इन दोनों का विवाह हो जाय? दोनों ही वैद्य हैं। सेवा करना ही दोनों के जीवन का उद्देश्य है। क्या श्यामसुन्दरी मानेगी? उसके मन में क्या है? मुझे भाई की तरह चाहती है? वह भ्रातृत्व का प्रेम ही उत्तम है। उस दिन जरा दया के आवेश में आ गई थी।

नारायण राव अगले दिन श्यामसुन्दरी से मिला। उससे कैसे कहना? "बहन, मुझे हमेशा एक सुन्दर स्वप्न दीखता रहता है?"

"क्या है यह?" उसको यह बात नारायण राव को घंटे की आवाज की तरह सुनाई दी।

"तुम देश की सेवा, मानव-समाज की सेवा करना चाहती हो। तुमने कहा था कि शिक्षा समाप्त होने के बाद साबरमती आश्रम में सेवा करने का अधिकार पाओगी।"

"हाँ, भाई मैं महात्मा जी के चरणों में सेवा करना सीखकर, सेवा में तल्लीन होना चाहती हूँ। मैं क्या उसके योग्य हूँ, क्यों न योग्य हूँ?"

"अगर तुम बुरा न मानो तो एक प्रश्न पूछता हूँ।"

"भाई, चाहे तुम कुछ भी पूछो क्या मैंने कभी बुरा माना है?" उसका दिल धड़का। 'क्या है वह? क्या है वह?'

"मुझे मेरा स्वप्न कहने दो! इतने दिन मुझमें तरह-तरह के विचार उठते रहे और नष्ट होते गए। वे अद्भुत थे, आनन्ददायक थे। तू देश की सेवा करने के लिए कृतनिश्चय है। ब्रह्मचारिणी है। इस समय इन परिस्थितियों में जीवन कैसे कटेगा? भले ही कितना वैराग्य हो, निष्काम हो, पर सामने आते हुए कामदेव का एक व्यक्ति शिकार हो ही जाता है। बुद्ध, गान्धी आदि अवतार-पुरुष हैं। वह बड़ी कठिनाई से इसको जीत पाए हैं। इसीलिए भगवद्गीता कर्म-मार्ग का उपदेश देती है।"

श्यामसुन्दरी स्तब्ध रह गई।

"मेरा स्वप्न यह है—उद्देश्य यह है कि दोनों उत्तम हैं, देश-सेवा करना

चाहते हैं। अलग-अलग वे अपना जीवन क्यों दिताये ? क्यों न वे एक पथ के पथिक बने ? एक उद्देश्य वाले पति-पत्नी बनें ? तेरा ब्रह्मचारिणी बने रहना कितना कठिन है ? हम सब मनुष्य हैं, कभी-न-कभी हम किसी-न-किसी परिस्थिति में इस देह के दास हो ही जाते हैं। इसका निवारण करने के लिए ही गृहस्थ आश्रम है। अगर तुम्हारी-जैसी स्त्री के लिए तुम्हारे-जैसे उत्तम एक मित्र का सहारा मिल गया तो तुम्हारा उद्देश्य और भी सरलता से पूरा हो जायगा।"

श्यामसुन्दरी ने पहले कुछ न कहा। थोड़ी देर बाद उसने कहा, "भैया जो-कुछ तुमको कहना है, दो शब्दों में बता दो।"

"तुम और राजाराव अपनी जीवन-नौकाओं को एक करके इस संसार-सागर में अपने उद्देश्य-द्वीप को क्यों नहीं पहुँचते ? दोनों का एक ही लक्ष्य है। दोनों ने एक ही शिक्षा पाई है ? दोनों उत्तम हैं। पारलौकिक विषयों में भी दिलचस्पी है। दोनों एक-दूसरे की सहायता कर सकते हैं। तुम दोनों देश की सेवा कर सको तो कितना अच्छा होगा। यह सपना मैंने कई बार देखा है, और इसमें आनन्दित होता रहा हूँ।"

श्यामसुन्दरी हैरान थी। चकित थी। थोड़ी देर बाद मुस्कराकर उसने कहा, "भाई, तुम घर जाओ। मैं सोचकर तुम्हें तार दूँगी। मैं तेरी उदारता से चिर परिचित हूँ।" नारायण राव ने उसके सिर पर हाथ रखा। फिर नमस्कार करके, सबसे विदा लेकर चला गया।

गोदावरी स्टेशन पर राजा राव, लक्ष्मीपति, वीरभद्र राव, भीमराजू, सुब्बाराय, जानम्मा, रामचन्द्र राव की माँ, रामचन्द्र राव के मित्र और नगर के प्रतिष्ठित व्यक्ति रामचन्द्र राव से मिलने के लिए उपस्थित थे। उन्होंने उसके गले में हार डाले। रामचन्द्र राव का मुँह प्रफुल्लित हो गया। वहाँ से सब काकिनाडा गये। काकिनाडा के मित्र और कुछ प्रमुख व्यक्ति सामर्लकोट में ही मिले। उन्होंने कहा कि वे उसका जलूस निकालेंगे। रामचन्द्र राव ने मना किया। नारायण राव ने समझाया। पर लोग उनका जलूस निकालकर उनके घर तक ले गए। लड़के की रिहाई, नारायण राव का प्रयत्न, जमींदार की सहायता के बारे में सुनकर भीमराज जी और दुर्गाम्बा बहुत ही सन्तुष्ट हुए। तब तक वे न जानते थे कि उनका

लड़का कैद होते-होते बचा था। वह खुशी के आँसू बहाते जाते थे।

दुर्गमाम्बा यह सोचती-सोचती कि लड़का विदेश चला गया है, काँटा हो गई थीं। पर आज लगता था जैसे उनमें हजार हाथियों का बल आ गया हो। भीमराजू और सुब्बाराय जी ने आराम से समय काटा। रामचन्द्र राव के गौने के लिए फिर मुहूर्त निश्चित करने के लिए पुरोहित को बुलाना पड़ा।

जानकम्मा ने दुर्गमाम्बा का आलिंगन करके अपने आनन्दाश्रु उनके अश्रुओं में मिला दिए।

रामचन्द्र राव यह जानकर बड़ा खुश हुआ कि उसकी पत्नी परीक्षा में पास हो गई है। 'अब भी कई पुराने आचार-विचार नहीं गये हैं? फिर भी इसका क्या अर्थ है? इस बीच में सूरी को नहीं देखना चाहिए। उससे बातें किये बगैर कितने दिन रहा जाय? पन्द्रह दिन कैसे रहेंगे। छी, मैं इतना पागल कैसे हो गया।'

रंगून के, जापान के, अमरीका के मित्रों को चिट्ठी लिखनी थी। यह हमेशा उन्हें लिखा करता। उन्हें बताना था कि वह घर पहुँच गया है। लियोनारा को सूरी से अंग्रेजी में चिट्ठी लिखवानी थी।

२१ : सम्बन्ध निश्चय

सूरचन्द प्रेमचन्द्र कम्पनी वालों ने, मद्रास आने पर, जगन्मोहन राव को पकड़वा दिया था। उसको उस कम्पनी को करीब-करीब पाँच सौ रुपये देने थे। जगन्मोहन के कर्ज बढ़ते जाते थे। हर जगह कर्ज था। अपने विवाह के लिए उसने कई जगह कर्ज लिया था। सूरचन्द वालों से हजार रुपया लिया था। पाँच सौ रुपया चुका दिया था, बाकी पाँच सौ उनके कई बार माँगने पर भी वह न चुका पाया था। वे उसकी जमींदारी

की हालत जानकर सावधान हो गए। उन्होंने उसके विरुद्ध स्माल कोज कोर्ट में दावा करके डिग्री ले ली। तब भी जगन्मोहन राय ने परवाह न की। जब उसे गिरफ्तार किया गया तो वह भौंचक्का रह गया। काटो तो खून नहीं। तब वह स्पेन्सर होटल में विशाखपट्टन से आई हुई था डायना से मिलने क्वार्ज टाउन जा रहा था। जगन्मोहन राय टैक्सी में जा रहा था। 'राउण्ड माले' पर वह रुकी। पीछे आती हुई कार में कोर्ट के कर्मचारी ने गिरफ्तारी का वारण्ट दिखाया। जगन्मोहन राय हक्का-बक्का रह गया। उसे बड़ा गुस्सा आ गया। शर्म के मारे मर-सा गया। दस-पन्द्रह आदमी चारों ओर जमा हो गए। उसी समय नारायण राव, ट्रिप्लीकेन में श्यामसुन्दरी से बातचीत करके कुछ सोचता-सोचता कार में आ रहा था। उस समय पुलिस वालों और अन्य लोगों का दो कारों को घेरा देखकर लोगों के मुंह सुना 'एक जमींदार को कर्ज न चुकाने के लिए पकड़ा गया है।' कार रुकवाकर, यह अनुमान करके कि वह जमींदार जगन्मोहन राव ही होगा, तुरत उतरकर, वहाँ हाल मालूम करने गया।

सब बातें मालूम होने पर, उस कर्मचारी से बात करके उसने मालूम किया कि कितना कर्ज देना है। उसके पास उतना धन न था। उसने कहा कि वह चैक देगा। मूलचन्द कम्पनी वाले ने चैक लेकर उसे रसीद दे दी।

लोग तितर-बितर हो गए। जगन्मोहन राय निस्तब्ध होकर यह सोचने लगा, 'इस राक्षस ने यह क्यों किया? क्या उसीके पास धन है? क्या मेरे पास नहीं है। मेरा अपमान करने के लिए उसने यह किया है। मेरा कर्ज ही तो है, नहीं तो मैं पकड़ा क्यों जाता? और मुझे छुड़वाकर यह मेरा अपमान कैसे करता? आज ही इस धन को यहीं-न-कहीं से लेकर उसके पास भेज देता है। यह निरा सूअर है, इसीलिए पत्नी का प्रेम न प्राप्त कर सका? मुझे कई काम थे, इसलिए नहीं आ सका। नहीं तो शारदा मेरे आलिंगन की प्रतीक्षा कर रही होगी। खैर, इसने मेरा अपमान किया है, इसलिए इसकी पत्नी को पूरी तरह वश में करना है। जब से मेरा विवाह हुआ है, मैंने इस विषय में दिलचस्पी ही नहीं दिखाई। नूना के घर किल्पाक जाकर मालूम करना है कि कौन वहाँ है। माँ को

इस बीच में कूमा ने लिखा तो था कि कुमार ने यहाँ आयेंगे। हाँ कहा था कि शारदा भी यहीं है। खैर विशाखपट्टनम जाने से पहले शारदा के बारे में मालूम करना है।'

नारायण राव, राजा राव, सुन्दाराव, जानकम्मा कोत्तपेट गये। रास्ते-भर नारायण राव कुछ-न-कुछ सोचता रहा। रामचन्द्र राव घर आया। लाडली बहन ने अपने पति को देखा। अब मद्रास में मुझे अकेला रहना पड़ेगा। कोत्तपेट जाकर, मद्रास की गृहस्थी के बारे में कैसे मालूम करें? शारदा का प्रेम कहीं मृग-मरीचिका तो नहीं है? उसका हृदय पिघल गया है, ऐसा मालूम होता है, अब क्या किया जाय? क्या यह जीवन एकाकी ही कटेगा?

'क्या एक बार भी शारदा ने मुझसे प्रेम से बातचीत की है? उसका मुझे गले लगाना, मुझसे आँखें मिलाना, उसका मेरा चुम्बन करना मेरे जन्म में लिखा है कि नहीं? कब तक यह हालत रहेगी? क्या जीवन के अन्तिम क्षण तक ऐसा ही रहना पड़ेगा?'

घर आने पर श्यामसुन्दरी की चिट्ठी आई—

"भैया, यही मैंने सोचा, इसमें ईश्वर की मनाही करना देखी। तू ही ईश्वर की वाणी है, मैं तेरी आज्ञा का पालन करूँगी। मैंने कभी तेरे मित्र से प्रेम नहीं किया। तुझे भाई समझकर प्रेम किया है। फिर भी डाक्टर जी पूज्य पुरुष हैं। उनकी सेवा के लिए मैं अपना सर्वस्व देने के लिए तैयार हूँ।

तुम्हारी प्यारी बहन,

श्यामा।"

नारायण राव फूला न समाया। अभी राजाराव को मनाना था। उस दिन शाम को राजाराव को अकेला बगीचे में ले गया।

"राजा, तुझे व्याख्यान देना है। कुछ ऐसी बात करनी है जो तुझे झकझोर देगी।"

राजाराव पत्नी की मृत्यु के बाद वैरागी-सा हो गया था। वह अपने जीवन को व्यर्थ समझने लगा था। डॉक्टर के लिए आवश्यक शुभेच्छा भी उसमें न रह गई थी। मित्रों और सम्बन्धियों के बहुत कहने पर भी उसने

विवाह करने से इन्कार कर दिया। माँ-बाप ने भी मनाया। वे काकिनाडा से पहले अपने गाँव, फिर अपने पुत्र के पास ही चले गए थे। ये पुराने खयालात के आदमी थे।

राजाराव को पुराने रीति-रिवाज कतई पसन्द न थे। उसने अपनी दोनों लड़कियों का नामकरण-संस्कार भी न किया था। दूसरी लड़की के पैदा होने पर 'शान्ति' भी न करवाई थी। प्रसव-कक्ष में जाने पर भी कपड़े न बदलता। यह सब [माँ-बाप को गवारा न था। परन्तु दुनिया देखी थी, कई आचार भी बदल गए थे। इसलिए उन्होंने लड़के की इच्छानुसार करने दिया।

क्योंकि वे अपने लड़के का हठ जानते थे, इसलिए उन्होंने विवाह करने के लिए बार-बार कहने में कोई लाभ न देखा।

नारायण राव यह सब जानता था। अगर कोई राजाराव के हृदय को बदल सकता था तो वह नारायण राव था। नारायण राव के नाम पर राजाराव आनन्दित होता था, और राजा राव के नाम पर नारायण राव खुश होता था। दोनों परमेश्वर को चाहते थे। परमेश्वर भी उन पर जान देता था।

"राजा, क्या तू योगी है ?"

"नहीं !"

"संसार को छोड़कर क्या तू सन्यासी होना चाहता है ?"

"वही परम उद्देश्य है,"

"बुढ़ापे में !"

"जब अन्तरात्मा कहे तभी।"

"तब तक ?"

"रोगियों की सेवा करता रहूँगा।'

"अरविन्दादि महायोगी, रामकृष्ण आदि तत्ववेत्ताओं ने क्या कहा है संन्यास के विषय में ?"

"सम्पूर्ण वैराग्य, जब तक न हो तब तक सन्यास न लो।"

"सन्यास लेने तक तुझे क्या करना चाहिए। इस विषय में तेरी अन्तरात्मा क्या कहती है ?"

"परिशुद्ध कर्मयोग का आचरण करो !"

"कर्मयोग के लिए हृदय की पवित्रता आवश्यक है न? न? तेरी वैद्य-वृत्ति में तेरे मसार में क्या तेरा हृदय चचल अपवित्र हुए बगैर रह सकता है ?"

"नही रह सकता ।"

"अच्छा, न सही । धर्म-मार्ग पर चलने वाले गृहस्थों के मन का चचल होने का क्या अवकाश नहीं है ? तेरी पत्नी जब तक जीवित रही तब तक तू गृहस्थ-धर्म निभाता ही आया था। क्या कभी तेरा मन चचल नही हुआ ?"

"चचल नही हुआ था, यह नही कहता, पर इन्द्रियों को तृप्ति मिल जाती थी ।"

"तृप्ति के बावजूद भी कई ऐसे हैं जिनका हृदय चचल हो उठता है। कई ऐसे अच्छे आदमी है, जो अच्छी जिन्दगी बसर करते-करते कीचड़ में जा डूबे हैं । खैर, ज्ञानी होकर उत्तम मार्ग पर चलते-चलते, जब सम्पूर्ण वैराग्य प्राप्त करना चाहते हो तो उसी तरह के लक्ष्य वाली, विचार वाली, मनोवृत्ति वाली स्त्री अगर हो तो, उसे पुरुष को क्यो नही ग्रहण करना चाहिए ? वे दोनों मिलकर अपनी जिन्दगी एक साथ क्यो न गुजारें ?"

"जो कहना है साफ कहो, कविता न करो !"

"अच्छा, श्यामसुन्दरी देवी ओर तू वैद्य है । वह गुणवती है । महात्मा गान्धी के आश्रम में जाकर सेवा करना चाहती है । रोगियों की सेवा ही उसके जीवन का उद्देश्य है। वह ब्रह्मचारिणी रहकर जिन्दगी बिताना चाहती थी । समझदार है। तू महात्माजी के उपदेशों को पढ चुका है । तू बिना विवाह किये रोगियों की सेवा नही कर सकता । परिपक्व दशा में आने के पूर्व सन्यास ग्रहण नहीं कर सकते । हर घडी, हर परिवार मे तुम्हें सभी का प्रलोभन दीखेगा न ? श्यामा से तुझे शादी क्यों नही करनी चाहिए ? मै इस बारे में कई दिनों से सपने ले रहा हूँ । तुम दोनों का विवाह आन्ध्र देश के लिए आदर्श-प्राय होगा । मुझे मालूम है कि तेरे माँ-बाप इसका विरोध करेंगे । पर तुझे साहस करके यह करना ही होगा ।"

"नारायण, तू शायद मुझे आकाश में रहने वाला एक परम पुरुष समझ रहा है । मेरा मन साँप की तरह घूमता फिरता है । मैं ब्रह्मचारी क्यो

हूँ ? क्योंकि पत्नी से मेरा सम्बन्ध हमेशा कष्ट-प्रेरित रहा। मेरा विश्वास है कि इसी कारण उसकी मृत्यु हो गई है—(उसकी आँखों में तरी आ गई) मैं पापी हूँ। मैं इस तरह के पाप नहीं करना चाहता। परन्तु मैं सोचूँगा, अगर मेरी अन्तरात्मा मान गई तो माँ-बाप को भी मना लूँगा। मेरे मन में भी यह खयाल आया कि श्यामसुन्दरी मेरे बच्चों के लिए आदर्श माँ हो सकती है। दिवंगत सूरम्मा जरूर सन्तुष्ट होगी। मुझे सोचने दें! क्योंकि तेरी आत्मा और मेरी आत्मा एक-जैसी है, इसलिए एक-जैसा विचार उठा है।" उसकी आँखों से आँसुओं की झड़ी लग गई। नारायण राव भी आँसू बहाने लगा।

दोनों का शोक महदानन्द में परिवर्तित होकर, उस अन्धकार में पेड़ों की छाया में, दिशाओं में मिल गया।

२२ : षड्यन्त्र

वरदकामेश्वरी देवी जब से राजमहेन्द्रवर आई थी, मलेरिया के कारण बीमार थी। दो-तीन दिन तो जमींदार ने देखा। पर बाद में १०३ या १०४ का बुखार आने लगा।

दोनों लड़कियों को आने के लिए तार दे दिए।

उसी दिन नारायण राव और शारदा राजमहेन्द्रवर के लिए रवाना हुए। विश्वेश्वर और शकुन्तला भी आये।

नारायण राव सास के पास गया। कुशल-समाचार पूछे, और उसकी नाड़ी देखकर अनुमान किया कि बुखार १०४ डिग्री का होगा। कुनैन पिलाई। नारंगी का रस, और अनार का रस भी दिया।

वे बहुत कमजोर हो गई थी। राजमहेन्द्रवर में जमींदार का एक पुराना वैद्य था। एम० बी० बी० एस० की परीक्षा पास करके नौकरी से

निवृत्त होकर पेन्शन लेकर राजमहेन्द्रवर में प्रैक्टिस कर रहा था। पहले तो वह अच्छा वैद्य था। मशहूर था। पर अब वृद्ध हो गया था। और नई किताब भी न पढ़ पाता था।

नारायण राव ने ससुर साहब से बार-बार कहकर राजाराव को भी बुलाया ताकि वृद्ध डॉक्टर को कुछ सहायता मिल सके।

राजा राव ने चार दिन मलेरिया से मानो युद्ध किया। रोगी की धमनियों में उसने कुनैन चढ़ाई। वरदकामेश्वरी देवी के बिना जाने, अंगूर के रस और नारंगी के रस के साथ अंडे भी दिये। चार दिन बाद बुखार उतर गया। राजाराव ने सलाह देकर, अमलापुर जाते-जाते कहा कि बुखार के ठीक होने के बाद उन्हें पथ्य दें।

कितने ही नौकर-चाकर थे, रिश्तेदार थे। पर दिन-रात नारायण-राव सास की चारपाई के पास बैठा उनकी सेवा करता रहा। जब उसका हाथ माथे पर पड़ता तो उनको आराम मिलता, और वे सोचतीं उसकी बातें उनको लोरी-सी लगती। उसके सामने बैठे रहने के कारण ही वे पथ्य खा सकीं।

जब बुखार तेजी पर था तो उन्होंने नारायण राव को खूब बुरा-भला कहा था। जगन्मोहन की प्रशंसा की थी। नारायण राव को शारदा को चुराने वाला राक्षस बताया था। नारायण राव मुस्कराता, सोचता, 'तो यह है रहस्य' और वह उनके माथे पर गीली पट्टियाँ रखता जाता।

'उन दिनों का दामाद कुछ था और आजकल का कुछ और'—यह सोच-वरदकामेश्वरी देवी आँखें फाड़-फाड़कर नारायण राव को देखने लगीं। आनन्दित हुईं। जब वह पास न होता और वे बुखार की नींद से उठतीं तो पुकारतीं, "नारायण राव !"

एक दिन जमींदार पत्नी के पास बैठे थे। उन्हें १०५ डिग्री का बुखार था। शरीर जल-सा रहा था। जमींदार भय के कारण पत्नी के पलंग पर ही बैठ गए। राजाराव ने कहा, "घबराने की कोई बात नहीं।"

नारायण राव भोजन के लिए चला गया।

वरदकामेश्वरी देवी ने आँखें खोलकर पति को देखकर कहा, "जमाई को बुलाइये !" जमींदार नीचा मुँह करके आँसू बहाने लगे।

अब तक नारायण राव को उन्होंने कभी भी 'जमाई' न कहा था। क्या कभी वह ठीक हो सकेगी ?

राजाराव ने उनकी हालत देखकर कहा, "जी अब इससे अधिक बुखार नहीं आयगा। सप्ताह-भर में वे बिलकुल ठीक हो जायेंगी, मलेरिया है, रक्त की परीक्षा भी नहीं की जा सकती, क्योंकि अभी कुनैन दी है।"

"लगता था, कुनैन का इन्जेक्शन के देते ही बुखार का कम होना, यह बता रहा है कि यह मलेरिया है, 'एटेब्रीन' गोली भी खाने के लिए दे रहा हूँ।"

इतने में नारायण राव आकर सास के पास बैठा। फिर सास ने आँखें खोलकर उसे देखा। दस मिनट में उनका ज्वर १०२ डिग्री तक उतर गया।

केदारचन्द्र भयभीत होकर माँ के पास आ गया। "माँ, ठीक हो जायगी, तू मत घबरा! आठ वर्ष के बच्चे को डरना नहीं चाहिए" नारायण राव ने उससे कहा, "अगर तू यहाँ रहा तो माँ जरूर ठीक हो जायेंगी" कहकर वह वहाँ गया जहाँ शकुन्तला, शारदा और सूमा आदि बैठी थीं। उसने वहाँ शारदा से कहा, "बहन, अगर छोटे जीजा यहाँ न रहें तो माँ ठीक नहीं होगी, इसलिए जीजा को जाने के लिए मत कह!" शारदा शरमाई। शकुन्तला ने 'भग' कहकर उसे पास बुलाकर दुलारा-पुचकारा।

शकुन्तला के बच्चे नारायण राव से बहुत हिल-मिल गए थे। वे हमेशा 'चाचा' 'चाचा' की रट लगाये रहते।

जब ज्वर उतर गया तो सास ने नारायण राव से कहा कि जब तक मैं पूरी तरह ठीक न हो जाऊँ तब तक तुम यहीं रहो! इसलिए नारायण राव चार दिन और रहा। जब उनकी हालत सुधरने लगी तो सबसे विदा लेकर वह कोत्तपेट चला गया।

जब सूमा को बुखार था तभी जगन्मोहन राव उन्हें देखने आया। उन दिनों वह कभी-कभी आकर उनका हाल-चाल पूछ जाता। वह शारदा को अपने बाहु-पाश में लेने के लिए बहुत कोशिश करता। उससे तरह-तरह की बातें करता। शारदा को उसकी माँ की बीमारी के बारे में ढाढ़स बँधाता। शकुन्तला और जमींदार उससे तटस्थ रूप से बातें किया

करते। यद्यपि वह मन-ही-मन उबल रहा था तो भी उसने नारायण राव से कहा, "थोड़े दिनों में आपका हिसाब चुका दूँगा।"

"यह क्या भाई साहब, आप कुछ न दीजिये, वक्त पर आपके पास रुपया न था इसलिए उन्होंने हल्ला कर दिया। आप उस बारे में कुछ न सोचिये। भेजेंगे तो मैं वापिस कर दूंगा।" नारायण राव ने हँसते हुए कहा।

'मैं बड़ा भाई हूँ, और वह छोटा। ओहो, अच्छी मजाक है,' गुनगुनाता हुआ वह शारदा के कमरे में गया। वह एक उपन्यास पढ़ रही थी।

"क्या पढ़ रही हो शारदा?"

"ले मिज़राबले।"

"क्या?"

"मैं ह्यूगो की किताबें पढ़ने लगी हूँ।"

"ह्यूगो जाने दो, क्या ड्यूमा और वेल्स के उपन्यास भी पढ़े हैं?"

"ड्यूमा का 'माऊण्ट क्रिस्टो' पढ़ा है।"

वहाँ रखे हुए उपन्यासों को उसने गौर से देखा। सब सुन्दर अच्छी तरह बँधे हुए थे और सभी पर लिखा था, 'शारदा के लिए—नारायण।'

क्या नारायण राव में भी टेस्ट है?

नारायण राव के चले जाने के बाद जगन्मोहन राव ने शारदा का मन आकर्षित करना चाहा। तार देकर उसने २० रुपये की कीमत वाली उमर ख़ैयाम की किताब उसे मँगाकर दी। शारदा से वह उपन्यास और पाश्चात्य कविता के बारे में बातें करता। कहता था कि जो कविता अंग्रेजी में प्रकाशित हो रही थी वह ही वास्तविक कविता थी। यह दिखाने के लिए उसने शारदा को एक किताब दी।

उसमें स्त्री-पुरुष के मैथुन के बारे में स्पष्ट-स्पष्ट लिखा था। शारदा ने चकित होकर उस पुस्तक को वापिस कर दिया। उसे बड़ी नफरत-सी हुई।

सप्ताह-भर तक वह रोज शारदा की खुशामद करता रहा। उसे अंग्रेजी में कविता लिखने के लिए कहा। गाने के लिए कहा, "जो ऊँचे खानदान

के हैं, वे ही संगीत का मर्म समझते हैं। सुनार गहने बनाता है, पर पहनते हम हैं। स्त्रियाँ सीख सकती हैं, पर मर्दों में नीच जात के लोगों को ही सीखना चाहिए।"

यह सुनकर शारदा को गुस्सा-सा आया।

उन दोनों ने कई विषयों पर बातचीत की। संगीत, शिक्षा, आन्ध्र विश्वविद्यालय आदि। उस बातचीत में एक बार जमींदार और विश्वेश्वर-राव ने भी हिस्सा लिया था।

जमीं०—"कुछ भी हो, आन्ध्र-विश्वविद्यालय विजयवाड़ा से विशाखा-पट्टनम जा रहा है।"

विश्वे०—"अगर तेलुगु-भाषी प्रान्त से इतनी दूर विश्वविद्यालय रखा गया तो क्या फायदा, यह हमारे कडपा, कर्नूल, बल्लारि, अनन्तपुर, नेल्लूर वाले पढ़ रहे हैं।"

जमीं०—"विशाखापट्टनम के पास समुद्र है, पर्वत हैं। विशाखापट्टनम भविष्य में आन्ध्र की राजधानी भी होगी। बन्दरगाह बन रहा है। क्या ऐसी जगह विश्वविद्यालय नहीं होना चाहिए?"

विश्वे०—"प्रान्त के कोने में कैसे?"

जमीं०—"अब क्या किया जा सकता है? पर आन्ध्र विश्वविद्यालय की खूब उन्नति होगी।"

पूसा के बुखार उतर जाने के बाद, दस दिन तक जगन्मोहन राव को मलेरिया बना रहा। जमींदार और विश्वेश्वर दो दिन बाद चले गए। शकुन्तला के ब्याह के दिन नजदीक आ रहे थे।

शारदा हिल-मिलकर जगन्मोहन के साथ घूम रही थी। बातें कर रही थी। वह उसका आलिंगन व चुम्बन करना चाहता। 'पहले वह आना-कानी करेगी, पर बाद में—' वह सोचा करता।

'आह, कितनी सुन्दर है यह लड़की। इसके सौन्दर्य की कोई बराबरी नहीं कर सकता। अगर मैं इसका आनन्द न लूँ तो मेरा जन्म व्यर्थ है।'

उस दिन शाम को, पहले भोजन करके जब और भोजन कर रहे होंगे दुमंजिले पर, उनके कमरे में, उसने उसके साथ अकेला रहने की सोची।

उस दिन जगन्मोहन ने अपनी बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन किया। हास-

मोनियम पर अंग्रेजी गीत बजाये। गाये। नृत्य भी किया। शारदा मां के सामने मेंढक की तरह थी। शाम को सात बजे नारायण राव कार से उतरा।

२३ : चपत

नारायण राव ससुराल से आने के बाद पलनापुर राजा से मिलने गया।

"नारायण, मैंने बहुत सोचा! मां-बाप की अनिच्छा की मैं परवाह नहीं करता। ऐसा लग रहा है जैसे मुझमें पूरी तरह इच्छा पैदा हो गई हो।"

"अरे, पागल, अगर हम इस छोटे-से जीवन में ठीक मार्ग पर चलें तो इच्छा भी अच्छी हो जाती है, जो तेरी पत्नी बनने जा रही है उसके बारे में इच्छा रखना क्या गलत है? इच्छा तो मान गए। तेरे प्रति प्रेम, सन्तोष, बातों में न व्यक्त कर, हरकतों से करके दिखाऊं तो शर्म आती है, फिर भी मैं तुझे गले लगाता हूं।" नारायण राव के मन में हजार समुद्र मानो उछलने-से लगे। उसने झट श्यामसुन्दरी को एक बड़ा पत्र लिखा। इन दोनों ने मिलकर राजाराव के मां-बाप को भी मनाया। उन्होंने वेदोक्त रीति से विवाह सम्पन्न करने का निश्चय किया। यह भी निश्चय किया गया कि मद्रास में श्यामसुन्दरी देवी के परिवार को नारायण राव के घर रखकर वहीं विवाह हो। कई दिन वहां ठहरकर, राजाराव के माता-पिता को उसने इस विषय में मनाया।

नारायण राव को वकालत बिलकुल पसन्द न थी। शुरू से ही उसकी इच्छा न थी। उसके पिता ने कहा, "बेटा, यह सब कमाई कौन खायगा? मैं वृद्ध हो गया हूं, घर में कोई नहीं है। तू यहां आकर जैसी तेरी मर्जी

बैठे रहे ? होशियारी से रहे । यह मेरी इच्छा है । बड़ा भाई भी पास ही रहेगा, और मैं राम नाम जपता समय बिता दूँगा । मैं पूरा वानप्रस्थी हूँ । दक्षिण वाले बगीचे में मैं और तुम्हारी माँ तपस्या करते रहेंगे । जब तक जीवित हूँ, मैं भरसक तुम्हारी मदद करता रहूँगा ।"

रामचन्द्र राय और सूरी, परम प्रेम में आकाश-पथ में विहरण करने-से लगते थे ।

'फिर मैं मद्रास में क्यों रहूँ ? कोलनेट में अगर एक विद्याश्रम मैं खोल दूँ, तो ? पिता, दक्षिण के बगीचे में अपना वानप्रस्थ बिताना चाहते हैं । यहाँ चार सौ रुपये की कमाई आसानी से हो सकती थी । पिता और भाई की अनुमति जरूर मिलेगी ।'

बैंक में जमा हुए चार लाख रुपये में से पचास हजार रुपये आश्रम के लिए खर्च करना चाहा । उसकी आमदनी पर आश्रम क्या नहीं चल पायेगा, बढ़ न सकेगा ? पिता जी सरल स्वभाव-सम्पन्न हैं, भाषा-कोविद हैं । वे ही मुख्याचार्य हो सकें तो अच्छा है ।'

यह सोचते ही नारायण राव ने राजा राव, परमेश्वर मूर्ति, श्यामसुन्दरी देवी, लक्ष्मीपति को तार भेजे । परमेश्वर मूर्ति पत्नी और श्यामसुन्दरी के साथ अगले दिन भोजन के समय तक आ गया । उस दिन शाम को राजा राव और लक्ष्मीपति आये ।

राजाराव—"तेरे आदेश कार्य अब होने की आवश्यकता है ।"

"तेरा काम कमाई खत्म करने के लिए मैं पैंतरा चल रहा हूँ । अब ! मैं यहाँ विद्या का महादान देने के लिए एक आश्रम खोलने जा रहा हूँ । परमात्मा की आराधना और देश-सेवा, मुख्य उद्देश्य है । पुरुषोत्तम से एकप्राण् होने के लिए हम उत्कृष्ट धर्म का अनुसरण करेंगे । मैं अपना पेशा छोड़ रहा हूँ । राजाराव, श्यामसुन्दरी, परमेश्वर मूर्ति, लक्ष्मीपति आज से इस आश्रम के आचार्य हैं । मुझे हमारी पुरानी आयुर्वेद की औषधियों की परीक्षा करके उनके गुण-अवगुण जानने की इच्छा हो रही है ।"

"आश्रम के गणक का कार्य लक्ष्मीपति देख सकेगा । परमेश्वर कवि है, चित्रकार है । एक और कवि तथा पण्डित को वहीं से पकड़ लायेंगे । मैं संगीत सिखाऊँगा । एक और संगीत के आचार्य को वहीं से ले आयेंगे ।

नृत्य सिखाने के लिए भी किसी को ढूँढा जाय।"

"मेरे पिता जी सर्वविद्या दक्ष हैं। पारलौकिक विषयों पर वे हम सबके गुरु बन सकेंगे। कहो, तुम्हारी क्या राय है?"

सब बड़े सन्तुष्ट हुए। आश्रम के बारे में सलाह-मशवरा किया।

इतने में मित्रों से नारायण राव ने श्यामसुन्दरी और राजा राव के विवाह के बारे में भी कहा। लक्ष्मीपति और परमेश्वर मूर्ति ने आनन्दित होकर राजाराव और श्यामसुन्दरी का अभिनन्दन किया।

श्यामसुन्दरी ने लज्जावश मुख नीचे कर लिया। परमेश्वर ने मंगलाचरण करके उन पर फूल डाले। वे सब नारायण राव के घर में गये।

श्यामसुन्दरी देवी ने कोत्तपेट में कुछ दिन ठहरकर बाद में सूरी का प्रेमपूर्वक आलिंगन करके कहा,"तेरे और तेरे पति के पुनः सयान के सुमुहूर्त पर न रह सकूँगी, बहन!"

सबसे विदा लेकर श्यामसुन्दरी देवी मद्रास के लिए रवाना हुई। नारायण राव, राजाराव और लक्ष्मीपति श्यामसुन्दरी देवी को राजमहेन्द्रवरं तक छोड़ने गए। नारायण राव सास का हाल-चाल पूछने ससुराल गया। बाकी सब भोजन के लिए लक्ष्मीपति के घर गये।

नारायण राव को आया देखकर जगन्मोहन को बड़ा गुस्सा आया। शारदा अब उसके साथ भोजन नहीं कर सकती थी। शारदा और जगन्मोहन एक साथ भोजन करने बैठे। पति को आया देखकर शारदा मन्द हास करके उठकर अपने कमरे में चली गई।

सास जमाई को देखकर बड़ी खुश हुई। उसने जमाई के साथ शारदा को भोजन के लिए बिठाने का प्रयत्न किया।

ब्राह्मण के दिये गए पानी से स्नान करने के बाद, नारायण राव को तौलिया शारदा ने दिया। तौलिया लेते हुए उसने पूछा—

"क्यों क्या भोजन कर चुकी हो?" इस प्रश्न को पूछते हुए वह शरमाया। क्योंकि सिवाय बहुत जरूरी बातों के वह शारदा से कभी कुछ पूछता न था।

शारदा पति को देखकर फूली न समाई। तौलिया लेकर गई। उसका गला और हृदय कल्लोलित हो उठे।

"नहीं, क्या आपके साथ बैठ सकती हूँ ?" शारदा ने पूछा।

'क्या यह शारदा ही है ?'

"जरूर, हम दोनों के लिए अलग भोजन परोसने के लिए कहूँ। श्यामसुन्दरी भाई थी, अब आ रही है। राजाराव और श्यामसुन्दरी का विवाह निश्चित हुआ है। भोजन के बाद, क्या उसे देखने चलोगी ? गाड़ी में छोड़ भी आयेंगे।"

"श्याम भाभी का विवाह है ? डॉक्टर भाई के साथ शादी कर रही है ? बहुत अच्छा है। जल्दी भोजन करके चलेंगे, श्याम भाभी को गले लगाऊँगी।"

शारदा अन्दर गई, वह बड़ी खुश थी। नारायण राव भी वहाँ हँसता हुआ आया। शकुन्तला द्वारा दी गई रेशमी धोती उसने पहन ली।

"कोलपेट में सब ठीक तो है ?" शकुन्तला ने पूछा।

"हूँ, शारदा और मेरे लिए अलग भोजन परोसने का इन्तजाम कीजिये।"

'यह क्या ? बहू के बारे में नारायण राव को इस तरह बातें करते कभी न सुना था ? उसने कभी कल्पना भी न की थी कि शारदा भी पति के प्रति इतनी अनुरक्त है। क्या कोई ऐसा भी व्यक्ति है जो इस उत्तम पुरुष से प्रेम किये बगैर रह सके। अगर मेरा ही पति ऐसा होता तो क्या उनके चरणों से मैं एक मिनट भी दूर रह पाती ?'

शारदा और नारायण राव को अलग एक जगह भोजन परोसा गया। शारदा लाज और प्रेम में एक लाजवन्ती-सी लगती थी। अपने पति की थाली में उसने विवाह के समय पर भी न खाया था। उसका उच्छिष्ट भी वह नहीं जानती थी। उनके साथ बैठकर एक ही थाली में उसे खाने की इच्छा हुई। यह देखकर दो-तीन ग्रास के टुकड़ों को लेकर नारायण राव ने चुपचाप से पत्नी की थाली में रख दिया। उसकी ओर देखकर हँसी, और मन-ही-मन उन टुकड़ों को आँखों पर लगाकर खा गई।

भोजन हो गया। शारदा मिनट-भर में बन-ठनकर आ गई। कार में पति की बगल में हो बैठी। रिमझिम-रिमझिम बहाने उनको छूकर वह आनन्दित हो उठती।

"श्याम भाभी कब आई थी ?"

"परसों कोत्तपेट माई थी। वहीं सम्बन्ध निश्चय किया गया। सूर्य उछलो-कूदो। तू बी० ए० में और सूर्य एफ० ए० में एक साथ शामिल हो, यह मेरी इच्छा है।"

श्यामसुन्दरी ने शारदा को गले लगा लिया। नारायण की बहन के पास जाकर पूछा, "क्यों हमारे घर कभी न आओगी ?"

"क्यों भाभी, कभी तुम हमारे घर आई ?"

"कल से रोज आया करूँगी।"

दो कारों में सब राजमहेन्द्रवर स्टेशन गये।

"नारायण, क्यों न राजा राव भी मद्रास जायँ, वहीं ठहरकर, सालियों और सालों व सास को ला सकता है न ?" परमेश्वर ने कहा।

"खूब परम !" नारायण राव ने कहा।

"बहुत अच्छा।" लक्ष्मीपति ने कहा।

सबको यह सलाह जँची।

दोनों को सेकण्ड क्लास का टिकट खरीदकर सेकण्ड क्लास के कूपे में बिठा दिया। श्यामसुन्दरी ने शारदा के कान में कहा, "तेरे पति भगवान् के समान हैं। दिव्य हैं। तू सौभाग्यशाली है, उनकी पूजा कर !" उसके गाल उसने नोचे। शारदा ने अनायास उसको फिर गले लगाकर कहा, "बहन, तुम्हारे पति भी दिव्य व्यक्ति हैं। तुम मेरे पास आ रही हो, यह जानकर मुझे बहुत खुशी हो रही है। जल्दी आओ! सबको मेरी नमस्ते कहना!"

रेल चल पड़ी। नारायण, परमेश्वर और शारदा जमींदार के घर आये। दूसरी कार में लक्ष्मीपति अपने घर गया। जगन्मोहन की अक्ल बिगड़ी हुई थी। उस पशु में रस-ग्रहण-शक्ति कहाँ थी ? उसमें आवेश अधिक था। दो-चार कौर खाकर वह चला गया। वह गरम हो उठा। उसको उस अन्धकार में शारदा देवी का मुँह, यौवन, सौन्दर्य-मात्र ही चमचमाता दीख रहा था।

इतने में शारदा, नारायण राव और परमेश्वर मूर्ति कार में से उतरकर आये। पति के साथ शारदा को आता देख, जगन्मोहन का गुस्सा और भी बढ़ गया।

शारदा भीतर अन्दर जाकर, कपड़े बदल कर, कमरे में पिता जी के पास बैठ गई। वे भोजन कर रहे थे। उसे जगन्मोहन का ध्यान हो कर लगा। वहीं वह पास खड़ा हुआ पति का मुँह भी नहीं देख सका? यह सोचती-सोचती वह पिता के पास ही बैठी रही।

डॉक्टर—(पत्नी का देख कर), 'शाहिजहाँबाद में था मित्र जगन्मोहन के बारे में कह रहे थे, जिसको स्वर्गीय वाला न होने के लिए उसका गिरफ्तार करवा दिया, तब तेरे छोटे जमाई ने बड़ा रुपया चुकाकर उसको छुड़वा लिया है।"

"कब?"

"पिछले दिनों जब वह यहाँ आया था। हम उस दिन यहीं थे। महात्मा गांधी ने तो ही किसी से कहा नहीं। उसका हृदय कितना बड़ा है?"

"हमारा मोहन इतना कैसे बिगड़ गया है? शायद बुरी सोहबत है?"

शारदा यह सब सुनकर आश्चर्य कर रही थी। पति का ध्यान करते ही उसकी आँखें चमक-सी उठीं। मैंने उनका अपमान किया है, जो दुख मैंने उनको दिया है कैसे हटा सकती हूँ? मेरे पाप का क्या प्रायश्चित है?"

पति के बारे में विचार उठने लगे। कोई मीठा-सा दर्द उसे होने लगा, विषाद-मिश्रित सन्तोष से उबर जाने के लिए वह जीने के पास गई।

वहाँ किसी की तरह, राक्षस की तरह, जगन्मोहन छिपा बैठा था। उसने जीने वाले कमरे में ऊपर बिजली बुझा दी थी। परन्तु बगल के कमरे में रोशनी थी, वह वहाँ छिपा हुआ था।

डर के कारण वह महात्मा-सा लगता था। रेशमी कपड़े पहने हुए वह बड़ा खूबसूरत मालूम होता था।

वह द्वार पर छिपी सफेद छिपकली की तरह लगता था, मकड़ी की तरह था।

वह जानता था कि इस समय सिवाय शारदा के जीने में कोई नहीं है। शारदा यह नहीं जान सकी कि बिजली नहीं जल रही है, कोई खटका

रहा है कि कोई सीढ़ियों के पास छिपा हुआ है।

उसके हृदय में नारायण था, और बाहर शिकारी-सा मोहन।

वह सीढ़ियों के पास आई। वह उसके पास गया।

"शारदा!" सुनाई पड़ा।

"कौन?" शारदा ने चौंककर पूछा।

"मैं, प्रियतमा!" जगन्मोहन ने कहा।

उसने उसके कन्धे पर हाथ रखा। उसको छूते ही उसका शरीर गरम हो गया। वह उत्तेजित हो उठा। उसने शारदा का आलिंगन किया।

वह भय और आश्चर्य के कारण बात न कर सकी। जगन्मोहन ने उसका चुम्बन करना चाहा। अन्धकार में उसकी आँखें अंगारे की तरह चमक रही थीं। शारदा ने उसके मुँह को धक्का देकर हटा दिया। उसका हाथ पकड़कर उसने शारदा के ओंठों को चूमना चाहा। उसके स्वास का शारदा को छूना था कि वह महा शक्ति-सी हो गई। काँपते हुए उसको दूर हटाकर उसने जोर से उसके गाल पर एक चपत लगा दिया। उसका सिर चकरा गया। गिरते-गिरते बचा। मुश्किल से सीढ़ियों के रेलिंग्टर के सहारे खड़ा हो सका।

शारदा झट अपने कमरे में गई। क्रोध और अपमान के कारण बिलख-बिलख कर रोने लगी। शारदा ने जब चपत मारा था, उसी समय मझालचो पोलिगाडु वहाँ आया। उसने देखा कि शारदा मालकिन ने मोहन बाबू को क्यों मारा था। "अच्छा सबक सिखाया, शारदा मालकिन ने।" उसने दादी चिट्टी से जाकर कहा।

दादी चिट्टी ने जाकर शकुन्तला से कहा। उसे बड़ा गुस्सा आया। उसने शारदा के पास जाकर पूछा, "उसने क्या किया है?"

शारदा ने जो-कुछ गुजरा था, बहन से कह सुनाया। शकुन्तला माँ के पास गई। माँ झट उसके कमरे में गई। वहाँ जगन्मोहन को अपने गाल सहलाते हुए देखकर कहा, "अरे, यह ठीक नहीं है! तू अब हमारे घर न आया कर! सबेरे ही मेल से चला जा, हममें से किसी से कहने की भी कोई जरूरत नहीं है।"

जगन्मोहन क्रोध और अपमान में छट उठा और सामान लेकर उसी समय द्वार से स्टेशन चला गया।

२४ : प्रेम महा तरंगिणी

सूर्यकान्त के गौने का शुभ दिन आ गया।

तुलसाराम जी के सब बन्धु-बान्धव आये। कौडम्य पेट से गढ़वर्ती दल वाले सब आये। जागीरदार के कुटुम्ब के लोग भी आये। तुलसाराम जी का घर खचाखच भरा हुआ था।

दक्षिणी भाग का कमरा जमींदार के परिवार को दिया गया था। दिन-भर वे मुख्य घर में रहते। रात को वहाँ आराम करते।

दिन में 'प्रायश्चित्त' किया गया, रात में गौना। पूर्णचन्द्र चाँदनी की तरह चमक रही थी। उन दोनों का प्रेम दिग्-दिगन्तर में व्याप्त हो रहा था। अब दम्पति का गृहस्थ जीवन शुरू हो गया।

शारदा का हृदय नवनीत की तरह पिघल उठा।

प्रेम के कारण गोमाडि काडु गौ का बछड़ा इधर-उधर छलांग मार रहा था। नारायणराव ने उसे उठा लिया। वो बिल्ली-सी उसकी ओर आने लगी।

'श्री महा लक्ष्मी को बार-बार नमस्कार' नारायणराव मन-ही-मन सोच रहा था।

जो नारायण राव के पास भागी-भागी आ रही थी तो शारदा को डर लगा कि वह उसे न मारे 'अरे,' कहती हुई वह जो और पति के गोद में आ खड़ी हुई। यद्यपि वह गौ एक तरफ हट गई थी फिर भी वह शारदा से थोड़ी टकराई। और शारदा नीचे गिर गई।

नारायण राव ने उसके बछड़े को नहीं छोड़ा, उसने झट आकर पत्नी

को उठाया। "कहीं चोट तो नहीं लगी है?" उसने भयभीत होकर शारदा से पूछा। पति के उठाते ही शारदा के आनन्द की सीमा न रही।

"शारदा? शारदा?" उसने विह्वल हो पूछा।

यह शारदा के लिए पंचम स्वर था।

उसने मुस्कराते हुए आँखें खोलीं। शरमाती हुए उसने कहा, "चोट नहीं लगी है।"

नारायण राव ने उसे उसी तरह उठाकर कमरे में बिस्तर पर सुला दिया। बल्लाल ने कहा, "वहीं, आपको गौ न मारे, आपके बचाने के लिए शारदा मालकिन बीच में गई थीं।"

नारायण राव की आँखें सन्तोष से मिच गईं।

शाम को नारायण राव अपने कमरे में गया। कमरे को खूब सजा हुआ पाकर उसे आश्चर्य हुआ। इतने में शारदा और सूर्यकान्त वहाँ आई। उन दोनों ने मिलकर कमरे को और भी सजाया। नारायण राव के लाये हुए चित्रों को, मूर्तियों को, चन्दन के खिलौनों को, कमरे में यथोचित स्थान पर रखा। परदे लगाये। मेज पर पान, फल-फूल आदि रखे।

सुब्बाराय जी ने भोजन के समय शारदा को देखा। 'यह आज इतनी खूबसूरत क्यों है? क्या उसके गर्भ-सीप में मोती बन गई है? इतने दिनों बाद यह लड़की नारायण राव का हृदय समझ सकी है, बच्चो सुखी रहो!' अनायास वे आशीर्वाद देने के लिए उठे।

जमींदार ने भी पुत्री को देखा। वे भी उसके मुँह पर प्रकाशित होती प्रसन्नता का कारण जान गए। "शारदा, मेरी लाडली, तेरे लिए ढूँढकर जिस दामाद को लाया हूँ, उसके साथ धर्म और नीति के साथ रहो! वह देखो नारायण राव परदे के पीछे खड़ा है।"

नारायण राव रात के ग्यारह बजे अपने कमरे में गया। शारदा पलंग पर सो रही थी।

दूसरा पलंग न था। वह कमरा आकाश-गामी विमान की तरह था। बिस्तरे पर शारदा सो रही थी। उसका सौन्दर्य देखते ही बनता था।

नारायण राव धीरे से दरवाजा बन्द कर, यह समझकर कि वह निद्रा का अभिनय कर रही है, उसके पास जा बैठा।

शारदा ने उठकर अपनी बाहुएँ उसके कन्धे पर डाल दीं। वे दोनों प्रथम चुम्बन में एक हो गए।

उसके आलिंगन के बाद पलंग पर से उतरकर, फूल लेकर, उसके पैरों पर चढ़ाने लगी।

'श्री राम पदम्'—उसकी दृष्टि उठने लगी।

सामने गोवर्धन का चित्र था।

"देखो शारदा, यह पुराण पुरुष अपनी कनिष्ठिका से गोवर्धन को उठाये हुए हैं।"

"मेरी हृदयेश्वरी, आज मैं धन्य हुआ। उस पुरुषोत्तम का ध्यान करके हम अपने जीवन-मार्ग पर चलते हुए, उस गोवर्धन गिरि के पास पहुँच सकेंगे।"

शारदा—"क्या आप हार नहीं पहनेंगे ?"

नारा०—"सिर झुका तो दिया है !"

शारदा (हँसते हुए)—"पान क्यों नहीं खाया ?"

नारा०—"पान देने वाले हाथ आज ही तो अपने हुए हैं।

शारदा की आँखों में तरी आ गई। नारायण राव ने उसका आलिंगन किया। उसका मुँह उसके विशाल वक्षस्थल को छू रहा था।

सम्पूर्ण ज्योत्स्ना उस नायक और नायिका में लीन हो गई। तारे उस दम्पति को आशीर्वाद देते-से लगते थे।

नील वर्ण ने उन प्रेमी-प्रियतम को आवरित-सा कर लिया।

ओं, असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतं गमय।